

12

श्रीशुक्लयजुर्वेदस्य ब्रह्मभाष्यम्

VOL. I

Acc. No. 22913 C

COPILED

श्रीशुक्लयजुर्वेदस्य ब्रह्मभाष्यम्

श्रीमज्ज्वाला प्रसाद भार्गव शर्मणानि

मितम् संस्कृतार्थभाषाभ्यां सम

न्वितम्

भारतवर्षे कन्याद्वीपान्तर्गता र्या वर्ते अर्गलि

पुरे सत्य प्रकाश यन्त्रालये श्रीमद्वैदिक

सद्धर्म सभा सज्जन सम्मत्या

ब्रह्म वेदाङ्क चन्द्र संख्यान्विते श्री विक्रम

दित्याब्दे वसन्त ऋतौ मुद्रयितु

मारब्धम् संक्र. १८४६

पुस्तकालय

पुस्तकालय

ॐ श्री गणेशाय नमो नमः ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ नरनातिक
 का है उससे उत्पन्न आकाशादि कार्य नारायण कहलाते हैं जो परमात्मा
 आकाशादि को कारण रूप से व्याप्त करता है उस को नारायण
 अथवा आकाशादि तत्त्व प्रलय काल पर जिस में प्रवेश होते हैं
 नारायण कहते हैं ऐसे नारायण को नमस्कार करके और जीवात्मा
 में श्रेष्ठ समष्टि जीवात्मा को नमस्कार करके और वागाधिपति
 स्वामी को और वेदों के आचार्य व्यास महर्षि को नमस्कार करके ज
 वेद को उच्चारण करे ॥ १ ॥ वेदों के पढ़ने और धारण करने से स
 को जय करता है उस कारण वेदों का नाम जय है। तथा वेदों में वे
 साकार और निराकार ईश्वर के स्तुति रूप मंत्र ही हैं इस कारण
 नाम ब्रह्म और शब्द ब्रह्म है कि ऐसे बड़त प्रकार के यज्ञ ब्रह्म
 में लिखे हैं। तथा यह सब ब्रह्म है इ सभ्रुति के अनुसार, इन्द्र, अग्नि, जल, प्रजापति, सूर्य आदि देवता ब्रह्म की विभूति हैं जिस प्रकार श्रु
 ति कहती है यह ब्राह्मण और क्षत्री जाति और ये लोक, देवता, तत्त्व और
 यह सब जो कुछ है आत्मा ही है (श० काण्ड १४ अध्याय ५ ब्राह्मण
 काण्ड का ६) ब्रह्म ही इन सब नाम रूप और कर्मों को धारण करता है
 (श० १४।४।४।१।२।३ श्री भगवान् ने गीता में भी कहा है, हे अर्जुन मुझ
 से श्रेष्ठ तर दूसरा कोई नहीं है यह सब ब्रह्माण्ड मुझ में पुरेया हुआ है ज
 से सृष्ट में मणियों का समूह ॥ १ ॥ हे अर्जुन मैं जलों में रस हूँ, सूर्य और चंद्र
 मा में प्रकाश हूँ, सब वेदों में ओंकार हूँ, आकाश में शब्द हूँ, मनुष्यों में पौरु
 ष हूँ, ॥ २ ॥ पृथ्वी में पवित्र गुग्गुलु हूँ, और अग्नि में तेज हूँ, सद् प्राणियों जीव
 हूँ, और तपस्वियों में तप हूँ, ॥ ३ ॥ हे अर्जुन मुझ को सब प्राणियों का सना
 तन बीज जानो, मैं बुद्धि मानों में बुद्धि हूँ, तेजस्वियों में तेज हूँ, ॥ ४ ॥ और

यों कनो में जो बल काम राग से रहित है वह मैं ही हूँ, हे भरत अष्टजो काम-
 पुष्ट, यों में धर्म से विरुद्ध नहीं है वह मैं ही हूँ, ॥५॥ मैं संकल्प हूँ, मैं यज्ञ हूँ,
 मैं प्रथा हूँ, मैं औषधि हूँ, मैं मंत्र हूँ, मैं आज्य (घृत) हूँ, मैं अग्नि हूँ, मैं हो-
 पितृ आहवि हूँ, ॥६॥ हे अर्जुन सब प्राणियों के हार्दा काश में स्थित आत्मा
 य मैं हूँ, और मैं ही प्राणियों का आदि मध्य और अंत हूँ ॥७॥ आदिति के पुत्रों
 ना हविष्म अर्थात् (वामनावतार) है मैं ही हूँ, प्रकाशकों में किरणों का
 वेद सूर्य हूँ, मरुत गणों में मरीचि हूँ, नक्षत्रों में चन्द्रमा मैं हूँ, ॥८॥ वेदों
 दाता वेद हूँ, देवताओं में इन्द्र हूँ, इन्द्रियों में मन हूँ, और प्राणियों में ज्ञा-
 मि, ये की वृत्ति हूँ, ॥९॥ रुद्रों में शङ्कर हूँ, और यक्ष राक्षसों में कुबेर हूँ,
 काव में अग्नि हूँ, और पर्वतों में मेरु मैं ही हूँ, ॥१०॥ हे अर्जुन राज पुरोहितों
 प्रकाशन वृहस्पति को मुझे जानो मैं सेना पतियों के मध्य कार्तिकेय हूँ,
 और मण्डप खात जलाशयों में सागर हूँ ॥११॥ महर्षियों में भृगु मैं ही हूँ ॥
 पद पादाण बचनों में एकाक्षर प्रणाव हूँ, यत्नों में जप यज्ञ हूँ, स्थित मानों
 में ही जालय पर्वत हूँ, ॥१२॥ सब वृक्षों में पीपल हूँ, देव ऋषियों में नारद
 हूँ, गंधर्वों में चित्ररथ हूँ, सिद्धों में कपिल मुनि हूँ ॥१३॥ घोड़ों में उच्चै-
 श्रवा हूँ, जो कि अमृत मथन समय उत्पन्न हुआ और गजराजों में ऐराव-
 त हूँ, और मनुष्यों में राजा को मुझे जानो ॥१४॥ आयुधों में वज्र मैं हूँ, गौ-
 और कामधेनु हूँ, सन्तान उत्पन्न करने वाला काम मैं ही हूँ, और सर्पों के
 मध्य वासुकि हूँ ॥१५॥ नाग नाम सर्पों के मध्य शेष हूँ, जलचारी जीवों का
 राजा शरणा मैं ही हूँ, पितरों में पितृ राज अर्यमा हूँ और सयमन करने वा-
 लों में विम राज मैं ही हूँ ॥१६॥ दैत्यों में प्रह्लाद हूँ, और गणन करने वा-
 लों में काल मैं ही हूँ, मृगों में सिंह मैं हूँ, और पक्षियों में गरुड हूँ ॥१७॥
 पवित्र करने वाले वावे गवानों में पवन हूँ शस्त्रधारियों में राम मैं ही हूँ,

मत्स्य आदि में मगर हूं और नदियों में गंगा हूं ॥ १८ ॥ हे अर्जुन भो ते क
 प्राणियों का आदि, मध्य और अंत में ही हूं, विद्याओं में अध्यात्म विद्या हूं
 वाद कर्ता जिज्ञासुओं में तत्त्व निर्णय सम्बन्धी वाद में ही हूं ॥ १९ ॥ अक्षरों
 में अकार हूं और समास समूह के मध्य द्वंद्व समास वा ज्ञानी गुरुशिष्य
 समूह का निश्चित रहस्य अर्थ में ही हूं क्षय हीन क्षण आदि काल रूप वा म
 हा काल रूप परम ईश्वर मैं ही हूं, मैं कर्म फल दाता विष्णु रूप हूं ॥ २० ॥
 सब का नाश करने वाला मृत्यु और कल्याण प्राप्ति योग्य पुरुषों का ऐश्व-
 र्योत्कर्ष मैं ही हूं और दिव्य स्त्रियों के मध्य कीर्ति, लक्ष्मी, कान्ति, शोभा, वा
 णी, सरस्वती, स्मरण शक्ति, ग्रंथ धारण शक्ति, धीरज, क्षमा मैं ही हूं ॥
 २१ ॥ तथा साम वेद की ऋचाओं में वृहत् साम ऋचा और छन्दों में गाय
 त्री मैं हूं, महीनों में मार्गशीर्ष, ऋतुओं में वसन्त मैं हूं ॥ २२ ॥ छलियों में
 अक्ष खेल आदि हूं तेजस्वियों में प्रभाव वा अप्रतिहत आन्ता मैं हूं
 वा उत्कर्षा हूं, निश्चय वा फल हेतु उद्यम हूं सात्विक पुरुषों का सत्त्व कार श्रु-
 त्तान आदि हूं ॥ २३ ॥ यादवों में वासुदेव हूं, पांडवों में अर्जुन हूं मन और
 ल सर्वज्ञ ऋषियों में भीष्मास हूं और ज्ञान दर्शियों के मध्य ज्ञान्त ब्राह्मण
 क मैं ही हूं ॥ २४ ॥ दंड दाताओं में दंड हूं, जयेच्छुओं में नीति हूं, करता है
 स्तुओं में मोन और ज्ञानियों में ज्ञान मैं ही हूं ॥ २५ ॥ हे अर्जुन सब अर्जुन सुभ-
 यों का जो प्ररोह कारण है वह भी मैं हूं और वह चर अचर जीव नद्दी इत्यादि है जे
 मेरे बिना हो ॥ २६ ॥ जो २ माणी ऐश्वर्य मान लक्ष्मी, शोभा या उत्साह और चन्द्र
 क्त वा अति वली है तुम उस २ को ही मेरे चित शक्ति के अंश वा एक तुम में पौरु
 तेज या प्रभा वांश से उत्पन्न जानो ॥ २७ ॥ सूर्य में विद्यमान जो तेजियों जीवन
 जगत को प्रकाशित करता है, जो तेज चन्द्रमा में है और जो तेज अयों का सना
 है वह तेज मेरा जानो ॥ २८ ॥ में पृथिवी में प्रवेश हो कर वल ॥ ४ ॥ और

यों को धारण करता हूं और जलात्मक चंद्रमा होकर सब औषधियों को पुष्ट, सरस करता हूं ॥ २६ ॥ मैं वैश्वानर जाग्रामि होकर प्राणियों के देह में प्रविष्ट वास्थित दोनों उद्दीपित प्राण अपाण से युक्त वा दोनों से उद्दीपित हुआ चार प्रकार के अन्न को पकाता हूं ॥ २७ ॥ और मैं सब के हृदय में भले प्रकार स्थित हूं, मुझ से स्मृति, ज्ञान और उन का दूर होना है और मैं ही सब वेदों से जानने योग्य हूं वेदार्थ संप्रदाय का कर्त्ता और वेद ज्ञाता मैं ही हूं ॥ २८ ॥ मैं ही इस जगत का जनक, जननी कर्म फलदाता, पिता महत्तेय वस्तु, शोधक, प्रणव और तीनों वेद हूं ॥ २९ ॥ प्राणि, योग्य, कर्म फल के दान से पोषक, स्वामी, अंतर्दामी, शुभा शुभकर्म का दृष्टा, प्राणियों का वास स्थान, शरणागत रक्षक, विना अपेक्षा प्रत्युपकार के उपकारी उत्पत्ति स्थान, लय स्थान, वास स्थान, कर्म फल समर्पण का स्थान, प्ररोह कारण और अविनाशी हूं ॥ ३० ॥ सूर्य रूप में तपाता हूं, मैं वर्षा को आकर्षण करता हूं और छोड़ता हूं हे अर्जुन मैं ही जीवन और मृत्यु और कार्य कारण भी हूं ॥ ३१ ॥ और मैं ही सब यज्ञों का भोगने वाला और स्वामी हूं, मुझ को मोक्ष पूर्वक नहीं जानते हैं इस कारण वेच्युत होते हैं ॥ ३२ ॥ जीव ब्रह्म के एकत्व में स्थित जो पुत्र कोष सब प्राणियों में स्थित मुझ को भजता है वह योगी सब प्रकार से और बंधन करता भी मुझ में ही वर्त्तता है ॥ ३३ ॥ परन्तु इस काल में प्रामाण्य की मनुष्य उन संबोधनों को जो कि वैदिक मंत्रों में वायु अग्नि वरुणा राजा आदि देवताओं के अर्थ हैं सेना पति, सभा पति, महाराज आदि मनुष्यों में के सम्बोधन में कल्पना करते हैं उस का प्रमाण निघरादु निरुक्ति लोगों में ही मैं कहीं भी दृष्टि नहीं पड़ता । तथा- व्यत्ययो वडलम् इस सूत्र में विचारों में सहेतुक व्यत्यय होता है न कि अपनी इच्छा के अनुसार ।

आधुनिक मनुष्य तो हेतु रहित व्यत्यय को अपनी इच्छा के अनुसार सर्वत्र कल्पना करते हैं और सब मनुष्यों को अंध प्राय जानते हैं। तथा वैदिक कर्म कांड का सारभूत यह भगवत् बचन है। जिस के द्वारा अपेक्षा किया जाय वह यज्ञ पात्र ब्रह्म है, हवि भी ब्रह्म है, ब्रह्म रूप अग्नि में ब्रह्म रूप यज्ञ मान से हो मा गया उस कारण ब्रह्म कर्म समाधि के द्वारा ब्रह्म ही प्राप्त होने के योग्य है। वे प्राकृत मनुष्य उस का निरादर कर विपरीत कहते हैं कि स्वर्ग नरक, नहीं हैं पितर और देवता नहीं हैं इत्यादि मिथ्या भाषण से नास्तिकता को स्वीकार करते हैं। तथा यज्ञ अवश्य करने योग्य हैं और वह चार प्रकार का है हविर्यज्ञ १ पशु यज्ञ २ जप यज्ञ ३ ज्ञान यज्ञ ४ उनके अधिकारी तीनों वर्ण हैं जैसा स्मृति कहती है। क्षत्री का यज्ञ पशु यज्ञ है, वैश्यों का यज्ञ हविर्यज्ञ है, शूद्र का यज्ञ तीनों वर्णों की सेवा है और ब्राह्मण का यज्ञ जप यज्ञ है। हविर्यज्ञानित्य नैमित्तिक काम्य कर्मों में अवश्य करना चाहिये कालि युग में विधिसिद्धि के न होने से पशु यज्ञ असंभव है। जप यज्ञ और ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ और सदा करने योग्य हैं। श्रुति कहती है। देवताओं के अर्थ यह पय की आहुति हैं जो ऋग्वेद की ऋचा हैं जो विद्वान प्रतिदिन स्वाध्याय को पढ़ता है वह पय की आहुतियों से ही देवताओं को तृप्त करता है वे तृप्त देवता योग (अलभ्य लाभ) क्षेम (लभ्य का परिरक्षण) प्राण, वीर्य, सर्व आत्मा और सम्पूर्ण पवित्र संपत्तियों से इस को तृप्त करते हैं और घृत, मधु की नदी पित्रों के समीप स्वाधा को प्राप्त करती हैं। देवताओं के अर्थ यह घृत की आहुति हैं जो कि यजुर्वेद की ऋचा हैं जो विद्वान प्रतिदिन स्वाध्याय को पढ़ता है वह घृत की आहुतियों से देवताओं को तृप्त करता है वे तृप्त देवता योग क्षेम प्राण वीर्य सर्व आत्मा और सम्पूर्ण

ए पवित्र संपत्तियों से इस को तम करते हैं और घृत मधु की नदियों
 त्रों के समीप स्वधा को प्राप्त करती हैं। देवताओं के अर्थ यह सोम की
 आहुति है जोकि साम वेद की ऋचा है, जो विद्वान प्रतिदिन स्वाध्या
 य साम मंत्रों को पढ़ता है वह सोम की आहुतियों से ही देवताओं को
 तम करता है वे तम देवता योग क्षेम प्राण वीर्य सर्वात्मा और सम्पूर्ण
 पवित्र संपत्तियों से इस को तम करते हैं और घृत मधु की नदियां पि
 त्तों के समीप स्वधा को प्राप्त करती हैं (श० ११५।६।४। ५।६)
 तथा श्री भगवान ने भी कहा है- हे परमतप अर्जुन यज्ञों में जप यज्ञ-
 में ही हूं, द्रव्य यज्ञ से ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ है सम्पूर्ण कर्म ज्ञान में समाप्ति
 को पाते हैं- स्मृति में भी लिखा है- जो चार पाक यज्ञ विधि यज्ञ से यु
 क्त हैं वे सब जप यज्ञ की सोलह वी कला के तुल्य नहीं हैं ॥ १ ॥ ब्रा-
 ह्मण जप से ही सिद्ध होवे इसमें संशय नहीं, दूसरा कर्म करे वान क
 रै को कि ब्राह्मण भैत्र (सब का मित्र) कहाता है ॥ २ ॥ द्विजो तम
 तप को तपता सदा वेद का ही अभ्यास करे इस लोक में वेदाभ्यास
 विप्र का परमतप कहाता है ॥ ३ ॥ आलस्य रहित समयानुसार नि-
 त्य वेद का ही अभ्यास करे उसी को इस का परम धर्म कहा दूसरा उप
 धर्म कहाता है ॥ ४ ॥ जल, अन्न, गौ, शयिनी, बस्त्र, तिल, सुवर्ण, और घृ
 त का जो दान है उन सब दानों में वेद दान विशेष कहाता है ॥ ५ ॥ वे
 द ही पितृ, देवता और मनुष्यों का सनातन चक्षु है वेद शास्त्र अशक्त
 (संशय रहित) और अप्रमेय (श्रुति भिन्न दूसरे अनुमान प्रमाणों
 से असाध्य) है यह मर्यदा है ॥ ६ ॥ चारों वर्ण, तीनों लोक, प्रथक् २
 चारों आश्रम, भूत, वर्तमान और भविष्य ये सब वेद से ही सिद्ध होते
 हैं ॥ ७ ॥ सनातन वेद शास्त्र सब प्राणियों को धारण पोषण करता है

उस कारण इस को श्रेष्ठ मानते हैं जो कि इस जीव का साधन है ॥ ८ ॥ जो वेदशास्त्र के अर्थ तत्व का ज्ञाता है वह जिस तिस आश्रम में वास करता इसी लोक में स्थित ब्रह्म भाव के योग होता है ॥ ९ ॥ जैसे बलवान् अग्नि गीले वृक्षों को भी दग्ध करता है तैसे ही वेद का ज्ञाता अपने कर्मज दोष को भस्म करता है ॥ १० ॥ जैसे बड़े हृद में डाला हुआ मिट्टी का डेला सब नष्ट हो जाता है इसी प्रकार तीनों वेद जीवात्मा के किये हुए पाप को भस्म करते हैं ॥ ११ ॥ वेद बल का आश्रय करके पाप कर्म में प्रीति करने वाला न हो वे कौन कि अज्ञान और प्रमाद से किया हुआ कर्म भस्म होता है न कि दूसरा ॥ १२ ॥ मूलफल का खाने वाला जो मुनि वन में तप करता है, और जो दूसरा एक ऋचा का जप करता है वह और वेबन सेवनादि उस एक फल वाले है ॥ १३ ॥ यथा शक्ति वेदाभ्यास महा यज्ञ की क्रिया में सामर्थ्य शीघ्र महा पातक से उत्पन्न पापों को भी नाश करते हैं ॥ १४ ॥ प्राकृत मनुष्य तौ उस कर्म कांड और उपासना का एड को मिथ्या अर्थ से विरव्यान करते हैं। उन असद्वचनों के पढ़ने से बड़ा मूढ़ मनुष्य तीर्थ स्नान, तर्पण, आहु, श्री राम कृष्णादि की भक्ति आदि कर्मों में शिथिली होते हैं। तथा वे कहते हैं, ब्राह्मण वेद से भिन्न हैं अर्थात् वेद नहीं है इति- सो नही श्रुति कहती है, जैसी ऋचातै सा ब्राह्मण (शं० १२. ५. २. ४) तिस कारण वैदिक धर्म की रक्षा के लिये सरल ब्रह्म भाष्य बनाया जाता है। जो सर्वज्ञ समदर्शी हैं वे हमारे ऊपर रूपा करके इस भाष्य को मध्यस्थ रूप दृष्टि से देखो, तथा जो श्री शिव, भृगु, च्यवन, परशुराम नाम हमारे कुल देवता हैं वे भगवती कुल देवी के साथ हमारी रक्षा करो। हे तात श्री महादेवजी के वरुण रूप धारण करते समय सब लिंग शरीर अग्नि से प्रकट हुए ॥ १ ॥ उस अजन्मा, आद्य आदि कर्त्ता, सब प्राणियों के ईश्वर प्रभु, सनातन कुल देवता को हाथ जोड़कर

नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥ सृष्टि की आदि में वरुण शरीर धारण करते समय
उस महात्मा देव श्रेष्ठ के यन्त्र में अग्नि से जो उत्पन्न हुआ ॥ ३ ॥ उस ब्रह्म रूप
सर्वज्ञ, कुल देव, कुलोद्भव, अग्नि स्वरूप श्री भृगुजी को सच्चे भाव से नम-
स्कार करता हूँ ॥ ४ ॥ जिन भृगुजी से महा तेजस्वी, वर दाताओं में श्रेष्ठ
महर्षियों में बड़ी प्रभा वाले श्री च्यवन जी ने जन्म लिया, जो कि बड़त वि-
घ्नों के विनाश करने वाले हैं ॥ ५ ॥ अनंत गुण से श्लाघा योग्य उन भृगु न-
दन च्यवन जी को हाथ जोड़ कर भक्ति भाव से बार बार नमस्कार करता हूँ
॥ ६ ॥ जब ब्राह्मण पुकारे, हे भार्गव परशुराम जी दौड़ो, उन वचनों को नहीं
सहा जो कि उन से बार बार कहे गये ॥ ७ ॥ भार्गव परशुराम जी ने सब १८
द्वीपों को वश में करके पृथिवी को चौर रहित करके फिर श्रेष्ठ दृष्ट जनों
से व्याप्त पृथिवी को ॥ ८ ॥ महा यन्त्र अश्व मेघ में कश्यप ऋषि को दान कि-
या और पर्वतों में श्रेष्ठ वायु की उपमा करने वाले महेन्द्र पर्वत पर वास कि-
या ॥ ९ ॥ इस प्रकार अनंत गुणों से युक्त भार्गवों की कीर्ति बढ़ाने वाले
महात्मा श्री परशुराम जी को सिर से प्रणाम करता हूँ ॥ १० ॥ जिस महाय-
शस्त्री प्रभु ने मुझ को बड़ा कष्ट प्राप्त होने पर स्वप्नांत में दर्शन दिया और
स्वर भी दिया ॥ ११ ॥ जो देवी भगवती विद्याओं में ब्रह्म विद्या है, और दे-
हामि मांती पुरुषों में महानिद्रा रूप है उस को हाथ जोड़ कर शुद्ध भा-
व से प्रणाम करता हूँ ॥ १२ ॥ मैंने सम्बत् १६४१ चैत्र शुक्ला ६ भृगु वार
के दिन भाष्य स्वने का आरंभ किया ॥ १३ ॥ जो कि मैं अग्नि ज्वाला रूप
श्री भृगुजी के वंश में उन की कृपा से उत्पन्न हुआ उस दिव्य हेतु से ज्वा-
ला प्रसाद नाम हूँ ॥ १४ ॥ हे श्रेष्ठ पुरुषों, धर्म, काम, अर्थ, मोक्ष की सि-
द्धि के लिये ईश्वर के अनुग्रह से ही ब्रह्म भाष्य प्रकाशित होता है ॥ १५ ॥
एही विद्या वाले ऋषियों का जो सनातन अर्थ है अब उसको विचार कर

मेरे द्वारा मंत्रार्थ लिखे जाते हैं॥१६॥ सत्यार्थरूप सूर्य के द्वारा तीनों लोक का दुख दाता असत्यार्थ स्वरूप अंधकार सब प्रकार से नाश को प्राप्त करे ॥१७॥ और सद् भाष्य का अर्थ पृथिवी तल पर भले प्रकार विख्याति को पाओ श्री नारायण की कृपा से यह प्रयत्न सिद्धि को प्राप्त करो ॥१८॥ अविचरषि का बचन है कि वेद को इतिहास पुराणों से भले प्रकार विस्तृत करे क्योंकि वेद थोड़ा शास्त्र जानने वाले से डरता है कि यह मुझ को अन्यथा अर्थ से उपदेश करेगा ॥१॥ उस कारण हम इस भाष्य को इतिहास, स्मृति और पुराणों की व्याख्या से अच्छा भूषित करेंगे क्योंकि वे ब्रह्म के ही प्रवास हैं। जैसा श्रुति कहती है। जिस प्रकार गीले र्द्धन वाले स्थापित अग्नि से नाना प्रकार के धूम निकलते हैं वही प्रकार ये जो ऋग वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास, पुराण, विद्या उपनिषद्, श्लोक, सूत्र, अनुव्याख्या और व्याख्यान हैं ये सब इस महा भूत परमेश्वर की प्रवास हैं (शा० ११।५।४।१०) तथा वेदों में तीन अर्थ का संभव है अधिभूत, अधिदेव, अध्यात्म उनमें अधिभूत अर्थ अज्ञान से कल्पित और श्रुति व्याकरण से विरुद्ध है प्राकृतमनुष्य जिसकी करते हैं अधिदेव और अध्यात्म नाम वाले दोनों अर्थ श्रुति, स्मृति व्याकरण आदि शास्त्रों से सिद्ध हैं। उनमें अधिदेव अर्थ कर्म उपासना काद्योतक है ॥ और अध्यात्म अर्थ ज्ञान योग का प्रकाशक है हम इन दोनों अर्थ को प्रमाण से संयुक्त वर्णन करेंगे, वे दोनों किन गुणों से युक्त हैं उस पर श्रुति कहती है। आत्म या जी श्रेष्ठ है वा देव या जी इस प्रश्न का उत्तर यह कि आत्म या जी श्रेष्ठ है, ऐसा कहना चाहिये, निदान आत्म या जी वह है जिस को यह ज्ञान हो कि इस मंत्र से मेरा यह अंग संस्कार किया जाता है, और इस मंत्र से मेरा यह अङ्ग आत्मा में धारण किया जाता है जिस प्रकार सर्प-त्वचा (कांचली) से छूट जाता है वही प्रकार वह आत्म या जी इस मृत्यु

ग्रस्त शरीर और पाप से मुक्त हो जाता है, वह ऋद्धय, यजुर्मय, साममय और आहुति मय होकर स्वर्गलोक (आनन्द स्वरूप ब्रह्म) को प्राप्त करता है, गीता में श्री भगवान ने भी कहा है, हे अर्जुन जैसे काष्ठों से वृद्धि पाने वाला अग्नि भस्म करता है तैसे ही ज्ञान रूप अग्नि सब कर्मों को भस्म करता है ॥ १॥ इस लोक में ज्ञान के समान पवित्र विद्यमान नहीं है योग से भले प्रकार सिद्ध पुरुष समय पर उस ज्ञान को आप आत्मा में पाता है ॥ ॥ २॥ फिर श्रुति कहती है देव याजी वह है, जो जान

हे मैं देवताओं को ही आहुति देता हूँ, देवताओं को पूजता हूँ, जैसे नीच मनुष्य श्रेष्ठ पुरुष को भेट देवै वा वैश्य राजा को भेट देवै इसी प्रकार वह देवता जी देवताओं को देता है, वह उतने लोक को नहीं जीतता है, जितने दूसरा अर्थात् आत्म या जी जय करता है (श० ११:२:६:१४) श्री वेद सजीने भविष्य काल में मनुष्यों की मंद बुद्धि विचार कर अनुग्रह दृष्टि वेद को जो कि ब्रह्म परंपरा से प्राप्त हुआ या चार भाग करके, ऋग, साम, अथर्व नाम चारों वेद को पैल, वैशंपायन, जैमिनि, सुमन्त अथर्व उपदेश किया और उन्होंने अपने शिष्यों को पढ़ाया। वह वेदों परंपरा से अनन्त शाखा वाला हुआ। तहां व्यास जी के शिष्य पायन ने यजुर्वेद अपने शिष्य याज्ञवल्क्य आदि को पढ़ाया। दक्ष और बुद्धि की मलिनता से वे यजुर्वेद के मंत्र शुद्ध हो गये। नंतर दुःखित याज्ञवल्क्य ने सूर्य का आराधन कर दूसरे शुद्ध मंत्रों को प्राप्त किया। और वे मंत्र जावाल, गौधेय, काण्व, मय आदि पंद्रह शिष्यों को पढ़ाए, इसमें श्रुति प्रमाण है, कि सूर्य दित ये शुक्त (शुद्ध) यजु मंत्र याज्ञवल्क्य से जो कि वह सूर्य का शिष्य है, शिष्यों को उपदेश किये जाते हैं। वहां मय

मेरे द्वारा मंत्रार्थ लिखे जाते हैं ॥ १६ ॥ सत्यार्थ रूप सूर्य के द्वारा तीनों लोक का दुख दाता असत्यार्थ स्वरूप अंधकार सब प्रकार से नाश को प्राप्त करे

॥ १७ ॥ और सद् भाष्य का अर्थ पृथिवी तल पर भले प्रकार विख्याति को पाओ श्री नारायण की रूपा से यह प्रयत्न सिद्धि को प्राप्त करो ॥ १८ ॥

अविष्कृषि का बचन है कि वेद को इतिहास पुराणों से भले प्रकार विस्तृत करे क्योंकि वेद थोड़ा शास्त्र जानने वाले से डरता है कि यह मुझ को अन्याया अर्थ से उपदेश करेगा ॥ १ ॥ उस कारण हम इस भाष्य को इतिहास, स्मृति और पुराणों की व्याख्या से अच्छा भूषित करेंगे क्योंकि वे ब्रह्म के ही आस हैं। जैसा श्रुति कहती है। जिस प्रकार गीले ईंधन वाले स्थापित आग्नि से नाना प्रकार के धूम निकलते हैं वही प्रकार ये जो ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास, पुराण, विद्या, उपनिषद्, श्लोक, सूत्र, अनुव्याख्या और व्याख्यान हैं ये सब इस महाभूत परमेश्वर की आस हैं (शा

११। ५। ४। १०) तथा वेदों में तीन अर्थ का संभव है अधिभूत, अधिदेव, अध्यात्म उनमें अधिभूत अर्थ अज्ञान से कल्पित और श्रुति व्याकरण से विरुद्ध है प्राकृत मनुष्य जिसकी कृति है। अधिदेव और अध्यात्म नाम वाले दोनों अर्थ श्रुति, स्मृति व्याकरण आदि शास्त्रों से सिद्ध हैं। उनमें अधिदेव अर्थ कर्म उपासना का चोतक है ॥ और अध्यात्म अर्थ ज्ञान योग का प्रकाशक है हम इन दोनों अर्थों को प्रमाण से संयुक्त बर्णन करेंगे, वे दोनों किन गुणों से युक्त हैं उस पर श्रुति कहती है। आत्म या जी श्रेष्ठ है वा देव या जी इस प्रश्न का उत्तर यह कि आत्म या जी श्रेष्ठ है, ऐसा कहना चाहिये, निदान आत्म या जी वह है जिस को यह ज्ञान हो कि इस मंत्र से मेरा यह अंग संस्कार किया जाता है और इस जन्म से मेरा यह अङ्ग आत्मा में धारण किया जाता है जिस प्रकार सर्प

त्वचा (पाँचवीं) से खूब जाना है वही प्रकार यह आत्म या जी इस मन्त्र

ग्रस्त शरीर और पाप से मुक्त हो जाता है, वह ऋद्धय, यजुर्मय, साममय और आहुति मय होकर स्वर्गलोक (आनन्दस्वरूप ब्रह्म) को प्राप्त करता है, गीता में श्री भगवान ने भी कहा है, हे अर्जुन जैसे काष्ठों से वृद्धि-पाने वाला अग्नि भस्म करता है तैसे ही ज्ञान रूप अग्नि सब कर्मों को भस्म करता है ॥ १ ॥ इस लोक में ज्ञान के समान पवित्र विद्यमान नहीं है योग से मले प्रकार सिद्ध पुरुष समय पर उस ज्ञान को आप आत्मा में पाता है ॥ ॥ २ ॥ फिर श्रुति कहती है देव याजी वह है, जो जानता

है मैं देवताओं की ही आहुति देता हूँ देवताओं को पूजता हूँ, जैसे नीच मनुष्य श्रेष्ठ पुरुष को भेट देवै वा वैश्य राजा को भेट देवै इसी प्रकार वह देव याजी देवताओं को देता है, वह उतने लोक को नहीं जीतता है, जितने को दूष्ण अर्थात् आत्म याजी जय करता है (शं० ११:२:६:१४) श्री वेद व्यास जी ने भविष्य काल में मनुष्यों की मन्द बुद्धि विचार कर अनुग्रह दृष्टि से वेद को जो कि ब्रह्म परंपरा से प्राप्त हुआ या चार भाग करके, ऋग्, यजु, साम, अथर्व नाम चारों वेद को पैल, वैशंपायन, जैमिनि, सुमन्त के अर्थ उपदेश किया और उन्होंने अपने शिष्यों को पढ़ाया। वह वेद ऐसी परंपरा से अनंत शाखा वाला हुआ। तहां व्यास जी के शिष्य वैशंपायन ने यजुर्वेद अपने शिष्य याज्ञवल्क्य आदि को पढ़ाया, देव दत्त और बुद्धि की मलिनता से वे यजुर्वेद के मंत्र शुद्ध होगये। तदनंतर दुःखित याज्ञवल्क्य ने सूर्य का आराधन कर दूसरे शुद्ध यजु मंत्रों को प्राप्त किया। और वे मंत्र जावाल, गौधेय, काण्व, मध्यान्दिन आदि पंद्रह शिष्यों को पढ़ाए, इसमें श्रुति प्रमाण है, कि सूर्य से पठित ये शुक्त (शुद्ध) यजु मंत्र याज्ञवल्क्य से जो कि बड़ अन्न दाता सूर्य का शिष्य है, शिष्यों को उपदेश किये जाते हैं। वहां मध्यान्दिन

महर्षि को प्राप्त होने वाला यजुर्वेद शाखा विशेष माध्यन्दिन नाम ऋष्या यद्यपि याज्ञवल्क्य ने बद्धत शिष्यों को उपदेश किया, तौ भी ईश्वर की कृपा से माध्यन्दिन सम्बन्ध से लोक में विख्यात है। उस माध्यन्दिन वेद को जो बढ़ते हैं, वा जानते हैं शिष्य परंपरा से वर्तमान वे भी माध्यन्दिन कहते हैं। इसी कारण अपना स्वाध्याय पढ़ना चाहिये (श० ११.५.६७) इस श्रुति के प्रमाण से अपनी शाखा का पढ़ना विशेष हित करी है और वह पाठ प्रत्येक मंत्र में ऋषि, छंद, देवता के विनि योग और अर्थ ज्ञान के साथ करना चाहिये। क्योंकि दूसरे प्रकार दोष सुना जाता है, जैसे। जो पुरुष इन विनि योग आदि को न जान कर वेद को पढ़ता है, पढ़ाता है, जप करता है होम करता है, यज्ञ करता है वा करता है उस का वेद निर्वीर्य और जीर्ण होता है यह कात्यायन जी का वचन है। और ऋषि आदि के ज्ञान में फल सुना जाता है। यथा जो पुरुष इन ऋषि आदि को जान कर पढ़ता है उस का वेद वीर्य बान होता है और जो पुरुष अर्थ जानता है उस का वेद वीर्य वन्तर होता है, जप करके होम करके, यज्ञ करके उस के फल से युक्त होता है। उस कारण वेद मंत्रों के ऋषि आदि का ज्ञान और अर्थ ज्ञान आवश्यक है, इस के विपरीत निष्फल है। यह सब ब्रह्म है इस श्रुति के अनुसार अपरा प्रकृति के विकार भूत शाखा, पय, सुक, यूप आदि में चैतन्य आत्मा विद्यमान है, उस कारण जड़ रूप होने में भी उनके अभिमानी देवताओं के व्याप्त होने से शाखा आदि का देवता रूप होना निश्चित है। वैदिक यज्ञ की विधि श्री याज्ञक देव कृत कात्यायन सूत्र पद्धति में विस्तार के साथ वर्तमान है उस कारण इस भाष्य में विस्तार पर मे नहीं कही जाती है, किंतु दिङ् मात्र आवश्यक सूत्र सङ्केत सहित कहेंगे ॥

ॐ श्री यजुर्वेदाय नमो नमः

ॐ श्री यज्ञपुरुषाय नमो नमः

ॐ श्री व्यासादि महर्षिभ्यो नमो नमः

हे विष्णु ^१देवे गगण मंडल से अमृत वृष्टि के अर्थ, त्वो, गगण मंडलस्य सहस्र दल कमल में विराज मान तुम को, नमस्कार करता हूं, ^३ऋजं, ज्ञाना मृत रस के लाभार्थ जो कि श्रुति अर्थ से चारों ओर से प्राप्त होने वाला ज्योतिरूप रस अविनाशी ब्रह्म और भू, भुव, स्वः और प्रणव रूप है ॥ त्वा, योग से प्राप्त होने वाले तुम को, प्रार्थना करता हूं हे प्राणो तुम, वायवः, ब्रह्म में प्राप्त होने वाले (श० १७२७) स्य, हौ, अधिभूत, अधिदैव, अध्यात्म भेद से तीन रूप वाली हे बुद्धि यो, देवः सब का प्रकाशक ज्योतिस्वरूप, सविता, सब का प्रेरक परमात्मा, अष्टतमाय, कर्मणो, ज्ञान यज्ञ के लिये (श० १७११५) त्वं, तुम को, ^{१२}तानि यजुः, ब्रह्म ज्ञान एतन् कार्त्तव्यं पाप करो, ^{१३}अध्या, भक्ति ज्ञान योग का साधन करने से अवध्य हे बुद्धि ओ, इन्द्राय, परमेश्वर के लिये, ^{१५}भोगं, जीव रूप अंश को जो कि श्रुति में देवताओं का अमृत रूप इवि (श० १२१२०) और स्मृति में ईश्वर का अंश लिखा है, अप्यायिध्वम्, ब्रह्म ज्ञान द्वारा चारों ओर से वृद्धि युक्त करो, स्तेनः, काम जिस को गीता में रजो गुण से उत्पन्न क्रोध रूप बड़ा भोगी बड़ा पापी वैरी ज्ञानी के ज्ञान का ढकने वाला इन्द्रिय मन बुद्धि में रहने वाला जीवात्मा को मोहित करने वाला दुष्पूराग्रिकहा है। ^{१८}प्रजावती, शम दम आदि पुत्र वाली, अनमीवाः, अज्ञानादि रोग रहित, ^{२०}अयक्ष्माः, मोह कामादि से मुक्त, ^{२१}वह्नी, शम दम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि आदि गुणों से बद्ध विध, ^{२२}वै, तुम्हारे करने को, ^{२३}मा, ईशत, समर्थ मत हो, ^{२४}अघशः

अधर्म ^{२६}मौ, समर्थ मत हो ^{२७}अस्मिन्, इस ^{२८}गोपितो, आत्मा रूप यज-
मान के पास (श० ६।५।२।१६) ^{२९}होना; निष्कल, ^{३०}स्थित, हाजिये जैसा
भगवद्गीता में कहा है, हे अर्जुन जब मन में विद्यमान सब कामनाओं
को त्याग करता है, आत्मा द्वारा आत्मा में ही संतुष्ट है, तब स्थिर बुद्धि
कहाता है ॥१॥ दुःखों में उद्वेग रहित मन, सुखों में इच्छा हीन, स्नेह
भय और क्रोध से शून्य सुनिश्चित बुद्धि कहाता है ॥२॥ जो सब में स्नेह
रहित उस २ शुभ अशुभ को पाकर प्रशंसा नहीं करता है, निन्दानही क
रता है, उस की बुद्धि स्थिर है ॥३॥ जब यह सब प्रकार से इंद्रियों को उन
के विषयों से खेच लेता है, जैसे कछुआ अंगों को, उस की बुद्धि स्थिर है
॥४॥ हे परमेश्वर यजमानस्य, योगी के ^{३१}पञ्च, इन्द्रियों को, (श०
१३।३।४।३।) ^{३३}पोहि, संसार से रक्षा करो ॥१॥ इस कण्डिका में दो-
प्रश्न का संभव है पहिले और दूसरे गर्भित मंत्र में सम्बोधन और किया
पद कैसे संयुक्त नहीं किया ॥१॥ दूसरे गर्भित मंत्रों में किया पद किस कारण
से युक्त किया ॥२॥ उत्तर, ये ब्राह्मण, क्षत्री, लोक, देवता, पंचतत्व आदि ये सब आ-
त्मा ही हैं, (श० १४।५।४।६) ब्रह्म चारों ओर से प्राप्त होने वाला है (श० ४।१।४।
१) सनातन श्रेष्ठ ब्रह्म मन से ही प्राप्ति योग्य है यहां ब्रह्म तत्त्व प्रकार का कुछ
नहीं (श० १४।७।२।२१) उस कारण से सम्बोधन पद युक्त नहीं किया ब्रह्म
एक ब्रह्म ही है, (श० १३।१।५।३) जिस अवस्था में इसके ज्ञान में सब आत्मा ही
निश्चित हुआ तब किस इन्द्रियों के द्वारा किसे बात करे (श० १४।५।४।६) उस का
रण किया पद युक्त नहीं किया ॥१॥ पहिले और दूसरे मंत्र में सिद्धांत को दर्शाकर
व्यवहार में अगले मंत्रों के साथ किया पद युक्त किये हैं ॥२॥ अथाधि है
वन् ॥ अथ दश पौरी मास मंत्राः, तहां पाहिली कण्डिका में पांच गर्भि-
त मंत्र हैं, पहिला पञ्चाश पारता काटने का मंत्र, काट्या मन मन पञ्च

ध्याय १ कण्डिका, २ सूत्र, दूसरा पलाश शाखा के शोधन करने का
 मंत्र, (का० ४।२।१३) तीसरा पलाश शाखा से बछड़े के अलग करने
 का मंत्र, का० ४।२।७। चौथा उक्त शाखा से गौ स्पर्श करने का मंत्र का०
 ४।२।६। १०। पांचवां अग्न्यागार में शाखा के उपगूहन का मंत्र, का० ४
 २।११। ओङ्क्षेत्वेति परमेष्ठी प्रजापति ऋषिर्देव्यनुष्टुप् छन्दः शाखा दे
 वता पलाश शाखा छेदने विनि योगः ॥ १ ॥ एव मूर्जेत्वेति ॥ २ ॥ वायव
 स्य इति दैवी वहती छन्दो वायुदेवता ॥ ३ ॥ देवो व इति यजुषी इन्द्रो देव
 ता ॥ ४ ॥ यज मानस्येति यजुषी वहती छन्दः शाखा देवता, अथ मंत्रार्थः
 हे पलाश शाखा भिमानी देवता, (श० ५।२।४। १८) इष्टे, इष्टि के अर्थ,
 त्वो, तेरे प्रादुर्भाव केलिये तुझ से प्रार्थना करता हूं, उर्ज्जे, सब देवता म
 नुष्य पशु पक्षी आदि का उत्पन्न और पुष्ट करने वाला जो वर्षा जल है उस
 रस की प्राप्ति केलिये, त्वो, तुझ देव शरीर रूप शाखा को ग्रहण कर
 ता हूं, हे वत्सा ओतुम, वायव, प्राण रूप वा गमन शील, स्थ, हो अ
 र्थात् वत्स के जन्म से दुग्ध उत्पन्न होता है उस क्षीरे त्यन्नि के कारण व
 छड़ा जीवन हेतु है और माताओं के साथ जाने में सायं काल पर गो देह
 न लब्ध नहीं होता, इस अभिप्राय के कारण बछड़ों से अन्यत्र जाने की
 प्रार्थना करते हैं, गोओं में काम धेनु हूं इस भगवत बचन के प्रमाण से हे
 ईश्वर विभूति रूप गोओ देव, सब का प्रकाशक ज्योति स्वरूप सविता,
 इन्द्रियों को उनके व्यापार में प्रेरणा करने वाला सब का अंतर्धीमी परमे
 श्वर ऐश, तमाय, कर्मणो, यज्ञ केलिये, वै, तुम को, प्रार्पयुतु,
 वद्धत एण युक्त बन में प्राप्त करो, अघ्नो, हे अवध्या गोओ, इन्द्राय,
 ईश्वर केलिये, भोगं, क्षीर रूप हवि को, आप्यायध्वं, भले प्रकार व
 ढाओ, स्तेन, चोर मनुष्य, प्रजावती, बद्धत संतान वाली अनभीवा

कृमि व्याधि छोटे रोगों से रहित, अयस्कृमाः, प्रवल रोगों से रहित, ब
^{३१}ह्मः बद्धत प्रकार की, वे, ^{३३}तुम को अर्थात् तुम्हारे हरने को, ^{३३}मो, ^{३४}इश
 त, समर्थ मत हो, अघशंसः, तीव्र पाप भक्षण आदि से मारने वाला
 व्याघ्र आदि, ^{३६}मो, मारने को समर्थ मत हो, अस्मिन्, ^{३७}गोपतौ, इस य
 ज मान के पास, ^{३८}ध्रुवा, निरंतर वास करने वाली, ^{३९}स्थौत, हजियै, हे
^{३९}गारुड अभिमानी देवता, यज मानस्य, यज मान के, ^{४०}पशुओं को,
^{४१}पाँट, रक्षा करै ॥ १॥ यहां अग्रे उक्त प्रश्नों का संभव है, किया पद के
 नलगाने में क्या कारण है, बछड़ों के प्राण रूप होने में क्या प्रमाण है
 २ गौ किस गुण वा फल से अवध्य कहाती है, ३ उन्हीं के उत्तर, वे
 द में द्वैत अहङ्कार का निषेध है जैसा श्रुति कहती है ॥ दूसरे से निश्चय
 भय होता है (शं० १४।४।२।३) जो दूसरे देवता की उपासना करता है कि
 यह दूसरा है और मैं दूसरा हूँ वह पशु की तुल्य अज्ञानी है, वह देवताओं
 का पशु है। १४।४।२।२२। उस कारण ब्रह्म भूत पुरुष को वैदिक कर्म क
 रना चाहिये, क्योंकि उस कर्म में दोष नहीं है, जैसा श्रुति कहती है, ब्रह्म
 ज्ञानी की यह सनातन माहिमा है कि कर्म करने से न बढ़ता है न घटता
 है उस त्व पदार्थ के पद (तत्पदार्थ भूत ब्रह्म) का ज्ञाता होवै उस स्वरूप
 को जान कर पाप कर्म से लिप्त नहीं होता है (शं० १४।७।२।२५ इस
 कारण सिद्धांत को दर्शा कर किया पद युक्त किया। अथवा यह सब ब्रह्म
 है इस श्रुति के अनुसार द्वैत अवस्था के मध्य वृक्ष आदि के छेदन में पाप
 है द्वैत अहंकार के अभाव में वेदोक्त विधि से छेदन आदि में दोष नहीं है
 जैसा गीता में भगवद् वचन है। जिस को अहंकार नहीं है और जिस की
 बुद्धि लिप्त नहीं होती वह पिंड ब्रह्मांड का अभिमान त्यागने से इन लो
 को को मार कर भी न मारता है न वचन पाता है अर्थात् देहाभिमान के

त्यागसे आत्मा अकर्ता है और अकृतत्वमें पाप का संभव नहीं- इस कारण है
त निषेध के प्रकाशार्थ किया पद की योजना नहीं है ॥ तथा शतार्थ ब्रा-
ह्मण में छेदन ऋजूकरण शब्द विधि द्योतक हैं मंत्र में योजना के लिये
नहीं है इस कारण प्रार्थना ग्रहण द्योतक किया पद युक्त किये गये ब्रह्म-
वादियों को विचारना चाहिये ॥१॥ महाभारत में लिखा है कि जो गौओं
का पति वैल है यह मूर्ति मान स्वर्ग है जो पुरुष उसे गुण वान वेद पाठी को
दान करै ब्रह्म स्वर्ग लोक में प्रतिष्ठित होता है। हे भरत श्रेष्ठ ये (बछड़े) नि-
श्चय प्राणियों के प्राण कहे जाते हैं उस कारण जो पुरुष गौ को दान कर-
ता है यह प्राणों को देता है ॥ इस प्रमाण से वत्स प्राण रूप है (२) भवि-
ष्य पुराण में ब्रह्माजी का बचन है यह सूर्य की पुत्री गौ पृथिवी रूप कही
है सब लोकों के कल्याणार्थ और यज्ञ सिद्धि के लिये उत्पन्न हुई १ एक
ही कुल दो रूप वाला किया गया जो कि ब्राह्मण और गौ हैं एक में मंत्र-
स्थित हैं एक में इवि स्थिति है ॥२॥ गौओं से यज्ञ प्रवृत्त होते हैं गौओं
से देवता भले प्रकार वृद्धि युक्ति है और छ अंग पद कम सहित चारों वेद
गौ के द्वारा भले प्रकार उदय वा उन्नति को प्राप्त हैं ३ ब्रह्मा और विष्णु सदा
गौ के शृंग मूल में भले प्रकार आश्रित हैं अचर (क्षेत्रादि) और चर ग-
गा आदि सब तीर्थ शृंगाग्र पर स्थित हैं ४ सर्वभूत मय महादेव जी शिर के
मध्य स्थित हैं देवी पार्वती ललाटाग्र पर और कार्तिकेय जी नासाग्र पर स्थि-
त हैं ५ कम्बुल, और अश्वतर नाम नाग नासा पुट से अच्छे रिक्षित हैं अग्नि-
नी कुमार देवता दोनों कान में और सूर्य चन्द्रमा दोनों नेत्र में स्थित हैं-
६ सब वायु दांतों में स्थित हैं वसुण देवता जिह्वा में स्थित हैं इंद्र के सर-
स्वती और दोनों गण्ड स्थल में यम कुबेर स्थित हैं ७ दोनों ओष्ठ में दो-
नों संध्या और गीवा में इन्द्र देवता भले प्रकार आश्रित हैं लक्ष्मण देवता में विष्णु

सप्त और वसु स्थल पर साध्य देवता संस्थित हैं ८ चार चरन रखने वाला
संपूर्ण धर्म स्वायंजंघाओं में स्थित है खुर के मध्य गंधर्व और खुर के अ
ग्र पर पन्नग स्थित हैं ९ और खुरों के पश्चिमांगों पर अप्सराओं के गण
स्थित हैं १० रुद्र और सब साधियों में वसु देवता स्थित है १० पितर
श्रेणी तट पर स्थित हैं सोम लाङ्गूल (पूछ) पर आश्रित है सूर्य की पि-
ण्डी रूप किरण बाल (केश) पर व्यवस्थित हैं ११ गो मूत्र में साक्षात्
गंगा और गोवर में यमुना स्थित है दुग्ध में सरस्वती देवी और दही में न
र्मदा संस्थित है १२ ब्राह्मणों का परम गुरु आग्नि देवता स्वयं घृत रूप है
अर्द्धांस कोटि देवता रोमों में संस्थित हैं १३ पर्वत, वन, कानन सहित पृ
थिवी उदर में जाननी चाहिये गौओं के अंग में जो पयोधर हैं वे चारों पूर्ण
सागर हैं १४ हे देव श्रेष्ठ देवता असुर मनुष्य सहित यह सब जगत जिस
प्रकार गौओं में प्रतिष्ठित है यह सब वर्णन किया १५ स्कंद पुराण में लि
खा है वन में बसती हैं अरक्षित तृण और जलो को खाती पीती हैं दूध
देती हैं बैल सवारी में काम देते हैं पाप को दूर करती हैं यह जीव लोक
गौओं के रस से जीवता है १६ संतुष्ट गौ पाप को दूर करती हैं दान की हुई
गौ स्वर्ग में पहुँचाती हैं भले प्रकार रक्षित धन को प्राप्त कराती हैं गौओं
के तुल्य कोई धन नहीं है १७ तृण घास को खाती हैं और नित्य पाप नाश

आरामना को विशेष रुद्धि को देती है वही आर्य पुरुषों से भोगा जाता है
गौओं के तुल्य कोई धन नहीं है १८ भुक्त्वाणो को वन में चर कर और अर
क्षित जलो को पीकर अमृत को देती हैं और जिन के गोवर आदिलोक को
पवित्र करते हैं गौओं के तुल्य कोई धन नहीं है १९ हारीत ऋषिका क्वचन
हैं जो पुरुष वद्धत दूध देने वाली गौ ब्राह्मण को दान करै वह आप को औ
जो रताना के सात २ कुल को स्वर्ग में वास देवै २० महा भारत में लि-

खा है प्रतापवान राजा अम्बरीष अर्बुद गो ब्राह्मणों के अर्थ दान करके देश
सहित स्वर्ग को गया २१ महा तेजस्वी राजा प्रसेनजित बछड़ा सहित एक
लक्ष गौओं का दान करके अति उत्तम लोकों को गया २२ जिस लोक में सु
नहरी महल हैं और शय्या रत्नों से जड़ित वा प्रकाशित हैं तथा जहां अष्ट
अम्बरा हैं वहां गोदान कर्ता जाते हैं २३ हे राजन् गोदान करने वाला पुरु
ष गौमाता से उत्पन्न दुग्धरूप जल को पीकर नरक को नहीं जाता है और सूर्य
वर्ण विमान द्वारा स्वर्ग में विराजता है २४ दिव्य आभरणा से भूषित सु
दरवेश वाली सुश्रोणी सैकड़ों अष्ट स्त्रियां उस विमानस्थ पुरुष को कीड़ा
कराती हैं २५ और वेणु वल की नाम, वाजे और हरिणाक्षी स्त्रियों के द्वारा
तथानुपूर शब्दों से सोता हुआ जागता है २६ गौ के जितने रोम होते हैं
उतने वर्ष तक स्वर्ग में प्रतिष्ठित होता है जो वह कर्म फल द्वारा स्वर्ग से
च्युत हुआ तदनंतर वह लोक में गो मान पुरुषों के कुल में जन्म लेता
है ॥ २७ ॥ तिसी कारण से गौ अवध्य है - पाहिले मंत्र का भाष्य समा

म हुआ - दूसरे मंत्र का भाष्य अध्यात्मम्

हे प्राणो दानव्यान् रूप पवित्र (श० ११३२+३) तू वसोः ज्ञान य
ज्ञ का (श० १७२६) पवित्र, शोधक असि, है - हे मानस कमल
वा मातृ चूर्ण वायु के व्यष्टि शिरतुम् (श० ६५३८ वा ६२२२४
वा ६५३४) द्यौः, स्वर्ग रूप वा यज्ञ पुरुष का शिर सूर्य रूप (श० ६
३१६) असि, हो पृथिवी इन्द्रिय मन बुद्धि का आधार सब लो
कों में अष्ट योग भूमि (श० २१४३०) असि, है मातरिष्वनः, प्राण
वायु का, चर्म दीपक मानस सूर्य (श० ६४२१६) असि, है विष्णु
धा, अपने तेज से सब देह वा ब्रह्मांड का धारक असि, है, हे मानस
१३ १४ १५
कर्मणः कर्मणः धाम्नाः दन्ति शक्ति रूप आ किरण से, हुं

रुद्रिणाञ्चो, मौं, हौं; योग से ऊर्ध्व मुख होकर कुटिल मत हो तैत्तिरीय
 जपति; आत्मा (श० १७१-११ तथा ६५२-१६) मौं, हौं
 त् योग किया में कुटिल मत हो ॥२॥ अथाधिदैवम्-
 इस दूसरी कण्डिका में तीन मंत्र हैं पलाश शाखा में पवित्र बांधने
 का मंत्र का० ४२१५-१६ दूध धारण केलि ये उखा ग्रहण करने
 का मंत्र का० ४२१६ चूल्हे पर चढ़ाने का मंत्र का० ४२२० ओं वसो
 पवित्रमिति प्रजापति ऋषियं जुषी उष्णिक् छन्दो वायु देवता १ द्यौ
 रसीति दैवी जगती छन्द उखा देवता २ मातरिश्चन इति प्र० ऋ० ज
 गती छन्द उखा देवता ॥३॥ मन्त्रार्थः ॥ पूर्व मंत्र द्वारा हवि इन्द्र
 और महेन्द्र के योग्य होकर विश्व धारण में समर्थ हुआ उस दुग्ध-
 धारण के अर्थ उखा अर्थात् हांडी को विश्व तेज से रुद्धि देते हैं हे प
 वित्राभिमानि देव वायु तुम (श० १७१-१२) वसो; ईश्वर निवा
 सभूत विश्व धारक क्षीर रूप हवि के, पवित्र, शोधक, आसि; हौं
 हे उखाभिमानि देवता तुम द्यौः, जल रुद्धि कारक स्वर्ग लोक रूप
 आसि, हौं पृथिवी, विश्व तमि हेतु भूत दुग्ध के धारण करने से स
 र्वधार पृथिवी रूप, आसि; हौं, हे उखाभिमानि देवता तुम मात
 रिश्चन; वायु के, घर्मे; संचार स्थान अन्तरिक्ष लोक रूप, आसि
 हौं, विश्व धा; हवि द्वारा विश्व धारण करने वाले, आसि हौं पूरमाणा
 धाम्ना, ईश्वर सम्बन्धी तेज से दृढस्व, रुद्धि युक्त हो, मौं, हौं; कु
 टिल मत हो अर्थात् क्षीर को भले प्रकार धारण कर तैत्तिरीय ज
 पति; यजमान, मौं, हौं ऋषीत् किया में कुटिल मत हो ॥२॥

प्रश्न— विराट् अन्न है (श० १२२२४५) और अन्न हवि है तो पवि
 त्र रूप वायु ब्रह्मांड और पिंड में किस प्रकार वर्तमान है— उत्तर—

४
१४.४.२००१ ३१३ ३२.१९३
३६ २९३ १५ १०.१/४ (५)

ब्रह्मभाष्यम्

महाभारत शान्ति पर्व मोक्षधर्म के उत्तरार्ध में व्यासजी का वचन है
वायु सब ओर से प्राणियों की श्वाक २ चैष्टा को वर्तमान करता है और
र प्राणियों के प्राणजीवन देने से प्राण कहाता है जो प्रवह नाम प
हिला वायु है वह प्रथम मार्ग में धूम और उष्ण से उत्पन्न अथ समूहों
को प्रेरणा करता है वर्षा काल को पाकर वही विद्युत् रूपों से बड़ा तन
स्वी होता है २ जो दूसरा वायु गरजता हुआ चलता है और जो निराल
चन्द्र आदि ज्योतिष पदार्थों का उदय करता है वह आवह नाम वायु है
जानी पुरुष जिस को देह के मध्य उदान कहते हैं और जो वायु चारों
समुद्र से जल को धारण करता है और उठा कर आकाश में जी मूतना
म वादलों को देता है ४ और जो जी मूतों को जल से युक्त करके पर्जन्य दे
वता को देता है वह तीसरा बड़ा वायु उद्ग्रह नाम है (५) जिस से उष्ण मान
और एक स्थान से दूसरे स्थान पर पड़ चाये हुए वादल श्वाक २ होते हैं और वर्षा
रंभ करने वाले वादल घन (भरे) अघन (रिती) होते हैं (६) जिस वायु से
मिले हुए वादल श्वाक २ होते हैं इस कारण उन गरजने वालों के नाम
नद होते हैं रक्षण के लिये प्रकट वे भी मेघ नाम को पाते हैं अर्थात् स
हीन फल की समान नाश को नहीं पाते (७) जो यह वायु देवताओं
के विमानों को आकाश मार्ग में चलाता है वह गिरि मर्दक चोया
वायु संवह नाम है (८) वृक्ष पर्वतों को तोड़ने वाले रूखे वेग वान
जिस वायु से खडित मेघ उस के साथी होते हैं वे वलाहक कहाते
हैं ॥ ४॥ लोक नाश दर्शाने वाले धूम के तु सम्बर्त आदि मेघ जो उ
त्पात हैं उन की जिस से गति है वह गरजने वाला बड़ा वेग वान प
चवां वायु विवह नाम है ॥ १०॥ जिस वायु में दिव्य रूप की और गि
रने वाले जल आकाश मार्ग से चलते हैं और जो आकाश गंगा के

पवित्रजल को आकाश में थाम कर स्थित है ११ एक किरण रखने वाला सूर्य दूर से ही जिस वायु में प्रति हत होकर अनंत किरणों के उत्पत्ति का कारण होता है और जिस से पृथिवी प्रकाशित होती है १२ सीण चंद्रमा जिस वायु से वृद्धि पाता है अर्थात् सम्पूर्ण मंडल होता है वह जयमानों में श्रेष्ठ छटा वायु पर वह नाम है १३ जो वायु कल्पान्त काल पर सब प्राणियों के प्राण को निकाल डालता है दोनों यम राज और मृत्यु जिसके अनुगामी हैं १४ हे ब्रह्म विद्या का विचार करने वालो तुम प्राणि बुद्धि के द्वारा भले प्रकार उस वायु का साक्षात्कार करो जो कि ध्यान और अभ्यास में रमने वाले योगियों की मोक्ष के लिये समर्थ होता है १५ दक्ष प्रजापति के दश सहस्र पुत्रों ने जिस वायु को पाकर वेग से ब्रह्मांड के अंत को पाया १६ जिस वायु से स्पर्श किया हुआ प्राणी परस्पर रूप हुआ ब्रह्म को प्राप्त करता है फिर नहीं लौटता है वह दुरति क्रम श्रेष्ठ वायु पर वह नाम है १७ स्थूल वायु का वर्णन समाप्त हुआ अब देह स्थ सूक्ष्म वायु को कहते हैं प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, रुकर, देवदत्त, धनंजय ये दश प्राण हैं १ मनुष्यों का स्वामी प्रभु प्राण वायु तो पहिला है प्राणियों के हृदय में स्थित वह प्राण सदा सब को शुद्ध करता है २ जीव में भले प्रकार आश्रित प्राण वायु निश्वास, उच्छ्वास का कारण इन्द्रिय विस्तार का संकोच करने वाला जीवात्मा का उद्धारक है ३ जीव धारण करने वाला प्राण प्राणियों के ऐसे कर्म को करता है जिस कारण प्राणियों को जीवन देता है उस कारण प्राण कहा गया ४ प्राण ही भगवान् ईश है प्राण वि

शुक्ल और ब्रह्मा है लोक प्राण से धारण किया जाता है सर्व जगत प्रा

एरूप है ५ जब तक प्राण वायु हृदय में है तब तक इन्द्रियां प्रवृत्त रह
ती हैं प्राण के लोप होने पर सब नही दीखता है तिस कारण प्राण
की रक्षा करै ६ जिस कारण अधम वायु मनुष्यों के मूत्र विषा आदि को
देह से दूर करता वीर्य मूत्र के ब्रज में स्थित है तिस कारण से अपान
कहा गया ७ समान नाम वायु खाये पीये सूधे को और रुधिर पित्त
कफ वात को गात्रों में समान पहुंचाता है ८ समान वायु कोष्ठ में
अग्नि के समीप स्थित है और सब ओर से गति करता है अन्न को ग्र
हण करता है पकाता है मल आदि को निकालता है और छोड़ता
है ९ नेत्र गात्र में अति कोप बढ़ाने वाला उदान वायु ओष्ठ मुख को
चलित करता है मर्मी को कम्पित करता है १० व्यान अंग को विन
मन करता है व्यान व्याधि को प्रकोपित करता है यह प्रीति का विना
शक और तीन प्रकार से बुढ़ापे का उत्पन्न करने वाला है ११ सिर से
नासिका के अग्रान्त तक उदान का स्थान कहाता है नाभि से पाद
तल तक अपान का स्थान कहा १२ व्यान वायु देह व्यापक है प्रा
ण सब का प्रधान है उद्धार (कै) में नाग नाम वायु कहा और नेत्रा
दि के खोलने में कूर्म वायु स्थित है १३ स्त्रीक में कृकर और ज
म्हाई में देवदत्त स्थित है लिंग मे धनंजय स्थित है वह मृत देह
को भी नही त्यागता है ॥ १४ ॥ अथा ध्यात्मम
हे प्राण उदान व्यान रूप पवित्रं तुमः वसोः आत्मनिवास भूत
देह रूप हवि के शत धारः (शं) आनद (तं) अमृत आनंद मृत
की धारा रखने वाला पवित्रं शोधक अप्सि हौ वसोः ईश्वर
निवास भूत ब्रह्माड रूप हवि के (श० १२२ ४५) सहस्र धा
र रकार पर शक्ति सहस्र ज्योतिः पर नाम ब्रह्म ज्योति की या

हे समुत्तम श० १२३१

राखने वाला पवित्रं, शोधक, आसि, है, हे ज्ञान इन्द्रिय समूह
 देवः, इन्द्रियों का प्रकाशक, सविता, मनु (श० ४४११)
 शतधारेण, आनंदामृत धारा वाले, सुधा, अच्छे पवित्र कार
 क, बसो, ज्ञान यज्ञ के, पवित्रेण, प्राण उदान व्यान रूप पवित्र
 से, त्वो, तुमको, पुनातु, पवित्र करो मन रूप अध्वर्यु (श० १
 ५१२१) पूछता है हे दूध दोहने वाले जीवात्मा वा योगी आधि-
 भूत, आधिदैव, अध्यात्म सम्बन्धी बुद्धि रूप गौशों के मध्य तुमने
 को, किस बुद्धि रूप गौ को, अधुस्, दोहा है ॥३॥

अथाधिदैवम् ॥ तीसरी कण्डिका में तीन मंत्र हैं- उखा में पवि
 त्र स्थापन का मंत्र का० ४२२१ दूध के पवित्र करने का मंत्र का०
 ४२२३ किस गौ को दोहा यह प्रश्न का० ४२१४— ओं वसो
 पवित्र मसीति प्र० ऋ० यजुषी वायुर्देवता १ देवस्तेति प्र० ऋ० सा
 म्नी विष्टुष्छन्दः पयोदेवता २ कामधुस इति प्र० ऋ० देवी वहती
 छन्दः प्रश्नो देवता ॥३॥ हे शाखा पवित्राभिमानि देवता तू व-
 सोः यज्ञ का, शतधारेण, (श) प्रजापति (त) अमृत = प्रजापति
 सम्बन्धी अमृत की धारा रखने वाला, पवित्रं, शोधक, आसि, है तथा
 वसोः, प्रजापति निवास हेतु दुग्ध का, सहस्र धारे, (सहस्) ज्यो-
 ति (र) दाता = ब्रह्म ज्योति दाता अमृत की धारा रखने वाला,
 पवित्रं, शोधक, आसि, है, हे क्षीर सविता, जगत का उत्पन्न क-
 रने वाला, देवः, परमात्मा, शतधारेण, प्रजापति सम्बन्धी-
 अमृत की धारा रखने वाले, सुधा, अच्छे शोधक, वसोः यज्ञ
 सम्बन्धी, पवित्रेण, पवित्र से त्वो, तुम, पुनातु, पवित्र करो,
 अध्वर्यु तीन बार पूछे हे दूध दोहने वाले तुमने, काम, काम,

काम, भक्ति, ज्ञान प्राप्ति हेतु भूत किस गौ को अधुँस; दोहा है ॥३॥ अ-
थाध्यात्मम्- इस गौ को दोहा इस प्रकार दोगधा से कहे जाने पर मनश्च
र्य कहता है सो, वह अधिभौतिका बुद्धि, विश्वोयुः जगत स्थित का कार
ण है (सो) वह अधिदेविका बुद्धि, (विश्व कर्मा,) जगत उत्पन्न करने
वाली है (सो) वह अध्यात्म का बुद्धि (विश्वधायाः) सब की धार
ण करने वाली है, हे इन्द्रिय समूह (इन्द्रस्य) यजमान के (श० ५-२
५-७) भाग; अंशत्वा, तुम को सोमेन, प्राण से (श० ७-३-१-४५)
ज्ञात न च्छि, दृढ निश्चल करता हूँ, विष्णो, हे यज्ञ पुरुष- (श० १-१
२-१३) हव्यं, जीवात्मा को (श० १-२-१-२०) रक्ष, संसार बंधन से रक्षा
करो ॥४॥ अथाधिदैवम् ॥

चौथी कड़िका में पांच मंत्र हैं प्रथम प्रश्न के उत्तर वाला, का० ४-२-२५
द्वितीय प्रश्न के उत्तर वाला का० ४-२-२६ तृतीय प्रश्न के उत्तर वाला का
४-२-२५ दही जमाने का मंत्र, का० ४-२-३३ विष्णु से प्रार्थना करने का
मंत्र, का० ४-२-३४ ओं सविष्वा युरिति प्रजा० ऋषि देवी वहती छन्दो
गो देवता १ सा विश्व कर्मेति प्रजा० ऋषि देवी पंक्ति छन्दो गो देवता २
सा विश्व धाया इति प्रजा० ऋषि उक्त छन्दः पयो देवता ३ इन्द्रस्य त्वे
ति प्रजा० ऋषि र्याजुषी जगती छन्दः इन्द्रो देवता ४ विष्णो हव्य मिति
प्रजाः ऋषि र्याजुषी गायत्री छन्दः पयो देवता ॥ अथ मंत्रार्थः पूर्वोक्त
प्रश्न के उत्तर में (इस गौ को दोहा) दोहने वाले से कहे जाने पर अ-
ध्वर्यु उत्तर देवे, सो, वह कामना की सिद्धि देने वाली गौ, विश्वोयुः,
जगत स्थित की कारण है, सो, वह भक्ति प्राप्ति की कारण गौ, विश्व
कर्मा, आन्य रूप हवि देने हेतु फल रूप वृष्टि के द्वारा सृष्टि रचना
करने वाली है, सो, वह ज्ञान दाता गौ, विश्व धामोः तदापदक

प हवि यज मान को पान करने वाली है (श० १२।२।४।५) हे क्षीर, इन्द्र
 स्य, ईश्वर के भाग, भाग, त्वा, तुभे, सोमेन, प्रातः कालीन होम से बचे हुए
 एदही के द्वारा, आतनचि, दही के लिये कड़ा करता हूं, विष्णो, हे य
 ज्त्त पुरुष, हव्य, हविको, रक्ष, रक्षा करो ॥ अथाध्यात्मम् ॥ व्रतपते
 हे ज्ञानयन्त्र के स्वामी अग्ने, सायुज्य मोक्ष में इव्य रूप जीव को अपनी आ
 त्मा में लय करने वाले हे विष्णु, व्रत, ज्ञानयन्त्र के अनुष्ठान को, चुरि
 ष्यामि, करूंगा, तते, शक्य, उसके करने को समर्थ होऊँ, तते,
 वह, मे, मेरा ज्ञानयन्त्र, राध्यतां, निर्विघ्न होता फल प्राप्ति तक सिद्ध
 हो, इदं अहं, यह मैं यजमान, अनृतात्, संसार से, सत्य, ब्रह्म को
 श० १४।८।५।१ उपैमि, प्राप्त करूँ ॥ ५ ॥ अथाधिदेवम् ॥ पाँचवीं कंठि
 कामे कर्म के अनुष्ठान की प्रतिज्ञा है, का० २।१।१९ ओ अग्ने इति प्रजा० ऋ
 षि आधी उषिाक् छन्दोऽग्निर्देवता १ इदं महमिति प्र० ऋ० साम्नी गाय
 त्री छन्दोऽग्निर्देवता २ ॥ अथ मंत्रार्थः ॥ व्रतपते, हे अनुष्ठेय यन्त्र के स्वामी
 अग्ने, विष्णु व्रत, हविर्यज्ञ के अनुष्ठान को, चुरिष्यामि, करूंगा, तते,
 शक्य, उसे, कर सकूँ, तते, वह, मे, मेरा यन्त्र राध्यतां, निर्विघ्न होता
 फल पर्यंत सिद्ध हो, इदं अहं, मैं, अनृतात्, मनुष्य भाव से, सत्य,
 देव भाव को (श० १।१।१४) वा सायुज्य मोक्ष को, उपैमि, प्राप्त करूँ ॥ ५ ॥
 अथाध्यात्मम् ॥ ब्रह्मज्योतिरस अमृतरूप जल को धारण करने वाले
 हे पात्र हृदय, त्वा, तुभे, कौन युनाक्ति, स्थापन करता है, स, वह प्र
 जापति ब्रह्म (श० १३।६।२।८) त्वा तुभ को युनाक्ति, स्थापन करता है,
 कस्मै, किस प्रयोजन के लिये, त्वा, तुभ को युनाक्ति, स्थापन करता है,
 तस्मै, तत्पदार्थ रूप ब्रह्म की प्राप्ति के लिये, त्वा तुभ को युनाक्ति, स्थापन
 करता है हे मन हे बुद्धि, त्वा तुम दोनों को, कर्म्मणो, ज्ञानयन्त्र की सिद्धि

केलिये ग्रहण करता हूँ त्वो, तुम दोनों को वेधाय, विष्णु भाव प्राप्ति केलि
 ये ग्रहण करता हूँ ॥६॥ देह रूप शकर से इन्द्रिय रूप हवि का प्रथक्
 करना और प्रोक्षण केलिये ज्योति रस रूप जल का धारण इत्यादि मन
 का व्यापार है। उस हवि भाग का धारण और हार्दन्तरिष् रूप (श० ७)
 ५। १२६) उलूखल में डालना फिर उठाना इत्यादि बुद्धि के व्यापार है
 अथाधिदैवम्॥ छठी कांडिका में दो मंत्र हैं पहले में जल का प्र
 णयन और आहवनी यामि के उत्तर प्रदेश में धारण है का० २। ३। २
 ३। दूसरे में शूर्प और अग्नि होत्र हवणि का ग्रहण (का० २। ३। १०) -
 ओं कस्त्वा युनक्तीति प्र० ऋ० साम्नी विष्टुष् छन्दः प्रजापतिर्देवता १ क
 र्म्मणे वामिति प्र० ऋ० प्राजापत्या गायत्री छन्दः सुक् शूर्पौ देवते २
 अथ मंत्रार्थः अथर्वयज्ञारम्भ कर्म में अपने कर्त्तापान को दूर कर
 के प्रजापति के यज्ञ कर्त्तृत्व को प्रश्नोत्तर रूप मंत्र वाक्यों से सिद्ध कर
 ता है - हे प्रणीतजनों के धारण करने वाले पात्र त्वो, तुम्हें, कोन
 युनक्ति, आहवनीय के उत्तर भाग में स्थापन करता है, स, वह प्रजा
 पति ब्रह्म (श० १३। ६। २। ८) त्वो, तुम्हें, युनक्ति, स्थापन करता है, क
 मे, किस प्रयोजन केलिये त्वो, तुम्हें, युनक्ति, स्थापन करता है॥ त
 मे, उस प्रजापति की प्रीति केलिये - त्वो, तुम्हें, को, युनक्ति, स्थापन क
 रता है - जैसे भगवद्वाक्य है हे अर्जुन तू जो करता है जो खाता है जो हो
 म करता है जो दान करता है जो तप करता है उस को मेरे अर्पण कर १
 शुभ अशुभ फल रूप कर्म बन्धनों से छूट जायगा माया के त्याग और
 जीव ईश्वर के एकत्व से युक्तात्मा तू विमुक्त हुआ सुभ को प्राप्त करेगा -
 २ हे अग्नि होत्र हवणि हे शूर्प त्वो, तुम दोनों को कर्म्मणे, हविर्यज्ञ के
 लिये, युनक्ति, स्थापन करता है त्वो, तुम दोनों को वेधाय, सूचित क-

मेमें व्याप्ति के लिये स्थापन करता हूँ- शकट में स्थित सतुषतण्डुल-
 को हवि के लिये पृथक् करना और प्रोक्षण के लिये जल का धारण कर-
 ना इत्यादि आग्नि होत्र हवाणि के व्यापार हैं। और तण्डुल भाग का धारण-
 करना उलूखल में डालना फिर उठाना इत्यादि श्रूर्प के व्यापार हैं ॥ ६ ॥
 अथाध्यात्मम् मन और बुद्धि के संस्कार से, रक्षः, अज्ञान, प्रत्युष्टम्,
 दग्ध हुआ अरातयः, कामादि शत्रु प्रत्युष्टा, दग्ध हुआ, रक्षः, बुद्धि आदि
 में भरा हुआ मोह रूप राक्षस निष्ठ में, सम्पूर्ण सन्तप्त हुआ अरातयः,
 ज्ञान यन्त्र के प्रति बन्धक क्रोध आदि निष्ठमा, निःशेष सन्तप्त हुआ उरु,
 विस्तीर्ण अन्नरिक्षं, मानस कमल को (शं० १४।४।३।११) अन्वेमि, अ-
 नुसरण करके जाता हूँ ॥ यहां दो प्रश्न हैं कि योग सिद्धि से पूर्व क्या प्रयत्न
 है १ योग सिद्धि में क्या अवस्था है ॥ २ उत्तर योग यन्त्र का विस्तार देने-
 वाले जो देवता (इन्द्रिया) हैं उन्होंने ने असुर राक्षसों (अज्ञान कामादि)
 के आसंग (कर्तृत्वाभिमान) से बहुत भय किया उस कारण विघ्न कर-
 ने से नाशक इस असुर समूह को नष्ट किया इसी कारण अध्वर्य और
 योगीजन भी राक्षसों को यन्त्र मुख से ही नष्ट करते हैं (शं० १।१।२।३)
 दूसरा उत्तर- जो इस प्रकार जानता है कि मैं ब्रह्म हूँ वह यह सब होता
 है उस के देवता प्रथक् नहीं हैं और वे देवता इस की अभूति (सर्वात्मक)
 ब्रह्म भावन होने के लिये समर्थ नहीं होते हैं क्योंकि वह योगी इन्हों
 का आत्मा ही होता है १४।४।२।२१- अथाधिदैवम् ॥
 सातवीं कण्डिका में दो मंत्र हैं- आग्नि होत्र हवाणि और श्रूर्प के तपाने से
 राक्षसों के जलाने का मंत्र का० २।३।११ अन्नरिक्ष में चलने का मंत्र का
 २।३।१२। ३ प्रत्युष्टं राक्ष इति प्र० ऋ० आसुरी वहती छन्दो रक्षो देव-
 ता १ उर्वन्नरिक्ष भिति प्र० ऋ० मा० गायत्री छन्दो ब्रह्म रक्षो प्रो देवता

अथ मंत्रार्थः अग्नि होत्र हवाणि और मूर्प के तपाने से इनमें स्थित राक्षः
 राक्षजाति प्रत्युष्ट ७ दग्ध इ ई अरातयः यत्तु में विघ्न करने वाले शत्रु प्र
 त्युष्टा दग्ध इ ए और मूर्प आदि में छिपे हुए राक्षः ब्रह्म राक्षस निष्टम ७ निः
 शेष संतम इ ए अरातयः यत्तु सिद्धि में विघ्न कारक शत्रु निष्टमानि शेष
 सन्तम इ ए उरु, विस्तीर्ण अन्तरिक्ष अव काश को अन्वेमि, प्राप्त करता
 हूँ ॥ ७ ॥ अथाध्यात्मम् ॥ हे प्राणामि (श० १०३० ६१८) तुम धूः
 हिंसक अप्सि हो धूर्वन्त, मारने वाले शत्रु वाह्य रति को धूर्व, मारो यै जो
 काम अस्मान्, हम योगीजनों को धूर्वति, मारता है अर्थात् समाधि में विघ्न क
 रता है त, उसको धूर्व, मार वयं, हम यै जिस अज्ञान के धूर्वाम, मारने को
 उद्यत हुए त, उसको धूर्व, नाश करो - हे देह रूप शक्त तुम देवाना इन्द्रि
 यों केश १२। ६१०४ + १६ वृन्दिताम ७ अतिशय हवि के प्रापक सन्ति
 म, अतिशय शुद्ध प्रप्रितम हवि से अति शय पूरित जुष्टतम, इन्द्रियों के अति
 शय प्रिय देव हूतम, इन्द्रियों के अतिशय आद्वान करने वाले आसि, हो ॥ ८ ॥
 अथाधिदैवम् ॥ शक्त में स्थित अग्नि के अतिक्रमण का अपराध दूर
 करने को शक्त धुर के स्पर्श का मंत्र का० २। ३। १३ ईषाग्र का भूमि स्पर्श
 होने के लिये उपस्तम्भन के स्पर्श का मंत्र का० २। ३। १४ ओं धूरसी
 ति प्र० अ० यजुषी भूर्देवता १ ओं देवाना मित्या रभ्य ह्यापी दित्यन्नस्य प्र
 अ० यजुषी भूर्देवता ॥ २ ॥ मंत्रार्थः — हे शक्त में स्थित अग्नि तुम
 धूः हिंसक, अप्सि, हो, धूर्वन्त, मारने वाले पाप को धूर्व, विनाश
 करो, यै, जो, राक्षसजाति अस्मान्, हम अध्वर्यु यजमान आदि को
 धूर्वति, यत्तु विघ्न से मारने को उद्योगी हुआ त, उसको, धूर्व, मारो
 वयं, यत्तु का अनुष्ठान करने वाले हम यै, जिस क्रोध आदि रूप बै
 री के धूर्वाम, मारने को उद्यत हुए त, उसको, धूर्व, मारो - हे श

कदाभिमानी देवता तुम देवानां, इन्द्र आदि देवताओं के बन्धि तम, तपु
 ल रूप हवि के अतिशय प्रापक, सन्नि तम, अतिशय शुद्ध, पप्रितम,
 हवि से अतिशय पूरित, जुष्ट तम, देवताओं के अतिशय प्रिय, देवदू
 तम, देवताओं के अतिशय आह्वान करने वाले, आसि, हो क्योंकि त-
 एदुल पूर्ण शकट को देख कर देवता बुलाये से शीघ्र आते हैं ॥ ८ ॥
 अथाध्यात्मम् ॥ हे देह रूप शकट तुम, अद्भुतम, अकुटिल, हवि
 र्धानमे, इन्द्रिय जीव रूप हवि के धारक पोषक आसि, हो, दृढ हस्त
 विराट रूप से वृद्धि को पाओ, मा, हो, टेढा मत हो, ते, तेरा, यन्त्र
 पति, आत्मा, मा, ह्या ऋषीत् समाधि में कुटिल मत हो, विष्णु
 योगी, देह रूप शकट तुम को, क्रमों, आगे हण करो, इस-
 में श्रुति प्रमाण है, इन देवताओं ने विष्णु रूप हो कर इन लोकों को
 आक्रमण किया, उसी प्रकार यह यज्ञ मान विष्णु रूप हो कर इन लोकों को
 आक्रमण करता है (शं० ६।७।२।१९) वाताय, प्राण वायव्य केलि
 ये (शं० १।१।२।१४) और (शं० ३।१।३।२६) उसे, विस्तारवान-
 हो, रक्षी, अज्ञान, अपहृत, निरादर किया गया, पञ्च, पञ्चज्ञा
 नेन्द्रियों को जो कि प्राण और अन्न रूप हैं ॥ ताण्ड्य ब्राह्मण (शं० १।१५
 २ शं० ३।८।३।८) यच्छन्तां, निग्रह करौ ॥ प्रश्न १ (शं० १।१।२।१६)
 में पञ्चशब्द का अर्थ पांच अंगुली लिखा है वह कैसे है उत्तर अंग
 में ही लयाजिन का वे विषया सक्त इन्द्रियां पंचा गुली कहाती है दू-
 सरा प्रश्ना इन्द्रियज्ञान के अर्थ अति गूढ़ शब्द क्यों कहा उसके उत्तर
 में श्रुति प्रमाण है कि ब्रह्मज्ञान प्राप्ति के पश्चात् इन्द्र मख बान-
 अर्थात् ज्ञान यन्त्र का अधिकारी हुआ उसको परोक्ष में मघवान-
 कहते हैं क्योंकि देवता ब्रह्मज्ञान को परोक्ष चाहने वाले हैं ॥ ९ ॥

अथाधिदैवम्, इस कण्डि का में ४ मंत्र हैं, प्राकट परचढ़ने का मंत्र
 २।३।१५। हवि के देखने का मंत्र, का० २।३।१६। तृणा आदि को नि का
 लकर हवि के स्पर्श का मंत्र, २।३।१७। १८ हवि ग्रहण करने का मंत्र
 २।३।१८। ओं विष्णु स्त्वेति, प्र० ऋ० याजुषी गायत्री छन्दो हविर्देवता
 ॥१॥ उरुवाता येति प्र० ऋ० दैवी पंक्ति छन्दो हविर्देवता ॥२॥ अप
 हतमिति प्र० ऋ० याजुषी गायत्री छन्दो रक्षो देवता ॥३॥ यच्छन्ता
 मिति प्र० ऋ० दैवी पंक्ति छन्दो हविर्देवता ॥४॥ मंत्रार्थः, अहुतेमं,
 अकुटिल हविर्धोनुं, ब्रीहि रूप हवि का धारण और पोषण करने वा
 ला असि, है, दृढस्व, वृद्धि को पाओ, माँ, ह्यो देदा मत हो, तै, तेरा
 यज्ञपतिः, यज्ञमान, माँ, ह्यो ऋषीन्, यज्ञ किया में कुटिल मत हो,
 हे शकट, विष्णो, मेरे देह में स्थित आत्मा रूप विष्णु, त्वो, तुझपर
 क्रमतां, आरोहण करो, हे शकट, वाताय, सब के जीवन रूप समष्टि
 प्राण के अर्थ उरु, विस्तीर्णी हो, वायु रूप प्राण के प्रवेश से, हवि को
 मंत्र द्वारा प्राण युक्त किया जाता है जिस कारण रक्षो, यज्ञ विधात
 कराक्षस अपहतेमं, नष्ट किया गया उस कारण पञ्च, पांच अंगु
 ली (श० १।१।२।१६) यच्छन्तामं, हवि ग्रहण के अर्थ दृढ मिलाले
 अथाध्यात्मम् ॥ हे इन्द्रिय समूह सवितुः प्रेरक वाद्वितीय जन्म दा
 ता गुरु, देवस्य, देवता की प्रसेवे, प्रेरणा वा आज्ञा होने पर अग्रये
 ब्रह्म के अर्थ (श० ५।३।५।३२) जुष्टे, प्रिय, त्वो, तुम्हें अश्विनो, प्राण उ
 दान की (श० ४।१०५।१६ तथा श० ४।३।१।२२) वाहुभ्यां, ग्रहण
 शक्तिओं से पूषणो, मन की १४-४-२१६ हस्ताभ्यां, ग्रहण शक्तियों
 से अक्लामि, ग्रहण करता हूँ, अग्नीषोमाभ्याम्, प्रकृति पुरुष के
 अर्थ १०-४-१६ तथा ११-१६-१६ तथा १२-३-४-५ जुष्टे, प्रिय, तुम्हें

को गृह्णामि, ग्रहण करता हूँ (व्या०) श्रुति में आश्विनी कुमारों का अर्थ
 द्यावा पृथिवी लिखा है आश्विनी कुमार पुष्कर माला धारी हैं सो पृथि-
 वी का पुष्कर अग्नि और स्वर्ग का पुष्कर सूर्य है और द्यावा पृथिवी
 का अर्थ श्रुति में प्राण उदान लिखा है पूषा का अर्थ सूर्य है और
 रमन और सूर्य एक हैं ॥ १० ॥ अथाधिदैवम् ॥

इसकाण्डिका में हवि ग्रहण का मंत्र है का० २।३।२०।२२। ओं देवस्य त्वे-
 ति प्र० ऋ० प्राजापत्या वहती छन्दः सविता देवता १ अग्नये जुष्टमिति
 प्र० ऋ० प्राजापत्या गायत्री छन्दो लिङ्गोक्त देवता २ अग्नीषोमाभ्यामि-
 ति प्र० ऋ० याजुषी पङ्क्तिः ऋन्दो लिङ्गोक्त देवता ॥ ३ ॥

अथ मन्त्रार्थः - हे हवि, सवितु, प्रेरक, देवस्य, परमेश्वर की प्रसवे,
 प्रेरणा होने पर अग्नये, अग्निके अर्थ जुष्ट, प्रिय तुम को आश्विनो, दे-
 वताओं के अर्क्षर्यु आश्विनी कुमार के भाव को प्राप्त अपनी वाहभ्यां, भु-
 जाओं से पूषा, देवताओं का भाग सुमीप धारण करने वाले पूषा दे-
 वता के भाव को प्राप्त अपने हस्ताभ्याम्, हाथों से गृह्णामि, ग्रहण
 करता हूँ तथा अग्नीषोमाभ्यां, अग्नि सोम देवताओं के अर्थ जुष्ट, प्रिय
 तुम को गृह्णामि, ग्रहण करता हूँ। अग्नि प्रायः यह कि देवताओं का ना-
 म लेकर हवि का ग्रहण उचित है। और श्रुति के अनुसार देवताओं के
 सत्य रूप होने सउन की स्मृति के साथ हवि का ग्रहण फलपर्यवसा-
 यित्व से सत्यसफल और निर्विघ्न होता है ॥ १० ॥

गुरुकेलक्षण आदि - माता पिता से शुद्ध, शुद्ध चित्त, जितेन्द्रिय-
 सब भागों के तत्व का ज्ञाता, सब शास्त्रों के अर्थ और सिद्धान्त का
 जानने वाला १ दूसरे के उपकार में निरन्तर प्रीति मान, जप पूजा आ-
 दि में तत्पर, सफल वचन वाला शान्त, वेद और वेदों के अग का पार

गामी, योगमार्गका विचारने वाला देवता का प्रिय २ वेदों का पारगामी
 आचार्य उस शिष्य को जिस जन्म को शास्त्र विधि से गायत्री उपदेश द्वा
 रा उत्पादन करता है वह सत्य है वह अजर अमर है ३ वहां इस का जो वे
 द सम्बन्धी जन्म मौजूद वन्धन से चिन्हित है उस में इस की माता गायत्री
 और पिता गुरु कहा जाता है ॥ ४ ॥

अथाध्यात्मम्

हे पुण्य पाप रूप हविशेष (भूताय) मित्र शत्रु रूप प्राणियों वा देहामि-
 मानियों के भोग के लिये (त्वो) तुझे शेष छोड़ता हूं (ने) न कि (आ
 तये) पुनर्जन्म भय से अदान के लिये- में (स्वो) ज्ञान यज्ञ को (श० ११
 २।२३) वाभ्रकुटि अथवा गगन माण्डल को (श० २।१।४।११) (अभि विष्ये
 ष्) विख्यात करूँ वा देखूँ (पृथिव्यां) देह में वर्तमान (दुर्ग्याः) मानस
 आदिकमल रूप ग्रह (दृढ हन्तां) दृढ होओ, में (उरु) विस्तीर्ण (अन्त
 रिक्षं) मानस कमल को (श० १।४।४।३।११) (अन्वामि) जाता हूँ- हे इन्द्रि
 य समूह (स्थिव्या) मानस कमल के (नाभौ) मध्य में जो कि अभय है
 (श० १।१।२।२३) (अदित्या) जीवरूप परा प्रकृति के जो कि सब की यो-
 नि है और जिस से यह सब प्रजा उत्पन्न हुआ (श० ४।१।२।४) और जिस
 का प्रमाण भगवद्गीता में भी है (उपस्थे) गोद में (त्वा) तुझ को (साद
 यामि) स्थापन करता हूँ (अग्ने) हे आत्मा रूप अग्नि (श० ६।७।१।२०)
 (अन्विष्य समूह रूप हवि को (रक्ष) रक्षा कर ॥ ११ ॥

अथाधिदैवम् ॥ इस काण्ड का में पांच मंत्र हैं ब्रीहि शेष के विचार
 का मंत्र का० २।३।२३॥ पूर्वाभि मुख होकर यज्ञ भूमि के देखने का मं
 त्र (का० २।३।२४) शकट से उतरने का मंत्र (का० २।३।२५) अन्तरिक्ष
 में चलने का मंत्र (का० २।३।२६) हवि के रखने का मंत्र (का० २।३।२७)
 ओं भूताय त्वेति प्र० अ० प्राजापत्या गायत्री जन्तो हविर्देवताः जामी

तिप्र० ऋ० यानुषी गायत्री छन्दः सूर्यो देवता ३ दृष्ट हन्ता मिति प्र० ऋ० प्रा
जा पत्या गायत्री छन्दो गृह देवता ३ उर्वन्तरि मिति प्र० ऋ० उक्त छन्दः
शकटो देवता ४ पृथिव्या स्त्वेति प्र० ऋ० साम्नी पट्टि म्छदो हविर्देवता ५—
मंत्रार्थः— हे शकट में स्थित ब्रीहिशेष (त्वो) तुभ को (भूतोय) ब्राह्मण
रूप व्यष्टि अग्नि की तमि के लिये शेष छोड़ता हूँ (नै) नकि (भूरा तये) अ
दान के लिये, मे (स्वै) यन्तु को (आभिर्विस्व्येयं) देखु (पृथिव्यां) पृथिवी
पर (दुर्या) गृह स्थान (दृहन्ता) दृढ हो संस्कृत हविले कर उतरते ब्रह्म भा
व को प्राप्त अध्वर्यु के भार से गृह क्षोभ का संभव है वह इस मन्त्र से निवार
ण किया जाता है (उहं) विस्तीर्ण (अन्तरि म्) अब काश को (अन्वेमि)
जाता हूँ हे हवि (त्वो) तुमै (पृथिव्यां) पृथिवी के (नाभौ) मध्य में (अदित्यो)
भूम्या धिष्ठातृ देवता के (उपस्थे) गोद में (सादयामि) स्थापन करता हूँ—
(अग्ने) हे अग्नि देवता (हव्यं च) हवि को (रक्षे) रक्षा करो ॥

अथाध्यात्मम्

हे प्राण उदान रूप वा हे प्राण, उदान व्यान रूप (पवित्रे) शोधक
तुम (वैष्णव्यो) ब्रह्म यन्त्र सम्बन्धी (श० १११३११) (स्थे) हौ हे इन्द्रिय समू
ह (सवितुः) गुरु की (प्रसवे) प्रेरणा होने पर (वै) तुम को (अच्छिद्रेण)
छिद्रहीन (पवित्रेण) प्राण रूप पवित्र से (श० ११८११४४ और (श० ३१२
३१२०) (सूर्यस्य) मानस सूर्य की (रश्मिभिः) किरणों से (उत्पुनामि) अ
तिशय शुद्ध करता हूँ (हे देवी) प्रकाशमान (अग्ने गुर्वै) अष्ट ब्रह्म में गमण
शील (अग्ने युवः) ब्रह्म में वर्तमान वा सूर्याग्नि को पान करने वाले (आपः)
ज्योति रस अमृत ब्रह्म रूप जल (अध) अब तुम (दमं) इस (यन्त्रे) ज्ञान-
यन्त्र को (अग्ने) अष्ट ब्रह्म में (नयते) प्राम करो (सुधांतुं) देह आदि के धार
ण करने वाले (यन्त्रपति) ज्ञान यन्त्र के रक्षक (देवयुवै) परमात्मा के चाहने

वाले अथवा आप को ब्रह्म में युक्त करने वाले (यत्तपतिं) आत्मा को (श० १५।२।१६) ^{३५} (अग्ने) ब्रह्म में प्राप्त करे ॥ १२ ॥ अथाधिदैवम् ॥ इस क
 ण्डिका में ३ मंत्र हैं, पवित्री छेदन का मंत्र, (का० २।३।३२) अति शयज
 ल के पवित्र करने का मंत्र (का० २।३।३३) अति शय पवित्र जल से पूर्ण
 आग्नि होत्रहवाणी के ऊपर चलाने का मंत्र (का० २।३।३५) ओं पवित्रे इति
 प्र० ऋ० दैवी वृहती छन्दो लिङ्गोक्त देवता, १, सवि त्व इति प्र० ऋ० प्राज
 पत्या पंक्ति ऋन्द आपो देवता, २, देवी राप इत्यारभ्य वृत्रतूर्य इत्यन्त-
 स्य प्र० ऋ० यजुषीळक्त देवता, ३, **मन्त्रार्थः ॥** हे कुशद
 य वा कुशत्रिप रूप (पवित्रे) शोधक तुम (वैष्णव्ये) यत्त सम्बन्धी (स्थे)
 हो हे जल (सवितुः) प्रेरक परमेश्वर की (श० १।१।३।१५) (प्रसवे) प्रेर
 णा होने पर (वः) तुम को (अच्छिदेण) छिद्रहीन (पवित्रेण) वायुरूप
 पवित्र से (श० १।१।३।६) तथा (सूर्यस्य) सूर्य की (रश्मिभिः) शुद्ध क
 रने वाली किरणों से (उत्पुनामि) अति शय पवित्र करता हूं (श० १।१।३।६)
 (हे देवी) प्रकाश मान (अग्ने गुवे) समुद्र में गमणशील (श० १।१।३।७)
 (अग्ने पुवे) प्रथम सोमरस का पान करने वाले (श० १।१।३।७) (आपः)
 जलो (अग्ने) अब तुम (इमं) इस (यन्ते) हविर्यज्ञ को (अग्ने) यत्त पुरु
 ष में (नयेत) प्राप्त करे (सुधातुं) देह आदि के धारण करने वाले (यत्तप
 ति) यत्त के पालन करने वाले (देवयुवे) ईश्वर के चाहने वाले (यत्तपति)
 यजमान को (अग्ने) ईश्वर में प्राप्त करे ॥ १२ ॥ अथाध्यात्मम् ॥
 हे पूर्वमंत्र का धितजलो (इन्द्रः) यजमान ने (श० ५।२।५।३) (वृत्ततूर्य)
 पापवध के लिये (श० ११।१।५।७) (युष्माः) तुम को (अवृणीत) प्रा
 र्थना किया (यूयं) तुम भी (वृत्ततूर्य) पापवध के निमित्त (इन्द्रम्)
 यजमान को (वृणीध्वम्) चाहौ, हे जल तुम ब्रह्म ज्योतिरूप होने से

(प्रोक्षता) स्वयंप्रोक्षित (स्थं) हौ हेइन्द्रियसमूह (अग्नये) ब्रह्मके अर्थ
 (जुष्ट) प्रिय (त्वां) तुमको प्रोक्षामि प्रोक्षण करता हूँ (अग्नीषोमाभ्याम्)
 प्रकृति पुरुषके अर्थ (जुष्टम्) प्रिय (त्वां) तुमको प्रोक्षामि प्रोक्षण करता हूँ
 हेइन्द्रियालय रूपयज्ञपात्रतुमदैव्याय) इन्द्रिय सम्बन्धी (कर्मणो) स
 माधि आदि में (देवयज्यायै) योगेन्द्रके ज्ञानयज्ञार्थ (सुन्धध्वमे) शुद्ध हो जा
 ओ (अशुद्धौ) काम क्रोध आदि ने (वै) तुम्हारे (यते) जिस अङ्ग को (पराजु
 २६) पीड़ित किया (तत्) उस (इदं) इस (वै) तुम्हारे अङ्ग को (सुन्धामि)
 प्रोक्षण से शुद्ध करता हूँ ॥ १३ ॥ अथाधिदैवम् ॥ इस कंडिका में ४ मंत्र
 हैं जलों के प्रोक्षण करने का मंत्र (का० २।३।३९) देवोच्चारण सहित हविके
 प्रोक्षण का मंत्र (का० २।३।३७।३८) यज्ञपात्रों के प्रोक्षण का मंत्र (का० २।
 ३।३९) ओं प्रोक्षिता स्थेति प्रजा० ऋषिर्देवी वहती छन्दो आपो देवता १
 अग्नये त्वेति प्र० ऋ० याजुषी वहती छन्दो लिङ्गोक्त देवता २ अग्नीषोमाभ्या
 मिनि प्रा० ऋ० याजुषी त्रिष्टुप् छन्दो लिङ्गोक्त देवता ३ दैव्यायेति प्र० ऋ०
 यजुषी प्रात्र देवता ॥ ४ ॥ मन्त्रार्थः ॥ हे जलो (इन्द्रो) इन्द्रदेवताने (व
 त्तूर्ये) वृत्ता सुरवधके निमिनि (युष्मां) तुमको (अवृणीत) सहायता केलि
 ये चाहा (यूयं) तुमभी (वृत्तूर्ये) पापवधके निमित्त (इन्द्रं) यजमान को (वृणी
 ५) ध्वम्) चाहौ हे जलौ तुम (प्रोक्षता) प्रोक्षण किये द्रष्टु (स्थं) हौ क्यों कि असं
 स्तुतवस्तु दूसरे के संस्कार में समर्थ नहीं होती है हे हवि (अग्नये) अग्नि के
 अर्थ (जुष्ट) प्रिय (त्वां) तुमको प्रोक्षामि प्रोक्षण करता हूँ (अग्नीषोमाभ्या
 १५) म्) अग्नि सोम देवता के लिये (जुष्टम्) प्रिय (त्वां) तुमको प्रोक्षामि प्रोक्षण
 करता हूँ हे रुष्णा जिन उलूखल आदि यज्ञपात्र तुम (दैव्यायै) ईश्वर सम्ब
 धी (कर्मणो) कर्म (देवयज्यायै) देव सम्बन्धी यांग किया के लिये (सुन्धध्वमे)
 शुद्ध हो जाओ (अशुद्धौ) नीच जाति बढई आदि ने (वै) तुम्हारे (यते)

जिस अङ्ग को (परजु^{३१}धुः) छीलने आदि के समय अपने हस्त स्पर्श से अपवि
त्र किया (तत्^{३१}) उस (दे^{३२}द) इस (वः^{३२}) तुम्हारे अंग को (चुन्धा^{३३}मि) प्रोक्षण
से शुद्ध करता हूँ ॥ अथाध्यात्मम् ॥ हे हृदय तुम (शर्म^{३४}) आनन्द स्वरू
प (असि^{३४}) हो (रक्षः^{३४}) अज्ञान (अवधू^{३४}त) निरादर किया गया (अरातयः^{३४})
कामादि शत्रु (अवधू^{३४}ता) निरादर किये गये हे हृदय तुम (अदित्या^{३४}) प
रापकृति रूप अखंडित ज्योति के (त्वक्^{३४}) आवरण (असि^{३४}) हो (अदिति^{३४})
परापकृति (त्वो^{३४}) तुम्ह को (अतिवे^{३४}त्तु) अपना ही जानों हे हृदय के अन्तरि
क्ष (श० ७।५।१।३६) तुम (वानस्य^{३४}त्यैः) देह वक्ष में प्रादुर्भूत (अद्रि^{३४})
ज्योति की वाङ्मयता से सूर्य रूप (असि^{३४}) हो (पृथु^{३४}वुधः) विष्णु को मूल
रखने वाला वावड़ा अन्न रिक्ष (ग्रावः^{३४}) दृढ (असि^{३४}) है (अदित्या^{३४}) वक्ष
की अखंड ज्योति का (त्वक्^{३४}) आवरण जो हृदय है वह (त्वो^{३४}) तुम्ह को अप
ना ही जानो ॥ १४॥ अथाधिदैवम् ॥ इस कंडिका में ४ मंत्र हैं, मृ
ग चर्म ग्रहण करने का मंत्र (का० २।४।१) राक्षस आदि के दूर करने का
मंत्र (का० २।४।२) मृग चर्म पर उलूखल के रखने का मंत्र (का० २।४।४
५) ओं शर्मा सीति प्रजा० ऋ० दैवी अनुष्टुप् छन्दः रुषा जिनो देवता १ अ
वधूतमिति प्रजा० ऋ० आसुरी अनुष्टुप् छन्दो रक्षो देवता २ अदित्या इति
प्र० ऋ० उक्त छन्दः रुषा जिनो देवता ३ अद्रिरसी नि प्र० ऋ० यानुषी
अनुष्टुप् छन्द उलूखलो देवता ॥ ४॥ ग्रावा सीति प्र० ऋ० आसुरी गाय
त्री छन्द उक्त देवता ॥ ५॥ मन्त्रार्थः हे रुषा जिन उलूखल के धा
रण केलिये (शर्म^{३४}) सुख का कारण (असि^{३४}) है (रक्षः^{३४}) रुषा जिन
में छिपा हुआ राक्षस (अवधू^{३४}त) रुषा जिन के कंपन से भूमि में गि
राया (अरातयः^{३४}) वज्र में बिघ्न करने वाले शत्रु (अवधू^{३४}ता) तिरस्कार किये
हे रुषा जिन उलूखलो (अदित्याः^{३४}) भूमि देवता का (त्वक्^{३४}) त्वचारूप (असि^{३४}) है

मृगचर्मके विद्यने का मंत्र (का० २।४।२)

अदितः^{११} भूमिदेवता (त्वौ) तुभको (प्रतिवेत्तु) ग्रहण करके अपना ही जाने अर्थात् अपनी त्वचा जान कर चैतन्य करै है उलूखल तू यद्यपि, वानस्पत्यः^{१३} लकड़ी का है तौ भी दृढ़ होने से (अदिः) पाषाण तुन्य (असि) है (प्रथुवुध्रः^{१५}) स्थूलजड वाला है क्योंकि मुसल घात के उपद्रव से चलित नहीं होता (ग्रविः^{१७}) दृढ़ता से पाषाण तुन्य (असि) है अदित्योः^{१९} भूमिदेवता की (त्वके) कृष्णाजिन रूप त्वचा (त्वौ) तुभे (प्रतिवेत्तु) अपना करिके जाने अर्थात् अपने अङ्ग के अभिमान से चैतन्य करै ॥ १४ ॥
अथा ध्यात्मम ॥ हे जीवात्मा तुम (अग्नेयः) ब्रह्मके (श० ५।३।५।३२) (तनूः) शरीर क्योंकि ब्रह्म में युक्त जीव ब्रह्म ही होता है (वाचो विसर्जनं) तत्वमसि, इस महा वाक्य के विसर्जन का कारण (असि) है (देववीतये) परमात्मा की प्राप्ति के अर्थ (त्वौ) तुभको (गृह्णामि) समाधि स्थ करता हूँ, हे प्राण तुम (वानस्पत्यः) देहवृक्ष पर स्थित हो

(बृहदग्राणो^{११} निवृणो^{१३} का प्राण (श० १४।२।२।३३) (असि) है यज्ञपीपानने^{१५} प्रलाड का प्राण (श० १४।२।२।३३) (असि) है (से) वह (त्वमे) तुम (देदे) इस (हवि) जीव को जो कि अमर नाम देवता ओं का अमृत रूप हवि है (श० १।२।१।२०) (देवेभ्यः) ब्रह्मनरनारायण के अर्थ (शमीष्व) शान्त करो (शामे) हे शान्तांतः करण (सुशमीष्व) भी तरस्थित मलिनता के दूर करने से अच्छा शान्त करै (हविष्कृत्) हे वाक (श० १।१।४।११) (एहि) यहां आओ (हविष्कृत्) हे महावाक (एहि) आओ (हविष्कृत्) हे अनाहत शब्द (एहि) प्राप्त हो ॥ १५ ॥

अथा धिदैवम् ॥ इस कंडिका में ४ मंत्र हैं (ओखली में हवि डालने का मंत्र (का० २।४।६) मूसल लैने का मंत्र (का० २।४।११) मुसल घात का मंत्र (का० २।४।१२) हविष्कृत् के बुलाने का मंत्र (का० २।४।१३) ओं अग्नेस्तनू रिति प्र० ऋ० आर्षा उष्णिक् छन्दो हविर्देवता १ बृहद्रा-

वासीति प्र० ऋ० आसुरीजगती छन्दो मुसलो देवता २ सद्वृत्तिमिति प्र० ऋ०
 यजुषी मुसलो देवता २ हविष्क देहीति प्र० ऋ० याजुषी पन्तिच्छन्दः आधि
 देवतं वागाधियज्ञं पत्नी देवता ॥४॥ अथ मंत्रार्थः हे हवितुम (अग्ने)
 आहवनीय आग्नि के (तनूः) शरीर हौ क्योंकि उस में डाला हुआ हवि
 आग्निरूप हो जाता है (वाचो विसर्जनं) जल के प्रणयन समय जो वाणी
 नियमित हुई उस का विसर्जन उलूखल में हवि डालने के समय होता
 है तिस कारण हे हवितु वाचो विसर्जन नाम (आसि) है (देव की तये) ई
 श्वर की प्राप्ति केलिये (त्वो) तुम्हें (गृह्णामि) उलूखल में डालने केलिये
 ग्रहण करता हूं हे मुसलतू (वानस्पत्यः) लकड़ी का वना हुआ (वृहद्वावा)
 दृढतूर (आसि) है (सि) वह तुम (इदं) (हविः) इस व्रीहिरूप हवि को
 (देवेभ्यः) देवताओं के अर्थ (शमीष्व) भक्षण विरोधी भूसी के दूर करने से शान्त
 करो हे (शमि) शान्त रूप मुसलतुम इस हवि को (सुशमीष्व) अच्छा
 शान्त करो वहां शान्ति दो प्रकार की है बाहर की भूसी दूर करने से पहिली कु
 टाई पर होती है भीतर स्थित मलिनता को दूर करने से दूसरी शान्ति है वह
 फली करने से होती है उस दो प्रकार के संस्कार को करौ यजमान पत्नी वा दूस
 रा जो तंडुलों को कूटता है उसको सम्बोधन करके कहते हैं (हविष्कृतं) हे ह
 वि संस्कार करने वाले (एहि) यहां आओ (हे हविष्कृतं) (आओ) (हे हवि
 ष्कृतं) (एहि) आओ तीन बार कहे हुए अर्थ को देवता मानते हैं इसलिये ती
 न बार बुलाना कहा ॥ १५ ॥ अथाध्यात्मम् ॥ हे महाबाहू तुम (कु
 कुटः) काम आदि असुर कहाँ रहें इस प्रकार उन को मारना चाहता जो सब
 जगह जाता है वह कुकुट है (मधुजिह्वः) ब्रह्म वा ब्रह्म ज्ञान भाषिणी
 जिह्वा रखने वाला (श० १४।५।५।१४ तथा १४।५।५।१७) (आसि) है
 (इष) अमृत वृष्टि को तथा (उर्जं) ज्ञान रस ब्रह्म को (आवदे) तत्त्व म-

सिमहावाक्कोकहो (वयं) ज्ञानयज्ञ का अनुष्ठान करने वाले हम लोग
 (त्वया) तेरे द्वारा (सिद्धांत) काम आदि के समूह को तथा (संज्ञात) अज्ञा
 न आदि के समूह को (जेषां) जीते हे ब्रह्मज्ञान तुम (वर्ष वृद्धे) योगी
 द्वारा वृद्धि युक्त (आसि) हो; हे जीव रूप हवि (वर्ष वृद्धे) ब्रह्मज्ञान (त्वा
 तुम्हें को (प्रतिवेत्तु) अपना जानों (रक्षः) अज्ञान (परापूत) निरादर कि
 या गया (अरातयः) काम आदि शत्रु (परापूताः) निरादर किये गये (रक्षः)
 अज्ञान (अपहते) नाश किया गया हे इन्द्रिय समूह (वायुः) प्राण (७।१
 २।७) (वः) तुम को (विविनेतु) अपने अंग के अभिमान द्वारा इन्द्रियालयों से
 पृथक् करो (हिरण्यपाणि) ज्योतिरूप हाथ रखने वाला (देवः) ज्योति
 रूप (सविता) मानस सूर्य (अच्छिद्रो) प्राणारूप (पाणिना) हाथ से
 (वः) तुम को (प्रतिगृह्णातु) स्वीकार करो ॥ १६ ॥ अथाधिदैवम्।
 इस कंडिका में सात मंत्र हैं- हविके कूटने का मंत्र (का० २।४।१५) भूर्प
 के लेने का मंत्र (का० २।४।१६) हविके उठाने का मंत्र (का० २।४।१७) भु
 सी को नीचे डालने का मंत्र (का० २।४।१८) भृगुचर्म से भुसी के हटाने का
 मंत्र (का० २।४।१९) भुसी मिले और भुसी रहित हविके पृथक् करने
 का मंत्र (का० २।४।२०) पात्री में डाल कर अभिमंत्रण का मंत्र (का० २।
 ४।२१) ओं कुक्कुरो सीति प्र० ऋ० आषी विष्टु चन्दो वाग्देवता १ वर्ष वृद्ध
 मसीति प्र० ऋ० याजुषी गायत्री चन्दः भूर्पो देवता २ प्रतित्वेति प्र० ऋ०
 याजुषी वहती चन्दो हविर्देवता ३ परा पुरामिति प्र० ऋ० आसुरी उषि
 क चन्दो रक्षो देवता ४ अपहतामिति प्र० ऋ० याजुषी गायत्री चन्दो रक्षो
 देवता ५ वायुर्वदिति प्र० ऋ० याजुषी उषिक् चन्दः तण्डुलो देवता ६ दे
 वो वदिति प्र० ऋ० साम्नी त्रिष्टुप् चन्दः तण्डुलो देवता ॥ ७ ॥
 अथ मन्त्रार्थः ॥ देशम्या रूपयन्तायुध के अधिष्ठाता देवता तुम (कुक्कुरः)

(कूटः) (मधुजिह्वः) (असिः) (दंष्ट्रः) (ऊर्जम्) (आवुदः) (वयं)
 (त्वया) (सङ्घातः) (सङ्घातः) (जेष्यः) (वर्षं वृद्धः) (असिः) (व
 र्षवृद्धः) (लो) (प्रतिवेत्तु) (रक्षः) (परापूर्तः) (अरातयः) (परापूर्
 तः) (रक्षः) (अपहतः) (वायुः) (वै) (विविनक्तु) (हिरण्यपाणि
 सविता) (देवैः) (अच्छिद्रेण) (पाणिना) (वै) (प्रतिगृह्णातु) ॥ १६ ॥

पदार्थः — देशम्यारूपयन्तायुधके अधिष्ठाता देवता तुम १ असुरों के
 मारने के इच्छा मान सर्ववधूमने वाले २ मधुर भाषिणी जिह्वा वाले ३ हौ ४
 अन्न को ५ और रस को ६ शब्द द्वारा प्राप्त कराओ अर्थात् जैसे अन्न और रस
 प्राप्त होवै वैसे ही शब्द करो ७ यज्ञ करने वाले हम लोग ८ तेरे द्वारा ९ १०
 प्रत्येक असुर समूह को ११ जीतें हे शूर्प (सूय) तू १२ वर्षा के जल से वृद्धि पा
 ने वाला १३ है, क्योंकि वर्षा से वृद्धि पाने वाली वेणु शलाकाओं से शूर्प बना
 या जाता है हे हवि वह १४ शूर्प १५ तुम्हें को १६ अपना करके जानों, क्योंकि ज
 ल वर्षा से वृद्धि पाने के कारण चावल और शूर्प का भ्रातृत्व है १७ राक्षस १८
 निरादर किया गया अर्थात् शूर्प से भुसी दूर करने पर उनमें छिपा हुआ राक्षस
 भुसी के साथ भूमि पर गिराया गया १९ हवि के प्रति कूल आलस्य आदि शत्रु
 २० निरादर किये गये २१ राक्षस २२ दूर लेजा कर मार भूमि पर पटक- उस
 भुसी को दूर पटक देवै, हे चावल २३ वायु देवता २४ तुम्हें को २५ सूक्ष्म कण
 के द्वारा पृथक् करो, हे तण्डुल २६ ज्योति रूप हाथ रखने वाला २७ सूर्य म
 ध्यवर्त्तमान परमात्मा २८ ज्योति स्वरूप २९ अपने वायु रूप ३० हाथ से ३१
 तुम्हें को ३२ स्वीकार करो- पात्री में डालने के समग्र राक्षस का भय मत
 हो, इसलिये सविता से हवि का ग्रहण होना चाहते हैं ॥ १६ ॥

+ पत्थर का मूसल जिस से यज्ञ में चावल कुटने हैं ॥

^१अग्ने। (^२धृष्टिः) (^३असि) (^४मादम्) आमादम्) (^५अपाजहि) अपज
 हि) (^६कव्यादश्) (^७निःषेध) (^८देवयजं) (^९अग्निम्) (^{१०}आवह)
 (^{११}ध्रुवम्) (^{१२}असि) (^{१३}पृथिवीं) (^{१४}दृष्टं) (^{१५}ब्रह्मवनि) (^{१६}क्षत्रवनि)
 (^{१७}सजातवनि) (^{१८}त्वा) (^{१९}भ्रातृव्यस्य) (^{२०}वधाय) (^{२१}उपदधामि) १७

अथाध्यात्मम्— १ हे महा वाक् रूप अग्नि तुम २ धर्म वेद वाक् और अ-
 प अनाहत शब्द के लिये दीप्ति ३ हो ४ माया रचित हवि के भक्षण करने वाले-
 अग्नि को जो कि द्वैत यज्ञ सम्बन्धी है ५ परित्याग करो क्योंकि उस में हिंसा का संभ-
 व है ६ शव दाह में मंस भक्षण करने वाले चिताग्नि को ७ निःशेष दूर करो क्यो-
 कि उस अग्नि के पुनर्जन्म साधक होने से परम हंसों की देह का अग्नि संस्कार
 नहीं है ८ आत्म यज्ञ के योग्य ९ ब्रह्माग्नि को १० चारों ओर से प्राप्त करा ओ हे ज्ञान
 रूप अग्नि तुम ११ अचल १२ हो १३ मानस कमल को १४ दृढ़ करो १५ मन से
 स्वीकार योग्य १६ प्राणा से स्वीकार योग्य १७ जीवात्मा से स्वीकार योग्य १८
 तुम्हें को १९ काम वापाप के २० बध के लिये २१ अपरोक्ष करता हूँ ॥ १७ ॥

आथाधिदैवम्— इस कंडिका में चार मंत्र हैं— पलाश की लकड़ी से हा-
 थ के सदृश बना हुआ जो यज्ञ पात्र है उस के ग्रहण का मंत्र १ गार्हपत्य नाम
 अग्नि से उपवेश द्वारा अङ्गुरों के अलग करने का मंत्र २ एक अंगारे के लेने का मं-
 त्र ३ अंगारे को लाकर कपाल से ढकने का मंत्र ४

(धृष्टिः) (असि) (अग्ने) शेष पूर्ववत्— पदार्थः— हे
 उपवेश अधिष्ठाता देवता तुम १ तीव्र अंगारों के इधर उधर हराने में समर्थ होने
 से अगल्भ २ हो ३ हे गार्हपत्य नाम अग्नि तुम ४ अपक्व (कच्चा) भक्षक लौकि-
 क अग्नि के रूप को ५ त्याग करो ६ चिताग्नि रूप को भी ७ त्याग करो ८ देवताओं

केयन्त योग्य १० अग्नि रूप को १० हमारे समीप प्राप्त करो हे कपाल (मिट्टी का कूँडा) तुम ११ स्थिर १२ हौ क्योंकि अंगार के ऊपर वर्तमान भी इधर उधर नहीं गिरते हो १३ भूमि रूप अपने शरीर को १४ दृढ़ करो और १५ हवि सिद्धि के लिये ब्राह्मण से स्वीकार योग्य १६ क्षत्री से स्वीकार योग्य १७ यजमान के त्रातिजनों से स्वीकार योग्य १८ तुम्ह को १९ शत्रु असुर वा पाप की रूहिंसा के लिये २० अंगारे पर स्थापन करता हूँ ॥ १७ ॥

१ (ब्रह्मग्ने) २ (गृभ्णीष्वे) ३ (धरुषां) ४ (असि) ५ (अन्तरिक्ष) ६ (दृथ्व) ७ (ब्रह्मवनि) ८ (क्षत्रवनि) ९ (सजातवनि) १० (त्वा) ११ (भ्रातृव्यस्य) १२ (वधायै) १३ (उपदधामि) १४ (धर्तुम्) १५ (असि) १६ (दिव) १७ (दृथ्वे) १८ (ब्रह्मवनि) १९ (क्षत्रवनि) २० (सजातवनि) २१ (त्वा) २२ (भ्रातृव्यस्य) २३ (वधायै) २४ (उपदधामि) २५ (विश्वाम्यै) २६ (आशाम्यै) २७ (त्वा) २८ (उपदधामि) २९ (चित्) ३० (उद्धचित्) ३१ (स्यै) ३२ (भृगूणाम्) ३३ (अङ्गिरसाम्) ३४ (तपसा) ३५ (तप्यध्वम्) ३६

अथाध्यात्मम्- पदार्थः- हे ब्रह्माग्नि २ मोक्षदान से अनुग्रह करो हे ज्ञानाग्नि तुम ३ जीवरूप हवि के धारण करने वाले ४ हौ ५ हार्द काश को ६ दृढ़ करो ७ ब्रह्मर्षियों से स्वीकार योग्य ८ राजर्षियों से स्वीकार योग्य ९ परम हंसों से स्वीकार योग्य १० तुम्ह को ११ अज्ञान के १२ नाश के लिये १३ अपरोक्ष करता हूँ हे ज्ञानाग्नि तुम १४ ईश के धारण करने वाले १५ हौ १६ भृकुटी को १७ दृढ़ करो १८ समष्टि मन से स्वीकार योग्य १९ समष्टि प्राण से स्वीकार योग्य २० नर से स्वीकार योग्य २१ तुम्ह को २२ संसार भ्रांति के २३ नाशार्थ २४ अपरोक्ष करता हूँ हे ज्ञानाग्नि २५ सव २६ इन्द्रियों के अर्थ अर्थात् उन की दृढ़ता के लिये २७ तुम्ह को २८ अपरोक्ष करता हूँ २९ हे चैतन्य अतः कर्णो तुम ३०

आत्म द्वारा चेतन्य ३१ हौ ३२ ब्रह्माग्नि के ज्वालारूप नर नारायण जीवात्मा और
३३ प्राणों के ३४ ज्ञान से ३५ योग की ईश्वरता को प्राप्त करो ॥ १८ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ६ मंत्र हैं, अंगार के रखने का मंत्र, १ म-
ध्यम कपाल के पीछे दूसरे कपाल के रखने का मंत्र २ प्रथम कपाल के पूर्व भा-
ग में तीसरे कपाल के रखने का मंत्र ३ प्रथम कपाल के दक्षिण में चौथे कपा-
ल के रखने का मंत्र, ४ आग्नेय पुरोडाश (हवि) के आठ कपाल होने और ४ क-
पाल के स्थापित हो जाने से शेष चार में दो २ दक्षिण उत्तर और रखने चाहि-
यें उन के स्थापण का मंत्र, ५ गार्हपत्य अग्नि के अंगारों को कपालों से ढकने
का मंत्र ६ ॥

पदार्थः— १ हे ब्रह्माग्नि २ राक्षसों का नाश करने से
अनुग्रह करो हे द्वितीय कपाल के अधिष्ठाता देवता तुम ३ पुरोडाश के धार-
ण करने वाले ४ हौ ५ हवि रक्षा के लिये अपने अन्तरिक्ष को ढ ढ करो
७ मन से स्वीकार योग्य ८ प्राण से स्वीकार योग्य ९ जीव से स्वीकार योग्य
१० तुम को ११ अज्ञान के १२ नाश के लिये १३ अंगार पर स्थापण करता हूं हे
कपाल तु १४ धारण करने वाला १५ है १६ स्वर्ग रूप अपने आत्मा को १७ ढ-
ढ कर १८ ब्रह्म से स्वीकार योग्य १९ ईश से स्वीकार योग्य २० नर से स्वीका-
र योग्य २१ तुझ को २२ संसार के २३ मिथ्या ज्ञानार्थ २४ अंगार पर स्थापण
करता हूं हे चौथे कपाल २५ सब २६ दिशाओं की भावना के लिये २७ तुझे २८
स्थापण करता हूं कपालों में लोक आदि की भावना करने से उन में विद्यमान
ब्रह्म भाव को प्राप्त पुरोडाश देवताओं की तृप्ति के लिये समर्थ होता है हे कपाल वि-
शेषो तुम २९ प्रथम कपाल के समीप स्थित होने वाले ३० और पीछे स्थापित
द्वितीय आदि कपालों के उपकारी ३१ हौ हे कपालो तुम ३२ भार्गव ३३ और
आद्भिरस नाम देव ऋषियों के ३४ तप रूप अग्नि द्वारा ३५ तृप्ति हूँ जिये ॥ १८ ॥

(शर्म) (असि) (रक्ष) (अवधूतश्च) (अरातयः)

(अवधूताः) (अदित्याः) (त्वक्) (असि) (अदितिः) (त्वो) (प्रतिवेत्तु) (पर्वती) (धिषणा) (असि) (अदित्याः) (त्वक्) (त्वो) (प्रतिवेत्तु) (र) (दिवः) (स्कम्भनी) (असि) (धिषणा) (पार्वतेयी) (असि) (पर्वती) (त्वो) (प्रतिवेत्तु) ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम्— हे हृदय तुम १ ब्रह्म का स्थान होने से आनंद स्वरूप २ हौ ३ अज्ञान ४ निरादर किया गया ५ काम आदि शत्रु ६ निरादर किये गए हे हृदय तुम ७ परनाम ब्रह्म शक्ति के ८ आवरण ९ हौ १० परशक्ति ११ तुम्हें १२ अपना करके जानों हे परशक्ति तुम १३ त्रिदेव रूपधारी महानारायण की शक्ति १४ सब का आधार १५ हौ १६ तेरा १७ आवरण हृदय १८ तेरी स्थिति को जानों २० हे हार्दान्तरिक्ष के अधिष्ठाता देवता तुम २१ स्वर्ग की २२ स्तम्भन करने वाली २३ हौ हे बुद्धि तू २४ इन्द्रिय रूप हवि की धारण करने वाली २५ परशक्ति की पुत्री २६ है २७ परशक्ति २८ तुम्हें २९ अपनी करके मानो ॥ १६ ॥

अथाधिदैवम्— द्रुस कंडिका में ६ मंत्र हैं मृगचर्म के ग्रहण का मंत्र १ शत्रु वाराक्षसों के हराने का मंत्र २ मृगचर्म के विच्छाने का मंत्र ३ मृगचर्म पर शिला रखने का मंत्र ४ शिला के पिछले भाग में नीचे से शम्या रखने का मंत्र ५ उपला अर्थात् ऊपरी पाट के ग्रहण का मंत्र ६ पदार्थः हे मृगचर्म के अधिष्ठाता देवता तुम १ आनंद स्वरूप २ हौ ३ मृगचर्म में छिपा हुआ राक्षस ४ निरादर किया गया ५ शत्रु ६ निरादर किये गये हे मृगचर्म तुम ७ भूमि देवता के ८ त्वचा रूप ९ हौ १० भूमि देवता ११ तुम्हें १२ अपना करके जानो हे शिला भिमानी देवता तुम १३ पर्वत की पुत्री हौ क्योंकि उस से उत्पन्न हुई १४ हवि की आधार रूप १५ हौ भूमि की १७ त्वचा अर्थात् मृगचर्म १८ तेरी १९ स्थिति को जानों २० हे शम्याधिष्ठाता दे

वता तुम २१ स्वर्ग लौक की २२ स्तंभन करने वाली २३ हौ क्यौंकि अन्न रिस में ही पृथ्वी और स्वर्ग स्थित हैं हे ऊपर की शिला तुम २४ पेषण व्यापार की धारण करने वाली २५ और नीचली शिला की पुत्री २६ हौ २७ माता की समान नीचली शिला २८ तुम को २९ पुत्री भाव से जानौ ॥ १९ ॥

(धान्यम्) (असि) (देवान्) (धिनुहि) (त्वा) (प्राणा)

य) (त्वा) (उदानाय) (त्वा) (व्यानाय) (दीर्घाम्) (प्रसितिम्)

(अनु) (आयुषे) (त्वा) (धो) (हिरण्यपाणि) (देवः) (सविता)

(अच्छि द्रेण) (पाणिना) (वे) (प्रतिगृभ्णातु) (चक्षुषे) (त्वा)

(महीना) (पयः) (असि) ॥ २० ॥ अथाध्यात्मम्—

पदार्थः— हे इन्द्रिय समूह तुम १ तम करने वाले २ हौ ३ नर नागयण जी वनाम देवताओं को ४ तम करे हे इन्द्रिय समूह ५ तुम को ६ प्राण के लिये निग्रह करता हूं ७ तुम को ८ उदान के लिये निग्रह करता हूं ९ तुम को १० व्यान के लिये निग्रह करता हूं तथा ११ बड़त बड़े १२ कर्म वन्धन को १३ विचार कर १४ मृत्यु निवृत्ति अर्थात् मोक्ष के लिये १५ तुम को १६ हार्दा कार्श में धारण करता हूं १७ ज्योति रूप द्वाय रखने वाला १८ देवता १९ मन २० प्राण रूप २१ हाथ से २२ तुम को २३ ग्रहण करो तथा २४ मानस सूर्य के लिये जो कि श्रुति प्रमाण से आकाशस्थ सूर्य के साथ एकता रखता है २५ तुम को निग्रह करता हूं हे शक्ति समूह तुम २६ इन्द्रियों की २७ प्राण शक्ति २८ हौ ॥ २० ॥

अथाधिदैवम्— इस कांडिका में ७ मंत्र हैं शिला परचावल रखने का मंत्र, १ चावल पीसने के मंत्र, २, ३, ४, मृग चर्म पर पिष्ट गिराने का मंत्र, ५ पिष्ट देखने का मंत्र, ६ पिसे डूबे चावलों में घृत डालने का मंत्र ॥ ७ ॥

पदार्थः — हे हवितुम १ देवताओं के तृप्त करने वाले २ हौ इस कारणा ३ ईश्वर के अंश रूप देवताओं को ४ तृप्त करो ५ तुम्हें ६ समष्टि प्राण के अर्थ पीसता हूँ ७ तुम्हें ८ समष्टि उदान के अर्थ पीसता हूँ ९ तुम्हें १० समष्टि व्यान-केलिये पीसता हूँ इन मंत्रों के द्वारा प्राण आदि के देने से हवि सजीव कि-या जाता है हे हवि ११ वहुत बड़ी १२ कर्म सन्तति वा कर्म बंधन को १३ वि-चार कर १४ मृत्यु निवर्त्ति वासा युज्य आदि मोक्ष प्राप्ति केलिये १५ तुम्हें को १६ मृग चर्म पर रखता हूँ १७ ज्योति रूप हाथ रखने वाला १८ देवता १९ सविता २० वायु रूप २१ हाथ से २२ तुम को २३ गिरने से रक्षा करो हे हवि २४ चक्षु आदि बाह्य इन्द्रिय देने केलिये २५ तुम्हें देखता हूँ क्योंकि अति प्रमा-ण से अविनाशी जीव ही अविनाशी देवताओं का हवि होता है हे अज्य तू २६ गौओं का २७ घृत २८ है ॥ २० ॥

(सवितुः) (देवस्यै) (म-

सर्वैः) (अश्विनोः) (वाहुभ्यां) (पूष्णोः) (हस्ताभ्यां) (त्वा) (संवपामि) (आपः) (ओषधीभिः) (संप्रच्यन्ताम्) (ओषधयः) (रसेन) (सं) (रेवतीः) (जगतीभिः) (संप्रच्यन्ताम्) (मधुमतीः) (मधुमतीभिः) (संप्रच्यन्ताम्) ॥ २१ ॥ अथाध्यात्मम् ॥

पदार्थः — हे इंद्रिय समूह १ गुरु २ देवता की ३ प्रेरणा होने पर ४ प्राण उदान की ५ बाहु और ६ मन के ७ हाथों से ८ तुम्हें ९ मन के कमल में भले प्रकार डालता हूँ १० जीव रूप हवि ११ इन्द्रियों की शक्तियों के साथ १२ भले प्रकार मिल कर एक हो जाओ और १३ इन्द्रियों की शक्ति १४ आत्मा के साथ १५ भले प्रकार योग को पाओ और १६ बाणी १७ इन्द्रियों की शक्ति के साथ १८ भले प्रकार मिल कर एक हो जाओ १९ अनुशासन विद्या इतिहास पुराण आदि ज्ञान वाली जो इन्द्रियों की शक्ति हैं वे २० ऋग्वेद

की श्रुतिरूपवाणी के साथ २१ भलेप्रकार संगति को पाओ ॥ २१ ॥

अथाधिदैवम्- इस कंडिका में ३ मंत्र हैं पवित्रायुक्त पात्री में पिसेचांव लों के डालने का मंत्र १ अग्नीध से उप सर्जनी जल का लाना और अध्वर्यु से पवित्रा सहित ग्रहण करना तिसके मंत्र २ ३ पदार्थः हे पिसेचांवल सब के प्रेरक परमात्मा २ देवता की ३ प्रेरणा होने पर ४ अश्विनी कुमार की भुजा के भाव को प्राप्त ५ अपनी भुजाओं से ६ और पूषा देवता के हस्त भाव को प्राप्त ७ अपने हाथों से ८ तुमको र्धपात्री में भलेप्रकार डालता हूं १० पिष्ट में डालने योग्य उप सर्जनी नाम जो जल है वह ११ पिसी औषधी के साथ १२ भलेप्रकार मिल जाओ १३ पूर्वोक्त औषधी १४ उप सर्जनी रूप जल के साथ १५ भलेप्रकार एकत्व को पाओ १६ पूर्वोक्त जल १७ पिष्ट औषधी के साथ १८ भलेप्रकार मिलाप को पाओ १९ मधुरता से युक्त जल २० माधुर्यता से युक्त औषधियों के साथ २१ भलेप्रकार एकत्व को पाओ ॥ २१ ॥

(त्वा)^१(जनयेत्यै)^२(संयौमि)^३(इदं)^४(अग्ने)^५(इदम्)^६
 (अग्नीषोमयो)^७(इषे)^८(त्वा)^९(धर्मः)^{१०}(विश्वार्युः)^{११}(उरुप्रस्था)^{१२}(अ
 सि)^{१३}(उरुप्रथस्व)^{१४}(ते)^{१५}(यन्पतिः)^{१६}(उरुप्रथताम्)^{१७}(अग्निः)^{१८}(ते)^{१९}
 (त्वच)^{२०}(मा)^{२१}(हिंसीत्)^{२२}(देवः)^{२३}(सविता)^{२४}(त्वा)^{२५}(वर्षिष्ठे)^{२६}(नाके)^{२७}
 (अधिप्रपयतु)^{२८} ॥ २२ ॥ अथाध्यात्मम् ॥ पदार्थः- हे
 इन्द्रिय सहजीवात्म १ तुमको २ ज्ञान वा मोक्ष की प्राप्ति के लिये ३ भलेप्र
 कार मिलाता हूं ४ यह भाग ५ ब्रह्माग्नि का है ६ यह भाग ७ प्रकृति पुरुष
 का है हे इन्द्रिय शक्ति समूह ८ अमृत वर्षा के लिये ९ तुम को मानस सूर्य-
 में स्थापण करता हूं हे जीवात्म १० मानस सूर्य तुम ११ सब की आयु १२ देह
 व्यापन शील १३ है १४ ब्रह्माण्ड भाव को प्राप्त करे १५ तेरा १६ आत्मा १७

ब्रह्मभावको प्राप्त करो हे जीवात्म १८ ब्रह्माग्नि १९ तेरी २० आवरण कारण देह को २१, २२ प्रारब्ध भोग की समाप्ति तक नाश मत करो, हे जीवात्म २३, २४ इन्द्रियों का स्वामी मन २५ तुम्ह को २६ अत्यंत वृद्ध २७, दुःख रहित आनन्द स्वरूप ब्रह्माग्नि में २८ पक्क होम योग्य करो ॥ २२ ॥ अथाधिदेवम्- इस कंदि का में ८ मंत्र हैं जल और पिष्ट मिलाने का मंत्र १ दो पिंड बना कर उनके स्पर्श करने के मंत्र २, ३ छत ताने का मंत्र ४ पुरोडाश के चढ़ाने का मंत्र ५ पुरोडाश को विस्तार देने का मंत्र ६ जल से प्रोडाश के स्पर्श का मंत्र ७ पुरोडाश के पकाने का मंत्र ८ ॥

पदार्थः- हे जल पिष्ट रूप दो पदार्थ का समूह १ तुम्ह को २ धन पुत्र आदि कामना की सिद्धि के लिये वाचारे मोक्ष की प्राप्ति के अर्थ अथवा सर्वोपकारक दृष्टि के लिये ३ भले प्रकार मिलाता है ४ यह पहिला पिंड ५ अग्नि का है ६ यह दूसरा पिण्ड ७ अग्नि सोम नाम दोनों देवता का है हे आज्य ८ जल वर्षा के लिये ९ तुम्हें अग्नि पर तावता है हे पुरोडाश तुम १० यज्ञ स्वरूप हो क्योंकि उसी से उत्पन्न और उसी के अर्पण होता है ११ ब्रह्मांड की स्थिति का कारण १२ ब्रह्मांड व्याप्त शील १३ है १४ ब्रह्मांड रूप विख्यात है १५ तेरा १६ यजमान १७ धन पुत्र पशु आदि से प्रख्यात हो वासा युज्य मुक्ति को प्राप्त करो हे पुरोडाश १८ पकाने के लिये प्रवृत्त अग्नि १९, २०, तेरे त्वचा समान ऊपरी भाग को २१, २२ अति दाह से मत जलाओ हे पुरोडाश २३ सब का प्रेरक २४ देवता २५ तुम्ह को २६ अत्यंत वृद्ध २७ दुःख रहित ब्रह्म प्राप्ति कारण अग्नि पर २८ चढ़ा कर पकाओ ॥ २२ ॥

॥ मा० १ ॥ भे० १ ॥ सो० १ ॥ संविकथा० यज्ञ०
अतमेरुः० भूयात्० यजमानस्य० अजा० अतमेरुः० त्वो० त्रितोये०
लो० इति यो० त्वो० ए० ते० ॥ २२ ॥ अथाध्यात्मम् ॥

पदार्थः— हे भूतात्मा तुम १२ भय मत करो ३४ कंषित मत हो जो ५ यजमान ६ ज्ञान यज्ञ के अनुष्ठान में ग्लानि रहित ७ होवे और ८ उस ज्ञान यज्ञ के अनुष्ठान करने वाले यजमान के ईशमन्नादि अष्टांग योग भी १० योग साधन में ग्लानि रहित हो हे भूतात्मा में ११ तुम को १२ उस पुरुष के वास्ते जो कि जीव ब्रह्म माया को नित्य मान कर निश्चय रखता है कि यह जीव वंश मोक्ष अवस्था में सदैव लक्ष्मी नारायण का दास है त्याग करता है १३ तुम को १४ उस पुरुष के लिये जिस का ऐसा निश्चय है कि प्रकृति पुरुष नित्य हैं और जीव उन की सायुज्यता को पाता है त्याग करता हूं १५ तुम को १६ उस पुरुष के लिये जो कि एक ब्रह्म को नित्य मानता है और कहता है कि मैं ब्रह्म हूं त्याग करता हूं अर्थात् अहंकार होने से तीनों देहाभिमानी कहाते हैं ॥२३॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ५ मंत्र हैं, पके हवि के ज्ञानार्थ उसके स्पर्श का मंत्र १ बिना पके को परिपक्व होने के लिये भस्म से ढकने का मंत्र २ पात्री और अंगुलियों के धोने का जो जल है उसे आप्त पुरुषों के लिये देने के मंत्र ३, ४, ५ पदार्थः ॥ हे पुरोडाश तुम १२ भय मत करो ३४ कंषित मत हो जो मानुष में अमानुष तुम को स्पर्श करता हूं ५ यजमान ६ यज्ञ क्रिया में ग्लानि रहित ७ हो ८ यजमान के ९ पुत्र पौत्र प्रपौत्र आदि १० यज्ञ क्रिया में ग्लानि रहित होवें हे पात्री और अंगुलियों के धोने के जल ११ तुम को १२ त्रित नाम देवता के अर्थ त्याग करता हूं १३ तुम १४ द्वित नाम देवता के लिये त्याग करता हूं १५ तुम १६ एकत देवता के अर्थ त्याग करता हूं पूर्व काल में किसी हेतु से भय युक्त अग्नि देवता जल में प्रविष्ट हुए तदनंतर देवताओं ने उस जल में प्रविष्ट अग्नि को जान कर ग्रहण किया तब अग्नि ने अपने वीर्य को जल में छोड़ा उससे त्रित द्वित एकत नाम आप्त पुरुष उत्पन्न हुए देवताओं के साथ विचरते उन तीनों ने यज्ञ में पात्री-

प्रक्षालनजलनाम भाग को प्राप्त किया यह श्रुति कथा यहां योजनायोग्य है।
अध्यात्म अर्थ में अग्नि को ब्रह्माग्नि और जल को ज्योतिरस और वीर्य को प्रधान
न जानना चाहिये ॥ २३ ॥

१ सवितुः २ देवस्य ३ प्रसवे ४ देवेभ्यः ५ अध्वरकृतम् ६ त्वा
७ अश्विनौ ८ वाङ्म्या ९ पूषा १० हस्ताभ्या ११ आददे १२ सहस्रं भू
१३ ष्टिः १४ शततेजो १५ वायुः १६ असि १७ इन्द्रस्य १८ तिग्मतेजो १९ द्विष
२० तोवध २१ दक्षिणा २२ वाङ् २३ असि ॥ २४ ॥ अथाध्यात्मम्-

पदार्थः— हे ज्ञान रूप वज्र १ गुरु २ देवता की ३ प्रेरणा होने पर ४ ब्रह्म-
नरनारायण नाम देवताओं के लिये ५ यज्ञ करने वाले ६ तुम्हें ७

हार्दा काश और मानसा काश की ८ भुजा अर्थात् ग्रहण शक्तियों से
और ९ मन के १० हाथों अर्थात् ग्रहण शक्तियों से ११ ग्रहण करता हूं हे
ज्ञान रूप वज्र तुम्हें १२ ब्रह्म से परिपक्व १३ ब्रह्म शक्ति के तेज से युक्त १४ और
रनिवृत्त आत्मा के अमर होने का कारण १५ हौ तथा १६ यजमान की १७
तीक्ष्ण तंज वाली १८ ज्ञान यज्ञ द्वेषी कामादि की नाश करने वाली १९ यज-
मान की इच्छा के अनुसार वर्तने वाली २० वाङ् अर्थात् कार्य साधक २१ है
॥ २४ ॥ अथाधिदैवम्— इस कंडिका में अग्रोक्त मंत्र हैं, सविता

की प्रेरणा का मंत्र १ स्वयं नाम क यज्ञ श स्व के ग्रहण का मंत्र २ पवित्रा सहि-
त स्वयं को वावें हाथ से लेकर दाहने हाथ से स्पर्श करके जप करने का मंत्र
॥ २५ ॥ पदार्थः— हे वज्र रूप स्वयं १ सब के प्रेरक २ परमात्मा की ३ प्रेरणा हो-
ने पर ४ देवताओं के उपकारार्थ ५ वेदी खोदने से यज्ञ करने वाले ६ तुम्हें
को ७ अश्विनी कुमार के वाङ् भाव को प्राप्त ८ अपनी भुजाओं ९ और पूषा-
देवता के हस्त भाव को प्राप्त १० अपने हाथों से ११ ग्रहण करता हूं हे स्वयं तु

म १२ राक्षसों के भस्म करने वाले १३ वद्धतप्रकार से दीप्यमान वायु की समान वेग युक्त १५ हौ १६ तथा यजमान की १७ तीक्ष्ण तेज वाली १८ कर्म द्वेषी असुरों की नाश करने वाली १९ अभिप्राय के अनुसार वर्तने वाली २० भुजा २१ है

२४॥ ॥ देवयजनि। पृथिवि। ते। ओषध्याः। मूलम्

मोहिं^६ सिषम^७ गोघ्नानम^८। व्रजम्। गच्छ^९। ते। द्यौः^{१०} वर्षते।

देवा^{११} सविता^{१२}। यः^{१३}। अस्मान्^{१४}। द्रष्टि^{१५}। चावयमायमा^{१६} द्विष्टः^{१७}। तो

शतेन^{१८}। पाशैः^{१९}। परमस्याम्^{२०}। एथित्वा^{२१}। वधान^{२२}। तमसः^{२३}। मा

मौक^{२४}॥ अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ४ मंत्र हैं। वेदी में तृण

रखने आदि का मंत्र १ स्फ्य से खोदी ऊर्ध्व मिट्टी के ग्रहण करने का मंत्र २ वेदी देखने का मंत्र ३ उत्करनाम स्थान में मिट्टी फेंकने का मंत्र ॥ ४ ॥

मन्त्रार्थः— १ हे देवयजन स्थान २ एथिवी ३ तेरी ४ तृण रूप ओषधियों

की ५ जड़ को में ६ ७ नाश नहीं करूँ स्फ्य के प्रहार से उत्पन्न हे मिट्टी तुम ८

गौओं के स्थान ९ गो शाला को १० जाओ हे वेदी ११ तेरे लिये १२ स्वर्ग लोक

का अभिमानी देवता १३ जल वर्षा करे और उस के द्वारा खोदने से उत्पन्न

दुख की शान्ति हो १४ हे देवता १५ सविता १६ जो १७ हम से १८ द्वेष क

रता है १९ और २० हम २१ जिस शत्रु से २२ द्वेष करते हैं २३ उस दो प्रकार

के शत्रु को २४ शत संख्या वाली २५ पाशों से २६ २७ यन लोक रूप पृ-

थिवी पर २८ बांध करके कैद करो २९ और यम राज के नगर से ३० ३१

मत छोड़ो ॥ २५ ॥ अथाध्यात्मम्— १ परमात्मा के यजन का

स्थान २ हे हृदय मन रूप वेदी ३ तेरी ४ इन्द्रिय शक्ति समूह के ५ मूल अर्थात्

पुरुषो के समूह में, १० जाओ हे वेदी ११ तेरे लिये १२ गगण मंडल १३ अमृत की
वर्षा करो १४, १५ हे मन देवता १६ जो काम आदि १७ हम से १८ द्वेष करता है १९
और २० हम २१ जिस मोह आदि शत्रु से २२ द्वेष करते हैं २३ उस दोनों प्रकार
के शत्रु को २४ ब्रह्म और परा शक्ति के प्रभाव तथा २५ गायत्री विष्णु और अं
तःकरण के निरोध द्वारा २६, २७, मूल प्रकृति में २८ युक्त करो २९ तम प्र
धान प्रकृति से ३०, ३१ मुक्त मत करो क्योंकि भगवद्गीता के वचनानुसार
सब विकार कामादि प्रकृति से उत्पन्न होते हैं ॥ २५ ॥

१ ए। २ पृथिव्याः ३ देव ४ यजनात् ५ अरुम् ६ अप ७ वध्या ८ षम् ९ गो १०
११ नं १२ ब्रजम् १३ गच्छ १४ ते १५ द्यौः १६ वर्षतु १७ देव १८ सवितः १९ यः २०
२१ अस्मान् २२ द्वेष्टि २३ च २४ वयं २५ या २६ द्विष्म २७ त २८ शतेन २९ पाशे ३०
३१ परमस्याम् ३२ पृथिव्या ३३ थ ३४ वधान् ३५ तमसः ३६ मा ३७ मौक्ता ३८ अ
३९ रो ४० दिव ४१ मा ४२ पतः ४३ ते ४४ द्रुप्तः ४५ द्यौ ४६ मा ४७ त्कन ४८ गो
४९ षान् ५० ब्रजम् ५१ गच्छ ५२ ते ५३ द्यौः ५४ वर्षतु ५५ देव ५६ सवितः ५७ यः
५८ अस्मान् ५९ द्वेष्टि ६० च ६१ वयं ६२ या ६३ द्विष्म ६४ त ६५ शतेन ६६ पाशे
६७ परमस्याम् ६८ पृथिव्या ६९ थ ७० वधान् ७१ तमसः ७२ मा ७३ मौक्ता ७४ अ

अथाधिदैवम् ॥ इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उन को कहते हैं दूसरी
वार उत्कर नाम स्थान में मिट्टी फेंकने का मंत्र १ हाथों से उत्कर के अव वा
धन का मंत्र १ तीसरी वार उत्कर में मिट्टी फेंकने का मंत्र ३ ॥

मंत्रार्थः १ हे यक्ष लक्ष्मि २ देवताओं के यजन स्थान ३ वेदी रूप पृ
थिवी से ४ अरुनाम असुर को ५ निकाल कर वध करूँ हे मंत्रिका तू ६
गौओं के स्थान ७ ब्रज में ८ जाओ हे वेदी ९ तुझ पर १० स्वर्गाभिमानि देव

ता १९ वर्षा करो १२ हे देवता १३ सविता १४ जो १५ हमसे १६ द्वेष करता है १७ और १८ हम १९ जिससे २० द्वेष करते हैं २१ उस दो प्रकार के शत्रु को २२ शत संख्यावाली २३ फांसियों से २४, २५ यम लोक रूप पृथिवी पर २६ बंधन करो २७ यम राज के नगर से २८, २९ मत छोड़ो ३० हे असुर नाम असुर ३१ स्वर्ग को ३२, ३३ मत जा हे वेदी देवता ३४ तेरा ३५ उपजीवन योग्य रस अर्थात् भोग ३६ स्वर्ग लोक में ३७, ३८ मत जाओ हे सप्त प्रहार से उत्पन्न मिट्टी तुम ३९ गोओं के स्थान ४० ब्रज में ४१ जाओ हे वेदी ४२ तुम्ह पर ४३ स्वर्गाभिमानी देवता ४४ जल वर्षा करो ४५ हे देव ४६ सविता ४७ जो ४८ हमसे ४९ द्वेष करता है ५० और ५१ हम ५२ जिससे ५३ द्वेष करते हैं ५४ उस शत्रु को ५५ शत संख्यावाली ५६ फांसियों से ५७, ५८ यम लोक रूप पृथिवी पर ५९ बंधन करो ६० यम राज के नगर से ६१, ६२ मत छोड़ो ॥ २६ ॥

अथाध्यात्मम् — १ हे यन्त्र लक्ष्मी देवी २, ३ मन और हृदय रूप वेदी के स्थान से ४ लोभासुर को ५ दूर ले जा कर बध करूँ हे लोभासुर की देह रूप मिट्टी ६ इन्द्रियों के स्थान ७ देहाभिमानी पुरुषों के समूह में जाओ हे मन हृदय रूप वेदी ८ तेरे अर्थ ९ गगण मंडल ११ अमृत की वर्षा करो १२, १३ हे देवता मन १४ जो काम आदि १५ हमसे १६ द्वेष करता है १७ और १८ हम १९ जिससे २० द्वेष करते हैं २१ उस दो प्रकार के शत्रु को २२ पराशक्ति युक्त ब्रह्म ३३ तथा गायत्री, विष्णु और अंतःकरण के निरोध द्वारा २४, २५ कारण रूप मूलप्रकृति में २६ बंधन करो २७ तम प्रधान प्रकृति से २८, २९ मत छुड़ाओ ३० हे लोभासुर ३१ भकुटी रूप स्वर्ग में ३२, ३३ मत जाओ हे हृदय रूप वेदी ३४ तेरा ३५ उपजीवन रस अर्थात् भोग ३६ भकुटी रूप स्वर्ग में ३७, ३८ मत जाओ हे क्रोधासुर की देह रूप मिट्टी ३९ इन्द्रियों के स्थान ४० देहाभिमानी पुरुषों के समूह में ४१ जाओ हे मन हृदय रूप वेदी ४२ तेरे अर्थ ४३

गगणमंडल ४४ अमृत की वर्षा करे ४५, ४६ हे देवता मन ४७ जो काम आदि ४८ हमसे ४९ द्वेष करता है ५० और ५१ हम ५२ जिस से ५३ द्वेष करते हैं ५४ उस दो प्रकार के शत्रु को ५५ परा शक्तियुक्त ब्रह्म ५६ तथा गायत्री विष्णु और अंतःकरण के निरोध द्वारा ५७, ५८ कारण रूप मूल प्रकृति में ५९ बंधन करे ६० तम प्रधान प्रकृति से ६१, ६२ मत छुड़ाओ ॥ १९ ॥

त्वा। गायत्रेण। छन्दसा। परिगृह्णामि। त्वा। वैष्टुभेन। छन्दसा। परिगृह्णामि। त्वा। जागतेन। छन्दसा। परिगृह्णामि। च। सुहमा। असि। च। शिवा। असि। च। स्योना। असि। च। सुषदा। असि। च। उर्जस्वती। असि॥ २७ ॥

अथाधिदैवम्— इस कांडिका में ६ मंत्र हैं उन को कहते हैं वेदी खोदने से पहिले स्पर्श से तीन रेखा करने के मंत्र १, २, ३, वेदी खोदने के पीछे स्पर्श से तीन रेखा करने के मंत्र ४, ५, ६, मंत्रार्थः हे यक्ष पुरुष विष्णु १ तुम्हें अंतर्धान को २ गायत्री ३ छन्द द्वारा ४ दृष्टि गोचर करता हूं ५ तुम्हें को ६ वैष्टुभ ७ छन्द द्वारा ८ दृष्टि गोचर करता हूं ९ तुम्हें १० जागत ११ छन्द द्वारा दृष्टि गोचर करता हूं १२ जिस वेदी पर विष्णु का आवाहन तथा प्रादुर्भाव हुआ उसके गुणों को कहते हैं १३ हे वेदी तुम १४ ईश्वर के तेज से युक्त होने के कारण सुन्दर भूमि १५ हो १६ और १७ उग्र असुर के निकालने तथा विष्णु का स्थान होने से शान्त रूप १८ हो १९ और २० सुख रूप २१ हो २२ और २३ देवताओं की सुखासना २४ हो २५ और अन्न का रस जो द्रव है उस से युक्त २७ हो श्रुति में बद्ध कथा हैं उन का अर्थ अत्यंत कठिन है उस कारण से संहिता के अंत में उनके सत्य अर्थ को कहेंगे ॥ २७ ॥ अथाध्यात्मम् हे देह व्यापी आत्मा रूप विष्णु १ तुम्हें २, ३ प्राण के द्वारा ४ ग्रहण करता हूं हे आत्मा रूप विष्णु ५

तुभे^{१०} ७ उदान के द्वारा ८ ग्रहण करता हूँ^८ तुभे^{१०} ११ अपान के द्वारा^{१२}
 ग्रहण करता हूँ^{१३} हे हृदय रूप वेदी तुम^{१४} विष्णु और योगी रूप शिव की
 भूमि^{१५} हौ^{१६} और^{१७} मंगल रूप अथवा काम मोह आदि से रहित शान्त रूप
 प^{१८} हौ^{१९} और^{२०} ब्रह्मानन्द से युक्त^{२१} हौ^{२२} और^{२३} नरनारायण जीव
 की सुखा सन^{२४} हौ^{२५} और^{२६} ज्योतिरस अमृत ब्रह्म से युक्त^{२७} हौ^{२८} ॥ २७
 विरप^{२९} शिनि। कूरस्य^{३०}। विस्तेपः^{३१}। पुरा^{३२}। याम^{३३}। जीवदानुम^{३४}। एधि^{३५}
 वी^{३६}। स्वधाभिः^{३७}। उदा^{३८} दाय^{३९}। चन्द्र^{४०} मसि^{४१}। ऐरयन्^{४२}। धीरासु^{४३}। ताम^{४४}।
 उ^{४५}। अनुदिश्य^{४६}। यजन्ते^{४७}। प्रोक्षणी^{४८}। आसादय^{४९}। द्विषतः^{५०}। वध^{५१}।
 आसि^{५२} ॥ २८ ॥ अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ३ मंत्र हैं उन को

कहते हैं, वेदी के समान और शुद्ध करने का मंत्र १ प्रोक्षणी पात्र को स्थापण
 करने का मंत्र २ स्थ को ऊपर उठाने का मंत्र ३— मंत्रार्थः— इस मंत्र से य
 ह कथा सम्बन्ध रखती है किसी समय देवताओं का युद्ध असुरों के साथ उप-
 स्थित हुआ तब देवताओं ने परस्पर मंत्र किया कि इस भूमि का जो देव यज्ञ
 न नाम उन्नम स्थल है उस को चन्द्रमा में स्थापण करके युद्ध करें यदि हम
 री पराजय हो तब देव यज्ञ स्थल में यज्ञ करके फिर दैत्यों को जीतेगे यह
 मंत्र करके भूमि के सार भाग देव यज्ञ को चन्द्रमा में स्थापण किया वह
 कृष्ण वर्ण अब भी दीखता है इसी आख्यान को यह मंत्र कहता है ॥ १ हे
 विष्णु २ असुर समूह के ३ युद्ध से ४ पहले ५ जिस जीवों की धात्री ७ एधि-
 वी के आत्मा को ८ वेदों के साथ ९ ऊंचा उठा कर १० चन्द्रमा में ११ स्थापण
 किया १२ त्त्वानी भक्त जन १३ १४ उसी एधि वी को १५ शास्त्र उपदेश द्वारा
 सिद्ध करके अर्थात् वही सारभूत भूमि इस वेदी में विद्यमान हैं ऐसी भा-
 वना करके १६ यज्ञ करते हैं, अर्घ्य कहाता है, हे अमीध १७ प्रोक्षणी

केजलों को १८ वेदी पर स्थापन करे हे स्थापन १९ शत्रु के २० हिंसक २१ हौ
॥२८॥ अथाध्यात्मम् १ हे वेदों के वक्ता विष्णु २ काम वेग के
३ मुद्ग से ४ पहले ५ जिस ६ नित्य जीवन देने वाली ७ योग भूमि को ८ म
नो वृत्ति के भोगों के साथ ९ उत्कर्ष से ग्रहण कर १० मानस कमल में ११
स्थापन किया १२ ज्ञानी पुरुष १३ १४ उसी योग भूमि को १५ गुरु शा-
स्त्र द्वारा जान कर १६ ज्ञान यन्त्र को करते हैं हे हार्दन्तरिक्ष १७ ब्रह्म ज्योति-
रस रूप अमृत को १८ अपने मध्य स्थापन करे हे ज्ञान रूप वज्र तुम १९
काम के २० हिंसक २१ हौ ॥२८॥

१ रक्षः २ प्रत्युष्टं ३ अरातयः ४ प्रत्युष्टाः ५ रक्षः ६ निष्टमः ७ अरात-
८ यः ९ निष्टमाः १० अनिशितः ११ सपत्नक्षितः १२ असिः १३ वाजिनः
१४ त्वा १५ वाजेध्यायै १६ सम्मार्ज्मि १७ रक्षः १८ प्रत्युष्टं १९ अरातयः
२० प्रत्युष्टाः २१ रक्षः २२ निष्टमः २३ अरातयः २४ निष्टमाः २५ अनिशिताः
२६ सपत्नक्षितः २७ असिः २८ वाजिनीम् २९ त्वा ३० वाजेध्यायै ३१ सम्मार्-
ज्मि ॥२९॥ अथाधिदैवम् इस कंडिका में सुवा आ-

दिके मार्जन अतपन और समर्पण के ६ मंत्र हैं ॥ मंत्रार्थः १ राक्षस
२ दग्ध किया गया ३ शत्रु ४ दग्ध किये गये ५ राक्षस ६ निःशेष तप्त किया-
गया ७ शत्रु ८ निःशेष तप्त किये गये हे सुव तुम ९ तीक्ष्ण ता रहित उपद्रव
न करने वाले १० शत्रुओं के मारने वाले ११ हौ इसी कारण १२ यन्त्र द्वारा अ-
न्न का हेतु होने से अन्न वान वा यन्त्र रूप अन्न से युक्त अथवा यन्त्र नाम अ-
न्न के योग्य १३ तुम को १४ यन्त्र प्रकाश के लिये १५ भले प्रकार शोधन क-
रता हूं क्योंकि शोधित सुव में आज्य के ग्रहण करने और होम ने से अग्नि-

देवता प्रज्वलित होता है उस की दीप्ति से आहुति फल रूप अन्न प्रकाशित होता है हे जुहू हे उपभूत हे ध्रुव १६ राक्षस १७ दग्ध किया गया १८ शत्रु १९ दग्ध किये गये २० राक्षस २१ निशेष तप्त किया गया २२ शत्रु २३ निशेष तप्त किये गये तुम २४ तीक्ष्ण तारुहित उपद्रव न करने वाले २५ शत्रुओं के मारने वाले २६ हौ इसी कारण २७ यज्ञ द्वारा अन्न का हेतु होने से अन्न वान वा यज्ञ रूप अन्न से युक्त अथवा यज्ञ नाम अन्न के योग्य २८ तुम को २९ यज्ञ प्रकाश के लिये ३० भले प्रकार शोधन करता हूँ ॥ २९ ॥

अथाध्यात्मम्— १ अज्ञान २

दग्ध किया गया ३ काम आदि शत्रु ४ दग्ध किये गये ५ अज्ञान ६ निशेष तप्त हुआ ७ काम आदि शत्रु ८ निशेष तप्त हुए हे बुद्धि वा प्राण वायु रूप सुख तुम ९ योग मार्ग में उपद्रव न करने वाले १० काम आदि शत्रुओं के नाशक ११ हौ १२ ज्ञान यज्ञ वाले १३ तुम को १४ यज्ञ प्रकाश के लिये १५ भले प्रकार शोधन करता हूँ प्राण के शोधन और इन्द्रिय शक्तियों के ग्रहण और होम से ब्रह्माग्नि प्रज्वलित होता है और उस की दीप्ति से आहुति फल रूप मोक्ष प्राप्त होता है, हे चक्षु मन्त्र जीवात्म सहित वाणी १६ अज्ञान १७ दग्ध किया गया १८ कामादि शत्रु १९ दग्ध किये गये २० अज्ञान २१ निशेष तप्त हुआ २२ कामादि शत्रु २३ निशेष तप्त हुए २४ तुम योग मार्ग में उपद्रव करने वाले २५ काम आदि शत्रुओं के नाशक २६ हौ २७ ज्ञान यज्ञ वाले २८ तुम को २९ यज्ञ प्रकाश के लिये ३० भले प्रकार शोधन करता हूँ ॥ २९ ॥

१। अ० २। रा० ३। अ० ४। वि० ५। वे० ६। अ० ७। त्वा० ८। उ० ९। अ० १०। चक्षु० ११। त्वा० १२। अ० १३। अ० १४। जि० १५। दि० १६। सु० १७। अ० १८। मे० १९। धा० २०। धा० २१। य० २२। य० २३। भ० २४। ३० ॥ अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उन को

कहते हैं, तीन लपेट वाली मूँज की रस्सी से यज्ञ मान की पत्नी को कमर में युक्त करने का मंत्र १ लपेटी हुई रस्सी के दाहिनी ओर के पाश को उत्तर की ओर कमर में लगाने का मंत्र २ घृत की घाली को गार्ह पत्यु अग्नि से उतारने का मंत्र ३ पत्नी से घृत के देखे जाने का मंत्र ४॥ **मंत्रार्थः** ॥ हे योक्ता भिमानी देव ता तुम २ भूमि की ३ लता ४ हौं हे दक्षिण पाश तु ५ यज्ञ का ६ व्यापक ७ हे हे आज्य ८ तुम्हें ९ उत्तम रस के लाभार्थ अग्नि से उतार ता हूँ पत्नी कहती है हे आज्य १० उपहिंसारहित ११ नेत्र से १२ तुम्हें १३ अधो मुखी होकर देखती हूँ हे घृत तुम १४ अग्नि की १५ जिह्वा हौं क्योंकि जब घृत अग्नि में होमा जाता है तब जिह्वा की समान ज्वाला उत्पन्न होती है १६ और देवताओं के लिये १७ आन्धान का कारण १८ है क्योंकि ज्वाला को देख कर देवता आते हैं इस कारण १९ मेरे २०, २१ अत्येक याग फल जनित भोग स्थान की सिद्धि के लिये अथवा साकार निराकार ब्रह्म की प्राप्ति के अर्थ २२, २३ अत्येक याग सिद्धि के लिये २४ योग्य वा समर्थ हो यहां अग्रोक्त प्रश्नों का सम्भव है, पत्नी को मूँज की रस्सी से क्यों उक्त करते हैं १ पाश को कमर में लगा कर गांठ न बांधने का क्या कारण है २ आज्य देखने में पत्नी का अधिकार कैसे है ३ उनके उत्तर श्रुति देती है, पत्नी का जो अंग नाभि से नीचे है वह अपवित्र है जब आज्य के देखने को उद्यत होती है तब इस के उस अंग को योक्ता (रस्सी) से ढक देते हैं, तिस कारण पत्नी को योक्ता से मुक्त करते हैं १ गांठ बरुण तन्त्र की है, वरुण पत्नी को ग्रहण करे जो ग्रंथि देवे, इसी कारण गांठ नहीं देते हैं २ पत्नी स्त्री है और आज्य वीर्य है इस लिये यज्ञ फल का देने वाला यह मिथुन (जोड़ा) किया जाता है इसी कारण पत्नी आज्य को देखती है ३॥ ३०॥ **अथाध्यात्मम्-** १ हे बुद्धि का संस्कार करने वाली आत्म शक्ति तुम २ पराप्रकृति की ३ लता वा जिह्वा ४ हौं ५ विष्णु की ६ सर्व व्यापी शक्ति ७ हौं हे इन्द्रिय शक्ति समूह ८

तुम्हे^१ ज्ञानामृतरूपरसके लाभार्थ आत्मरूपी अग्नि से उतारता हूँ अब बुद्धि क
 होती है, हे इन्द्रिय शक्ति समूह १० पूर्ण ब्रह्मज्ञान रूप ११ नेत्र से १२ तुम्हे १३
 निश्चय पूर्वक देखती हूँ हे इन्द्रिय शक्ति समूह तुम १४ आत्मारूप अग्नि की १५ जि
 व्हा अर्थात् भोग साधन हौ १६ इन्द्रियों के जो देवता हैं उन के लिये १७ आह्म
 न का कारण १८ हौ इस कारण १९ मेरे २०, २१ प्रत्येक कमल (मन आदि) २२
 २३ और प्रत्येक ज्ञान यज्ञ के लिये २४ योगेश्वर्य से सम्पन्न हूँ जिये ॥ ३० ॥

सवि^१तुः। प्रसवे^२। त्वा^३। अ^४च्छि^५ द्रेण^६। पवित्रेण^७। सूर्यस्य^८। रश्मि^९
 भिः^{१०}। उत्पुनामि^{११}। सवि^{१२}तुः। प्रसवे^{१३}। वः^{१४}। अ^{१५}च्छि^{१६} द्रेण^{१७}। पवित्रेण^{१८}
 सूर्यस्य^{१९}। रश्मिभिः^{२०}। उत्पुनामि^{२१}। तेजः^{२२}। अ^{२३}सि^{२४}। शुक्ल^{२५}। अ^{२६}सि^{२७}।
 अमृतम्^{२८}। अ^{२९}सि^{३०}। धाम^{३१}। नाम^{३२}। देवानां^{३३}। प्रिय^{३४}। अ^{३५}सि^{३६}। अना^{३७}
 धष्टम्^{३८}। देवयजनम्^{३९}। अ^{४०}सि^{४१} ॥ ३१ ॥ अथाधिदैवम्-

इस कण्डिका में ४ मंत्र हैं उन को कहते हैं, घृत के शोधने का मंत्र १ प्रो-
 क्षण के जल को शोधने का मंत्र २ घृत के देखने का मंत्र ३ मुवा से घृत लेने
 का मंत्र ४ ॥ मंत्रार्थ:- हे आज्य १ प्रेरक परमेश्वर की २ प्रेरणा होने
 पर ३ तुम्ह को ४, ५ वायु रूप पवित्रा और ६ सूर्य की ७ किरणों से ८ शोधन
 करता हूँ हे प्रोक्षण के जल ९ प्रेरक परमेश्वर की १० प्रेरणा होने पर ११ तुम्ह
 को १२ वायु रूप १३ पवित्रा और १४ सूर्य की १५ किरणों से १६ शोधन करता
 हूँ हे आज्य तुम १७ शरीर की कांति बढ़ाने से तेज रूप अथवा भगवद् गीता के
 वचनानुसार भगवत्स्वरूप १८ हौ १९ वर्षा अन्न आदि की उत्पत्ति के कार-
 ण होने से वीर्य रूप २० हौ २१ देवताओं के तम करने वाले अमृत २२ हौ
 हे आज्य तुम २३ देवताओं की चित्त वृत्ति धारण होने के स्थान २४ सब प्राणि

योंको अपनी ओर भुक्ताने वाले २५ हों क्योंकि सब प्राणी धृत को देख कर उसके खाने को भुक्तते हैं २६ तथा देवताओं के २७ प्रिय २८ तिरस्कार रहित २९ देवताओं के याग का साधन ३० हों इस कारण तुम्हें को ग्रहण करता हूँ ॥ ३१ ॥

अथाध्यात्मम् हे इन्द्रिय शक्ति समूह १ प्रेरक परमेश्वर वा गुरु की २ प्रेरणा होने पर ३ तुम्हें ४ प्राण रूप ५ पवित्रा से तथा ६ मानस सूर्य की ७ किरणों से ८ शुद्ध करता हूँ हे गगणा मृत ९ गुरु की १० प्रेरणा होने पर ११ तुम को १२ वायु रूप १३ पवित्रा से १४ तथा परमात्मा की १५ किरणों से १६ शुद्ध करता हूँ हे इन्द्रिय शक्ति समूह तुम १७ आत्म तेज १८ हों १९ शुद्ध और ब्रह्माग्नि में हवण योग्य २० हों २१ आत्मा का प्रकाश होने से नाश रहित २२ हों २३ २४ ज्योति नाम तुम २५ ब्रह्म तत्त्व नारायण नाम देवताओं के २६ प्रिय २७ हों २८ तिरस्कार रहित २९ और ज्ञान यज्ञ के साधन ३० हों ३१

इति श्री भृगु वंशावतंस श्री नाथू राम सूनु ज्वाला प्रसाद भार्गव ऋषि कृते शुक्ल यजुर्वेदीय ब्रह्म भाष्ये साखा चाज्य ग्रहान्तः वा करणादीनां संस्कार कथनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ अथ द्वितीयोऽध्यायः ॥

१ २ ३ ४ ५ ६ ७
 रुषाः । आखरेष्टः । असि । अग्नये । जुष्टम् । त्वा । प्रोक्षामि ।
 ८ ९ १० ११ १२ १३ १४
 वेदि । असि । वहिषे । जुष्टम् । त्वा । प्रोक्षामि ।
 १५ १६ १७ १८ १९ २० २१
 वेदि । असि । सुगम्यः । जुष्टम् । त्वा । प्रोक्षामि ॥ १ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ३ मंत्र हैं उन को कहते हैं, इधम (ईधन) के प्रोक्षण का मंत्र १ वेदी प्रोक्षण का मंत्र २ दर्भ (कुशा) प्रोक्षण का मंत्र ३ ॥ **मंत्रार्थः** हे इधम तुम १ प्रोक्षण से पहले असंस्कृत

अथवा रुषा मृग रूप यज्ञ २ कदिन ब्रह्म पर स्थित अथवा त्वर्मा देवता आ-

हवनीय अग्नि में चारों ओर से स्थित ३ हौ ४ अग्नि के अर्थ ५ प्रिय ६ तुभ को ७ शुद्धि केलिये जल से प्रोक्षण करता हूं हे वेदी तुम ८ असुरों से देवताओं को प्राप्त होने के कारण वेदी नाम ९ हौ १० कुशाधारण में उपयोगी होने के कारण ११ प्रिय १२ तुभ को १३ प्रोक्षण करता हूं क्योंकि पृथिवी रूप वेदी से भजा रूप कुशा का धारण करना योग्य है हे दर्भ तुम १४ वहुत होने से वेदी की वृद्धि करने को समर्थ १५ हौ खुचों के धारणार्थ १७ प्रिय १८ तुभ को १९ प्रोक्षण करता हूं॥ १॥ अथाध्यात्मम्- हे

प्राण तुम १ विष्णु रूप २ देह वक्ष पर स्थित अथवा ब्रह्मा नंद दाता हार्दी काश में चारों ओर से स्थित ३ हौ ४ आत्म रूप अग्नि केलिये ५ प्रिय ६ तुभ को ७ प्रोक्षण करता हूं हे मन तुम ८ कामादि असुरों से जीवात्मा की प्राप्ति होने के कारण वेदी नाम ९ हौ १० मनुष्य लोक केलिये ११ प्रिय १२ तुभे १३ प्रोक्षण करता हूं हे इन्द्रिय समूह तुम १४ आत्मा की भजा १५ हौ १६ वाणी आदि केलिये १७ प्रिय १८ तुभे १९ प्रोक्षण करता हूं॥ १॥

१ ए० अदित्योः। २ व्युन्दन्तुम्। ३ असि। ४ विष्णोः। ५ स्तुपे। ६ असि। ७ ऊर्ण मृद समु। ८ देवेभ्यः। ९ स्वास स्थाम्। १० त्वा। ११ स्तूणामि। १२ भुव पतये। १३ स्वाहा। १४ भुवन पतये। १५ स्वाहा। १६ भूतानाम्। १७ पतये। १८ स्वाहा। १९

॥ २ ॥ अथाधिदैवम्- इस कंडिका में ६ मंत्र हैं उन को कहते हैं, प्रोक्षण से वचे जल को कुशाओं के पूला की जड़ पर डालने का मंत्र १ कुशा के पूला को खोल कर पूर्व भाग से प्रस्तर के ग्रहण का मंत्र २ वेदी को कुशा से आच्छादन करने का मंत्र ३ वेदी से बाहर जो हवि गिरे उस के अभिमर्शन का मंत्र ४, ५, ६ मंत्रार्थः १ हे प्रोक्षण से वचे जल के अभिमानी देवता तुम २ भूमि को ३ विशेष आर्दे (गीला) करने वाले ४ हौ हे दर्भ मु-

हिरूपप्रसारतुम ५ यज्ञकी ६ शिखा ७ हो हे वेदी ८ ऊन की समान श्रुति को म
ल ९ देवताओं के लिये १० सुखा सन रूप ११ तुम्ह को १२ कुशाओं से आच्छा
दन करता हूँ १३ अग्नि के प्रथम भाई भुव पति के अर्थ १४ होम किया गया
१५ अग्नि के दूसरे भाई भुव पति के लिये १६ होम किया गया १७, १८ अग्नि
के तीसरे भाई भूत पति के लिये १९ हवि दिया गया ॥२॥

अथाध्यात्मम्— १ हे गगण मंडल के अमृत वा ज्योति रस रूप अमृत
नाम प्रोक्षण से बचे जल के अभिमानी देवता तुम २ जीव रूप पर शक्ति के
३ विशेष आर्द्र करने वाले ४ हो हे यज्ञ मान के आत्मा तुम ५ विष्णु के दत्ते
ज समूह ७ हो हे हृदय रूप वेदी ८ कृष्ण मृग चर्म रूप होने से अत्यंत को
मल ९ नर नारायण जीव नाम देवताओं के लिये १० सुखा सन रूप ११ तुम्ह
को १२ इन्द्रिय रूप कुशा से आच्छा दन करता हूँ शुद्ध आत्म तत्व ब्रह्माग्नि
में होम करना चाहिये इस के सिवाय अश्रोक्त देवताओं को अर्पण करना यो
ग्य है जैसे १३ जीव के अर्थ १४ हवि दिया १५ नरोत्त मन र के अर्थ १६ हवि
दिया १७, १८ नारायण के अर्थ १९ हवि दिया श्रुति में लिखा है पूर्व काल
में ब्रह्माग्नि के भाई नर नारायण जीव नाम हवि दान के भय से अपने कारण
ब्रह्म में प्रवेश हुए उस दुःख से ब्रह्माग्नि भी ज्योति रस अमृत जल में प्रवे
श हुए तदनंतर देवताओं ने ब्रह्माग्नि को अपने ज्ञान में अत्यक्ष किया श
क्ति दान नाम अपने अधिकार पर स्थापित ब्रह्माग्नि ने कहा मुझ को मेरे दु
न भाइयों के साथ स्थापण करो और उन का यज्ञ भाग नियत करो इसके
पीछे वे ब्रह्माग्नि के भाई परिधि जाने गए और ब्रह्माग्नि की आहुति से गिरा
हुआ अन्न उन का भाग नियत हुआ ॥२॥

विश्वावेसुः^१। गन्धर्वः^२। विश्वस्य^३। अरिष्टैः^४। त्वा^५। परिदधातु^६
इडः^७। ईडितः^८। अग्निः^९। यजमानस्य^{१०}। परिधिः^{११}। ओसि^{१२}। वि

^{१३}पृथ्व्यः। ^{१४}अग्निः। ^{१५}इन्द्रः। ^{१६}दक्षिणः। ^{१७}वाङ्मनः। ^{१८}असिः। ^{१९}इन्द्रः।
^{२०}ईडितः। ^{२१}अग्निः। ^{२२}यजमानस्य। ^{२३}परिधिः। ^{२४}असिः। ^{२५}मित्रावरु
^{२६}णौ। ^{२७}विश्वस्य। ^{२८}अग्निः। ^{२९}ध्रुवेण। ^{३०}धर्मणा। ^{३१}त्वा। ^{३२}उत्तर
^{३३}तः। ^{३४}परिधत्ताम्। ^{३५}इन्द्रः। ^{३६}ईडितः। ^{३७}अग्निः। ^{३८}यजमानस्य। ^{३९}परि
^{४०}धिः। ^{४१}असिः॥३॥ अथाधिदैवम्॥ इंस कंडिका में मध्य-
म, दक्षिण, उत्तर परिधियों के ३ मंत्र हैं। मंत्रार्थः द्वे पश्चिम परि-
धि १ सर्व व्यापी २ धरणी धर परमेश्वर ३ सम्पूर्ण असुर समूह जनित ४
हिंसा के परिहार वा विघ्न शान्ति के लिये ५ तुम्हें ६ आहवनीय के प-
श्चिम ओर स्थापन करो ७ स्तुति योग्य ८ होता आदि से स्तुति किये हुए
९ आहवनीय के प्रथम भ्राता भुवःपति नाम अग्नि तुम्हें १० यजमान के
११ चारों ओर से रक्षक १२ हौं हे दूसरी परिधि तुम्हें १३ सब १४ विघ्न शा-
न्ति के लिये १५ ईश्वर की १६ दाहिनी १७ भुजा अर्पित रक्षण में सम-
र्थ १८ हौं स्तुति योग्य १९ होता आदि से स्तुत २० और अग्नि के दूसरे भा-
ई भुवन पति नाम अग्नि तुम्हें २१ यजमान के २२ चारों ओर से रक्षक २३
हौं हे तीसरी परिधि २४ वायु सूर्य देवता २५ सर्व २६ विघ्नों की शान्ति के
लिये २७ निश्चल २८ कर्म वाधारण से २९ तुम्हें ३० उत्तर दिशा में
३१ स्थापन करो ३२ स्तुति योग्य ३३ स्तुत ३४ अग्नि के तीसरे भाई भूत-
पति अग्नि तुम्हें ३५ यजमान के ३६ चारों ओर से रक्षक ३७ हौं॥३॥

अथाध्यात्मम्-हे जीवस्व परिधि १ सब शरीरों में वास करने वाला २
ज्योतिस्वरूप परमात्मा ३ सब ४ काम आदि असुरों से उत्पन्न हिंसा वा वि-
घ्नों की शान्ति के लिये ५ तुम्हें ६ पश्चिम दिशा में स्थापन करो ७ स्तु-
ति योग्य ८ दाहिनी आदि से स्तुत ९ आत्मा अग्नि तुम्हें १० भूतात्मा रूप य-

जमान के ११ चारों ओर से रक्षक १२ हो हे नर तुम १३ सब १४ अज्ञान आदि से
उत्पन्न हिंसा के रोकने के लिये १५ ब्रह्म की १६ दाहिनी १७ भुजा अर्थात् र-
क्षा का साधन १८ हो १९ स्तुति योग्य २० स्तुति किये हुए २१ नर नाम अभि-
तुम २२ जीवात्मा रूप यजमान के २३ चारों ओर से रक्षक २४ हो हे नारायण
रूप परिधि २५ ज्ञानी उपासक पुरुष २६ सब २७ विघ्न शान्ति के लिये २८ नि-
श्चल २९ धर्म योग और भक्ति नाम से ३० तुम को ३१ उत्तर दिशा में ३२ स्था-
पन करो ३३ स्तुति योग्य ३४ स्तुति किये हुए ३५ नारायण नाम अभि तुम-
३६ ज्ञान निष्ठ वा भक्त के ३७ चारों ओर से रक्षक ३८ हो ॥ ३ ॥

कवे^१ अभि^२ अध्वरे^३ वीति होव^४ ॥ धुमन्तं^५ वृहन्तम्^६ त्वा^७

समिधीमहि ॥ ४ ॥ अथाधिदैवम् पहिली परिधि को समिध से

स्पर्श करके उस समिध को आहुतनीय अभि में छोड़ने का मंत्र ॥ १ हे
सर्व दृशी भूत भविष्य के ज्ञाता २ अभि देवता ३ यज्ञ में ४ होम से ईश्वर प्रा-
प्त करने वाले ५ स्वयं प्रकाश ६ महान् ७ तुम को ८ इस दध्म काष्ट से प्रा-
ज्वलित करता हूँ ॥ ४ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे मेधावी २ जीवात्म-
न ३ ज्ञान यज्ञ में ४ ब्रह्म प्राप्ति कारक होम वाले ५ ब्रह्म तेज से युक्त ६ धार-
ण से विराट् भाव को प्राप्त ७ तुम्हें ८ प्राण रूप समिध से भले प्रकार प्रज्वलि-
त करते हैं ॥ ५ ॥

१। समिध^२। असि^३। सूर्य^४। पुरस्तात्^५। कस्याश्चित्^६। अभि श-
क्त्या^७। त्वा^८। पातु^९। सवितु^{१०}। वाहू^{११}। स्थ^{१२}। देवेभ्यः^{१३}। त्वास स्थ^{१४}।
ऊर्णमृदसम्^{१५}। त्वा^{१६}। स्तृणामि^{१७}। वसवः^{१८}। रुद्राः^{१९}। आदित्याः^{२०}।
त्वा^{२१}। आसदन्तु^{२२} ॥ ५ ॥ अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ५

मंत्र हैं। स्पर्श न करके दूसरी समिध को आहवनीय अग्नि में छोड़ने का मंत्र १ आहवनीय को देखते जप करने का मंत्र २ आहवनीय अग्नि के पश्चिम प्रदेश में कुशा के दो तण्डुल उत्तराग्रस्थापन करने का मंत्र ३ उन कुशाओं पर प्रस्तर के स्थापन करने का मंत्र ४ ॥ प्रस्तर पर दोनों हाथ रखने का मंत्र ॥ ५ ॥

मंत्रार्थः हे इध्म के अभिमानी देवता तुम २ अग्नि के प्रज्वलित करने वाले ३ हो हे आहवनीय ४ सूर्य देवता ५ पूर्वदिशा में ६ ७ सब हिंसाओं से ८ तुम को ९ रक्षा करो क्योंकि तीनों दिशा में तीनों परिधि रक्षक हैं इसलिये पूर्व दिशा में सूर्य को रक्षक कहा है कुशा के दोनों तण्डुल तुम दोनों १० सूर्य की ११ भुजा १२ हो क्योंकि प्रस्तर को धारण करते हो १३ उन की समान को मल १४ देवताओं के लिये १५ सुखासन रूप १६ तुम को १७ वेदी पर स्थापन करता हूँ १८ अष्ट वसु १९ ग्यारह रुद्र २० बारह आदित्य तीनों सवन के अभिमानी तीनों देवता २१ तुम को २२ फैलाओ, अग्नि, दूसरी तीसरी समिध को अग्नि में डालने से क्या फल है (उत्तर) श्रुति कहती है जिस दूसरी समिध को अग्नि में डालता है उस से वसंत ऋतु को वृद्धि देता है, वृद्धि पाने वाला वसंत दूसरी ऋतुओं की वृद्धि देता है, वृद्धि पाने वाली षट् ऋतु प्रजा को उत्पन्न और औषधियों को परिपक्व करती हैं, फिर जिस तीसरी समिध को अग्नि में डालता है उस से अनुयाजों के मध्य ब्राह्मण को ही वृद्धि देता है, वह वृद्धि पाने वाला ब्राह्मण देवताओं को यज्ञ प्राप्त कराता है (अग्नि) २- पूर्वदिशा में सूर्य को रक्षक करने का क्या कारण है (उ०) सूर्य ही राक्षसों का नाशक है इसलिये रक्षक कहा ॥ ५ ॥ **अथाध्यात्मम्** १ हे प्राण के अधिष्ठाता देवता तुम २ आत्माग्नि को प्रज्वलित करने वाले ३ हो हे ब्रह्माग्नि ४ ज्ञान चक्षु ५ पूर्वदिशा में ६ ७ सब हिंसाओं से ८ तुम को ९ रक्षा करो हे इडा पिंगला नाम नाडियो तुम दोनों १० ईश्वर की ११ भुजा अर्थात् कार्य साधक १२ हो, हे यजमान रूप प्रस्तर १३ परा नर नारायण नाम देवताओं के

लिये १४ सुखासन रूप १५ मृगचर्म के समान कोमल १६ तुभको १७ विद्यात
 हं १८ पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, अहंकार महत् प्रधान नाम भगव
 दीता कथित अपरा पृथति १९ दस प्राण ग्यारह वां प्रति विव २० दश इन्द्रि
 मन बुद्धि २१ तुभयज मान रूप अस्तर को २२ प्राप्त करौ ॥ अन्न, ज्ञान चक्षु
 को ब्रह्माग्नि का रक्षक कहा इसमें क्या कारण है (उत्तर) ब्रह्म माया से रहि
 त अनंत निर्विकार है उस की जो अनन्त ज्योति है भगवान श्री कृष्ण ब्रह्मा-
 ङ से बाहर निकल कर और उसी ज्योति में प्रवेश हो कर ब्राह्मण के बालक
 को लाये थे, उसी ब्रह्म ज्योति को महा नारायण और महा विष्णु भी कहते
 हैं, वह ब्रह्माग्नि माया सम्बन्धी हवि को ग्रहण नहीं करते, ब्रह्माग्नि का अं
 श जो जीवात्मा है वही उस का हवि है, अति में ब्रह्माग्नि का वचन है कि-
 में हविदान रूप वज्र से डरता हूँ कि वह मुझ को स्वरूप से च्युत न करे इन
 तीनों परिधियों के साथ मुझ को स्थापन करे इस में स्वरूप च्युति नहीं है,
 देवताओं ने तथा त्तु कह कर ब्रह्माग्नि को तीनों परिधियों के साथ स्थापन कि
 या, तीन परिधि का स्थापन ब्रह्माग्नि का कवच है, परिधि नाम अग्नियों ने क
 हा हम को यज्ञ में युक्त करौ, और हमारा यज्ञ भाग कल्पना करो, देवता
 बोले कि जो परिधि से बाहर गिरैगा वह तुम में होम होगा, और जो तुम्हारे
 ऊपर होम होगा वह भी तुम्हारा भाग है, और जो अग्नि में होम होगा वह
 भी तुम्हारी ही रक्षा करैगा, अर्थात् नाया सम्बन्धी हवि तुम्हारा ही भाग है
 नाम्ना१। जुहूः२। घृताची३। अ०४। सा०५। प्रियेण६। धाम्ना७। इदम८।
 प्रियं९। सदे१०। आसीद११। नाम्ना१२। उपभूत१३। घृताची१४। अ०१५।
 सा०१६। प्रियेण१७। धाम्ना१८। इदम१९। प्रियं२०। सदे२१। आसीद२२।
 नाम्ना२३। ध्रुवा२४। घृताची२५। अ०२६। सा०२७। प्रियेण२८। धाम्ना२९।

^{३०} इदम्। ^{३१} प्रियं। ^{३२} सतः। ^{३३} आसीद। ^{३४} प्रियेण। ^{३५} धाम्ना। ^{३६} प्रियं। स
^{३७} दः। ^{३८} आसीद। ^{३९} ध्रुवा। ^{४०} ऋतस्य। ^{४१} योनौ। ^{४२} असदन्। ^{४३} विष्णा। ^{४४} ता।
^{४५} पाहि। ^{४६} यन्। ^{४७} पाहि। ^{४८} यन्पतिं। ^{४९} पाहि। ^{५०} मां। ^{५१} यन्नन्यम्। ^{५२} पाहि।

॥ ६ ॥ अथाधिदैवम् - इस कंडिका में द्धमंत्र हैं जुहू को अस्तर पर रखने का मंत्र १ उपभूत को अस्तर पर स्थापन करने का मंत्र २ ध्रुवा को अस्तर पर रखने का मंत्र ३ हवियों को वेदी के निकट स्थापन करके सब के स्पर्श करने का मंत्र ४, ५ हृदय को हाथ से स्पर्श करने का मंत्र ६ ॥ मंत्रार्थः हे जुहू तुम १ जुहू नाम हो अर्थात् जिस से होमा जाता है वह जुहू है तुम २ घृत से पूर्ण ४ हो ५ वह तुम ६ देवताओं के प्रिय ७ घृत रूप तेज के साथ ८ इस ९ प्रिय १० अस्तर नाम आसन पर ११ वैश्वो हे उपभूत तुम १२, १३ उपभूत नाम इस लिये हो कि समीप स्थित होकर घृत को धारण करते हो तुम १४ घृत से पूर्ण १५ हो १६ सो तुम १७ देवताओं के प्रिय १८ घृत रूप तेज के साथ १९ इस २० प्रिय २१ अस्तर नाम आसन पर २२ वैश्वो हे ध्रुवा तुम अचल होने के कारण २३, २४ ध्रुवा नाम हो तुम २५ घृत से पूर्ण २६ हो २७ सो तुम २८ देवताओं के प्रिय २९ घृत रूप तेज के साथ ३० इस ३१ प्रिय ३२ अस्तर नाम आसन पर ३३ वैश्वो हे हवि ३४ देवताओं के प्रिय ३५ घृत के साथ ३६ प्रिय ३७ अस्तर नाम आसन पर ३८ वैश्वो इस प्रकार प्रत्येक हवि को सम्यो धन कर कहना चाहिये ३९ अवश्य मिलने वाले फल से युक्त होने के कारण सत्य नाम ४० यज्ञ में ४१ ध्रुव नाम हवि ४२ स्थित हुए ४३ हे विष्णु अर्थात् व्यापक यज्ञ पुरुष ४४ उन हवियों को ४५ रक्षा करौ ४६ यज्ञ को ४७ रक्षा करौ ४८ यज्ञ मान को ४९ रक्षा करौ ५० मुझ ५१ अघ्वर्यु को ५२ रक्षा करौ ॥ ६ ॥ अथाध्यात्मम्। हे हृदय वा वाग्भिमानि देवता तुम १ जुहू नाम हो तुम २ इन्द्रियों की शक्ति से युक्त ४ हो

५ सो तुम ६ देहाभिमानियों की प्रिय ७ इन्द्रियों की शक्ति के साथ ८ इस ९ प्रिय १० जीवात्मा में ११ स्थित हो हे मानस अंतरिक्ष के अभिमानी देवता तुम १२ १३ मन नाम हो तुम १४ इन्द्रियों की शक्ति से युक्त १५ हो १६ सो तुम १७ १८ प्रिय इन्द्रिय शक्ति समूह के साथ १९ इस २० प्रिय २१ आत्म में स्थित हूँ जिये हे नान चक्षु वा आत्मा अभिमानी देवता तुम २३ २४ ध्रुव नाम अर्थात् अचल हो तुम २५ इन्द्रियों की शक्ति से पूर्ण २६ हो २७ सो तुम २८ परानर नारायण नाम देवताओं के प्रिय २९ इन्द्रियों की शक्ति के साथ ३० इस ३१ प्रिय ३२ आसन यज्ञ माननास पर ३३ वैदों हे आत्म प्रतिविम्ब तुम ३४ देवताओं के प्रिय ३५ इन्द्रियों की शक्ति के साथ ३६ ३७ प्रिय आसन यज्ञ मान नाम पर ३८ वैदों ३९ आत्म भाव को आत्म इन्द्री मन बुद्धि प्रतिविम्ब ४० ४१ ब्रह्म के स्थान हार्द काश में ४२ स्थित हूँ ४३ हे विष्णु ४४ उन को ४५ रक्षा करौ ४६ ज्ञान यज्ञ वा योग यज्ञ को ४७ रक्षा करौ ४८ यज्ञ मान को ४९ रक्षा करौ ५० मुझ ५१ योगाचार्य को ५२ रक्षा करौ ॥ ६ ॥

वाजजितम्। अग्ने वाजम्। सरिष्यन्तम्। वाजजितम्। त्वा। स
म्माजिमी देवेभ्यः। नमः। पितृभ्यः। स्वधा। मे। सुयमे। भूया
सम्। अद्य। अस्कन्नम्॥ ७ ॥ अथाधिदैवम्॥

इसकाडिका में ४ मंत्र हैं, इध्म बंधन के तलों से दक्षिण पश्चिम उत्तर की परिधियों के समीप तीन २ बार आहु वनीय अग्नि के मार्जन का मंत्र १ परिक्रमा करके आहु वनीय के ऊपर मध्य प्रदेश में तीन बार मार्जन करने का मंत्र २ अज्जली करने का मंत्र ३ - जुहू आदि को लेकर यजति स्थान में जाने का मंत्र ४ ॥

मंत्रार्थः ॥ १ हे ब्रह्माण्ड रूप अन्न के जय करने वाले २ अग्नि ३ ब्रह्माण्ड को उद्दश्य करके ४ चलने वाले अर्थात् ब्रह्माण्ड की तप में प्रवृत्त ५ ब्रह्माण्ड की

जय को प्राप्त ६ तुम्हें ७ शोधन करता हूँ ८ ब्रह्मांड में जो देवता हैं उनके अर्थ
 ९ नमस्कार १० जो पितर अर्थात् पालक हैं उनके अर्थ ११ अमृत हे जुहूँ उप
 १२ मेरे लिये १३ अच्छा सावधान १४ हूँ जियै १५ अब इस अनुष्ठान में जिस
 प्रकार तुम दोनों में स्थित घृत १६ पतितन होवै ॥ ७ ॥

अथाध्यात्मम्— १ हे प्राण को जीतने वाले २ आत्मा मि ३ ४ प्राण जय में प्र
 वृत्त ५ प्राणायाम करने वाले ६ तुम्हें ७ भले प्रकार शोधन करता हूँ ८ वेदों के
 जो महावाक्य हैं उनके अर्थ अथवा परानर नारायण के लिये ९ नमस्कार १० मन
 की जो वृत्तियाँ हैं उनके लिये ११ इन्द्रिय शक्ति रूप अन्न अर्पण हो हे हृदय
 मन तुम दोनों १२ मेरे लिये १३ अच्छे सावधान १४ हूँ जियै १५ अब इस समय
 जिस प्रकार उन दोनों में स्थित इन्द्रिय शक्ति समूह १६ पतनन हो ॥ ७ ॥

अद्य^१। देवेभ्यः^२। आज्यम्^३। अस्कन्नम्^४। सम्भ्रियासम्^५। विषाणो^६।
 अद्विणा^७। त्वा^८। मा^९। प्रवकामिषम्^{१०}। हे अग्ने^{११}। ते^{१२}। वसुमतीम्^{१३}। छाया^{१४}
 म्^{१५}। उपस्थिषं^{१६}। विषाणो^{१७}। स्थानम्^{१८}। असि^{१९}। इन्द्र^{२०}। इतो^{२१}। वीर्यो^{२२}। अक
 रोत^{२३}। अध्वरः^{२४}। ऊर्द्धुः^{२५}। आस्थान् ॥ ८ ॥ अथाधिदेवम् ॥

इस कंडिका में ३ मंत्र हैं, यजति देश में जाने और वहां से लौटने का मंत्र १ य
 जति देश में ईशान दिशा की ओर मुख करके बैठने का मंत्र २ घृत के होम का
 मंत्र ३ हे जुहूँ उपभृत् १ अब अनुष्ठान के समय २ देवों प्रकार के लिये ३ तुम
 दोनों में स्थित घृत ४ जिस प्रकार भूमि पर न गिरै तैसे ही ५ भले प्रकार धार
 ण करो हे व्यापक यज्ञ पुरुष मैं ७ पांव से ८ तुम को ९ १० उलंघन न करूँ अ
 र्थात् पांव से उलंघन करने का दोष मुझ को न होवे ११ हे अग्नि १२ तेरी १३ अ
 अय रूप १४ यज्ञ सम्बन्धी भूमि को १५ सेवन करूँ उसी सेवा प्रकार को कहते
 हैं हे यज्ञ भूमि तुम १६ यज्ञ का १७ स्थान १८ हो १९ देवताओं के इन्द्र ने २०

इसी देव यजन स्थान से उद्योगी होकर २१ राक्षसवध रूपी वीर कर्म को २२ किया इसी कारण से २३ यज्ञ २४ ऊँचा २५ स्थित हुआ, अर्थात् अष्ट ऋषयः ॥ ८ ॥

अथाध्यात्मम् — हे हृदय मन तुम दोनों १ इस ब्रह्म यज्ञ में २ परानरना रायण नाम देवताओं के लिये ३ तुम दोनों में स्थित इन्द्रिय शक्ति समूह ४ जैसे मोक्ष अवस्था से च्युत न होतैसे ही ५ भले प्रकार धारण पोषण करो ६ हे परमात्मा में ७ देह वृक्ष की जड़ काम से ८ तुम को ९ १० उलंघन करूँ अर्थात् काम से अतिक्रम दोष मुझ को न हो ११ हे ब्रह्माग्नि १२ तेरी १३ योग लक्ष्मी से युक्त १४ आश्रय रूप ज्ञान यज्ञ किया को १५ सेवन करूँ हे हृदय की भूमि तुम १६ सर्व व्यापी ब्रह्म का १७ स्थान १८ हौ १९ यज्ञ मानने २० इसी देव यजन स्थान से २१ काम शत्रुवध रूपी वीर कर्म को २२ किया इसी कारण २३ ज्ञान यज्ञ २४ ऊँचा २५ स्थित हुआ ॥ ८ ॥

१ अग्ने २ होत्र ३ के ४ दूत्य ५ के ६ त्वा ७ द्यावा एधि वी ८ अवतामा त्वं ९ द्यावा एधि वी १० अवा ११ इन्द्र १२ आज्येन १३ हविषा १४ देवेभ्यः १५ स्विष्ट १६ कृत १७ अभूत १८ स्वाहा १९ ज्योतिः २० ज्योतिषा २१ सां २२ ॥ ९ ॥

अथाधिदैवम् — जुहू के घृत को ध्रुवा के घृत में गिराने का मंत्र १ हे अग्नि २ होता के कर्म को ३ ज्ञान ४ दूत के कर्म को ५ ज्ञान ६ तुम को ७ एधि नी स्वर्ग लोक के अभिमान की देवता ८ रक्षा करो ९ हे अग्नि तुम भी १० एधि वी स्वर्ग लोक के अभिमान की देवताओं को ११ रक्षा करौ इस प्रकार परस्पर पालन होने पर १२ यज्ञ का देवता इन्द्र हमारे दिये हुए १३ घृत नाम १४ हवि से १५ देवताओं के लिये १६ अष्ट यज्ञ का कर्त्ता १७ हुआ १८ अष्ट होम हो १९ जुहू से सींची हुई घृत रूप ज्योति २० ध्रुवा में स्थित घृत रूप ज्योति के साथ २१ भले प्रकार मिलाप को पाओ ॥ ९ ॥

अथाध्यात्मम्— प्राण कहते हैं १ हे आत्मा मि २ हो ताके कर्म को ३ जानो ४
 दूत के कर्म को ५ जानो अर्थात् श्रुति के अनुसार दोनों तुम्हारे ही कर्म हैं ऐसे हैं
 तुम को ७ हृदय और मन ८ अपने आत्मा रूप से रक्षा करौ हे आत्मा मि ९ तुम भी
 १० हृदय और मन को ११ रक्षा करौ १२ वाक् १३ इन्द्रिय शक्ति रूप १४ इवि-
 के द्वारा १५ परानरनारायण केलिये १६ श्रेष्ठ यज्ञ का करने वाला १७ हुआ १८
 श्रेष्ठ होम हो १९ इन्द्रियों की ज्योति २० आत्म ज्योति के साथ २१ योग को पाओ
 इन्द्रः १ इन्द्रो २ इन्द्रियं ३ मयि ४ दधातु ५ रायो ६ मघवानः ७ सत्त्वन्ता
 म् ८ अस्माकं ९ आशिषः १० सत्याः ११ सन्तु १२ नः १३ आशिषाः १४ सन्तु
 माता १५ पृथिवी १६ उपहृता १७ माता १८ पृथिवी १९ माम् २० उपहृत्यता-
 म् २१ अग्नी धातु २२ स्वाहा २३ अग्नि २४ १०॥ अथाधिदैवम्— इस के
 डिका में दो मंत्र हैं, आशिष चाढ़ने का मंत्र १ भाग प्राशन का मंत्र २— यज-
 मान जप करता है १ यज्ञ का देवता परमेश्वर २ मेरे अपेक्षित इस ३ वल को
 ४ मुझ में ५ स्थापन करो ६ और देव मानुष दो प्रकार वाले धनों को ७ विद्या-
 धन वाले हमारे पुत्र पौत्र आदि ८ सेवन करौ और ९ यज्ञ मानों को दी हुई ह-
 मारी आशीर्वादे १० अभीष्ट प्रयोजन की कहने वाली ११ हौं और पुत्र आदि के-
 लिये दी हुई १२ हमारी १३ आशीर्वादे १४ सत्य १५ हौं १६ जगत का निर्मा-
 ण करने वाली १७ पृथिवी मुझ से १८ आत्मान की गर्द १९ माता भाव करके
 संभावित २० पृथिवी २१ मुझ को २२ हवि शेष भक्षण की आज्ञा दो और मैं २३
 अग्नि स्थापक रूप से २४ अग्नि रूप होता उस भाग को भक्षण करता हूँ २५ ज-
 ठराग्नि में श्रेष्ठ होम हौं १०॥ अथाध्यात्मम्— यज मान कहता है
 कि १ परमेश्वर २ इस ३ योग वल को ४ मुझ यज्ञ मान में ५ स्थापन करो और
 ६ योग के ऐश्वर्य को ७ प्राण दम आदि धन वाले हमारे शिष्य ८ सेवन-

करे और ६ हमारी कही हुई १० आशीर्वादे ११ सत्य १२ हौं और १३ गुरु की कही हुई हमारी १४ आशीर्वादे १५ विद्यमान हों, भूमि की धारणा को कहते हैं १६ जगत का निर्माण करने वाली १७ पृथिवी देवी मुझ से १८ आवाहन की गई १९ जगत धात्री २० पृथिवी २१ मुझ को २२ आवाहन करे जब दो का परस्पर आवाहन है तब मिलाप होता है और जब मिलाप हुआ तब उपाधिका लय होने से एकत्व होता है उसी कारण मैं २३ ब्रह्माग्नि का स्थापन करने वाले यज्ञ मान रूप से २४ महा वाक् प्रभाव द्वारा २५ ब्रह्माग्नि ही हूँ॥ १०॥

पिता॥ द्यौः३ उपहृतः३ पिता॥ द्यौः४ माम्६ उपहृत्याम्९
 स्वाहा॥ अग्नी२१ धातः२२ अग्निः२३ सवितुः२४ देवस्य२५ प्रसेवे२६
 अश्विनोः२७ वाहुभ्यां२८ पूषाः२९ हस्ताभ्यां३० त्वा३१ प्रतिगृह्णामि३२
 अग्नेः३३ आस्येन३४ त्वा३५ प्राशनामि॥ ११॥

अथाधिदैवम्॥ इस कंडिका में ४ मंत्र हैं स्वर्ग और वज्रान के परस्पर आवाहन के मंत्र १, २ ब्रह्मा भाग को ग्रहण करता है उस का मंत्र ३ दोनों के स्पर्श विना भाग के भक्षण का मंत्र ४— मंत्रार्थः— १ जगत का पालन करने वाला २ स्वर्ग ३ आवाहन किया गया ४ पितृ भाव से संभावित ५ स्वर्ग ६ मुझ को ७ आवाहन करे मैं ८ अग्नि स्थापक रूप से ९ अग्नि रूप होता उस भाग को भक्षण करता हूँ १० अच्छा हो म हो यद्वा से लेकर (ओम् प्रतिह) पदांतक ब्रह्मत्व है ११ सविता १२ देवता की १३ प्रेरणा होने पर १४, १५ अश्विनी कुमार के वाहु भाव को प्राप्त अपनी भुजाओं और १६, १७ पूषा देवता के हस्त भाव को प्राप्त अपने हाथों से १८ तुझ आशित्र को १९ स्वीकार करता हूँ हे आशित्र २० अग्नि देवता के २१ मुख से २२ तुझे २३ भक्षण करता हूँ॥ ११॥

अथाध्यात्मम्— स्वर्ग की धारणा को कहते हैं १ जगत का

पालन करने वाला ५ स्वर्गाभिमानि देवता ४ मेरा ७ आवाहन करौ, जिसका
रण परस्पर आवाहन से धारणा सिद्ध हुई इस कारण ८ मैं महावाक् द्वारा
९ ब्रह्माग्नि का स्थापन करने वाले यज्ञमान रूप से १० ब्रह्माग्नि ही हूं पृथिवी
सूर्य के मध्य जो कुछ है वह सब आत्मा में निश्चय होता है हे ब्रह्मांड रूप
उपाधि ११ गुरु १२ देवता की १३ प्रेरणा होने पर १४ मन और हृदय के अंत
रिक्त की १५ भुजाओं और १६ मन के १७ हाथों से १८ तुम्हें १९ स्वीकार क
रता हूं हे ब्रह्मांड रूप उपाधि २० ब्रह्माग्नि के २१ मुख से अर्थात् में ब्रह्म हूं, इ
स निश्चय से २२ तुम्हें को २३ अपनी आत्मा में लय करता हूं ॥ ११ ॥

^१ देव। ^२ सवितः। ^३ एतम्। ^४ यन्तम्। ^५ ते। ^६ बृहस्पतये। ^७ ब्रह्मणे। ^८ प्रा
^९ ह्म। ^{१०} तेन। ^{११} यन्तम्। ^{१२} अवे। ^{१३} तेन। ^{१४} यन्तपतिम्। ^{१५} तेन। ^{१६} माम्। ^{१७} अवे। ॥ १२ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ईश्वर प्रार्थना का मंत्र है, पदार्थः
ब्रह्मा प्रार्थना करता है, १ हे दान आदि गुण से युक्त २ सब के प्रेरक जगदीश्वर
रवेदों ने ३ इस ४ द्रव्य यन्त्र को ५ तुम्हें ६ ब्रह्माण्डपति ७ ब्रह्म के लिये ८ क
हा ९ तिस हेतु से १० यन्त्र को ११ रक्षा करौ अर्थात् निर्विघ्न करो १२ उसी हेतु
से १३ यज्ञमान को रक्षा करौ ॥ १४ और उसी हेतु से १५ मुझ ब्रह्मा को १६ र
क्षा करौ ॥ १२ ॥ अथाध्यात्मम्— श्रुति में लिखा है कि योग यन्त्र
का ब्रह्मा हृदय है सो हृदय रूप ब्रह्मा कहता है १ हे मोक्षदानादि गुण से
युक्त २ सब के प्रेरक परमेश्वर वेदों ने ३ इस ४ योग यन्त्र को ५ तुम्हें ६ वेदों
के स्वामी ७ ब्रह्म के लिये ८ कहा ९ उस हेतु से १० योग यन्त्र को ११ रक्षा क
रौ अर्थात् सिद्ध करो १२ उसी हेतु से १३ योगी को रक्षा करौ अर्थात् योग
सिद्ध को दो १४ उसी हेतु से १५ मुझ हृदय रूप ब्रह्मा को १६ संसार से
रक्षा करौ ॥ १२ ॥

१ मनः। २ जूतिः। ३ आज्यस्य। ४ जुषताम्। ५ बृहस्पतिः। ६ इमम्। ७ यन्त्रम्। ८ तनोतु। ९ इमम्। १० यन्त्रम्। ११ अरिष्टम्। १२ सन्दधातु। १३ विश्वे। १४ देवासः। १५ इह। १६ मादयन्ताम्। १७ ओ। १८ प्रतिष्ठ। १९ ॥ १३ ॥

अथाधिदैवम्- इस कण्डिका में ब्रह्मा की अनुज्ञा का मंत्र है, ब्रह्मा प्रार्थना करता है, सविता देवता का १ मन और २ ब्रह्मांड के जन्म रक्षा और मुक्ति को चाहने वाली बुद्धि ३ घृत का ४ सेवन करे और ५ देवताओं के ब्रह्मा बृहस्पति जी ६ इस ७ यन्त्र को ८ ब्रह्मा होने से विस्तार दो तदनंतर ९ इस १० यन्त्र को ११ निर्विघ्न १२ धारण करे आशय यह है कि मध्य में इडा अर्थात् अपना भाग भक्षण करने से यन्त्र विच्छिन्न हुआ है इसलिये ऐसा कहते हैं और १२ सब १४ देवता १५ इस यन्त्र कर्म में १६ तत्त हों १७ तैसाही हो १८ प्रयाण करे ऐसी प्रार्थना के पीछे ब्रह्मा समिधाओं के ग्रहण समय यजमान के इच्छित प्रयाण को जान कर अङ्गीकार करके प्रयाण में प्रेरणा करता है ॥ १३ ॥

अथाध्यात्मम्- हृदय रूप ब्रह्मा कहता है १ मन २ और ब्रह्मा विष्णु महेश रूप धारी नारायण को चाहने वाली बुद्धि ३ इन्द्रिय शक्ति समूह का ४ सेवन करे और ५ प्राण ६ इस ७ ज्ञान यन्त्र वा योग यन्त्र को ८ विस्तार दो ९ इस १० योगानुष्ठान को ११ निर्विघ्न १२ धारण करे और १३ सब १४ देवता परानर नारायण नाम १५ इस ज्ञान यन्त्र में १६ तमि को पाओ १७ तैसाही हो १८ प्रयाण करे इस प्रकार हृदय रूप ब्रह्मा से आन्ता पाने वाले प्राण उदान नाम अध्वर्यु मन में स्थित इन्द्रियों की शक्ति को हृदय में धारण करके वैदिक छन्द रूप अनुयाजों के साथ जाते हैं ॥ १३ ॥

१ अग्ने। २ एषा। ३ ते। ४ समित। ५ च। ६ तया। ७ समिधावर्धत्वा। ८ च।

आप्यायस्व। च। वयं। च। आप्यासिषीमहि। वाजजित। अ-
 १६ १७ १८ १९ २० २१
 मे। वाज। सस्तवांशं। वाजजित। त्वा। सम्मार्ज्मि॥ १४॥

अथाधिदेवम्— इस कण्डिका में २ मंत्र हैं, होता द्वारा समिध के अनु-
 मंत्रण का मंत्र १ अग्नि के मार्जन का मंत्र २ पदार्थः १ हे अग्नि २ यह
 ३ तेरे ४ प्रज्वलित होने का कारण काष्ठ विशेष ५ है ६ उस से ७ वृद्धि को पा
 ओ ८ और हम को भी ९ सब ओर से वृद्धि दो १० और ११ हम १२ वृद्धि को
 प्राप्त करें १३ और अपने पुत्र पशु आदि को १४ सब ओर से वृद्धि दें १५ हे
 अन्न को जीतने वाले १६ अग्नि देवता १७ अन्न को १८ संपादन करने वाले १९
 अन्न को जीतने वाले २० तुम्हें २१ भले प्रकार शोधन करता हूँ॥ १४॥ अथाध्यात्मम्-
 वाक् रूप होता कहता है १ हे आत्माग्नि २ ये प्राण ३ तेरे ४ प्रज्वलित होने
 का कारण ५ हैं ६ उस प्राण रूप समिध से ७ वृद्धि पाओ ८ हम को भी ९ सब
 ओर से वृद्धि दो कारण यह कि यज्ञ के अनुष्ठान से वेदों का प्रचार है १० और
 ११ हम १२ वृद्धि को पावें कारण यह कि योग यज्ञ से ही सर्व गत होता है १३
 और अपनी इन्द्रियों को १४ यज्ञ कर्म में सब ओर से वृद्धि दें १५ हे प्राण ज-
 यकारक १६ आत्माग्नि १७, १८ प्राण की ओर चलने वाले १९ और प्राण को
 जीतने वाले २० तुम्हें २१ भले प्रकार शोधन करता हूँ॥ १४॥

अग्नीषोमया। उज्जितम्। अनु। उज्जेषम्। मा। वाजस्य।
 १ २ ३ ४ ५ ६
 प्रसवेन। ओहामि। यः। अस्मान्। द्वेष्टि। च। वयं। यः।
 ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४
 द्विष्म। त। अग्नीषोमौ। अपनुदताम्। एनं। वाजस्य। प्र-
 १५ १६ १७ १८ १९ २०
 सवेन। अपोहामि। इन्द्राग्न्योः। उज्जितं। अनु। उज्जेषम्।
 २१ २२ २३ २४ २५ २६

मा। वाजस्य। असवेन। ओहामि। यो। अस्मानि। द्वेष्टि।
 च। वयं। यो। द्विष्मः। तम्। इन्द्रोमी। अपनुदताम्। ए
 नं। वाजस्य। असवेन। अपो हामि॥११॥ अथाधिदैवम्-

इस कण्डिका में ३ मंत्र हैं, यजमान जुहू और उपभृत् को अपने स्थान से
 उठा कर वेदी के पश्चिम भाग में आकर पूर्व में जुहू को और पश्चिम दिशा में
 उपभृत् को स्थापन करता है उसके मंत्र १, २, शत्रु नाशन मंत्र ३॥

पदार्थः ॥ १ द्वितीय पुरो डाश के देवता जो अग्नि सोम हैं तिन के २ वि-
 भ्र रहित हविस्वी कार करने से जो उत्कृष्ट विजय है तिस को ३ अनु सरण क-
 रके ४ उत्कृष्ट जय को प्राप्त हूं ५ पुरो डाश आदि अन्न की ६ प्रेरणा से ७ मुझ
 जुहू रूप धारी यजमान को ८ उत्साह देता हूं ९ जो शत्रु असुरादि १० हमसे
 ११ द्वेष करता है अर्थात् हमारे यज्ञ को विगाड़ना चाहता है १२ और १३ हम
 म १४ जिस अनु हान विरोधी शत्रु से १५ द्वेष करते हैं अर्थात् विनाश केलि
 ये उद्योग करते हैं १६ उस दो प्रकार के शत्रु को १७ अग्नि सोम नाम देवता-
 १८ निरादर करे और में भी १९ इस दो प्रकार के शत्रु को २० पुरो डाश दे-
 वता की २१ आज्ञा से २२ निरादर करता हूं अगले दोनों मंत्र दर्श देवता विष्णु
 यक और समान अर्थ वाले हैं, केवल इतना भेद है कि अग्नीषोम की जगह
 इन्द्राग्नि कहना चाहिये ॥ १५॥

अथाध्यात्मम्- १ भोक्ता भोग की
 २ उत्कृष्ट जय के ३ पीछे ४ उत्कृष्ट जय संसार जय नाम मोक्ष को प्राप्त करूं ५
 माया को ६ ज्ञान यज्ञ के ७ फल से ८ देशान्तर में प्राप्त करता हूं ९ जो काम
 १० हमसे ११ द्वेष करता है अर्थात् मोक्ष लाभ में विघ्न कारक होता है १२ और
 १३ हम १४ जिस अज्ञान से १५ द्वेष करते हैं १६ उस दो प्रकार के शत्रु को-
 १७ प्रकृति पुरुष १८ निरादर करे में भी १९ इस दो प्रकार के शत्रु को २०

ज्ञानयज्ञके २१ फल से २२ निरादर करूँ २३ योगी और योगेश्वर की २४ जो उत्कृष्ट जय योग सिद्धि है उसके २५ पश्चात् २६ उत्कृष्ट जय को पाऊँ अर्थात् समाधि को प्राप्त करूँ २७ महा माया को २८ ज्ञान यज्ञ के २९ फल से ३० देशान्तर में प्राप्त करता हूँ ३१ जो कर्त्ता पन का अभिमान ३२ हमसे ३३ द्वेष करता है ३४ और ३५ हम ३६ जिस देहाभिमान से ३७ द्वेष करते हैं ३८ उस दो प्रकार के शत्रु को ३९ नरनारायण देवता ४० निरादर करें ४१ इस कर्त्ता पन को ४२ ज्ञान यज्ञ के ४३ फल से ४४ दूर कर्त्ता हूँ (अश्व) कर्त्ता पन का त्याग कैसे है (उत्तर) श्री भगवान ने भगवद्गीता में कहा है, जो पुरुष योग से युक्त शुद्ध चित्त राग द्वेष से रहित इन्द्रियों को जीतने वाला सब प्राणियों का आत्मा रूप है वह कर्म कर्त्ता भी लिप्त नहीं होता है + तत्व का ज्ञाता, सावधान बुद्धि पुरुष देखता, सुनता, स्पर्श करता, सूँघता, खाता, चलता, सोता, श्वास लेता, बोलता, मूत्र विष्टा करता, पकड़ता, नेत्र खोलता, पलक मारता भी (इन्द्रिया अपने विषयों में वर्तती हैं) इस प्रकार निश्चय करता मानता है कि मैं कुछ नहीं करता हूँ + जो पुरुष ज्ञान चक्षु से देखता है कि सब कर्म प्रकृति से किये जाते हैं आत्मा अकर्त्ता है वही द्रष्टा है ॥ १५ ॥

१ वसुम्यः। २ त्वा। ३ रुद्रेभ्यः। ४ त्वा। ५ आदित्येभ्यः। ६ त्वा। ७ द्यावापृथिवी। ८ सज्जानाथाम्। ९ मित्रावरुणौ। १० वृष्ट्या। ११ त्वा। १२ अवताम्। १३ अक्त। १४ रिहाणाः। १५ वयः। १६ व्यन्तु। १७ मरुता। १८ पृषती। १९ गच्छ। २० वशा। २१ एशिनः। २२ भूत्वा। २३ दिवं। २४ गच्छ। २५ ततः। २६ नः। २७ वृष्टि। २८ ज्ञानय। २९ अग्ने। ३० चक्षुष्या। ३१ असि। ३२ मे। ३३ चक्षुः। ३४ पाहि। ३५ अथाधिदैवम्। इस कड़िका में ७ मंत्र हैं, जुहू को हाथ में लेकर उससे-

परिधि के मार्जन का मंत्र १, २, ३ हाथ से प्रस्तर के ग्रहण का मंत्र ४ ग्रहण कि-
ये हुए प्रस्तर के अग्र मध्य मूल भागों को क्रम से जुहु उपभूत ध्रुवास्थ घृत में-
लिस करने का मंत्र ५ एक तृण को प्रस्तर से प्रथक करके फिर प्रस्तर को उठा
कर अग्नि में डालने का मंत्र ६ अध्वर्यु प्रस्तर से लिये हुए तृण को आह वनीय
अग्नि में डाल कर आत्मा को हृदय देश पर स्पर्श करके आचमन करता है-
उस का मंत्र ७ ॥

पदार्थः—हे मध्यम परिधि १ वसु देवताओं की प्रीति
के लिये २ तुम्हें मार्जन करता हूं हे दक्षिण परिधि ३ रुद्र देवताओं की प्रीति
के अर्थ ४ तुम्हें मार्जन करता हूं हे उत्तर परिधि ५ आदित्य नाम देवताओं
की प्रीति के अर्थ ६ तुम्हें मार्जन करता हूं तीनों परिधि के मार्जन से तीनों सव-
न के देवता तत्स होते हैं यह भाव है ७ हे पृथिवी स्वर्ग के अभिमानि देवता तु
म दोनों ८ ग्रहण किये हुए प्रस्तर को अच्छे प्रकार जानों और हे प्रस्तर ईवा
यु और सूर्य देवता ९ जल वर्षा से ११ तुम्हें १२ रक्षा करौ १३ घृत लिस प्रस्तर
को १४ चारते हुए १५ पक्षी रूप गायत्री आदि छन्द १६ जाओ हे प्रस्तर तुम-
१७ मरुत नाम देवताओं के १८ वाहन को १९ प्राप्त करो अर्थात् वायु वाहन-
की समान वेग से अन्तरिक्ष को जाओ तथा २० स्वाधीन २१ आदित्य रूप अथवा
सूक्ष्म देह धारी गौ कामधेनु की समान तत्स करने वाली २२ होकर २३ स्वर्ग
को २४ जाओ २५ स्वर्ग प्राप्ति के पीछे २६ हमारे लिये भूलोक में २७ वर्षा
को २८ लाओ अर्थात् अन्तरिक्ष में जाकर वहां वाहन सहित मरुत गणों को-
तत्स करके फिर स्वर्ग में जाकर देवताओं को तत्स करके पृथिवी पर वर्षा करो
यह आहुति का परिणाम जतला या यह भाव है, हे २९ अग्नि तुम ३० अपनी
ज्वाला से नेत्र के रक्षा करने वाले ३१ हो ३२ मेरे ३३ नेत्र को ३४ रक्षा करो अ-
र्थात् प्रस्तर की तीव्र ज्वाला से नेत्रों का उपद्रव न हो (अश्वत्थ) १ किस कारण
एक तृण को प्रस्तर से निकाल लेते हैं (उ०) श्रुति के अनुसार— यज्ञ मान्य

स्तर रूप है जो सम्पूर्ण प्रस्तर को अग्नि में डाल दे, तो यज्ञमान शीघ्र ही परलोक को चला जावे, इसलिये एक तृण के निकालने से अपनी पूर्ण आयु तक जीवता है, अन्त्र २ किस कारण एक मुहूर्त तृण को धारण करके पीछे अग्नि में डालते हैं (उत्तर) श्रुति से जहां इस का दूसरा आत्मा प्रस्तर रूप गया वहाही इसको पड़चाते हैं यदि तृण को न डाले तो यज्ञमान को वहां न पड़चावे इसलिये इस तृण को भी उक्त अग्नि में डाल देते हैं ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम्— हे जीवरूप परिधि १ अपरा प्रकृति के विकार रूप देवताओं के अर्थ २ तुम्हें मार्जन करता हूं हे नर रूप परिधि ३ परा प्रकृति के विकार रूप देवताओं के अर्थ ४ तुम्हें मार्जन करता हूं हे नारायण रूप परिधि ५ जहां स्वरूप देवताओं के अर्थ ६ तुम्हें मार्जन करता हूं ७ हृदय और मन ८ यज्ञमान रूप प्रस्तर तुम्हें को भले प्रकार जानों और हे यज्ञमान ९ आरा और उदान १० अमृत वर्षा से ११ तुम्हें १२ रक्षा करो १३ इन्द्रिय शक्ति युक्त आत्मा को १४ आस्वादन करते १५ पक्षी रूप गायत्री छंद १६ यज्ञमान को ले कर जाओ हे यज्ञमान तुम १७ आणों की १८ वाहन सुषु मना नाड़ी को १९ प्राप्त करो, हे जीवरूप परा शक्ति तुम आण में शयन करने वाली सूर्य रूप २० हो कर २१ गगण मंडल को २२ जाओ २५ तदनंतर २६ हम योगियों के लिये २७ अमृत वर्षा को २८ लाओ २९ हे ब्रह्माग्नि तुम ३० ज्ञान चक्षु के रक्षक ३१ हो ३२ मेरी ३३ ज्ञान चक्षु को ३४ रक्षा करो ॥ अन्त्र— गायत्री आदि छंद यज्ञमान को स्वर्ग में ले जाते हैं, तो गायत्री देवी के गुण और फल क्या हैं (उ०) ब्राह्मण सर्वस्व विष्णु धर्मोत्तर में कहा है, कर्मेन्द्रियां ५ ज्ञानेन्द्रियां ५ ज्ञानेन्द्रियों के विषय ५ पञ्चभूत, मन, बुद्धि, आत्मा, अव्यक्त ये २४ गायत्री के २४ अक्षर हैं, और पच्चीस वां जो अणव है उस को सर्व व्यापी पुरुष जानों, योगी यान्त वल्क्य ने कहा है, कि मैं अक्षरों के देवताओं को कहूंगा (तत) शब्द का देवता अग्नि है (स) का

देवता वायु है (वि) का देवता सूर्य है (तु) का देवता विद्युत् है (व) का
 देवता यम है (रे) का देवता वरुण है (ए) का देवता इंद्र है (यम)
 का देवता पर्जन्य है (भ) का देवता इन्द्र है (र्ग) का देवता मन्धर्व है (दे)
 का देवता पूषा है (व) का देवता मित्रावरुण है (स्य) का देवता तुष्टा है
 (धी) के देवता वसु है (म) का देवता मरुत है (हि) देवता सोम है (धि)
 का देवता अग्नि है (यः) के देवता विश्वेदेवा हैं (यः) के देवता अश्विनी
 कुमार हैं (नः) का देवता प्रजापति है (प्र) के देवता सर्व देवता हैं (ज्ञो)
 के देवता रुद्र है (द) के देवता ब्रह्मा हैं (यात्) के देवता विष्णु हैं अक्षरों
 के ये २४ देवता हुए जप के समय इन्हीं का स्मरण करके इन की सायुज्य
 ता को पावे १२ विद्याओं में भीमांसा शास्त्र उत्तम है, उस्से उत्तम तर्क शा
 स्त्र उत्तम पुराण हैं, पुराणों से उत्तम धर्म शास्त्र हैं, धर्म शास्त्रों
 से उत्तम श्रुति है उस्से भी उत्तम उपनिषद् हैं, उपनिषदों से उत्तम गा
 यत्री हैं गायत्री से युक्त गायत्री सब मंत्रों में दुर्लभ है, तीनों वेदों में गायत्री
 से अधिक कुछ विद्यमान नहीं है, गायत्री वेदों की माता है, गायत्री ब्रा
 ह्मणों की माता है, जपकर्त्ता की रक्षा करती है इस कारण गायत्री क
 ही जाती है, गायत्री और सविता दोनों का वाच्य वाचक सम्बन्ध है यह स
 सविता साक्षात् वाच्य है, और परा रूप गायत्री वाचि का है, कुशिक के
 पुत्र तितेन्द्री विश्वा मित्र सची ने गायत्री के प्रभाव से ही राज ऋषि भाव
 को त्याग कर ब्रह्म ऋषि पद को पाया, और दूसरे भुवन के उत्पन्न करने
 में बहुत बड़ी सामर्थ्य पाई भले प्रकार उपासना की हुई गायत्री का २८
 देवैर्गर्भित सब कुछ देवैः वेद पाठ और शास्त्र पढ़ने से भी ब्राह्मण नहीं
 है, तीनों काल पर गायत्री देवी के जप से ही ब्राह्मण होवे, नहीं तो द्विज
 मान है, जिस कारण गायत्री ही त्रिवेद स्वरूप है उस कारण गायत्री

ही परम विष्णु है, गायत्री ही परम शिव, और गायत्री ही ब्रह्मा है, मनु-
 जी कहते हैं ब्रह्मा जी ने अकार, उकार, मकार और भूर्भुवः स्वः को तीनों
 वेद से निकाला और तीनों वेदों से ही तीनों पाद गायत्री को निकाला-
 मनु, यम और वशिष्ठ का वाक्य है कि ओंकार सहित तीनों महा व्याहृ-
 ति और त्रिपदा गायत्री को ब्रह्म का मुख जानना चाहिये, याज्ञवल्क्य ऋ-
 णि ने कहा है कि गायत्री और वेदों को तराजू में तोला एक और ऋद्धः स-
 हित चारों वेद और एक और गायत्री स्थिति हुई अर्थात् दोनों समान-
 हुए, वेदों के सार उपनिषद् माने गये हैं उन्होंने का सार गायत्री तथा ती-
 नों व्याहृति हैं जो ब्रह्म चारी ओंकार और तीनों व्याहृति सहित गायत्री-
 को गुरु से प्राप्त करता है वही श्रौतिय कहा जाता है इस गायत्री के ज्ञा-
 न से सब शास्त्र विदित होवें, और उस पुरुष को विराट् पुरुष की उपा-
 सना सिद्ध होवे, जो पुरुष इस प्रकार गायत्री को अर्थ सहित जानता है
 वही ब्राह्मण है नहीं तो वेदों का पारगामी भी ऋद्धधर्मवाला होवे, गा-
 यत्री को न जान कर ब्राह्मण वर्ण से च्युत होता है और श्रुति के दृष्टान्त से
 निंदा से संयुक्त होवे, व्यासजी का वचन है कि यह गायत्री प्रातः काल-
 पर गायत्री नाम है, मध्याह्न पर सावित्री नाम है और सायं काल पर स-
 रस्वती नाम है वही तीनों काल पर संध्या कही गयी है, गायत्री सदैव दा-
 न दोष और अन्न दोष पातक और उपपातक से जप कर्त्ता को रक्षा कर-
 ती है उस कारण गायत्री कहाँती है, सविता (ईश्वर) के प्रकाशित क-
 र्म से वही सावित्री कही गई, जगत की प्रेरणा करने और वाचकरूप हो-
 ने से सरस्वती कही गई, ऋष्य ऋद्ध का वचन है, जो देवी गायत्री स-
 व आत्मा से सब प्राणियों में भले प्रकार स्थित है वह मोक्ष का कारण है
 वह मोक्ष का स्थान निर्विकार ब्रह्म स्वरूप है, कूर्म पुराण का वचन है

गायत्री वेदों की माता है, गायत्री लोक को पवित्र करने वाली है, गायत्री से परे दूसरा मंत्र और विज्ञान नहीं कहा जाता है, यान्त बल्क्य जी का वचन है, गायत्री वेदों की माता है, गायत्री पापों का नाश करने वाली है इस लोक और स्वर्ग लोक में गायत्री से श्रेष्ठ पवित्र करने वाला नहीं है, जो नरक रूप समुद्र में पड़े हैं उन को यह देवी हाथ से निकालने वाली है उस कारण पवित्र ब्राह्मण सदा प्रातः काल पर उस का जप करे, जो ब्राह्मण गायत्री के जप में निरंतर प्रीति मान है उस को देवताओं के अर्चन यन्त्र आदि और पितृ श्राद्ध में नियुक्त करे उस में पाप नहीं बहरता है जैसे जल की बुद कमल पर, गायत्री का आधा पद आधी ऋचा वा एक ऋचा उन सब पापों को शुद्ध करती है जोकि ब्रह्म हत्या, सुरा पान, गुरु ह्मी सङ्गम और जो दूसरे पाप हैं ऐसा मनुजी ने कहा है, यन्त्र, दान में प्रीति मान साङ्ग वेद का पढ़ने वाला विद्वान् मनुष्य उस पुरुष की सोलहवीं कला के भी समान नहीं है जोकि गायत्री के ध्यान से पवित्र है, वृहत् विष्णु स्मृति का वचन है ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्य की जाति जो कि समय पर गायत्री और निज किया से हीन हो साधुओं में निन्दा योग्य होती है, अग्निपुराण में लिखा है, जो ब्राह्मण सदा दोनों काल पर गायत्री को जपता है वह नीच से दान लेने वाला भी परम गति को पाता है ॥ १६ ॥

यम् परिधिम्पर्यधत्वा अग्ने देव पृणिभिर्गुह्यमानः । तन्त एत मनुजोऽनुभराम्येषनेत्वं
 देव चेत् याता अग्नेः प्रियम्पाथो पीतम् ॥ १७ ॥
 अग्ने देव पृणिभिर्गुह्यमानः । यं परिधिं पर्यधत्वा
 तं जोषं तम एतमनुभरामि एष त्वं नः

१६ इतः अपचेतयातैः १७ अपि १८ अग्नेः १९ प्रियः २० पाथः २१ इतमे ॥ १७ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं, पहिली परिधि को अग्नि-

में डालने का मंत्र १ दक्षिण-उत्तर परिधि को अग्नि में डालने का मंत्र २ ॥

यं परिधि मिति (देवल ऋषि— विराटरूपाविष्णु— अग्नि देवता) १७

अग्नेरिति तथा याजुषी तथा २

पदार्थः ॥ १ हे आहवनीय अग्नि २ देवता ३ असुरों से ४ धिरे हुए तुम ने ५

जिस ६ परिधि को असुरों का उपद्रव निवारण करने के लिये पश्चिम दिशा

में ७ स्थापित किया ८ आप की ९ प्रिय १० उस ११ इस परिधि को १२ अग्नि

में डालता हूं हे अग्न्याभिमानि देवता १३ यह परिधि १४ तुम से १५ १६ १७

वियोग को मत जानो तुम में ही स्थिति रहो हे दक्षिण-उत्तर परिधि तुम

१८ भी १९ आहवनीय अग्नि के २० प्रिय २१ अन्न भाव को २२ प्राप्त करो ॥ १७

अथाध्यात्मम्— १ हे ब्रह्माग्नि २ ज्योतिः स्वरूप ३ काम आदि असुरों से ४

धिरे हुए तुम ने ५ जिस ६ जीव नाम परिधि को काम आदि का उपद्रव निवा

रण करने के लिये पश्चिम दिशा में ७ स्थापन किया है ८ आप की ९ प्रिय

१० उस ११ इस परिधि को १२ आप के मध्य डालता हूं अर्थात् आप का अ

ज्ञानता हूं हे ब्रह्म ज्योतिः पराशक्ति १३ यह जीव रूप परिधि १४ तुम से

१५ १६ १७ वियोग मत मानो अर्थात् तुम में ही रहो हे नर नारायण रूप

दक्षिणोत्तर परिधि तुम दोनों १८ भी १९ ब्रह्माग्नि के २० प्रिय २१ अन्न भाव

को २२ प्राप्त करो ॥ १७ ॥

सुथं स्वभागास्थेषावृहन्तः प्रस्तरेष्ठाः परिधेया

अदेवाः । इमां वाचमभि विश्वे गृणान्त आसद्यास्मि

नृहिषिमादयद्वाहावाट १८

विश्वेदेवाः^१। संस्रवभागाः^२। दृषो^३। दृहन्तः^४। प्रस्तरेष्ठाः^५। च^६।
परिधेयाः^७। स्थ^८। अस्मिन्^९। वर्हिषि^{१०}। आसद्य^{११}। इमाम्^{१२}। वाच^{१३}।
म्^{१४}। स्वाहा^{१५}। वाट्^{१६}। अभिगृणन्तः^{१७}। मादयध्वम्^{१८}॥ १८॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं, अध्वर्यु जुहूँ उपभृत्
को दोनों हाथ से पकड़ कर उन के द्वारा संस्रव भागों को होम करता है तिस
का मंत्र १८ उसके होम का मंत्र १९॥

संस्रवभागा इति (सोमशुष्म ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः— विश्वेदेवा देवता) १
स्वाहा वाडिति (१८) तथा (१९) याजुषी (२०) तथा (२१) ॥ २॥

पदार्थः— १ हे विश्वेदेवा तुम २ ताए हुए घृत के भागी ३ और घृत युक्त
अन्न के द्वारा ४ महान् ५ प्रस्तर पर स्थित ६ और ७ परिधि से प्रादुर्भूत
हो ८ इस ९ वाणी को १० वैदिक मंत्र से ११ हवि दिया १२ कहते हुए १३
इस १४ यज्ञ में १५ वैदिक १६ कर १७ तत्स हूजिये ॥ १८॥

अथाध्यात्मम्— १ हे परानरनारायणो २ तुम इन्द्रिय रूप हविके
भागी ३ प्राण रूप अन्न से ४ ब्रह्मांड रूप ५ यज्ञ मान में प्रतिष्ठित ६ और
७ ज्ञान यज्ञ में ब्रह्माग्नि के परिधि रूप ८ हो ९ इस १० हार्द काश में ११
प्रवेश हो कर १२ इस १३ वाणी को १४ कि महा वाक्य से १५ हवि दिया
१६ कहते हुए १७ आनन्द वात्सि को प्राप्त कीजिये ॥ १८॥

घृताचीं स्थो धुर्य्यो पातं सुम्ने स्थः सुम्ने माध
तम्। यज्ञ नमश्च त उपच यज्ञस्य शिवे सन्तिष्ठ
स्वस्तिष्ठे मे सन्तिष्ठस्व ॥ १९॥
घृताचीं^१। स्थो^२। धुर्य्यो^३। पातं^४। सुम्ने^५। स्थः^६। मा^७। सुम्ने^८। धत्तं^९। यज्ञ
नमो^{१०}। चो^{११}। उप^{१२}। चो^{१३}। यज्ञस्य^{१४}। शिवे^{१५}। सन्तिष्ठस्व^{१६}। मे^{१७}॥

स्विष्टे। सन्ति^{३०} ष्व॥ १६॥ अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं। अर्धयुग शकट की धुरी पर जुहू उपभृत् को स्थापन करता है उसका मंत्र १ वेदी के स्पर्श का मंत्र ॥ २ ॥

घृताची इति (प्रजापति ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः सुक् सुवौ देवते) १ यज्ञनमश्चत इति (भूर्पदि ऋषयः— याजुषी— यज्ञो देवता) २

पदार्थः— हे जुहू हे उपभृत् तुम दोनों १ घृत को प्राप्त करने वाली २ हो सो तुम ३ शकट के दोनों चैलों को ४ रक्षा करौ तुम ५ सुख रूप ६ हो उस कारणा ७ मुझ को ८ सुख में ९ स्थापन करो १० हे यज्ञ पुरुष ११ तुम्हारे लिये १२ नमस्कार १३ और १४ न्यून किया की वृद्धि हो १५ हे चैतन्य १६ यज्ञ के १७ कल्याण में १८ तत्पर हूजियै अर्थात् यज्ञ को न्यून और अधिकता दोष से सुद्ध कीजिये १९ और मुझ को २० ओष्ठ यज्ञ की २१ प्राप्ति कराइयै ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम्— हे वाणी मन तुम दोनों १ इन्द्रिय शक्ति समूह को प्राप्त करने वाले २ हो ३ कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय को ४ रक्षा करौ तुम दोनों ५ आनंद स्वरूप ६ हो ७ मुझ यज्ञमान को ८ ब्रह्मानंद में ९ स्थापन करो १० हे विष्णु ११ तुम्हारे अर्थ १२ नमस्कार १३ और १४ उपासना १५ हे चिद्धातु १६ ज्ञान यज्ञ के १७ कल्याण वा सिद्धि में १८ तत्पर हूजियै १९ मेरी २० मोक्ष में प्रवृत्त हूजियै ॥ १६ ॥

अग्नेदक्षा यो शीतम पाहि मा दिवोः पाहि प्रसिञ्चै पाहि दुरिष्ठ्यै पाहि दुर्दमन्या अविषन्नः पितु ड्णु सुषदा योनौ स्वाहा वाङ्मनये संवेश पतये स्वाहा सरस्वत्यै यशो भुगिन्यै स्वाहा ॥ २० ॥

अदक्षा यो। अशीतेम। अग्ने। मां। दिवोः। पाहि। ए। प्र

सिन्ध्याः॥ पाहि॥ १०॥ दारिद्र्याः॥ पाहि॥ ११॥ दुर्यन्त्याः॥ पाहि॥ सु-
पदयोनौ॥ नः॥ पितॄम्॥ अविषम्॥ आकॄणु॥ स्वाहा॥ अग्नये-
वादे॥ संवेशपतये॥ स्वाहा॥ यशो भगिन्यै॥ सरस्वत्यै॥ स्वाहा॥

॥२०॥ अथाधिदैवम्— इसकंडिका में ३ मंत्र हैं उन को कहते
हैं अर्च्यु होम के लिये सुक् और सुव को ग्रहण करता है उसका मंत्र १
दक्षिणाग्निमे होम करता है उसके मंत्र २, ३—

अग्ने दक्वायो (प्रजापति ऋषि— याजुषी छं— गार्हपत्याग्नि देवता) १
अग्नये इति (तथा— याजुषी विष्टुप— दक्षिणाग्नि देवता) २
सरस्वत्या इति (तथा— लिङ्गोक्त देवता) ३

पदार्थः— १ हे अहिंसक यजमान वाले २ बहुत बड़े भोक्ता अथवा बहुत
बड़े व्यापक ३ गार्हपत्या नाम अग्नि ४ मुझ को ५ शत्रु के चलाये हुए वज्र से
मान शस्त्र से धरक्षा करो ७ हे यज्ञ लक्ष्मी ८ बंधन करने वाले जाल से ९
रक्षा करो १० हे वेद भिमानी देवता ११ शास्त्र विरुद्ध यज्ञ से १२ मुझे र-
क्षा करो १३ हे धर्म शास्त्रा भिमानी देवता १४ दुष्ट भोजन से १५ मुझ को
रक्षा करो १६ भले प्रकार ठहरने योग्य घर मे १७ हमारे १८ हवि अन्न-
को १९ विष रहित २०, २१ वैदिक मंत्र के द्वारा करो २२ सायुज्य मोक्ष के
लक्ष्मी २३ विष्णु रूप अग्नि के अर्थ २४ हवि दिया २५ यश की वदन वा-
ली २६ सरस्वती के अर्थ २७ वैदिक मंत्र से २८ हवि दिया ॥ २०॥

अथाध्यात्मम्— १ हे अहिंसित यजमान वाले २ व्यापक तम ३
ब्रह्माग्नि ४ मुझ यजमान को ५ अज्ञान रूप वज्र से ६ रक्षा करो ७ हे प-
रा शक्ति तुम ८ संसार रूप जाल से ९ रक्षा करो १० हे वेद भिमानी देव-
ता ११ शास्त्र विरुद्ध यज्ञ से १२ रक्षा करो १३ हे धर्म शास्त्रा भिमानी-
देवता १४ दुष्ट भोजन से १५ रक्षा करो १६ जिसमे सुख से वास करते हैं उस-

हार्दकाश ने १७ हम योगियों के १८ प्राण रूप अन्न को १९, २०, २१ महा
 वाक द्वारा बंधन विष से रहित करौ २२ आत्मा रूप अग्नि के लिये २३ हवि दिया
 २४ योगेश्वर नारायण के अर्थ २५ अच्छा होम हो २६, २७ महा वागा
 भिमानीनी सरस्वती देवी के अर्थ २८ अच्छा होम हो ॥ प्रश्न- दुष्ट यज्ञ
 क्या है १ दुष्ट भोजन क्या है २ श्रेष्ठ यज्ञ क्या है ३ श्रेष्ठ भोजन क्या है ४-उ
 न्हों के उत्तर में ये भगवद्वाक्य हैं, हे अर्जुन फल को संकल्प करके जो
 यजन किया जाता है और जो यजन धार्मिकत्व विख्यात करने के लिये है
 उस यज्ञ को राजसी जानो १ जो यज्ञ शास्त्रोक्त विधि से हीन अन्न दान
 से रहित मंत्र स्वर वर्ण से हीन दक्षिणा से रहित, अद्धा से शून्य है उस
 को तामसी कहते हैं २ पहले प्रश्न का उत्तर समाप्त हुआ- जो आहार
 अत्यंत कड़वे, खारी, ऊषा, चर्परे, रूखे, दाह कारक, दुःख शोक रोग के
 दाता हैं वे राजसी पुरुषों के प्रिय हैं ३ जो भोजन एक पहर का बना हुआ
 शीतल, अधपका, रस हीन दुर्गंध युक्त खासा, दूसरे का भूठा और
 यज्ञ के अयोग्य अपवित्र भी है वह तामसी पुरुष का प्रिय है, दूसरे
 प्रश्न का उत्तर समाप्त हुआ ४- यज्ञ स्वरूप प्राप्ति के लिये यज्ञ करने
 योग्य ही है इस प्रकार मन को समाहित करके फल इच्छा रहित पुरु
 षों से जो शास्त्रोक्त यज्ञ अनुष्ठान किया जाता है वह सात्विक है ५
 तीसरे प्रश्न का उत्तर समाप्त हुआ- जो आहार, जीवन, उत्साह, शक्ति, आरोग्यता,
 चित्त की प्रसन्नता और अभिरुचि के बढ़ाने वाले
 हैं, और रस से युक्त, घृत आदि से युक्त, देह में चिर काल बहरने
 वाले और हृदय के प्रिय हैं वे सात्विकी पुरुषों के प्यारे हैं ६ भगवद्गीता
 अध्याय १७ चौथे प्रश्न का उत्तर समाप्त हुआ ॥ २० ॥

वेदोऽसियेन त्वन्देव वेद देवेभ्यो वेदोऽभवत्ते

कस्त्वा विमुञ्चति सत्वा विमुञ्चति कस्मै त्वा

विमुञ्चति तस्मै त्वा विमुञ्चति । पोषाय रक्ष

साम्भागो ऽसि ॥ २३ ॥

त्वा । कः । विमुञ्चति । सः । त्वः । विमुञ्चति । कस्मै । त्वः ।

विमुञ्चति । तस्मै । पोषाय । त्वः । विमुञ्चति । रक्ष साम्भागः ।

असि ॥ २३ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं अध्वर्यु आप आहवनीय की परिक्रमा देकर वेदी के दक्षिण भाग में उत्तराभिमुख बैठ कर प्रणीता पात्र को ले के वेदी के मध्य में स्थापन करके किसी स्थान पर पलट देवे प्रथम पुरोडाश के कपाल से ओदन कणों को निकाल कर रुष्णाग्नि के समीप स्थान पर उत्कर में डालता है उसका मंत्र कस्वेति (प्रजापति ऋषि - याजुषी छंद - प्रजापति देवता) रक्षसामिति (तथा याजुषी गायत्री - रक्षो देवता) २

पदार्थ - हे प्रणीता पात्र १ कौन २ तुझ को ३ त्याग करता है ४ प्रजापति ५ तुझ को ६ त्याग करता है ७ किस प्रयोजन के लिये ८ तुझ को ९ त्याग करता है १० इस यज्ञ मान को पुत्रादि से पुष्ट करने के लिये ११ तुझ को १२ त्याग करता है क्योंकि यज्ञ को करके प्रणीता पात्र का विसर्जन करने से यज्ञ मान को अमृति प्राप्ति है इस लिये विष्णु अवश्य करना चाहिये यह श्रुति की आज्ञा है हे कण समूह तुम १४ एह सों के १५ भाग १६ हो ॥ २३ ॥

अथाध्यात्मम् - हे आत्म प्रति विंव १ तुझ को २ कौन ३ त्याग करता है ४ योगा रूढ योगी ५ तुझ को ६ त्याग करता है ७ किस प्रयोजन के लिये ८ तुझ को ९ त्याग करता है १० ११ पूर्णब्रह्म की प्राप्ति के

लिये १२ तुम्ह को १३ त्याग करता है हे इन्द्रिय समूह तुम १४ देहाभि-
मानियों के १५ भागों १६ हो ॥ २३ ॥

सर्वसा पयसा सन्तनूभिरगन्महि मनसा सधं
शिवेन। त्वष्टा सुदत्तो विदधातु रायो नु मा धृतन्वो
यद्विलिष्टम् ॥ २४ ॥

वर्चसा। सुमगन्महि। पयसा। सं। तनूभिः। स। शिवेन।
मनसा। सं। सुदत्तः। रायो। विदधातु। तन्वः। यत्। विलिष्टं
तत्। तुष्टा। अनु मा धृतम् ॥ २४ ॥

अथाधिदैवम्— अध्वर्यु आह वनीय अभि की परिक्रमा करके दक्षि
णदिशा में उत्तराभिमुख हुआ पूर्ण पात्र को लेता है और यजमान अञ्ज-
ली में जल को लेकर मुख को शुद्ध करता है उसका मंत्र १
सर्वं सेति (मजा पति ऋषिः- त्रिष्टुप् छन्दः- त्वष्टा देवता) १ ॥

पदार्थः— १ हम ब्रह्म तेज से २ संयुक्त होवें ३ क्षीर आदि रस से ४ संयुक्त
होवें ५ अनुष्ठान में समर्थ अङ्गो अथवा पुत्र आदि से ६ संयुक्त होवें ७ शांत
वा कर्म की अद्धा से युक्त ८ मन से ९ संयुक्त होवें और १० ब्रह्मा, विष्णु म-
हेश कारक्षक महानारायण ११ कर्म उपासना के साधक धन १२ हमको
दो १३ मेरे शरीर का १४ जो अंग १५ विशेष न्यून है अर्थात् ईश्वर से ता-
में असमर्थ है १६ उस को १७ वह ईश्वर १८ न्यूनता के दूर करने से मु-
करौ अर्थात् धन और शरीर की पुष्टि करौ ॥ २४ ॥

अथाध्यात्मम्— आत्मप्रतिविम्ब के अभिनिवेश को त्याग कर प्रा-
र्थना करता है १ हम ब्रह्म तेज से २ संयुक्त होवें ३ प्राण से ४ संयुक्त हो-
वें ५ इंद्रियों से ६ संयुक्त होवें ७ शांत मन से ८ संयुक्त होवें और १०
ब्रह्मा विष्णु महेश कारक्षक महानारायण ११ योग लक्ष्मी को १२ प्रा-

स कण्ठो १३ मेरे शरीर का १४ जो अंग १५ विशेष न्यून अर्थात् योगानु
में अस मर्त्य है १६ उस को १७ ईश्वर १८ शुद्ध अर्थात् समर्थ करे १९

द्विनिष्पुर्व्यक्तं स्तुजां गतेन चन्दसाततो
निर्भक्तो योऽस्मान्देष्टि यच्च वयन्दिष्मोन्नरि
क्षे विष्णुर्व्यक्तं स्तुजां गतेन चन्दसाततो नि
र्भक्तो योऽस्मान्देष्टि यच्च वयन्दिष्मः एषिव्या
विष्णुर्व्यक्तं स्तुगायत्रेण चन्दसाततो निर्भ
क्तो योऽस्मान्देष्टि यच्च वयन्दिष्मोऽस्मादन्नाद
स्येति प्राया अगन्मस्वः सज्योतिषा भूमा २५
विष्णुः जागतेन चन्दसा दिवि व्यक्तं यः अस्मा
न् देष्टि च वयं यः दिष्मः ततः निर्भक्तः विष्णुने
ष्टुभेन चन्दसा अन्नरिक्षे व्यक्तं यः अस्मान् देष्टि
वयं यः दिष्मः ततः निर्भक्तः विष्णुः गायत्रेण च
न्दसा एषिव्या व्यक्तं यः अस्मान् देष्टि च वयं
यः दिष्मः ततः निर्भक्तः ए अस्मात् अन्नात् अस्या प्र
तिष्ठायाः स्वः अगन्म ज्योतिषा समभूमे २५
अथाधिदेवम् — इस कंडिका में ७ मंत्र हैं उन को कहते हैं य

गन्तव्य अपने आसन से उठ कर वेदी की दक्षिण ओर देश से आरंभ क
रके आहवनी यामि के पूर्व ३ तीन मंत्रों को पढ़ कर तीन प्रदक्षिणा करके
अपने पैरों को विष्णु भगवान के चरण जान कर पृथिवी पर धरता है उसके मंत्र
१३ यजमान अपने स्थान पर बैठा हुआ अपने पुरोडाश भाग को दे
खता है उसका मंत्र ४ वैरा हुआ ही वेदी की भूमि को देखता है उस
का मंत्र ५ पूर्व दिशा को देखता है उसका मंत्र ६ आहवनी यामि को दे

खता है उस का मंत्र ७
 दिवि विष्णुरिति (प्रजापति ऋषि — याजुषी छन्दः — विष्णु देवता) १
 अस्यै प्रतिष्ठाया इति () तथा () तथा () तथा () २
 पृथिव्यामिति () तथा () तथा () तथा () ३
 अस्मादन्नादिति () तथा () दैवी वहती () भागो देवता) ४
 अस्यै प्रतिष्ठाया इति () तथा () याजुषी गायत्री — भूमि देवता) ५
 अगन्म स्वरिति () तथा () दैवी वहती () देवा देवता) ६
 संज्योतिषेति () तथा () याजुषी गायत्री — आहवनीयो देव) ७

पदार्थः — १ दृष्ट देव नारायण ने २ जगती ३ छन्द रूप अपने पांव
 से ४ स्वर्ग लोक में विशेष क्रमणा किया ऐसा होने पर ५ जो असुर जा
 ति ७ हम से ८ द्वेष करता है ९ और १० हम ११ जिस से १२ द्वेष करते हैं
 वह दोनों प्रकार का शत्रु १३ उस स्वर्ग लोक से १४ भाग रहित करके नि-
 काला गया १५ विष्णु ने १६ त्रिष्टुप् १७ छन्द रूप पांव से १८ अन्न रिक्त
 लोक में १९ विक्रमणा किया ऐसा होने पर २० जो असुर आदि २१ हम से
 २२ द्वेष करता है २३ और २४ हम २५ जिस से २६ द्वेष करते हैं २७ वह उ-
 स अन्न रिक्त लोक से २८ भाग रहित करके निकाला गया २९ विष्णु ने
 ३० गायत्री ३१ छन्द रूप पांव से ३२ पृथिवी लोक में ३३ विक्रमणा किया
 बैला होने पर ३४ जो ३५ हम से ३६ द्वेष करता है ३७ और ३८ हम ३९
 जिस से ४० द्वेष करते हैं वह ४१ पृथिवी लोक से ४२ भाग रहित करके नि-
 काला गया ४३ हे मोक्षा धिष्ठातृ देवि मोक्ष विरोधी असुरों के निकाल-
 ने से निर्भय हम लोग ४४ इस ४५ देह से ४६ इस ४७ प्रतिष्ठा हेतु य-
 ज्ञ भूमि से ४८ स्वर्ग वा सूर्य वा नारायण को ४९ प्राप्त करें ५० नाराय-
 ण ज्योति से ५१ संयुक्त होवें ॥ २५ ॥

अथाध्यात्मम् — श्रुत्यर्थप्रमाणं से १ योगा रूढ योगी आत्माने २३ अपान द्वारा ४ भ्रुकुटि में ५ विशेष क्रमण किया ऐसा होने पर ६ जो काम ७ हम से ८ द्वेष करता है ९ और १० हम ११ जिस से १२ द्वेष करते हैं वह काम १३ उस भ्रुकुटि से १४ भाग रहित करके निकाला गया १५ श्रुतिप्रमाण से आत्माने १६ १७ उदान द्वारा १८ हृदय के अन्तरिक्ष में १९ विशेष क्रमण किया तैसा होने पर २० जो काम २१ हम से २२ द्वेष करता है २३ और २४ हम २५ जिस से २६ द्वेष करते हैं वह काम २७ उस हृदय के अन्तरिक्ष से २८ भाग रहित करके निकाला गया २९ योगी ने ३० ३१ प्राण द्वारा ३२ मानस कमल में ३३ विशेष क्रमण किया तैसा होने पर ३४ जो काम ३५ हम से ३६ द्वेष करता है ३७ और ३८ हम ३९ जिस से ४० द्वेष करते हैं वह काम ४१ उस मानस कमल से ४२ भाग रहित करके निकाला गया ४३ हे मोक्षाभिमानि देवता हम ४४ इस ४५ विराट् रूप देह और ४६ इस ४७ योग भूमि से ४८ आदित्य-रूप ज्योति को ४९ जावे ५० और ब्रह्मज्योति से ५१ संयुक्त होवे ॥ २५ ॥

स्वयम्भूरसि श्रेष्ठो रश्मिर्वर्चोदाकर्षिर्वर्चोने

देहि। सूर्यस्या वृत्तमन्वावर्त्त ॥ २६ ॥

स्वयम्भूः। असिः। श्रेष्ठः। रश्मिः। वर्चोदाः। असिः। मै। वर्चः। देहि। सूर्यस्य। आवर्त्तम। अन्व। आवर्त्त ॥ २६ ॥

अथाधिदैवम् — इस कंडिका में ३ मंत्र हैं, उनको कहते हैं, सूर्य के देखने का मंत्र १ सूर्य की प्रार्थना का मंत्र २ सूर्य की परिक्रमा का मंत्र ३

स्वयम्भूरिति (प्रजापति ऋषिः — याजुषी — सूर्यो देवता) १

वर्चोदाः सीति (प्रजापति ऋषिः — याजुषी — सूर्यो देवता) २

सूर्योति (प्रजापति ऋषिः — याजुषी — सूर्यो देवता) ३

पदार्थः— हे सूर्य तुम १ ब्रह्मा २ हो ३ शिव हो ४ ज्योति रूप से सर्व व्यापक विष्णु हो ५ सब को तेज के दाता पर रूप ६ हो ७ मुझे ब्रह्म तेज अथवा अन्न जल और जाह रुग्नि ८ दीजिये १० सूर्य की ११, १२ परिक्रमा के अनुसार मैं १३ परिक्रमा देता हूँ ॥ २६ ॥

अथाध्यात्मम्— विना सगुण उपासना के योग सिद्धि दुर्लभ है इस लिये कहते हैं— हे सूर्य के मध्य विराज मान भर्ग नाम ज्योति स्वरूप नारायण तुम १ अद्वैत होते विना आश्रय के आप ही प्रगट होने वाले २ हो ३ दूसरे विद्या और अविद्या से युक्त हैं तुम तो उससे विलक्षण हो उस कारण ओष्ठ हो ४ केवल ज्योति स्वरूप हो ५ दूसरे देवता प्रकृति सम्बन्ध से ब्रह्म तेज के दाता नहीं हैं तुम तो ब्रह्म तेज के दाता ६ हो ७ मुझे ब्रह्म तेज ८ दीजिये १० नारायण के अवतार सूर्य के ११ बार बार उदय अस्त के १२ अनुसार मैं भी १३ समाधि उत्थान कर्म को करता हूँ ॥ २६ ॥

अग्ने गृहपते सु गृहपति स्वयाग्ने हङ्गुहपतिना भूयास ॥ सु गृहपति स्वम्भयाग्ने गृहपतिना भूयाः । अस्थूरिणो गार्हपत्या नि सन्तु प्रातः ॥ हिमाः सूर्य स्या वृत् मन्वा वर्ते ॥ २७ ॥
गृहपते । अग्ने । अहम् । त्वया । गृहपतिना । सु गृहपति । भूयास । अग्ने । त्व । मया । गृहपतिना । सु गृहपति । भूयोः । अग्ने । नो । गार्हपत्यानि । प्रातः ॥ हिमाः । अस्थूरि । सन्तु । सूर्यस्य । आवृत्तम् । अनु । आवर्त्ते ॥ २७ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं, गार्हपत्य के देखने का मंत्र १ सूर्य की परिक्रमा का मंत्र २

अग्ने गृहपते इति (प्रजापति ऋषिः— ब्राह्मी रहती छं— गार्हपत्य)

सूर्यस्येति (प्रजापति ऋषिः - याजुषी बृहती छन्दः - सूर्यो देवता) २
 पदार्थः - १ हे मेरे गृह के रक्षक २ गार्हपत्य अग्नि ३ मैं ४ तुम्ह ५ गृह पति-
 की रूपा से ६ अच्छे गृह पति ७ होऊं तथा ८ हे अग्नि ९ तुम १० मुझ ११ गृ-
 ह पति की सेवा से १२ अच्छे गृह पालक १३ हूजिये १४ हे अग्नि १५ हम दो-
 नों के १६ गृह पति सम्बन्धी कर्म १७, १८ पूर्णायु पर्यन्त १९ ब्रह्मा, विष्णु,
 महेश परा और ब्रह्माग्नि से आकांक्षित २० हों २१ सूर्य की २२ परिक्रमा के २३
 अनुसार २४ मैं भी परिक्रमा देता हूँ ॥ २७ ॥

अथाध्यात्मम् - हे देह रक्षक २ अंतर्यामी ईश्वर ३ मैं जीवात्मा-
 ४ तुम्ह ५ गृहपालक के साथ ६ अष्ट गृह पति ७ होऊं ८ हे ईश्वर ९ तुम १०
 मुझ ११ जीवनाम गृह पति के साथ १२ अच्छे गृह पालक १३ हूजिये-
 क्योंकि जीव के साथ ही ईश्वर के देह पालकत्व का सम्भव है १४ हे परमा-
 त्मन १५ हम दोनों के १६ गृह पति सम्बन्धी कर्म १७, १८ पूर्णायु तक १९
 ब्रह्मा, विष्णु, महेश परा और ब्रह्माग्नि के ईच्छित २० हों क्योंकि पांच ही उ-
 पासना और पांच ही देवता जीवात्मा के आश्रय हैं मैं २१ ब्रह्मा वतार सूर्य के
 २२, २३ उदय अस्त कर्मानुसार २४ समाधि और उत्थान कर्म को करता हूँ ॥ २७ ॥

**अमेव्रतपतेव्रतमचारिषन्तदशकुन्तन्मैरा-
 धीदमूहय एवास्मिसोस्मि ॥ २८ ॥**

व्रतपते। अमे। व्रतम। अचारिषम्। तत। अशकेम। तत।
 मा। अराधि। इदम्। अहम्। यो। अस्मि। सो। एव। अस्मि।
अथाधिदेवम् - इसकाडिका मैं दो मंत्र हैं, व्रत के विसर्जन का मंत्र १
 आत्मा को अमानुष जानने का मंत्र २ ॥

अमेव्रतपत इति (प्रजापति ऋषिः - साम्नीपंक्ति छन्दः - अग्नि देवता) १
 इदमहमिति (- तथा - याजुषी छन्दः - तथा) २

पदार्थः— हे यज्ञ रक्षक २ अग्नि मैंने ३ यज्ञ कर्म का ४ अनुष्ठान किया ५ आप की रूपा से उसके करने में ६ समर्प हूँ आप तुमने भी ७ उस ८ मेरे कर्म को ९ सिद्ध किया १० यह ११ में १२ जो १३ हूँ १४ १५ वही अर्थात् देवता १६ हूँ ॥ २८ ॥

अथाध्यात्मम्— १ हे योगानुष्ठान के रक्षक २ परमेश्वर ३ मैंने इन्द्रिय संस्कार रूपव्रत को ४ किया ५ उसमें ६ समर्प हूँ आप तुमने भी ७ उस ८ मेरे व्रत को ९ सिद्ध किया १० यह ११ में १२ जो १३ हूँ १४ १५ वही अर्थात् देवता १६ हूँ ॥ २८ ॥ दर्श पूर्ण मास नाम यज्ञ के मंत्र समाप्त हुए अब पिण्ड पितृ यज्ञ के मंत्र आरंभ होते हैं ॥

अग्नये कव्युवाहेनाय स्वाहा सोमाय पितृमते स्वाहा
अपहता असुरा रक्षां सिवेदिषदः ॥ २९ ॥
कव्युवाहेनाय अग्नये स्वाहा पितृमते सोमाय स्वाहा
वेदिषदः असुरा रक्षां सिं अपहताः ॥ २९ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ३ मंत्र हैं सारचावल को कुछ एक पका कर अभिघारण उद्दासन और देखने के पश्चात् होम करता है उसके मंत्र १ २ दाक्षिण और से रेखा करता है उसका मंत्र ३

अग्नयेति (मजा पति ऋषिः— याजुषी— देवो देवता) १

सोमयेति (तथा तथा तथा) २

अपहता इति (तथा उष्णिक्— असुरो देवता) ३

पदार्थः— १ जो अग्नि सर्वज्ञ पित्रों के हवि को पितरों के पास पड़चाने वाला है उस २ अग्निके अर्थ ३ हवि दिया ५ पितरों से संयुक्त ५ सोम नाम देवता के अर्थ ६ हवि दिया ७ वेदी में स्थित ८ असुर ९ राक्षस १० वेदी से दूर निकाले गये ॥ २९ ॥

अथाध्यात्मम्— १ मन की जो वृत्ति है और उन का जो हवि है उसे उन मनो वृत्तियों के पास पड़चाने वाले २ आत्मा भिके लि

ये ३ इन्द्रियशक्तिरूपहविदिया ४ मनसे संयुक्त ५ चन्द्रमा (सर्माष्टमन) के अर्थ ६ इन्द्रियरूपहविदिया ७ मन हृदयरूपवेदी में स्थित ८ कामआदि असुर ९ मोह आदि राक्षस १० उक्त वेदी से दूर निकाले गये ॥ ३६ ॥

ये रूपाणि प्रतिमुञ्चमाना असुराः सन्तः स्वध्यान्व
रन्ति। परापुरे निपुरे ये भरन्त्यग्निष्ठा न्लोका अपु

दात्युस्मात् ॥ ३७ ॥

स्वध्या १। रूपाणि २। प्रतिमुञ्चमानाः ३। सन्तः ४। ये ५ असुराः ६।
चरन्ति ७। ये ८ परापुरः ९। निपुरः १०। भरन्ति ११। अग्निः १२। तान् १३। अस्मा
त् १४। लोकात् १५। आपु १६। दाति १७ ॥ ३७ ॥ अथाधिदैवम् ॥

वेदी पर अगार घुमाने का मंत्र १
ये रूपाणीति (प्रजापति ऋषिः—त्रिष्टुप् छन्दः—कव्यवाहनाग्निर्देवता) २
पदार्थः—१ पितरों का अन्नभक्षण करना चाहिये इस इच्छा से २ अपने रू
पों को ३ पितरों के समान करते ४ हुए ५ जो ६ देव विरोधी असुर ७ पितृयज्ञ स्था
न में फिरते हैं तथा ८ जो असुर ९ स्थूल देह १० और सूक्ष्म देहों को ११ अपना
असुरत्व छिपाने के लिये धारण करते हैं १२ उत्मुख रूप अग्नि १३ उन असुरों
को १४, १५ इस पितृयज्ञ स्थान से १६ दूर हटाता है ॥ ३७ ॥

अथाध्यात्मम्—१ विषे भोग के लिये २ अपने रूपों को ३ मनोवृत्ति रूप स
मान करते ४ हुए ५ जो ६ काम आदि असुर ७ मनोयज्ञ स्थान में फिरते हैं तथा
८ जो काम आदि ९ कर्मेन्द्रिय रूप स्थूल देहों को १० तथा ज्ञानेन्द्रिय रूप सू
क्ष्म देहों को ११ धारण करते हैं १२ ज्ञानाग्नि १३ उन काम आदि को १४ इ
स १५ मन हृदयरूप लोक से १६ दूर हटा देता है ॥ ३७ ॥

अत्र पितरो मादयध्वं यथाभागमावृषायध्वम्। अ
मीमदन्त पितरौ यथाभागमावृषायिषत ॥ ३९ ॥

पितरः^१। अत्रु^२। मादयध्वम्^३। यथा भागं^४। आवृषायध्वम्^५। पितरः^६। अमीमदन्त^७। यथा भागं^८। आवृषायिषत॥ ३१॥

अथाधिदैवम्— इसकंडिका में दो मंत्र हैं, यंजमान षड् अञ्जली के कि ये पीछे पिंड के सन्मुख संहिता के स्वर से मंत्र को षट्परिक्रमा करि के उत्तर मुख होकर स्वांस रोके करगलानि पर्यन्त जप करता है उस के मंत्र १, २।

अत्रपितरदति (प्रजापति ऋषि- साम्नी वृद्ध तीर्त्तदः— पितरो देवता) १

अमीमदन्तेति (तथा तथा तथा) २

पदार्थः १ हे पितरौ तुम २ इसकुश समूह पर ३ हर्षित हूजिये ४ और अपने भाग को उलंघनन करके ५ चारों ओर से वृषभ की तुल्यत्वसितक हवि को ग्रहण कीजिये, जिन पितरों से ऐसी प्रार्थना की गई वे ६ पितर ७ हर्षित हुए ८ और अपने भाग को उलंघनन कर ९ वृषभ की समान अपने भाग को प्राप्त किया ॥ ३१॥

अथाध्यात्मम्— १ हे मन की वृत्तियों तुम २ इस ज्ञान यन्त्र में ३ ब्रह्मानंद युक्त हो जाओ ४ और अपने ५ भाग इन्द्रिय शक्ति रूप को उलंघनन करके ६ चारों ओर से वृषभ की समान हवि को ग्रहण करौ ७ मन की वृत्तियां ८ ब्रह्मानंद मय हुई ९ और अपने भाग को उलंघनन करके १० वृषभ की समान अपने भाग को भक्षण किया ॥ ३१॥

नमो वः पितरो रसायन मो वः पितरः शोषाय नमो

मो वः पितरो जीवाय नमो वः पितरः स्वधायै नमो

वः पितरो घोराय नमो वः पितरो मन्यवे नमो वः

पितरः पितरो नमो वो गृहान्नः पितरो दत्त सुतो

वः पितरो देधैतद् वः पितरो वास आधत्त ॥ ३२॥

पितरः नमो वः रसाय पितरः नमो वः शोषाय पितरः नमो वः जीवाय पितरः नमो वः स्वधायै पितरः नमो

१८+१८ ३० ३१ ३२+३३ ३३+३३ ३४ ३५ ३६+३६ ३६+३६
 वः। चाराय। पितरः। नमः। वः। मन्यवे। पितरः। नमः। वः।
 पितरः। नमः। वः। पितरः। नमः। गृहान्। दत्त। पितरः। वः। सतः।
 देष्म। पितरः। एतत्। वासः। वः। आधत्त॥ ३२॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ८ मंत्र हैं, छै अंजली करने के ६ मंत्र
 १ से ६ तक तीन सूत्रों को पिंडों पर रखने के मंत्र ७, ८

नमो वः (छै मंत्रों के प्रजापति ऋषिः— याजुषी बृहती— लिङ्गोक्त देव) १ से ६ तक
 षष्ठा षी उषाक्

गृहान् इति (तथा — साम्नी अनुष्टुप् छंदः— पितरो देवता) ७
 एतद्व इति (तथा — आज्ञा पत्या गायत्री — तथा) ८

पदार्थः १ हे पितरो २ तुम्हारा ३ जो स्वरूप रसालय वसन्त है उसके अर्थ ४
 नमस्कार ५ हे पितरो ६ तुम्हारा ७ जो स्वरूप औषधि को सुखाने वाला ग्रीष्म
 ऋतु है उसके अर्थ ८ नमस्कार ९ हे पितरो १० तुम्हारा ११ जो स्वरूप जीवन
 कारण जल का वरसाने वाला वर्षा ऋतु है उसके अर्थ १२ नमस्कार १३ हे
 पितरो १४ तुम्हारा १५ जो स्वरूप अन्न उत्पन्न करने वाला रूप शरद ऋतु है
 उसके अर्थ १६ नमस्कार १७ हे पितरो १८ तुम्हारा १९ जो स्वरूप वि
 षम रूप हेमन्त ऋतु है उसके अर्थ २० नमस्कार २१ हे पितरो २२ तुम्हारा
 २३ जो रूप औषधि को दग्ध करने वाला शिशिर ऋतु है उसके अर्थ २४
 नमस्कार २५ हे पितरो २६ ऐसे ऋतु रूप तुम को २७ नमस्कार २८ हे पि
 तरो २९ तुम को ३० नमस्कार ३१ हे पितरो तुम ३२ हमारे अर्थ ३३ भार्या
 पुत्र पौत्र आदि ३४ दीजिये ३५ हे पितरो हम भी ३६ तुम्हारे अर्थ ३७ वि
 द्यमान धन से ३८ देवे ३९ हे पितरो ४० आप के अर्थ ४१ यह ४२ सूत्र रू
 प वस्त्र है ४३ स्तीकार कीजिये॥ ३२॥

अथाध्यात्मम्— १ हे मन की वृत्तियो २ ज्ञान पुत्र ३ तुम्हारे ४ ज्ञान

न्दमय कोष के अर्थ और उसके संस्कार के लिये है ५ हे मन की वृत्तियो ६ यह ज्ञानयन्त्र ७ तुम्हारे ८ प्राण मय कोष के अर्थ अर्थात् उसके संस्कार के लिये है ९ हे मन की वृत्तियो १० यह ज्ञान यन्त्र ११ तुम्हारे १२ जीव के अर्थ अर्थात् उसके संस्कार के लिये है १३ हे मन की वृत्तियो १४ यह ज्ञान यन्त्र १५ तुम्हारे १६ अन्न मय कोष के अर्थ अर्थात् उसके संस्कार के लिये है १७ हे मन की वृत्तियो १८ यह ज्ञान यन्त्र १९ तुम्हारे २० संसार भयदा यक विज्ञान मय कोष के अर्थ अर्थात् उसके संस्कार के लिये है २१ हे मन की वृत्तियो २२ यह ज्ञान यन्त्र २३ तुम्हारे २४ क्रोध रूप मनो मय कोष के अर्थ अर्थात् उसके संस्कार के लिये है २५ हे मन की वृत्तियो २६ यह योग यन्त्र २७ तुम्हारा है २८ हे मन की वृत्तियो २९ यह ज्ञान यन्त्र ३० तुम्हारा है अर्थात् तुमही इसके कर्त्ता हो ३१ हे मन की वृत्तियो ३२ हे तुम्हारे लिये ३३ मानस आदि कमल रूप आश्रय को ३४ दीजिये तात्पर्य यह कि मन की स्थिरता में ही योगी जन प्राणायाम को करते हैं ३५ हे मन की वृत्तियो हम ३६ तुम्हारे अर्थ ३७ प्राप्त इन्द्रिय समूह को ३८ देते हैं ३९ हे मन की वृत्तियो ४० यह ४१ मानस कमल रूप स्थान ४२ तुम्हारा है ४३ उसको स्वीकार कीजिये अर्थात् अतर्मुख हूजिये ॥ ३९ ॥

आधत्त पितरो गर्भं दुःमारमुष्करमजम् ।

यथेह पुरुषो संतः ३३

पितरः। यथा। इह। पुरुषः। असंतः। पुष्करं मजम्। कुमारं। गर्भं। आधत्त॥ ३३॥ **अथाधिदैवम्—** पुत्र की कामना

रखने वाली पत्नी मभले पिंड को भोजन करती है उस का मन्त्र १

आधत्तेति (प्रजापति ऋषिः— गायत्री छन्दः— पितरो देवता) १

पदार्थः— १ हे पितरो १ जिस प्रकार ३ इस ऋतु में ४ देवता पितर मनु-

यों के अपेक्षित अर्थ का पूर्ण करने वाला पुत्र ५ होवै उसी प्रकार ६ पुष्कर मा-
लाधारी अश्विनी कुमारों के तुल्य कमल माला धारण करने वाले ७ पुत्र रूप
८ गर्भ को ९ सम्पादन कीजिये ॥ ३३ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे मन की वृत्तियो २ जिस प्रकार ३ इस समाधि
में ४ सर्व व्यापी विष्णु ५ विद्यमान है उसी प्रकार ६ बृहद्ब्रह्मांड रूप माला
धारी ७ माया के खिलोने से खेलने वाले ८ और उन खिलौनों रूप ब्रह्मांडों
के प्रकाश, स्थिति, लय के कारण शुद्ध ब्रह्म को ९ धारण करै ॥ ३३ ॥

ऊर्जं वहन्ती रमृतं दुतम्पयः कीलालम्परि
सुतम्। स्वधास्य तर्पयत मे पितृन् ॥ ३४ ॥

४+१ २ १+३ ५+४ ३+५ ६ ७
ऊर्जं। रमृतं। परि सुतं। घृतम्। कीलालं। पयः। वहन्ती।
८ ९ १० ११ १२
स्वधा। स्य। मे। पितृन्। तर्पयत ॥ ३४ ॥

अथाधिदैवम् - आद्ध में पिण्ड दान के लिये कुशा जल से जो मार्जन
किया जाता है उस से बचे हुए जल को पिंडों के ऊपर सींचता है उसका
मंत्र १ ॥

ऊर्जं वहन्ती पिति (प्रजापति ऋषिः - त्रिपदा विराट् छंदः - आपो देवता) १
पदार्थः - हे पुष्पो से निकले हुए पुष्प सार २ रोग और मृत्यु का नाश
करने वाले ३ सब बंधनों के काटने वाले ४, ५, ६, ७ अन्न घृत दुग्ध के धा-
रण करने वाले जलौतम् ८ पितरों के हवि ९ हो १० मेरे ११ पितरों को १२
तृप्त करै ऐसे तीन प्रकार के सार को धारण करने से जलों को पितृ तर्प-
कत्व गुण प्राप्त है ॥ ३४ ॥

अथाध्यात्मम् - १ अन्न स्वरूप २ जीव को तथा ३ इन्द्रियों के स्था-
नों से निकले हुए ४ इन्द्रिय शक्ति समूह को तथा ५ सब बंधनों के काट

ने वाले ६ प्राण को ७ धारण करने वाले, हे ज्योतिरसश्मत् रूप जलौ तु-
म मन की वृत्तियों को तृप्त करने वाले ६ हौ, इस कारण १० मेरे ११ म-
न की वृत्तियों को १२ तृप्त करौ ३४॥ इति श्रीभृगुवंशावतंस श्रीना-
थूराम सूनुज्वाला प्रसाद भार्गव शर्म्म कृते शुक्ल यजुर्वेदीय ब्रह्म भाष्ये
इध्म ओक्षादि पित्र्यान्तो वामनः सस्कारादि कथनं नाम द्वितीयोऽध्यायः

२॥ समिधाग्निन्दुवस्यत घृतैर्वीधियतातिथिम।

आस्मिन्हव्याजु होतन ॥१॥

समिधा१। अग्निमे३। दुवस्येत२। घृतैः४। अतिथिमे५। वीधये६
त। आस्मिन्७। हव्या८। आजु होतन॥१॥

अथाधिदैवम्— चार ऋत्विजों के खाने योग्य चावल पाक कर धाली
से निकाल बीच में गढ़े ला कर उसमें घृत भर कर पीपल की तीन समि-
धा उस घृत में डबो कर तीन ऋचाओं से अग्नि में होम करता है उसका-
मंत्र १॥

समिधाग्निमिति (आङ्गिरस ऋषिः— गायत्री छन्दः— अग्निर्देवता) १

पदार्थः— पिबली दो अध्याय में दर्श पौर्णिमास यज्ञ के मंत्र कहे अब
अमा वस्या में अग्न्याधान के मंत्र कहे जाते हैं, हे ऋत्विजो तम १ समि-
ध का हृ के द्वारा २ अग्नि को ३ सेवन करो ४ और हौ मे हुए पूर्णा वृत्ति सप्त
वीरुतों से ५ आतिथ्य कर्म द्वारा पूजन योग्य अग्नि को ६ प्रज्वलित करो

७ इस प्रज्वलित अग्नि में नाना प्रकार के हवि को ८ सब ओर से हो मो १

अथाध्यात्मम्— इस मंत्र में ब्रह्मोपदेश है १ प्राण रूप समिधि के द्वा-
रा २ आत्माग्नि को ३ सेवन करो ४ और इन्द्रियों की शक्ति से ५ अतिथ्य-
कर्म द्वारा पूजन योग्य आत्माग्नि को ६ प्रज्वलित करो ७ और इस आत्मा-

नि मे ^८ मनो वृत्ति रूप इवि को ^८ सव जोर से होमो ॥ १ ॥

सुसमिद्धा यशो^१ चिषे^२ घृतन्ती^३ वज्जु^४ होतन

अग्नये^५ जात वेद से^६

सुसिद्धा^१ यशो^२ चिषे^३ । जात वेद^३ से । अग्नये^४ । तीव्रं^५ । घृत
म^६ । जुहोतन ॥ २ ॥ अथाधिदैवम्—

सुसमिद्धायेति (वसुश्रुत ऋषिः— गायत्री छन्दः— आग्निदेवता) १

पदार्थः— हे ऋत्विजो तुम १ शुभ रीति से भले प्रकार दीप्त २ ज्वलित ३
सर्वज्ञ ४ अग्नि के अर्थ ५ सुस्वादित तबाने छानने देखने आदि से संस्कार
किये हुए ६ घृत को ७ होम करो ॥ १ ॥ अथाध्यात्मम्—

१ प्राणद्वारा शुभ किया से भले प्रकार दीप्त २ दीप्तिमान ३ अज्ञान मय ४ आत्माग्नि के
लिये ५ योग से संस्कृत ६ ज्ञानेन्द्रियों को ७ होम करो ॥ १ ॥

तन्त्वासमिद्धिरङ्गिरो घृतेन^१ वर्द्धयामसि^२ । बृह
ज्जोचाय विष्णु^३ ॥ ३ ॥

अङ्गिरः^१ । तं^२ त्वा^३ । समिद्धिः^४ । वर्द्धयामः^५ । घृतेन^६ । यविष्णु^७ बृहत
ज्जि^८ । शोचि ॥ ३ ॥ अथाधिदैवम्—

तन्त्वा इति (भरद्वाज ऋषिः— गायत्री छन्दः— आग्निदेवता) १

पदार्थः— १ अत्येक यज्ञ में गमन शील हे अग्नि २ उस ३ तुम्ह को ४ यज्ञ
सम्बन्धी काष्ठों ५ तथा संस्कृत घृत से ६ हम मद्धि युक्त करते हैं ७ हे युवत
म तुम ८ ब्रह्म रूप ९ हो १० प्रदीप्त होजिये ॥ ३ ॥

अथाध्यात्मम्— ब्रह्म से उपदेश किया हुआ आत्म प्रति विवक्षा

थना करता है १ हे अग्नि के स आत्मा २ उस ३ तुम्ह को ४ प्राणों ५ त

था इन्द्रियों की शक्ति से ६ हम वृद्धि युक्त करते हैं ७ हे योग से समर्थ आत्मा
मि तुम ८ ब्रह्मांड रूप ९ हौ १० अदीप्त हजियै ॥ ३ ॥

उपत्वाग्ने हविष्मती घृताचीर्यन्तु हयत।

जुषस्व समिधो मम ॥ ४ ॥

अग्ने। हविष्मती। घृताची। त्वा। उपयन्तु। हयत। मम।
समिध। जुषस्व ॥ ४ ॥ अथाधिदैवम्-

इस कंडिका में जप का मंत्र है ॥

उपत्वा इति (प्रजापति ऋषिः - गायत्री छन्दः - अग्निर्देवता) १

पदार्थः - १ हे अग्नि २ हवि से युक्त ३ घृत में डूबी हुई ४ मिश्रा ५ तैरे
५ समीप प्राप्त हो ६ हे इच्छा करने वाले अग्नि ७ मेरी ८ समिधों को ९ सेवन
करो ॥ ४ ॥ अथाध्यात्मम् - हे आत्मा मि २ मन की वस्तियों से यु-

क्त ३ तानेन्द्रिय की शक्तियों से संयुक्त प्राण ४ तुझ में ५ प्रवेश करो ६ ओ
६ ता भोग्य के योग से अमृत रूप हे आत्मा मि तुम ७ मेरे ८ प्राणों को ९
सेवन करो ॥ ४ ॥

भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवी ववरिम्ना । तस्या

स्ते पृथिवि देव यजनि पृष्ठेऽग्नि मन्नादमुन्नाद्याय ।

दधे ॥ ५ ॥

भू। भुव। स्व। भूम्ना। पृथ। पृथिवी वरिम्ना। पृथिवी। द्वा।
देव यजनि। पृथिवी। तस्या। ते। पृष्ठे। अन्नादम्। अग्नि
म्। अन्नाद्याय। आदधे ॥ ५ ॥ अथाधिदैवम् - इस

कंडिका में ३ मंत्र हैं काष्ठ से ज्वलित अग्नि के आधान के मंत्र १२ काष्ठ के पू-

वार्द्धको ग्रहणाकरजप करने का मंत्र ३ आशीर्वाद का मंत्र ४
 भूरिति (प्रजापति ऋषिः - दैवी गायत्री छन्दः - अग्नि देवता) १
 भुवरिति (तथा - दैव्युषिक छन्दः - वायु देवता) २
 स्वरिति (तथा - दैवी गायत्री छन्दः - सूर्यो देवता) ३
 यौरिवेति (तथा - याजुषीयजमानाशीः - लिङ्गोक्त देवता) ४
 जल, सुवर्ण, ऊषा, (खारी मिट्टी) आखूतकर और प्रकीर इन ५ संभारों का
 सम्पादन करके स्फुट से रेखा की हुई शुद्ध भूमि में उन संभारों को स्थापन
 कर उन पर शुष्क काष्ठ से प्रज्वलित अग्नि को भूर्भुवः इन ३ अक्षरों के उच्चा
 राण पूर्वक स्थापन करे यह आहवनीय का स्थापन है ऐसे ही अष्टाक्षर
 होने से अग्नि को गायत्रीत्व है यह श्रुति में कहा है, क्योंकि गायत्री स
 हि, अग्नि का नाम भूर्भुवः प्रजापति के मुख से है ॥

पदार्थः जो वेदी १ भूलोक रूप २ अन्तरिक्ष रूप ३ स्वर्ग रूप है ४ क्यों
 कि ज्योति की अधिकता से ५ ६ स्वर्ग की तुल्य है ७ गुणों से बड़ी होने के
 कारण ८ ९ पृथिवी के समान है १० हे देवताओं की यजन स्थान ११ वेदी
 रूप पृथिवी १२ उस १३ तेरी १४ पृष्ठ पर १५ होम वस्तु के भक्षण करने वा
 ले १६ अग्नि को १७ हवि भक्षण के लिये १८ स्थापन करता है -

व्याख्यानः भूर्भुवः स्वः इस ऋचा से प्रजापति जीने तीनों लोक, तीनों व
 र्ण अपनी प्रजा और पशुओं को उत्पन्न किया वे सब मेरे वशी भूत होवें, य
 ह इच्छा करता अग्नि यो को स्थापन करे, श्रुति के अनुसार प्रार्थना करे
 जिस प्रकार यह स्वर्ग नक्षत्रों से पूर्ण है, इसी प्रकार मैं भी धन पुत्रादि से
 पूर्ण हो जाऊँ और जिस प्रकार यह पृथिवी बड़ी है, उसी प्रकार मैं भी
 वृद्धि को पाऊँ और जिस प्रकार अग्नि अन्न का भक्षक है उसी प्रकार मैं
 भी अन्न भक्षक होऊँ ॥ ५ ॥ **अथाध्यात्मन्** - १ हे विष्णु की

यजन स्थान २ हार्द भूमि तुम् ३ ज्योति की वाङ्मन्यता से ४, ५ स्वर्ग की तुल्य
 ६ बड़ी होने से ७, ८ पृथिवी के समान हो तथा ९, १०, ११ त्रिलोक रूप हो
 १२ उस १३ तुम् के १४ ऊपर हवि भक्षण १५ आत्माग्नि को १६ प्राण
 इन्द्रिय रूप अन्न भक्षण के लिये १८ ध्यान से स्थापन करता है ॥ ५ ॥

आयङ्गो एशिनरकमीदसदन्मातरम्पुरः। पितरम्

रज्ज्वप्रयन्त्स्वः ६

अयम्^१। गौ^३। एशिनः^३। आ^४। अकमीत^४। पुरः^५। मातरम्^६। अ
 सदत्^८। च^८। स्वः^{१०}। प्रयन्^{११}। पितरम्^{१२}। असदन्^{१३} ॥ ६ ॥

अथाधिदैवम्— सर्परात्री नाम मंत्रों से दक्षिणाग्नि का स्थापन—
 और उप स्थान होता है उसके मंत्र १, २, ३ ॥

आयं गौरिति (सर्परात्री कद्रु ऋषिः— गायत्री छन्दः— अग्निर्देवता) १।

पदार्थः— १ इस २ यज्ञ सिद्धि के लिये यजमान के घर में जाने वाले ३
 श्वेत, रक्त आदि बड़ प्रकार की ज्वालाओं से युक्त अग्नि ने ४ सब ओर
 आह वनीय गार्हपत्य दक्षिणाग्नि के स्थानों में ५ अति क्रमण किया
 ६ पूर्व दिशा में ७ पृथिवी को ८ प्राप्त किया ९ और १० सूर्य रूप होकर
 ११ स्वर्ग में चलते अग्नि ने १२ स्वर्ग लोक को १३ प्राप्त किया ॥ ६ ॥

अथाध्यात्मम्— १ इस २ मन, हृदय, भ्रुकुटि आदि कमलों में जा
 ने वाले अथवा उक्त कमलों में ब्रह्मा विष्णु महेश रूप धारण करने वा
 ले ३ मुक्त प्रयाम रक्त वर्ण आरी आत्माग्नि ने ४ सब ओर से ५ कमलों
 में गमन किया ६ प्रथम अनामि चक्र को प्राप्त किया ७ फिर ११ सूर्य
 वा रूद्र रूप होकर ११ चलते हुए ने १२ रुद्र कुटि रूप स्वर्ग लोक को १३
 प्राप्त किया ॥ ६ ॥

अन्तश्चरति रोचनास्य प्राणादपानती। व्यस्य
न्महिषो दिवम् ७

अस्य^१। रोचना^२। प्राणात्^३। अपानती^४। अन्ते^५। चरति^६। महि
षः^७। दिवम्^८। व्यस्यत॥ अथाधिदैवम्-

अन्तश्चरतीति (सर्परात्री कद्रुर्ऋषिः- गायत्री छन्दः- अग्निर्देवता) १
पदार्थः- १ इस अग्नि की २ वायु नाम दीप्ति ३ सब शरीरों में प्राण व्या
पार के पीछे ४ अपान व्यापार को करती तथा अपान व्यापार से पीछे प्रा
ण व्यापार को करती ५ पृथिवी स्वर्ग के मध्य ६ घूमती है ७ उस अग्नि में
८ भोग स्थान स्वर्ग लोक को ९ विशेष प्रकार शि त किया और करता है ७

अथाध्यात्मम्- १ जब इस आत्माग्नि की २ प्राण शक्ति ३ प्राण
वेष्टा रेचक के पीछे ४ पूरक को करती ५ शरीर के मध्य ६ जाती है तब ७
प्राण ने ८ भ्रुकुटि वा गगल मंडल को ९ विशेष प्रकार शि त किया वाक
ता है ॥ ७ ॥ निःशब्दाम् विराजति वाक् पतङ्गाय धीयते ॥

निःशब्दाम् विराजति वाक् पतङ्गाय धीयते ॥ प्रतिवत्सोरहं धुभिः ॥
वाक्^१। निःशब्दाम्^२। विराजति^३। प्रतिवत्सोः^४। अहं^५। धुभिः^६।
पतङ्गाय^७। धीयते॥ ८ ॥ अथाधिदैवम्-

निःशब्दामेति (सर्परात्री कद्रुर्ऋषिः- गायत्री छन्दः- अग्निर्देवता) १
पदार्थः- १ जो वेद रूप स्तुति स्वरूप वाणी २ चतुर्दश भुवनादि अयोक्त
धामों में ३ विशेष शोभा देती है वह ४ प्रति दिन ब्रह्मादि अयोक्त रूपों
से कृगमन श्रील अग्नि के लिये ७ उच्चारण की जाती है क्योंकि वह अ
ग्नि का ८ तेज बलता गाई पत्य भाव को पाता है, गाई पत्य से आह

वनीयभाव को, देसो स्मृति आदि में कहा है, लौकिक में पावक नाम प्रथम अग्नि कहा है, गर्भाधान में मारुत नाम अग्नि कहा है, पुंसव कर्म में चमस और शुभ कर्मों में शोभन नाम अग्नि कहा है, सीमन्त में अन्नल जात कर्म में प्रगल्भ नाम करण में पार्थिव और अन्न प्राशन में शुचि नाम अग्नि कहा है, चूड़ा कर्म में सभ्य नाम और व्रता देश में समुद्रव, गोदान में सूर्य नाम और केशांत में याजक नाम कहा, विसर्गक में वैश्वानर और विवाह में बलद नाम अग्नि कहा है, आधान कर्म में आवसथ्य, वैश्व देव में पावक, गाई पत्य में वल्हाग्नि होवे, दक्षिणाग्नि शिव रूप है, आहवनीय में विष्णु होवें, तीनों देवता अग्नि होत्र में माने हैं, लक्ष होम में अभीष्ट अग्नि होवें, कोटि होम में महाशन नाम अग्नि होवे, अग्नि के आननें तत्पर किसी ने धृता च्षिष नाम अग्नि कहा है, रुद्र आदि में रुद्र नाम अग्नि है, शान्तिक कर्म में शुभ कृत है, पौष्टिक कर्म में वरद नाम अग्नि है, अभिचारक कर्म (मारण प्रयोग) में क्रोध नाम अग्नि है वशीकरणा में वशकृत नाम अग्नि, और वन दाह में पोषक, उदर में जाद राग्नि, शिव भक्षण में रुव्याद नाम अग्नि कहा, समुद्र में बडवानल, मलय में सम्वर्तक नाम अग्नि कहा, कर्मों में ३९ अग्नि कहे हैं, जो अग्नि जिस कर्म में विशेष हित कारी है उसी को आह्वान कर होम करना चाहिये अन्यथा सब कर्म निष्फल और राक्षसों का भाग होवे, अब सूर्य आदि में जो अग्नि हैं उन को कहते हैं, सूर्य में कपिल नाम, चंद्रमा में पिङ्गल नाम, मगल में घूम केतु, बुध में जडर, बृहस्पति में शिखी नाम, शुक्र में हाटक, शनैश्चर में महातेजा, एङ्ग केतु में दृताशन नाम अग्नि कहा है, यज्ञ आदि में अग्नि के ५ भेद हैं, आवसथ्य, आहवनीय, दक्षिणाग्नि, अन्वाहार्य, गाई पत्य ॥ ८ ॥

अथाध्यात्मम् — जो स्तुति रूप वेद वाणी २ तीस धाम अ

अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा। सूर्यो ज्यो
तिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वर्चो ज्योतिर्व
र्चः स्वाहा। सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा। ज्यो
तिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥६॥

पदार्थ :- १ जो यह अग्नि देवता है २ वही ब्रह्म ज्योति है ३ जो यह ब्रह्म ज्योति है ४ वही अग्नि देवता है ५ उसके लिये इति दिया गया यह सायंकाल के अग्नि होत्र का मंत्र है ६ यह जो सूर्य देवता है ७ वही ब्रह्म

ज्योति है ८ यह जो ब्रह्म ज्योति है ९ वही सूर्य देवता है इस के अर्थ १० हवि
 दिया सूर्य सम्बन्धी तेज रात्रि के समय अग्नि में प्रवेश होता है इस लिये सायंकाल
 पर अग्नि ज्योतिः यह मंत्र योग्य है उदय काल पर अग्नि सम्बन्धी ज्यो
 ति सूर्य में प्रवेश होती है उस कारण प्रातः काल पर, सूर्यो ज्योतिः यह
 मंत्र कहा जो पुरुष ब्रह्म तेज का चाहने वाला है वह दोनों काल पर अ
 प्रोक्त मंत्रों से होम करे ११ जो अग्नि है १२ वही ब्रह्म तेज है १३ जो ब्रह्म
 ज्योति है १४ वही तेज है उस के अर्थ १५ अच्छा होम हो १६ जो सूर्य है
 १७ वही ब्रह्म तेज है १८ जो ब्रह्म ज्योति है १९ वही तेज है उसके लि
 ये २० अच्छा होम हो, अथवा प्रातः काल का अप्रोक्त मंत्र है २१ जो ब्र
 ह्म ज्योति है २२ वही सूर्य है २३ जो सूर्य है २४ वही ब्रह्म ज्योति है उस के लि
 ये २५ ओष्ठ होम हो ॥ ६ ॥

अथाध्यात्मम् - १ वेद वाक्य से २ जा
 ठ रात्रि ३ ब्रह्म ज्योति है, क्योंकि श्री भगवान ने कहा है, कि मैं वैश्वान
 र अग्नि हूँ, ४ जो ब्रह्म ज्योति है ५ वही जाठ रात्रि है ६ वेद वाक्य से ७
 मानस सूर्य ८ ब्रह्म ज्योति है ९ ब्रह्म ज्योति १० मानस सूर्य है ११ वेद
 वाक्य से १२ वैश्वानर अग्नि १३ ब्रह्म तेज है १४ जो ब्रह्म ज्योति है १५ व
 ही तेज है १६ वेद वाक्य से १७ ब्रह्मांड का सूर्य १८ ब्रह्म तेज है १९ और
 ब्रह्म की ज्योति २० ब्रह्म तेज है २१ वेद वाक्य से २२ भर्गनाम ज्योति २३
 सूर्य है २४ और सूर्य २५ भर्ग ज्योति है, यह सब ब्रह्म है, पहचानना ल
 कुछ नहीं है, इस महा वाक्य के अर्थ को दर्शाया ॥ ६ ॥

सजुर्देवेन सवित्रा सजु रात्र्यो न्दवत्या ॥ जु
 षाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ॥ सजुर्देवेन सवि
 त्रा सजु रूप से न्दवत्या ॥ जषाणः सूर्यावे

सवित्रा^१। देवेने^३। सजू^४। इन्द्र^५दैवत्या^६। रात्र्या^७। सजू^८। जुषा^९
 णा^{१०}। अग्नि^{११}। वेतु^{१२}। स्वाहा^{१३}। सवित्रा^{१४}। देवेनु^{१५}। सजू^{१६}। इन्द्र^{१७}
 वत्या^{१८}। उषसा^{१९}। सजू^{२०}। जुषाणा^{२१}। सूर्य^{२२}। वेतु^{२३}। स्वाहा^{२४}॥१०॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में होम के २ मंत्र हैं १२
 सजूदेवेनेति (प्रजापति ऋषिः— एकपदा गायत्री छं०— लिङ्गोक्त दे०) १
 पदार्थः— १ सव के प्रेरक २ ज्योति स्वरूप सूर्य रूप परमेश्वर के साथ
 ३ समान प्रीति वाला तथा ४ इन्द्र है देवता जिसका ऐसे ५ ऋषि देवता
 के साथ ६ समान प्रीति वाला ७ तथा हम पर भी प्रीति रखने वाला ८ अ
 ग्नि ९ आहुति को भक्षण करे अथवा हमारे कर्म को प्राप्त करे उस अ
 ग्नि के लिये यह १० हुति दिया (प्रातः काल के होम का मंत्र) ११ सव के
 प्रेरक १२ ज्योति स्वरूप परमेश्वर के साथ १३ समान प्रीति वाला तथा
 १४ इन्द्र है देवता जिसका ऐसी १५ उषा देवी के साथ १६ समान प्री
 ति वाला १७ तथा हम पर प्रीति रखने वाला १८ सूर्य १९ आहुति को
 भक्षण करे अथवा हमारे कर्म को प्राप्त करे उस के लिये यह २० हुति
 दिया ॥१०॥ अथाध्यात्मम्— सजू^१। देवेने^३। सवित्रा^५। जुषा^७
 णा^९। सजू^{११}। इन्द्र^{१३}दैवत्या^{१५}। रात्र्या^{१७}। अग्नि^{१९}। स्वाहा^{२१}। वे^{२३}। एतु^{२५}।
 सजू^{२७}। देवेने^{२९}। सवित्रा^{३१}। जुषाणा^{३३}। सजू^{३५}। इन्द्र^{३७}दैवत्या^{३९}। उष^{४१}
 सा^{४३}। सूर्य^{४५}। स्वाहा^{४७}। वे^{४९}। एतु^{५१}॥ १०॥— १ संसारजय में तत्पर २
 ज्योति रूप ३ नारायण के साथ ४ प्रीति युक्त अर्थात् भक्ति पूर्वक नाराय
 णार्पण कर्म करने वाला यजमान अथवा ५ संसारजय में तत्पर ६ ७ पि
 तृव्यामाधिका देवता के साथ जिस सूर्य देवता इन्द्र है प्रीति करने वाला

८ यजमान १० ब्रह्मा र्षणा कर्म तथा सकाम कर्म द्वारा १० विष्णु वा स्वर्ग-
को प्राप्त करे ११ संसार जय में तत्पर १३, १४ कैवल्यमोक्ष के अधिष्ठा-
ता देवता के साथ १५ प्रीति युक्त तथा १६ संसार जय में तत्पर १७, १८
कर्म मुक्ति के अधिष्ठाता देवता के साथ प्रीति युक्त १९ ब्रह्म भाव को प्रा-
प्त योगी २० महा वाक् के उपदेश से २१ ब्रह्म को २२ प्राप्त करे ॥ १० ॥

उपप्रयन्तौ अध्वरं मन्त्रं वोचे माग्मये। आरे अस्मे

चष्ट एवते ११

^१अध्वरं। ^२उपप्रयन्तः। ^३आरे। ^४च। ^५अस्मे। ^६ष्ट एवते। ^७अग्मये। ^८मन्त्रं।

वोचेम ॥ ११ अथाधिदैवम्— अग्नि उपस्थान का मन्त्र १

उपेत्यस्य (गोतम ऋषिः— निच द्वायत्री छन्दः— अग्नि देवता) १

पदार्थः— १ यज्ञ में २ जाने वाले अनुष्ठान कर्ता हम लोग ३ दूर ४ और ५
हमारे समीप ६ हमारे वाक् अवण में प्रवृत्त ७ आह वनीय अग्नि के लिये
८ उस वाक् समूह को जो कि विचार से रक्षा करने वाला है ९ कहते हैं ॥

११ ॥ **अथाध्यात्मम्**— इन्द्रियां कहती हैं १ यजमान के २ समीप
जाने वाली हम ३ दूर अर्थात् हार्दी काश में ४ और ५ हमारे स्थान में ६
हमारे वाक् अवण में उद्युक्त ७ आत्मा अग्नि के लिये ८ उस वाक् समूह को
जो कि मनन से रक्षा करने वाला है ९ कहती हैं ॥ ११ ॥

अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्

अपांश्चेतांश्च सिजिन्वति ॥ १२ ॥

^१अयम्। ^२दिवः। ^३मूर्द्धा। ^४ककुत्। ^५पृथिव्या। ^६पतिः। ^७अग्निः। ^८अपांश्च
^९चेतांश्च। ^{१०}सिजिन्वति ॥ १२ ॥ (अथाधिदैवम्—)

अग्निर्मूर्द्धात्यस्य (विरूप ऋषिः— निच द्वायत्री छन्दः— अग्नि देवता) १

१ यह २ स्वर्गलोक का ३ निदेवरूपधारक सूर्य ४ अन्तरिक्ष में वायु रूप से शब्द करने वाला ५ पृथिवी का ६ पालक ७ अग्नि ८ यत्त कर्म से उत्पन्न ९ जलो को १० पुष्ट करता है वा वृद्धि देता है ॥१२॥ **अथाध्यात्मम्-**

१ यह २ भ्रुकुटि का ३ ब्रह्मा विष्णु महेश रूपधारक सूर्य ४ अनादित शब्द से शिर में शब्द करने वाला ५ मन और हृदय का ६ पालक ७ आत्माग्नि ८ इन्द्रयालयान्तरिक्षों की ९ शक्तियों को १० पुष्ट करता है वा वृद्धि देता है ॥

उभावा मिन्द्राग्नी आहुवद्धा उभा राधसः सह मादयध्वै उभा दाता रविषा १२ रयीणामुभावा जस्य सातये हुवे वाम १३

इन्द्राग्नी१ वा२मे३ उभा४ आहुवद्धे५ उभा६ सह७ राधसः८ मादयध्वै९ उभा१० इषा११ १२ रयीणाम्१३ दाता१४ री१५ उभा१६ वाम१७ वा जस्य१८ सातये१९ हुवे॥ १३॥ **अथाधिदैवम्-**

उभावा मिति (भरद्वाजऋषिः-त्रिष्टुप् छन्दः-इन्द्राग्नी देवते) १ पदार्थः- १ हे सूर्य और आहुवनीय अग्नि २ तुम ३ दोनों को ४ आवाहन करना चाहता हूँ ५ तुम दोनों को ६ एक साथ ७ हवि रूप धन से हर्षित करना चाहता हूँ ८ तुम दोनों १० अन्नो ११ और धनों के १२ दाता हो १३ १४ तुम दोनों को १५ अन्न के १६ दानार्थ १७ आवाहन करता हूँ ॥१३॥

अथाध्यात्मम्- १ हे नारायण २ तुम ३ दोनों को ४ आवाहन करना चाहता हूँ ५ तुम दोनों को ६ एक साथ ७ आत्म प्रतिबिम्ब रूप हवि से ८ हर्षित करना चाहता हूँ ९ तुम दोनों १० अमृत वर्षाओं के ११ और योग सम्पत्तियों के १२ दाता हो १३ १४ तुम दोनों को १५ १६ प्राण दान के लिये १७ आवाहन करता हूँ ॥१३॥

अयन्ते योनिः। ऋत्वि यो यतो जातो अरोचथाः।

तज्जानन् अरोहाथानो वर्द्धयारयिम् १४

अग्ने१ अयमे३ तौ३ ऋत्वि४ यः४ योनिः५ यते५ जातः६ अरोचथाः७
तौ८ जानन्१० अरोहो११ अथो नः१३ रयिम्१४ आवर्द्धय१५ ॥ १४ ॥

अथाधिदेवम्

अयन्त इत्यस्य (देव अरोचथा वाता वृषी - स्वर्गदनुष्टुप् छन्दः - अग्निर्देवता) १

पदार्थः - १ हे गार्हपतीय अग्नि २ यह गार्हपत्य ३ तेरा ४ सायं काल और
रातः काल सम्बन्धी ५ प्रादुर्भाव का स्थान है ६ जिस गार्हपत्य से ७ प्रगट
होते तुम ८ कर्म काल पर दीप्त होते हो ९ उस गार्हपत्य को १० जानते
अर्थात् अपना अंश मानते तुम ११ उसमें प्रवेश कीजिये १२ तिस के पीछे
१३ हमारे १४ धन को १५ चारों ओर से वर्द्धि दीजिये अर्थात् फिर यन्त्र क
रने को समर्थ कीजिये ॥ १४ ॥

अथाध्यात्मम्

१ हे ब्रह्मा
ग्नि २ यह क्षेत्रज्ञ आत्मा ३ तेरा ४ समाधि काल सम्बन्धी ५ प्रादुर्भाव का
स्थान है ६ जिस से ७ प्रगट होते तुम ८ दीप्त होते हो ९ उस प्रादुर्भाव
के स्थान क्षेत्रज्ञ आत्मा को १० जानते अर्थात् अपना अंश मानते तुम
११ उसमें प्रवेश कीजिये १२ तिस के पीछे १३ हमारी १४ योग लक्ष्मी
१५ चारों ओर से वर्द्धादयै ॥ १४ ॥

अयमिह प्रथमो धायिधातुभिर्होता यजिष्ठो

अध्वरैष्वीडाः। यमप्रवानो भृगवो विरुरुचु

र्वनैषु चित्रं विभुं विशेषे विशेषे ॥ १५ ॥

अयम्। होतो। यजिष्ठः। अध्वरैः। ईड्यः। प्रथमः। इह।

धातुभिः। अध्यायि। अन्नवानः। भृगवेः। वनेषु। यो चित्रं।
विम्बं। विशेषे विशेषे। विरु रन्तुः॥ १५॥ अथाधिदेवम्-
अयमिहेत्यस्य (वामदेव ऋषिः-भुरिक् त्रिष्टुप् छं-अग्निदेवता) १

पदार्थः यह २ देवताओं का आवाहन करने वाला ३ यज्ञ में स्थित अथ-
वा अति शाय करके यज्ञ करने वाला ४ सोम याग आदि में ५ ऋत्विजों-
से स्तुति योग्य ६ आहवनी याग्नि ७ इस कर्मानुष्ठान के स्थान में ८
स्थापन करने वालों के द्वारा ९ स्थापित हुआ १० पुत्रवान ११ भार्गव-
मुनियों ने १२ वन प्रदेशों में १३ जिस १४ नाना प्रकार के कर्मों में रुप-
योगी होने से अद्भुत १५ सर्व व्यापी अग्नि को १६ अत्येक यज्ञ मानके अ-
र्थ १७ प्रज्वलित किया १५॥

अथाध्यात्मम्- १ यह २ ज्ञान निष्ठों का आवाहन करने वाला ३ ज्ञान-
यज्ञ में स्थित अथवा हृदय मन भ्रुकुटि में प्रगट होने वाला ४ ज्ञान य-
ज्ञों में ५ वाणी आदि से स्तुति योग्य ६ मुख्य ब्रह्माग्नि ७ इस ज्ञान यज्ञ-
में योगियों से ८ ध्यान में धारणा किया गया ९ शिष्यवान १० गुरुओं
ने ११ तप भूमियों में १३ जिस १४ अद्भुत अथवा ज्ञान दाता १५ सर्व व्यापी
अथवा ब्रह्म परा ईश निवृत्तात्मा ४ रूप वाले ब्रह्माग्नि को १६ अत्येक
शिष्य के अर्थ १७ ज्ञानोपदेश से प्रदीप्त किया ॥ १५॥

अस्य प्रत्नामनुद्युतं शुक्रन्दुहेऽहयः। पयः।

सहस्रसामृषिम् ॥ १६ ॥

अहयः। अस्य। प्रत्नाम्। सहस्रसाम्। द्युतं। अनु। सु-
कं। पयः। वरुषिमा। दुहेः॥ १६॥ अथाधिदेवम्

अस्य प्रत्नामित्यस्य (अवत्सार ऋषिः - गायत्री छन्द - अग्निर्देवः) १

पदार्थः - १ सत्कार से शुद्ध अयोग्यता की लज्जा से हीन द्विजन्माओं ने २ इस अग्नि की ३ पुरातनी ४ ब्रह्मज्योति रस रूप ५ दीप्ति को ६ देख कर ७ अन्न ८ दुग्ध ९ वेद को १० होम के लिये दोहा अर्थात् अन्न को भूमि से, दुग्ध को गौ से और वेद को गुरु से होम के लिये प्राप्त किया न कि केवल अपने लिये जैसा भगवान ने कहा है, यह लोक विषादार्पण कर्म के सिवाय कर्म करने से बंधन पाता है हे अर्जुन निष्काम तुम उस परमेश्वर के लिये कर्म को भले प्रकार करो ९ पूर्व काल में परमेश्वर ने प्रजा को यज्ञ सहित उत्पन्न करके कहा, इस यज्ञ के द्वारा वृद्धि पाओ वा उत्पत्ति करो यह यज्ञ तुम्हारी अभीष्ट कामनाओं को देने वाला है, १० इस यज्ञ से देवताओं को विभाग देकर वृद्धि दो, वे देवता तुम को बढ़ाओ, परस्पर वृद्धि करते स्वर्ग और मोक्ष को पाओगे ११ - निश्चय यज्ञ से आराधित देवता तुम को इष्ट भोग देंगे, जो देवताओं के दिये हुए पदार्थों को उन्हें न देकर भोगता है वह चोर है १२ यज्ञ से श्रेष्ठ अर्थात् अमृत को भोजन करते सब पापों से मुक्त होते हैं, जो पापी अपने लिये ही पाक बनाते हैं, वे तो पाप को भोजन करते हैं १३ - अन्न रस से प्राणी उत्पन्न होते हैं, वृष्टि से अन्न की उत्पत्ति है, यज्ञ से वर्षा होती है, यज्ञ कर्म से उत्पन्न है, १४ कर्म को वेद से उत्पन्न जानो, वेद ब्रह्म से प्रकट है उस कारण से सर्वगत ब्रह्म सदा यज्ञ में स्थित है १५ जो पुरुष इस लोक में इस प्रकार अरुण अनुष्ठा न चक्र को नहीं वर्तता है हे अर्जुन वह पाप आयु वाला इन्द्रियों के विषय में कीड़ा मान निष्फल जीवता है ॥ १६ अध्याय ३ भगवद्गीता ॥ १६

अथाध्यात्मम् - १ सत्कार से शुद्ध अयोग्यता की लज्जा से शून्य योगियों ने २ इस ब्रह्माग्नि की ३, ४, ५ दीप्ति को जो कि पुरा, ब्रह्मा, वि-

ष्णु शिव का रूप धारण करने वाली और ब्रह्म ज्योति रस रूप है ६ अनुभव कर ७ मानस सूर्य को ८ प्राणा को ९ और वेद के सार महा वाक् को ८ होम केलिये देहा ॥ १६ ॥

तनूपाग्ने सितन्वम्मे पाह्यायुर्दाग्ने स्या
युग्मे देहि वच्चादाग्ने सिवर्च मे देहि। अग्ने

यन्मे तन्वा ऊनन्तन्मे प्राप्ताः १७
अग्ने। तनूपा। असि। मे। तन्वमे। पाहि। अग्ने। आयुर्दा
असि। मे। आयुः। देहि। अग्ने। वच्चादा। असि। मे। वच्
देहि। अग्ने। मे। तन्वाः। यत्। ऊनमे। मे। तत्। प्राप्ताः।

॥ १७ ॥ अथाधिदैवम् -

तनूपा इत्यस्य (अवत्सार ऋषिः - त्रिष्टुप छन्दः - अग्निर्देवः) १
पदार्थः - १ हे अग्नि तुम २ जाठ राग्नि रूप से देहों के रक्षक ३ हो ४ मेरे
५ शरीर को ६ रोग आदि से रक्षा करो ७ हे अग्नि तुम ८ आयु के दाता
हो ९ १० मुझ को आयु ११ दीजिये अर्थात् अपमृत्यु को दूर कीजिये क्योंकि
कि प्रसिद्ध है जब तक शरीर में जाठ राग्नि उष्णता विद्यमान है तब तक
नही मरता है १३ हे अग्नि तुम १४ तेज के दाता १५ हो १६ मुझे १७ तेज
१८ दीजिये १९ हे अग्नि २० मेरे २१ शरीर का २२ जो अङ्ग २३ त्वान के
अनुष्ठान में असमर्थ है २४ मेरे २५ उस अंग को २६ समर्थ कीजिये ॥ १७ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे ब्रह्माग्नि तुम २ ब्रह्माङ्ग रूप शरीर के रक्षक
३ हो ४ मेरे ५ लिङ्ग शरीर को ६ ससार से रक्षा करो ७ हे ब्रह्माग्नि तुम
८ अन्तः प्रायु के दाता ९ हो १० मुझ को ११ प्रारब्ध का अंत करने वाली

पूर्णयु १२ दीजिये १३ हे ब्रह्माग्नि तुम १४ ब्रह्म तेज के दाता १५ हो १६ मु-
म्ह को १७ ब्रह्म तेज १८ दीजिये १९ हे ब्रह्माग्नि २० मेरे २१ शरीर का २२ जो अ-
ग चक्षु आदि २३ ज्ञान यज्ञ के अनुष्ठान में असमर्थ है २४ मेरे २५ उस अंग
को २६ समर्थ कीजिये ॥ १७ ॥

इन्धानास्त्वाशतं^१ हिमाद्युमन्तं^२ समि-
धीमहि। वयस्त्वंतो^३ वयस्कृतं^४ सह स्वंतः^५
सहस्कृतं^६ न॥ अग्ने सपत्नदम्भनमदव्या सो
अदाभ्यम्। चित्रावसो^७ स्वस्ति ते^८ पारमशीय^९ १८
अग्ने। इन्धानो^{१०}। वयस्त्वंतो^{११}। सह स्वंतो^{१२}। अदव्या सो^{१३}। प्रातथ^{१४}
हिमा^{१५}। त्वा^{१६}। युमन्तं^{१७}। वयस्कृतं^{१८}। सहस्कृतं^{१९}। सपत्नदम्भ-
नमा^{२०}। अदाभ्यं^{२१}। समिधीमहि^{२२}। चित्रावसो^{२३}। स्वस्ति ते^{२४}। पारं^{२५}। अ-
शीयं^{२६} ॥ १८ ॥ अथाधिदैवम्

इन्धानास्तेत्यस्य (अवत्सारः ऋषिः - निष्टुः) इति पञ्चमः अन्तिर्देवः १
पदार्थः - १ हे अग्नि २ आप के अनुग्रह से दीप्यमान ३ अन्नवान ४ व-
लवान ५ किसी से पीड़ा न पाने वाले हम यजमान ६ ७ पूर्णयु पर्यन्त ८
तुम्हें दीप्तिमान ९ अन्न उत्पन्न करने वाले १० बल के दाता ११ शत्रु
ओं के मारने वाले १२ किसी से पीड़ा न पाने वाले को १३ निरंतर प्रज्ज-
लित करें १४ चंद्रमानक्षत्र आदि के वास स्थान हे रवि यजमान में १५
कल्याण पूर्वक १६ तेरी १७ समाप्ति को १८ प्राप्त करूँ जिस प्रकार
लोक में मनुष्यों के सो जानै पर चोर चर में प्रवेश करते हैं, उसी प्रकार
इस यज्ञभूमि में राक्षस प्रवेश करते हैं इस प्रकार से रवि देवी की
प्रार्थना है ॥ १८ ॥

अथाध्यात्मम् - ज्ञानयन्त्र के अस्तिज वाणी आदि कहते हैं १ हे आत्मा
 १ नि २ तेरे अनुग्रह से दीप्यमान ३ जीव ईश्वर का योग करने वाले ४ योग बल
 से संपन्न ५ काम आदि से अपीडित हम सब ६, ७ पूर्णायु पर्यंत = तुम्हें ८ प्रा
 नामज्योति से युक्त ९ जीव ईश्वर का योग करने वाले १० योग बल को उन्न
 न्न करने वाले ११ काम आदि के हिंसक १२ अविनाशी को १३ प्राण रूप स
 मिध तथा इन्द्रिय शक्ति रूप द्रव्य से भले प्रकार प्रदीप्त करें १४ हे संसार
 रूप रात्रि हम १५ कल्याण पूर्वक १६ तेरे १७ पार को १८ प्राप्त करें निः
 प्रकार लोक में मनुष्यों के सो जाने पर चोर घर में प्रवेश करते हैं, उसी प्र
 कार इस योग यन्त्र में काम आदि प्रवेश करते हैं इस शंका से उसके निरा
 राण के लिये संसार रूप रात्रि की प्रार्थना है ॥ १८ ॥

सन्त्वमग्ने सूर्यस्य वर्चसा गथाः समृषीणां
 स्तुतेन। सम्प्रियेण धाम्ना समूहमायुषा संव
 र्चसा समप्रजया स शं रायस्पोषेणामिषीय। १८।
 १ अग्ने। २ त्वमे। ३ सूर्यस्ये। ४ वर्चसा। ५ समगथाः। ६ ऋषीणां। ७ स्तुते
 न। ८ सम्। ९ प्रियेण। १० धाम्ना। ११ सम्। १२ अहमा। १३ आयुषा। १४ संमिषी
 य। १५ वर्चसा। १६ सम्। १७ प्रजया। १८ सम्। १९ रायस्पोषेण। २० स शं। २१ ॥ १८ ॥

अथाधिदेवम् - उठकर उपस्थान करने के पीछे वैराट् आ जप करता
 है उसका मंत्र १॥

सन्त्वमित्यस्य (अवतारः ऋषिः - जगती छन्दः - अग्निदेवता) १८

पदार्थः - १ हे अग्नि २ तुम ऋषि के समय ३ सूर्य के ४ तेज से ५ संयुक्त हु
 ए हो ६ मंत्रों के ७ स्तोत्र से = स्तुति किये गये हो ८ प्रिय ९ आहुतों से १०
 संयुक्त हुए हो उसी प्रकार ११ मैं भी आप की कृपा से १२ आयु से १३ संयु

क होऊं १५ विद्या ऐश्वर्य आदि से युक्त तेज से १६ संयुक्त होऊं १७ पुत्र आदि से १८ संयुक्त होऊं १९ धन की पुष्टि से २० संयुक्त होऊं ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम् - भूतात्मा प्रार्थना करता है १ हे ब्रह्माग्नि २ तुम ३ मान सूर्य की ४ ज्योति से ५ संयुक्त हुए ६ मंत्रों से ७ स्तुत ईश्वर से ८ संयुक्त हुए ९ इन्द्रिय शक्ति समूह से १० संयुक्त हुए ११ में भी १२ अपमृत्यु दोष रहित आयु से १४ संयुक्त होऊं १५ ब्रह्म तेज से १६ संयुक्त होऊं १७ शिष्यों से १८ संयुक्त होऊं १९ योग लक्ष्मी से २० संयुक्त होऊं ॥ १६ ॥

अन्धस्थान्धो वो भस्मीय महस्थ महो वो भस्मी
योजस्थोर्जो वो भस्मीय रायस्पोषस्थ रायस्पोष
वो भस्मीय ॥ २० ॥

अंधः १ स्थः २ वः ३ अन्धः ४ भस्मीयः ५ महः ६ स्थः ७ वः ८ महः ९ भस्मी
यः १० ऊर्जः ११ स्थः १२ वः १३ ऊर्जः १४ भस्मीयः १५ रायस्पोषः १६ स्थः १७ वः १८
रायस्पोषः १९ भस्मीयः २० ॥ अथाधिदैवम् -

अन्धस्थेत्यस्य (पाद्मवल्क्यऋ० - भुरिगृहती छंद - गौर्देवता) १
पदार्थः - हे गौप्रोतुम १ दुग्ध घृत आदि रूप अन्न के उत्पन्न करने से अन्न
रूप २ हो ३ आपकी कृपा से आप से सम्बन्ध रखने वाले ४ दुग्ध घृत आदि रू
प अन्न को ५ सेवन करू तथा तुम ६ पूज्य ७ हो ८ तुम्हारे ९ दश वीर्य कौजि
न के नाम से हैं, तत्काल का दुग्ध, उष्ण दुग्ध, दुग्ध मण्ड (दूध का सार वा
माड) दही, दही का रस, दही का पिण्डा, मक्खन, घृत, फटा दूध, फटे
दूध का पानी, इन दशों को हम १० सेवन करें तथा तुम ११ वल रूप १२
हो १३ तुम्हारे १४ वल को १५ सेवन करें तुम १६ धन पुष्टि रूप १७ हो को
कि वैश्य दुग्ध घृत आदि के बेचने से धन को बढ़ाते हैं १८ तुम्हारी कृ

पा से १६ धनकी पुष्टि को २० भाग करू ॥ २० ॥

अथाध्यात्मम्— आत्मा कहता है हे चक्षु आदि तुम १ अन्न रूप २ हो ३ तुम से सम्बन्ध रखने वाले ४ इन्द्रिय शक्ति समूह रूप अन्न को ५ सेवन करू तुम स्वीकृत रूप ६ हो ७ तुम से सम्बन्ध रखने वाले ८ तेज को ९ सेवन करू तथा तुम १० वल रूप ११ हो १२ तुम्हारा १३ वल १४ सेवन करू १५ तुम धन पुष्टि रूप १६ हो १७ तुम्हारी १८ धन पुष्टि को २० सेवन करू इस मंत्र के बीच आत्मा में ३ इन्द्रियों कालय कहा ॥ २० ॥

रेवती रम दुःसस्मिन्यो नावस्मिनो ष्ठे स्मिं लोके
स्मिं क्षये । इहैव स्तु मा प गात ॥ २१ ॥
रेवती । अस्मिन् । योनौ । अस्मिन् । गोष्ठे । अस्मिन् । लोके ।
अस्मिन् । क्षये । रमध्वम् । इहैवै । स्तु । मा । अपगात ॥ २१ ॥

अथाधिदैवम्—

रेवती रित्यस्य (यज्ञ वल्क्य ऋषिः— उषा कृच्छन्दः— गौर्देवता) १
पदार्थः— १ हे धनवान् गौश्रो २ इस ३ दृश्य मान आनि होत्र के दूधनिका
लने के स्थान में तथा दोहन के पीछे ४ इस ५ यज्ञ मान सम्बन्धी गो वार में
तथा ६ इस ७ यज्ञ मान की दृष्टि में तथा रात्रि के समय ८ इस ९ यज्ञ मान के
गृह में १० कीड़ा करो ११ यहाँ १२ ही अर्थात् यज्ञ मान के गृह में ही १३
रहो १४ १५ अन्यत्र मत जाओ ॥ २१ ॥

अथाध्यात्मम्—

१ हे शम् आदि धन वाले वाक् आदि तुम ३ इस ४ जीव रूप परा शक्ति में
तथा ५ इस ६ इन्द्रियों के आलय में तथा ७ इस ८ शरीर में तथा इस ९
संसार में १० कीड़ा करो ११ यहाँ १२ ही अर्थात् संसार में ही १३ रहो १४
१५ समाधि आदि में मत जाओ ॥ २१ ॥

सुखं हि तस्मिन् विश्वरूप्यूर्जामाविश गौपत्येन ।

उपत्वाग्नेदिवेदिवेदोषावस्तद्धियावयम्। नसो

भरन्त एमसि २२

विश्वरूपी१। स०^२हिता३। अ०^४सि। उज्जी५। गोपत्येन६। मो०^७आ
विश८। दोषावस्तः९। अग्ने१०। वयं११। दिवेदिवे१२। धियो१३। नमैः१४। त्वो
भरन्तैः१५। उपैमसि॥ २२॥ अथाधितैवम्—

दसकंडि
कामें दो मंत्र हैं, गौ के स्पर्श कामंत्र १ गार्हपत्य के उपस्थान कामंत्र २॥
संहितेत्यस्य (वैष्वा मित्रो मधुच्छंदा ऋषिः—भुरिगासुरी गायत्री छंदः—गौर्दे१)
उपत्वेत्यस्य (तथा — गायत्री छंदः—अग्निर्दे२)

पदार्थः—हे गौ तुम १ विश्वरूपी २ दुग्ध द्युत रूप दहि के देने से यन्त्र क-
र्मों से संयुक्त अथवा भले प्रकार दित करी ३ दौ ४ दुग्ध आदि रस तथा ५
गो स्वामित्व द्वारा ६ ७ मेरे घर में प्रवेश करो अर्थात् तुम्हारी कृपा से बहुत
तम प्रकार के रस और गो स्वामित्व को प्राप्त करूँ ८ हे रात्रि में वसन शील ९
गार्हपत्य अग्नि १० हम ११ प्रतिदिन १२ ब्रह्मा युक्त बुद्धि के द्वारा १३
नमस्कार अथवा अन्न दहि को १४ तृणादन करते १५ तुम को १६ प्राप्त करें
॥ २२॥

अथाध्यात्मम्—आत्मा कहता है हे बुद्धि तुम १ विश्व-
रूपी तथा २ योग मार्ग में भले प्रकार दित करी ३ दौ ४ ब्रह्मज्ञान रूप-
रस ५ तथा इन्द्रियों के स्वामित्व सहित ६ सभ आत्मा में ७ सब ओर से प्र-
वेश करो, प्राण कहते हैं ८ हे रात्रि रूप देह में वसन शील ९ आत्म प्रति-
दिव १० हम ११ प्रतिदिन १२ ब्रह्म बुद्धि द्वारा १३ अन्न रूप १४ तुम को १५
प्रसन्न में धारण करते १६ प्राप्त करें ॥ २३॥

राजन्त मध्वराणां गोपोमृतस्य दीदिवम्।

वर्द्धमाणं स्वेद मे २३

राजन्तम्। अध्वराणाम्। गोपोमृतस्य। दीदिवम्। स्वे

देमोवर्द्धमाणा ॥ २३ ॥ अथाधिदैवम्—

राजन्तमित्यस्य (वैश्वामित्रो मधुच्छंदाकरः— गायत्री छं— अग्निर्दे) १
पदार्थः हमजिस १ दीप्यमान २ यज्ञों के ३ रक्षक ४ सत्यवचन रूप
त के ५ प्रकाशक ६ हमारे ७ गृह में ८ चातुर्मास्य सोम पशु आदि यज्ञ
द्वारा वृद्धि पाने वाले अग्नि को प्राप्त करें ॥ २३ ॥ अथाध्यात्मम्—
हम इस १ ब्रह्मतेज से युक्त २ ज्ञान यज्ञों में ३ इन्द्रियों के रक्षक ४ ब्रह्म
अग्नि के ५ प्रकाशक ६ आत्मा रूप ७ विष्णु में ८ वृद्धि पाने वाले आत्मानि
को प्राप्त करें ॥ २३ ॥

सनः पिते वसून् वेगे सृपाय नो भव। स च त्वा
नः स्वस्तये ॥ २४ ॥

अग्ने। सो। नै। सृपाय नः। भव। इव। पिता। सूनवानः। त
स्तये। आसै च त्व ॥ २४ ॥ अथाधिदैवम्—

सन इत्यस्य (वैश्वामित्रो मधुच्छंदाकरः— विराड् गायत्री छं— अग्निर्दे) १
पदार्थः— १ हे गार्हपत्य अग्नि २ वह धूर्वाक्त गुण से युक्त तुम ३ हम
को ४ सुख से प्राप्त होने के योग्य ५ हजियै ६ जैसे ७ पिता ८ पुत्र के लिये
सुख से प्राप्त होता है ९ हमारे १० क्षेम के लिये ११ इस कर्म से युक्त
जिये ॥ २४ ॥ अथाध्यात्मम्— आत्मा कहता है १ हे ईश्वर

अग्नि २ विष्णु रूप तुम ३ हम योगियों के लिये ४ महा विष्णु रूप जो कि ब्रह्म
विष्णु महेश का अण्व है ५ हजियै ६ जैसे ७ पिता ८ पुत्र के लिये सुख
पहोता है ९ हमारे १० मोक्ष रूप कल्याण के लिये ११ उस से युक्त हो
ये। क्योंकि जीव ईश्वर की एकता में ही मुक्ति है ॥ २४ ॥

अग्ने त्वन्नोन्तम उत चाता शिवो भवा वरुध्यः। वसु
रग्निर्वसु अवा अच्छानक्षिद्युमत्तमं रयिन्दा ॥ २५ ॥

अच्छ। अग्ने। वसुः। अग्निः। वसु अवा। त्वे। नै। अन्तमः।
 उत। ज्ञाता। शिवे। वरूथ्यः। आभवे। अच्छ। नक्षि। धुम-
 मत्तमम्। रिये। दो॥ ३५॥ अथाधिदैवम्-

अग्नेत्वमित्यस्य (सुवन्धुर्ऋषिः - भुविगृहती छन्दः - अग्निर्देवता) १

पदार्थः - १ हे निर्मल स्वभाव २ गार्ह पत्य अग्नि ३ बलरश्मि रूप ४ आ-
 हवनीय आदि रूप से गमन शील ५ धनदान में विख्यात ६ तुम ७ हमारे
 ८ समीपवर्ती ९ और १० रक्षक ११ शान्त रूप १२ पुत्रपौत्र गृह के लिये
 हितकारी १३ हजियै १४ हे निर्मल स्वभाव १५ हमारे होम स्थान में आ-
 ओ १६ अति दीप्ति से युक्त १७ धन को १८ दो॥ ३५॥

अथाध्यात्मम् - १ हे माया मल से रहित २ ब्रह्माग्नि ३ परा ब्रह्मा वि-
 ष्णु महेश रूप ४ माया विकार के भक्षक अर्थात् उसको अपने आत्मा में
 लय करने वाले ५ विष्णु आदि रूप से कीर्ति पाने वाले ६ तुम ७ हमारे ८
 अन्त में शेष रहने वाले ९ और १० संसार से रक्षा करने वाले ११ आनन्द
 स्वरूप १२ संसारजय के लिये निपरिधि रूप कुवच के योग्य १३ हजियै
 १४ हे निर्मल १५ हम को व्याप्त कीजियै १६ पूर्ण ब्रह्म तेज से युक्त १७ यो
 गलक्ष्मी को १८ दीजियै॥ ३५॥

तन्वा शोचिष्ठ दीदिवः सुन्नाय नूतमी महः सखि

भ्यः। सन्नो बोधि श्रुधी हव सु रूपाणो घायतः सम-
 स्मात्॥ ३६॥

शोचिष्ठ दीदिवः। तमे। त्वा। सखिभ्यः। सुन्नाय। नूतम।
 ईमहे। सः। अ। नै। बोधि। दौ। हवम। श्रुधि। समस्मात्।
 अघायत। नै। उरूथ्य॥ ३६॥ अथाधिदैवम्-

तन्वेत्यस्य (सुवन्धुर्ऋषिः - सगृह गृहती छन्दः - अग्निर्देवता) १

पदार्थः १ हे अत्यंत दीप्तिमान २ हे सब के प्रकाशक ३ उस पूर्वोक्त गुण से युक्त ४ तुम को मित्रों के लिये ५ तथा सुख के लिये ७ निश्चय पूर्वक ८ याचना करते हैं ९ वह १० विष्णु रूप तुम ११ हम से व को को १२ जानों १३ हे रुद्र रूप १४ हमारे आवाहन को १५ सुनो १६ सब १७ प्राजुओं से १८ हम को १९ रक्षा करो ॥ २६ ॥

अथाध्यात्मम्— १ हे ज्योति स्वरूप २ ब्रह्मांड के प्रकाशक परमेश्वर ३ अविनाशी ४ तुम को ५ वाक् आदि के उपकार के लिये ६ तथा मोक्ष सुख के लिये ७ निश्चय पूर्वक ८ याचना करते हैं ९ वह १० विष्णु रूप ११ तुम हम को १२ जानों १३ हे रुद्र रूप १४ हमारे आवाहन को १५ सुनो १६ सब १७ काम प्राजु से १८ हम को १९ रक्षा करो ॥ २६ ॥

इड एह्यदित एहि काम्या एत। मयि वः काम धरणम् भूयात् २७
इडे। एहि। अदिते। एहि। काम्याः। एत। वः। काम धरणम्। मयि। भूयात् ॥ २७ ॥

अथाधिदैवम्— इस कांडिका में दो मंत्र हैं, गौ के पास जाने का मंत्र १ गौ के स्पर्श का मंत्र २ ॥

इड एहीति (श्रुति वन्द्य ऋषिः— विराड् गायत्री छन्दः— गौ देवता) १
काम्या एतेति (तथा — तथा — तथा) २

पदार्थः १ दुग्ध आदि द्वारा मनुष्यों को भूमि की समान पालन करने से युक्ती रूप हे गौ २ यहां आओ ३ घृत द्वारा देवताओं को आदिति की समान पालन करने से अदित रूप हे गौ ४ होम के स्थान में आओ ५ सब से चाहने योग्य हे गौ ६ यहां आओ ७ तुम्हारी रूपा से तुम्हारा ८ अपेक्षित फलों का धारण करना अथवा तुम्हारी प्रीति भाव से मुझ यजमान में ९ होवें ॥ २७ ॥

अथाध्यात्मम्— आत्मा कहता है १ हमें हा वाक् २ आओ ३ हे जीव रूप पर शक्ति ४ आओ ५ सब से चाहने योग्य हे इन्द्रियो ६ ज्ञान यज्ञ के स्थान ही दीक्षा को प्राप्त करो ७ तुम्हारी ८ इच्छा का धारण ९ मुझ आ-

त्मा में १० होवैनकि माया के पदार्थों में ॥ २७ ॥

सोमान् १० स्वरणं ११ पुष्टिं १२ ब्रह्मणस्पते । कक्षी

वन्तं यं १३ शौशिजः ॥ २८ ॥

१० वन । ११ ब्रह्मणस्पते । १२ तो । सोमानं । स्वरणम् । कृष्टुहि । यं । कक्षी
शौशिजः ॥ २८ ॥ अथाधिदैवम् - आहवनीय को देखता य-
हां से ईश्वरचातक जप करता है ॥

सोमानमिति (मेधातिथिः - गायत्री छंदः - ब्रह्मणस्पतिर्देवः) १

पदार्थः १ - हे ब्रह्मा विष्णु महेश रूप २ हे वेद के रक्षक परमेश्वर तुम ३
उस यज्ञमान को ४ सोम यज्ञ का करने वाला और ५ स्तुति रूप शब्द से युक्त
ई करौ ७ जो ८ पाप मय होता ई स्वर्ग की इच्छा से युक्त है ॥ २८ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे विदेवरूप २ वेद के रक्षक परमेश्वर तुम ३ उस
यज्ञमान को ४ ब्रह्म में आत्म प्रति विंव को लय करने वाला ५ अहं ब्रह्मास्मि
इस शब्द से युक्त करौ ७ जो कि ८ पाप मय होता ई योग की इच्छा से युक्त है
॥ २९ ॥

योरैवान्यो अमी वह्वा वसुवितुष्टिर्वर्द्धनः । सः

सिषक्तु यस्तुरः २९

यूः । रेवाने । यूः । अमी वह्वा । वसुवित । पुष्टिर्वर्द्धनः । यः । तुरः ।

सः । नः । सिषक्तु ॥ २९ ॥ अथाधिदैवम् -

योरैवानित्यस्य (मेधातिथिः - गायत्री छंदः - ब्रह्मणस्पतिर्देवः) १

पदार्थः - १ जो महा नारायण २ महा लक्ष्मी का पति है ३ जो ४ संसार
रोग का नाशक ५ धन वादीसि का दाता ६ भक्ति ज्ञान रूप पुष्टि का वर्द्ध-
ने वाला है ७ जो ८ ब्रह्मा विष्णु महेश रूप है ई वह १० हमको ११ से-
वन करौ ॥ २९ ॥

अथाध्यात्मम् - १ जो महा विष्णु २ ब्रह्माग्नि
और पर शक्ति का स्थान है ३ जो ४ जन्म मृत्यु रूप रोग का नाशक ५ वै

कुंठकादाता अथवा अपने को प्राप्त करने वाला ६ विष्णु भावनाम पुष्टिका व
हाने वाला है ७ जो ८ त्रिदेव रूप धारी है ९ वह १० हम को ११ सेवन करे ॥ २६ ॥

मानः श ७ सो अर रूपो धूर्तिः प्रण ड न र्त स्य । रक्षा

णो ब्रह्मणस्पृते ३०

ब्रह्मणस्पृते १ अर रूपः २ मर्त्तस्य ३ शंसः ४ धूर्तिः ५ नः ६ मा ७ प्रणका
नः ८ अर रक्ष ॥ ३० ॥ अथाधिदैवम्

मान इत्यस्य (सत्य धृति वीरुणि कर् ० - निचृद्वायवी च्छं - ब्रह्मणस्पृतिर्दे १)

पदार्थः - १ हे वेद के रक्षक महा विष्णु २ कभी हविदानन करने वाले ३
मनुष्य का ४ अनिष्ट चिंतन और ५ हिंसा ६ हम को ७ मत ८ सताओ वा
नाश मत करो ९ तुम हम को १० चारों ओर से रक्षा करौ ॥ ३० ॥

अथाध्यात्मम् - १ वेद के रक्षक महा विष्णु २ आत्मानि में हो मन
करने वाले ३ विषया सक्त होने से मरण प्रील मन का ४ अनिष्ट चिंतन
५ और हिंसा ६ हम योगिजनों को ७ मत ८ विनाश करौ ९ तुम हम योगी
रूढ भक्तों को १० चारों ओर से रक्षा करौ ॥ ३० ॥

महित्रीणामवोस्तु द्युक्षस्मि त्वस्यार्थमाः ॥

दुरा वर्ष वरुणस्य ३१

मित्रस्य १ अर्थमा २ वरुणस्य ३ जीणामा ४ महि ५ द्युक्षम् ६ दुरा वर्ष
मा ७ अवो ८ अस्तु ॥ ३१ ॥ अथाधिदैवम्

महित्रीणमित्यस्य (सत्य धृति वीरुणि कर् ० - विराड्वायवी च्छं - आदित्यदि १)

पदार्थः - १ मित्र २ अर्थमा ३ वरुण ४ तीनों देवताओं से सम्बध रखने वाली
५ वडी ६ सुवर्णा आदि द्रव्यो से युक्त ७ तिस्कारन पाने वाली ८ रक्षा ९ हम को
प्राप्त हो ॥ ३१ ॥ अथाध्यात्मम् - १ प्राण २ मन ३ अपान ४ तीनों से स
बध रखने वाली ५ वडी ६ ब्रह्म तेज से युक्त ७ काम आदि से तिस्कारन पा

नेवाली८ रक्षा ९ हम को प्राप्त हो ॥ ३१ ॥

नहि तेषां ममाचन नाद्व सुवारणेषु । ईशै रि

पुरघशं सः ॥ ३२ ॥

अमृ० १ तेषाम् २ अघशं सः ३ रिपुः ४ नहि । ईशै ५ रणेषु ६ वा ।

अध्वसु ७ चन ८ न ॥ ३२ ॥ अथाधिदैवम्—

ओं नहि तेषामित्यस्य (सत्य धृति वीरुणिर्ऋ० निचृद्वायची छं० आदित्यो दे०) १

पदार्थः १ ग्रहों के मध्य २ उन मित्र अर्थमा वरुणा देवताओं से रक्षित

यजमानों का ३ सदा अनिष्ट चिंतक ४ शत्रु ५, ६ समर्थन ही होता है ७

युद्धों में ८ तथा ९ कर्म उपासना ज्ञान के मार्गों में १० भी ११ समर्थन ही

होता ॥ ३२ ॥

अथाध्यात्मम्— १ इंद्रियों के स्थानों में २ उन प्राण अपान म

न का ३ अभ्युभचाहने वाला ४ शत्रु अज्ञान ५, ६ समर्थन ही होता है ७

काम आदि के युद्धों में ८ अथवा ९ योग मार्गों में १० भी ११ समर्थन ही होता है ३२

तेहि पुत्रा सो अदितेः प्रजीव से मर्त्यिय । ज्योतिर्य

च्छन्त्यजस्वम् ३३

हि० १ तैः २ अदितेः ३ पुत्रासः ४ मर्त्यिय ५ अजस्वम् ६ ज्योतिः ७ प्रजीव से ।

यच्छन्ति ॥ ३४ ॥ अथाधिदैवम्—

ओं ते हीत्यस्य (वारुणिः सत्य धृतिर्ऋ० विराड् गायत्री छं० आदित्यो दे०) १

पदार्थः १ जिस कारण २ वे ३ देवता के ४ पुत्र मित्र अर्थमा वरुणा नाम ५ यज

मान के अर्थ ६ असंख्य ७ तेज को ८ दीर्घायु के लिये ९ देते हैं ॥ ३३ ॥

अथाध्यात्मम्— १ जिस कारण २ वे ३ जीवरूप पराशक्ति के ४ पुत्र मन

प्राण अपान ५ यजमान के अर्थ ६ परि पूर्ण ७ ब्रह्म ज्योति को ८ मोक्ष के लि

ये ९ देते हैं ॥ ३३ ॥

कदाचन स्तरी रसिनेन्द्र सश्र सिद्धाशुषे। उपो
पेन्नु मेघवन भूय इन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते ३४
इन्द्र। कदाचन। स्तरीः। नः। अस्ति। दाशुषे। उप। इन्नु। स
श्रसि। मघवन। ते। देवस्य। भूय इत। दानम्। नुदते। उपे
पृच्यते ॥ ३४ ॥ अथाधिदैवम्-

ओं कदाचनेत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ०- पथ्या वृहती छं०- इन्द्रो देवता) १
पदार्थः १ हे परमैश्वर्य से युक्त महा नारायण तुम २ कभी ३ हिंसक ४
नहीं ५ हो क्योंकि सुद्ध सत्व रूप हो ६ सर्वस्व देने वाले भक्त के लिये ७ ब्र-
ह्मा विष्णु महेश रूप को ८ इच्छा पूर्वक ९ धारण करते हो १० हे ब्रह्मा
विष्णु महेश रूप धारी ११ तुम १२ ज्योति स्वरूप का १३ वज्र त वड़ा १४ दान
धर्म काम अर्थ मोक्ष नाम १५ श्री ग्रीही १६ यजमान को प्राप्त होता है ॥ ३४ ॥

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ॥ धियो यो नः

प्रचोदयात् ॥ ३५ ॥

सवितुः। वरेण्यम्। देवस्य। भर्गः। यः। नः। धियः। प्रचोद-
यात्। तत्। धीमहि ॥ ३५ ॥

ओं तत्सवितुरित्यस्य (विश्वामित्र ऋ०- निचद्रायत्री छं०- सविता देव) १
ब्रह्मोपासना प्रदार्थः- जो ब्रह्म १ विराट् के आत्मा सूर्य का २ प्रार्थनीय
है ३ राम कृष्ण आदि अवतारों से जीड़ा करने वाले असुरों के जीतने वा-
ले साकार ब्रह्म के ४ प्रादुर्भाव) रमणीय वासि की प्राप्ति का कारण अथवा आ-
दि ज्योति है ५ जो ६ हमारी ७ प्रज्ञा शक्ति मन प्राण और मानस सूर्य को ८
प्रेरण करे वा करता है ९ उस सत्य ज्ञान आनंद आदि रूप वाले वेदान्त-
से सिद्ध होने वाले ब्रह्म को १० अपनी आत्मा में ध्यान करते हैं ॥ ३५ ॥

परितेदूढ भोरथोस्मा थं २ ॥ अश्नोतु विश्वतः

येन रक्षसि दाशुषः ३६

तो दूडभुः १ रथः २ अस्मा ३ विश्वते ४ पर्यप्नातु ५ येन ६ दाशुषः ७ रक्षसि ॥ ३६ ॥

ओं परित इत्यस्य (वामदेव ऋ० निचद्रायत्री छं० - अग्निदेवता) १

पदार्थः— हे ब्रह्माग्नि १ तेरा २ ब्रह्मा विष्णु महेश भगवती रूप ३ रथ ४ हम यज्ञ मानों को ५ सब दिशाओं में ६ सब ओर से व्याप्त करो ७ जिस देव मय रथ से ८ यज्ञ मानों को ९ रक्षा करते हो ॥ ३६ ॥

वृहद उपस्थान समाप्त हुआ ॥ अथ क्षुल्लकोपस्थान मासुरिदृष्टम्—

भूर्भुवः स्वः सुप्रजाः प्रजाभिः स्या ३७ सुवीरौ वीरैः

सुपोषः पोषैः १ नर्य्य प्रजाम् नै पाहि २ शं स्य पशू

नै पाह्य धूर्य्य पितु नै पाहि ३ ७

भूः १ भुवः २ स्वः ३ प्रजाभिः ४ सुप्रजाः ५ वीरैः ६ सुवीरः ७ पोषैः ८ सुपोषः ९ स्या १० नर्य्य ११ मे १२ प्रजाम् १३ पाहि १४ शं स्य १५ मे १६ पशू १७ पाहि

अथर्य्य १८ मे १९ पितु २० नै पाहि ॥ ३७ ॥

अथाधिदैवम्— अग्नि होत्र करने के पीछे उपस्थान करता है उस

का मंत्र १ यज्ञमान दूसरे ग्राम को जाना चाहता गाह पत्य आहवनीय

और दक्षिणाग्नि का उपस्थान करता है उसके मंत्र २ ३ ४ ॥

ओं भूर्भुवरित्यस्य (वामदेव ऋ० ब्राह्म्यु णिक छंद - अग्निदेवता) १

पदार्थः— हे गाह पत्य अग्नि तुम १ २ ३ त्रिलोकी रूप हो आप की कृपा से मैं ४ बंधु भृत्य आदिके द्वारा ५ अनुकूल प्रजावाला होऊँ ६ वीरशुत्रों के द्वारा ७ शास्त्र मार्ग पर चलने वाली शुभ संतानवाला होऊँ ८ सबर्ण आदिकी पुष्टि से ९ वृद्धतधन से युक्त १० होऊँ ११ हे जीव आत्माओं के हितकारी गाह पत्य १२ मेरी १३ संतान को १४ रक्षा करो १५ हे अनुष्ठान

करनेवालों से प्रशंसा योग्य आहवनीय १६ मेरे १७ पशुओं को १८ रक्षा
करे १९ हे दक्षिणाग्नि २० मेरे २१ अन्न को २२ रक्षा करो ॥ ३७ ॥

अथाध्यात्मम् — भूतात्मा कद्वता है, हे ब्रह्मा नितम् १३, ३ विलो
की रूप अर्थात् विराट् स्वरूप हौ ४ में प्राणों के द्वारा ५ योगानुष्ठान के यो
ग्य प्राणों से युक्त होऊं ६ प्राणों से प्राप्त इन्द्रियों के द्वारा ७ जितेन्द्री हो
ऊं ८ योगैश्वर्य पुष्टि के द्वारा ९ योग भ्रंश से रहित १० होऊं ११ हे जीवों
के हितकारी नर १२ मेरे १३ प्राण को १४ रक्षा करो १५ हे स्तुति योग्य नार
यण १६ मेरी १७ इन्द्रियों को १८ संसार से रक्ष करो १९ जीव भाव से नर
भाव प्राप्त करने वाले हे जीवात्मा २० मेरे २१ अन्न रूप देह को २२ रक्षा क
रो अर्थात् योग मार्ग में विघ्नकारक भोजन से रक्षा करो ॥ ३७ ॥

आर्गन्म विश्ववैद समस्मभ्यं वसुवित्तमम् अग्ने
सम्मादुभिद्युन्नमभिसह आयच्छस्व ॥ ३८ ॥
सप्रोत। अग्ने। विश्ववैद सम। वसुवित्तमम्। अस्यार्गन्म। द्यु
न्नम। सह। अस्मभ्यम्। अभि। आयच्छस्व ॥

अथाधिदैवम् — आहवनीय के उपस्थान का मन्त्र।
ॐ आर्गन्मेव्यस्यसिन्धिरर्ऋ० — अनुष्टुप छंद० — आहवनीयानिर्दे० १
पदार्थः — १ हे भले प्रकार दीप्यमान नर आहवनीय अग्नि इस तुम् ३ सर्व
ज्ञ अथवा संवधनों के स्वामी ४ धन के बड़े दाता को उद्देश करके ५ दूसरे गा
व से आये ६ यश ७ बल को ८ हमारे लिये ९ सब ओर से १० दीजिये वा प्राप्त
करा दिये ॥ ३८ ॥

अथाध्यात्मम् — १ हे विलोकेश २ नारायण इस तुम् ३ सर्वज्ञ ४
लक्ष्मीपति को ५ भक्ति भाव से सन्मुख प्राप्त हुआ ६ यश ७ और योग बल
को ८ हमारे अर्थ ९ सब ओर से १० दीजिये ॥ ३८ ॥

अयमग्नि गृह पति गार्हपत्यः प्रजायावसुवित्तमः

अग्ने गृहपतेभिद्युम्नमभिसह आयच्छस्व ॥ ३६ ॥

अयम् । अग्निः । गृहपतिः । प्रजायाः । वसुवित्तमः ।

गृहपते । अग्ने । द्युम्नम् । अभि । आयच्छस्व । सहः । अभि ॥ ३६ ॥

अथाधिदैवम् - गार्हपत्य के उपस्थान का मंत्र ॥

ओं अयमग्नि रित्यस्य अक्षुरिर्जरः भुरिगृहतीक्ष्णं - गार्हपत्याग्निर्देवता १

पदार्थः - १ यह २ गार्हपत्य ३ अग्नि ४ गृह का रक्षक ५ पुत्र पौत्र आदि के लिये ६ धन का बड़ा दाता है ७ हे गृहपति ८ अग्नि ९ धन को १० सब ओर से ११ दीजिये १२ बल को १३ सब ओर से दीजिये ॥ ३६ ॥

अथाध्यात्मम् - भूतात्मा जीवात्मा से मार्थना करता है १ यह २ क्षेत्र

ज्ञरूप ३ जीवात्मा ४ क्षेत्रपति ५ आरा के अनुग्रह अर्थ ६ इन्द्रिय रूप धन का अतिशय प्राप्त कराने वाला है ७ हे गृहपति आत्माग्नि ८ शमादिरूप धन को १० सब ओर से ११ दीजिये १२ बल को १३ सब ओर से दीजिये ॥ ३६ ॥

अयमग्निः पुरीषो रयिमान् पुष्टिर्वर्द्धनः । अग्ने पुरी

ष्याभिद्युम्नमभिसह आयच्छस्व ४०

अयम् । अग्निः । पुरीषः । रयिमान् । पुष्टिर्वर्द्धनः । पुरीषः ।

अग्ने । द्युम्नम् । अभि । आयच्छस्व । सहः । अभि ॥ ४० ॥

अथाधिदैवम् - दक्षिणाग्नि के उपस्थान का मंत्र ॥

ओं अयमग्निः पुरीष इति आसुरिर्जरः निचदसृष्टुषं - दक्षिणाग्निर्देवता १

पदार्थः - १ यह २ दक्षिणाग्नि ३ पशुओं का हित कारी ४ धनवान् ५

पुष्टि का बढ़ाने वाला है उस से याचना करता हूँ ६ हे पशुहित कारी ७

अग्नि तुम ८ अन्न को ९ सब ओर से १० दीजिये ११ बल को १२ सब ओर से दीजिये ॥ ४० ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अथाध्यात्मम्- भूतात्मानरसे प्रार्थना करता है १ यह २ नरोत्तम
नर ३ जीवों का हितकारी ४ योग सम्पत्तिमान ५ पुष्टि बढ़ाने वाला है उस
से याचना करता हूँ ६ देवीवों के हितकारी ७ नरतम ८ योग सम्पत्तिको
९ सब ओर से १० दीजिये ११ योग किया की सामर्थ्य १२ सब ओर से दी
जिये ॥ ४० ॥

गृह्णामाविभीतमावै पद्ममूर्जम्बिभ्रत एमसि। ऊर्ज
म्बिभ्रदः सुमनाः सुमेधा गृह्णानैमिमनसा मोदमानः ४१
गृह्णामा विभीतमा विपद्मम् एमसि। ऊर्जम्बिभ्रत
सुमनाः सुमेधाः मनसा मोदमानः ऊर्जम्बिभ्रतावै
गृह्णानै। ऐसि ॥ ४१ ॥

अथाधिदैवम्- दूसरे गांव से घर में आकर जप करने का मंत्र ॥
ॐ गृह्णामेत्यस्य आसुरिर्ऋत-आषी पंक्ति श्रद्धा वास्तु राग्नि देवता १
पदार्थः- १ हे गृह्णामि मानी देवता ओ तुम २ मत ३ भय करो यह जान
कर कि हमारा रक्षक यजमान गया ४ मत ५ कांपो ६ वायु आकाश वि
ष्णु और शिव की रक्षा में ७ अन्न और रस को ८ धारण करो ९ शुभ मन
वाला १० शोभन बुद्धि से युक्त ११ दुःख रहित मन के द्वारा १२ हर्षित १३
अन्न और रस को १४ धारण करता मैं भी १५ तुम १६ गृह्णो मे १७ आता
हूँ ॥ ४१ ॥

अथाध्यात्मम्- सुषुम्ना मार्ग से भृकुटि स्थान को
जाता जप करता है १ हे इन्द्रिय मन बुद्धि रूप गृह्णो तुम २ मत ३ डरो
जीवात्मा जावेगा ४ मत ५ कांपो ६ प्राण वायु और त्रिदेव रूप आत्मा में
७ इन्द्रिय शक्ति रूप अन्न को ८ धारण करो ९ शोभन मन वाला १० सु
भव बुद्धि से सम्पन्न ११ ब्रह्म रूप मन के द्वारा १२ ब्रह्मान से युक्त मैं भी १३
आनंद रस को १४ धारण करता १५ तुम १६ गृह्णो मे १७ आता हूँ ॥ ४१ ॥

येषामुद्धे तिप्रवसन्त्येषुसौमनसोःबुद्धः।

१ गृहानुपह्वयामहेतेनोजानन्तुजानतः४२

प्रवसन्। येषाम्। अद्धेति। येषु। बुद्धः। सौमनसः। गृहानु
उपह्वामहे। ते। जानेतः। नैः। जानन्ते॥ ४२॥ अथाधिदैवम्

ॐयेषामित्यस्य (शयुर्ऋ०-अनुष्टुप्छन्द-वास्तुपतिरग्निर्दे०) १

पदार्थः- १ दूसरे देश में जाता यजमान २ जिन गृहों की ३ सेम सदा
चाहता है ४ जिन गृहों में यजमान की ५ वज्रत ६ प्रीति है हम उन ७ गृ
हामिमानों के देवताओं को ८ आवाहन करते हैं ९ वे गृह देवता १० हमारे
उपकार को जानते ११ हम को १२ जानो कि यह कृतघ्न नहीं है ॥ ४२ ॥

अथाध्यात्मम्- प्राणजीव और ईश कहते हैं १ योगी समाधिको
करता २ जिन मन बुद्धि इन्द्रिय के आलयों का ३ उत्थान अवस्था में स्म
रण करता है ४ जिन इन्द्रियों के स्थानों में उसकी ५ अत्यंत ६ प्रीति
है ७ उन इन्द्रियों के स्थानों को ८ आवाहन करते हैं ९ वे १०, ११ हम स
र्वज्ञों को १२ जानो ॥ ४२ ॥

उपह्वताह गाव उपह्वता अजावयः। अथो

अन्नस्य कीलाल उपह्वतो गृहेषु नः सेमायवः

शान्त्यै प्रपद्यो शिवं प्रगमं प्रशंयोः प्रशंयोः ५३

इह। नः। गृहेषु। गावः। उपह्वताः। अजावयः। उपह्वताः। अथ
अन्नस्य। कीलालः। उपह्वतः। सेमायः। शान्त्यै। वः। प्रपद्ये
उ। शंयोः। शिवं॥ प्रशंयोः॥ प्रगमं॥ ४३॥ अथाधिदैवम्-

ॐउपह्वता इत्यस्य (शयुर्वर्हस्पत्यऋ०-भुरिजगतीछन्द-वास्तुपतिर्दे०) १

पदार्थः १ यहा २ हमारे ३ गृहों में ४ गौवैल ५ सुख से रह रहे इस प्र

कार आजादिये गये ६ भेड़ वकरिया ७ सुख से रहें इस प्रकार आजादी

गर्हं ८ तथा ९ अन्नका १० रसविशेष ११ वृद्धि पाशो इत्यप्रकारं हम से आत्मादि
या गया हे ग्रहो १२ विद्यमान धन की रक्षा केलिये १३ मेरे सब अग्निष्ट की शान्ति
केलिये १४ तुम को १५ प्राप्त करता हूं १६ हे विष्णु वा हे महेश्वर १७ सायुज्य चा
हने वाले भक्त का १८ कल्याण हो १९ कैवल्य मोक्ष चाहने वाले योगी को २०
ब्रह्मानन्द प्राप्त हो ॥ ४३ ॥ उपस्थान के मंत्र समाप्त हुए ॥

अथाध्यात्मम् १ इस उत्थान अवस्था के मध्य २ हमारे ३ देहांगों में ४
कर्म उपासना ज्ञान की प्रकाशक बुद्धि वृत्तियां ५ समीप प्राप्त की गई ६ आ
त्मा की रक्षक ज्ञानेन्द्रियां ७ समीप प्राप्त की गई ८ तथा ९ १० कर्मेन्द्रिय स
हित भूतात्मा ११ चैतन्य के वश में प्राप्त किया गया हे देह के अंगों १२ तप की
रक्षा केलिये १३ प्राप्ति के अर्थ १४ तुम को १५ प्राप्त करता हूं १६ हे विष्णु वा हे
योगेश्वर शंकर १७ योगेश्वर्य सुख चाहने वाले आरुरुक्षु योगी का १८ कल्या
ण हो १९ कैवल्य मोक्ष चाहने वाले योगारूढ योगी को २० मोक्ष सुख हो ॥ ४३ ॥

अथचातुर्मास्य मंत्राः

प्रघासिनो हवामहे मरुतंश्चरिशादसः । करम्भेण स

जोषसः ॥ ४४ ॥

रिशादसाः । करम्भेण । सजोषसः । च । प्रघासिनः । मरुतः । हवामहे

॥ ४४ ॥ **अथाधिदैवम्** -

ॐ प्रघासिन इत्यस्य (प्रजापतिर्ऋ० गायत्री छ० मरुतो दे०) १

चातुर्मास्यनाम यज्ञाग्रोक्त चार पर्वरूप हैं, वैश्वदेव, वरुणप्रघा
स, साकमेध, शुनाशीरीय, तद्वावरुणप्रघासनाम दूसरे पर्व में दक्षिण उ
त्तरनाम दोनों वैदी के इविस्थापन करने पर आवाहन करें ३

पदार्थः १ वैरुत हिंसा को दूर करने वाले अथवा हिंसकों को नाश करने
वाले २ प्रमथन करने वाले ३ चलाते हैं ४ चलाते हैं ५ इवि विशेष के मतक

६ मरुतगणों को ७ आवाहन करते हैं ॥ ४४ ॥

अथाध्यात्मम्- १ कामरुतहिंसा के निवर्तक अथवा काम आदिके नाशक २ ब्रह्माग्निपराब्रह्माविष्णु महेश से ३ समान मीति वाले ४ तथा विराटरूप अन्न के भक्षक ५ प्राणों को ७ आवाहन करते हैं ॥ ४४ ॥

यद्रामेयदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रियो यदेनश्च

कुमावयुमिदुन्तद्वयजामृहे स्वाहा ॥ ४५ ॥

वयम्। ग्रामे। यते। एनः। अरण्ये। यते। सभायां। यते। इन्द्रियो। यते। यते। आच। केम। तिते। इदम्। अवयजामहे। स्वाहा। ४५

अथाधिदैवम्- दक्षिणाग्नि में करम्भ पात्रों को होमता है उसका मंत्र ओं यद्राम इत्यस्य (प्रजापति ऋ० त्वाडनुष्टुप् छं० मरुतो देवता) १

पदार्थ- १ हमने २ गांव में ३ जो ४ जनवाणी शरीर से परपीडा रूप पाप किया ५ वन में ६ जो वसछेदन मृगवध आदि पाप किया ७ सभा में ८ जो अनीति आदि पाप किया ९ इन्द्रिय समूह में १० ११ जो जो धर्मशास्त्र विरुद्ध भोजन पान मैथुन आदि पाप १२ किया १३ उस १४ इस पाप को १५ विनाश करता हूँ १६ यह हूँ विपापनाशक देवता को दिया ॥ ४५ ॥

अथाध्यात्मम्- १ हमने २ ब्रह्मचर्य वा गृहस्थ आश्रम में ३ जो गुरुवापितां का ४ अपराध किया ५ वानप्रस्थ आश्रम में ६ जो पाप किया ७ साधुसभा में ८ जो शास्त्र विरुद्ध कथन आदि पाप किया ९ इन्द्रिय समूह में १० ११ जो जो पाप १२ किया १३ उस १४ इस पाप को १५ विनाश करते हैं १६ अहं ब्रह्मास्मि इस महावाक्य से ॥ ४५ ॥

मोषूणादुन्नात्र पृत्सुदेवै रिति हिष्माते शुभिन्नवयाः

महश्चिद्यस्य मीढुषो यव्याहविर्भतो मरुतो वन्दे ते

गी॥ ४६ ॥

ॐ३। सु३भि३न३। इन्द्र३। ए३त्सु३। नो३। मा३। अ३ष्ट३। दे३वै३। अ३स्ति३। अ३व३। यो३।
अ३व३। हि३। तो३। स्म३। य३स्य३। मी३दु३ष३। ह३वि३भ३त३। न३ह३। चि३तो३। य३व्यो३।
गी३। म३रु३त३। व३न्द३ते३॥ ४६॥ अथाधिदैवम्-जप मन्त्रः
ॐ भेषूणद्वयस्य (अगस्त्यऋ० भुरिगपंक्तिऋ० इन्द्र मारुतौ देवते) १

पदार्थः- यजमानजप करता है १ हे सुरेश २ अमरेश ३ वलवान ४ इन्द्रतम ५ असुरों के संग्रामों में ६ हम को ७ मत ८ प्रेरणा करो, वह संग्राम ई देवताओं के साथ १० है ११ इस युद्ध में १२ जाओ १३ हम को रक्षा करो १४ जिस कारण १५ हम आप के भक्त १६ हैं १७ जिस १८ वर्षी से सींचने वाले १९ हवि के योग्य आप की २० पूजा २१ निश्चय २२ मरुत गरीबों की वंदना से निष्पन्न है उस कारण २३ वाणी २४ आपके सखा मरुद्गणों को २५ नमस्कार करती है ॥ ४६ ॥

अथाध्यात्मम्- आत्मा रूप यजमानजप करता है १ हे सर्वव्यापी २ काम आदि शत्रुओं के नाशक ३ योग वल से युक्त ४ मनतम ५ काम आदि के संग्रामों में ६ हम योगियों को ७ मत ८ प्रेरणा करो, वह संग्राम ई इन्द्रियों के साथ १० है ११ इस युद्ध में १२ जाओ १३ हम को रक्षा करो १४ जिस कारण हम १५ तरे स्वामी १६ हैं १७ जिस १८ अमृत वर्षी से सींचने वाले १९ इन्द्रिय रूप हवि के योग्य आप की २० पूजा २१ निश्चय २२ प्राण वंदन से निष्पन्न है उस कारण २३ वेद वाणी २४ प्राणों को २५ नमस्कार करती है ॥ ४६ ॥

अक्रन्तुर्मि कर्मकृतः सहवाचामयो भुवो देवेभ्यः कर्म कृत्वास्तम्येत सचा भुवः ॥ ४७ ॥
कर्मकृतः। सयो भुवः। वाचो। सह। कर्म। अक्रन्। हे सचा भुवः देवेभ्यः। कर्म। कृत्वा। अस्तम्ये। प्रेतो ॥ ४७ ॥
अथाधिदैवम्- प्रतिप्रस्थाता यजमान को कर्म पात्र के हो मदेश से

अपने स्थान को ले जाता इस मंत्र को पढ़ता है॥

ओं अक्रन्नित्यस्य (अगस्त्य ऋ० विराडनुष्टुप् छन्दः अग्निर्दे०) १

पदार्थः - १ वरुणा प्रधास नाम कर्म करने वाले ऋत्विजों ने २ सुख दाता ३ स्तुति रूप वाणी के ४ साथ ५ वरुणा प्रधास अनुष्ठान रूप कर्म ६ किया ७ पर स्पर्श यजमान वा पत्नी के साथ इस कर्म में स्थित है ऋत्विजो ८ देवताओं के अर्थ ९ वरुणा प्रधास नाम कर्म को १० करके ११ अपने घरों को १२ जाओ ॥

॥४७॥ **अथाध्यात्मम्** - १ योग यज्ञ के ऋत्विज वाक् आदि ने २ ब्रह्मानन्द रूप ३ वेद मंत्र के ४ साथ ५ इन्द्रिय आदि संस्कार रूप कर्म को ६ किया ७ शरीर में साथ रहने वाले हे वाक् आदि ऋत्विजो तुम ८ ब्रह्म परानारायण के अर्थ ९ इन्द्रिय आदि संस्कार रूप कर्म को १० करके ११ आत्मा रूप गृह को १२ प्राप्त करो ॥४७॥

अवभृथ निचुम्पुण निचेरुरसि निचुम्पुणः । अवदेवै

देवकृतमेनो यासिषमवमर्त्यैर्मर्त्यकृतम्पुरुषाणां

देव रिषु स्पाहि ४८॥

निचुम्पुण । अवभृथ । निचेरुः । असि । निचुम्पुण । देवैः देवकृतम
एनः । अवायासिषम । मर्त्यैः । मर्त्यकृतम । अव । देवैः पुरुषाणां । रिषुः । स्पाहि ।

अथाधिदैवम् - वरुणा प्रधास कर्म के अंत में स्त्री पुरुष को जल में अवभृथ नाम स्नान करना चाहिये उसका मंत्र ॥

ओं अवभृथेत्यस्य (औगी वाम ऋ० ब्राह्मयनुष्टुप् छन्दः यज्ञोदे०) १

पदार्थः - १ हे मंद गति २ अवभृथ नाम यज्ञ तुम ३ निरंतर गमनशील ४ हो ५ तौ भी यहां मंद गति हुआ जिये क्योंकि मैंने ६ द्योतनात्मक अपनी इन्द्रियों से ७ हवि स्वामी देवताओं में किया हुआ ८ पाप ९ इस जल में त्याग किया तथा १० हमारे सहायक ऋत्विजों से ११ किया हुआ यज्ञ दर्शनाधी पुरुषों की

अवज्ञा रूप पाप १२ दुःसजल में छोड़ा १३ हे देवा भय नाम यत् १४ वद्धत वि-
स्फुट फल दाता १५ हिंसा से १६ रक्षा करो ॥ ४८ ॥

अथाध्यात्मम् - १ ज्ञान यत् की समाप्ति में किये द्वारे स्नान सम्बन्धी
२ हे आत्म समुद्र तुम अज्ञ भी ३ जीव रूप किरणों से निरंतर गसन शील
४ समुद्र ५ है ६ ज्ञानेन्द्रियों के साथ ७ जीवात्मा का किया हुआ ८ पाप ईदूर
त्याग किया तथा ९ कर्मेन्द्रियों के साथ १० भूतात्मा का किया हुआ पाप ११ दूर
रत्याग किया १२ हे न्योति स्वरूप आत्म समुद्र तुम १३ वद्धत विस्फुट फल दाता १४
हिंसा से १५ हम को रक्षा करो ॥ ४८ ॥

पूर्णादर्विपरापत सुपूर्णा पुनरापत। वस्नेव वि-
कीर्णा वहादृष मूर्ज्जं शत क्रतो ॥ ४९ ॥
दर्वि। पूर्णा। परा। पत। सुपूर्णा। पुनः। आपत। शत क्रतो। व-
स्नेव। दृषम्। ऊर्ज्जम्। विकीर्णावहै ॥ ४९ ॥

अथाधिदैवम् - दर्वि द्वारा स्थाली से ओदन ग्रहण करने का मंत्र १
जें पूर्णादर्विरित्यस्य (ओर्णवाभक्तं अनुष्टुप छं० इन्द्रो देवता) १

पदार्थः - १ हे दर्व्याभिमानि देवितुम २ स्थाली से अन्न को ले कर पूर्णा ३
और पूर्ण होने से उत्कृष्ट होती ४ इन्द्र के पास जाओ ५ कर्म फल से अच्छी
पूर्ण होकर ६ फिर ७ हमारे पास आओ ८ इस प्रकार दर्वी को कह कर इन्द्र
से कहते हैं ९ हे कद्रुत कर्म वाले इन्द्र तुम और में दोनों १० मूल्य द्वारा ११ अ-
भीष्ट हवि रूप अन्न को और हवि दान के फल रूप रस विशेष को १२ वेचे अ-
र्घ्य परस्पर द्रव्य के पलटे द्रव्य वेचे में तुम को हवि दू तुम मुझ को फल दो ॥ ४९ ॥

जैसा मनुजी ने कहा है, ब्राह्मण जप से ही सिद्ध होवे इसमें संशय नहीं दूसरा कर्म-
करवान करै क्योंकि ब्राह्मण सब का मित्र कहा जाता है, महाभारत में भी कहा है, हे पांडु पु-
त्र आत्मानदी संयमजल से पूर्ण है इसका बहाव सत्यतट शील और लहर दया है उसमें
अभिषेक करें क्योंकि अंतःकामाजल से मुक्त नहीं होता है ॥ ४८ ॥

अथाध्यात्मम् - १ इन्द्रिय रूप अन्न दान के साधन है प्राणाधिष्ठित देवि-
तुम २ इन्द्रिय शक्ति रूप अन्न से पूर्ण ३ और पराशक्ति रूप होती ४ मानस आ-
त्मा में जाओ ५ मानस आत्मा से अच्छी पूर्ण होती ६ फिर ७ ब्रह्म में जाओ ८
ब्रह्मा विष्णु महेश जिसके सकल रूप हैं ऐसे हे महा विष्णु ९ मूल्य द्वारा १०
प्राणा वाजीव रूप अन्न को ११ और मोक्ष रस को १२ बेचे, अर्थात् परस्पर व-
स्तु के पत्ते वस्तु बेचे, में तुम को प्राणा वाजीव दू तुम मुझ को मोक्ष दो ॥ ४८ ॥

देहि मे ददामि ते नि मे धेहि निते दधे निहारञ्च

हृणसि मे निहार निहराणिते स्वाहा ॥ ५० ॥

मैं देहि। तू ददामि। मैं निधेहि। तू निदधे। निहारम।

मैं हृणसि। निहारम। तू निहराणि। स्वाहा ॥ ५० ॥

अथाधिदेवम् - दर्वि से लिये इष्ट अन्न को दान करने का मंत्र १
ओं देहि म इत्यस्य (और्णा वा भक्त् ० भुरिगनुष्टुप् छं ० इन्द्रो दे ०) १

पदार्थः ईश्वर भोग सम्बन्धी वचन को कहता है हे यजमान तुम १ मेरे
लिये २ प्रथम हवि दो ३ तुम्हें यजमान के लिये ४ अपेक्षित पीछे दूंगा फिर
मोक्ष सम्बन्धी वचन को कहता है ५ मुझ में ६ अपनी आत्मा को निरंतर
धारण कर ७ तुम्हें ८ अपनी आत्मा को निरंतर धारण करता हू इस प्रकार ई-
श्वर के वाच्य को सुन कर यजमान कहता है ९ मूल्य द्वारा मोल ली हुई वस्तु
के रूप भोग मोक्ष नाम फल को १० मुझे ११ दीजिये १२ और मे मूल्य रूप दोनों
प्रकार के हवि को १३ तुम्हें ईश्वर के अर्थ १४ देता हू १५ जोष्ट हो म हो ॥ ५० ॥

अथाध्यात्मम् - महा विष्णु कहते हैं हे योगी तुम १ मुझे २ जी-
व रूप हवि दो ३ मैं तुम्हें भक्त के लिये ४ मोक्ष देता हू ५ मुझ में ६ अप-
नी आत्मा को धारण कर ७ तुम्हें ८ अपनी आत्मा को धारण करता हू
योगी उत्तर देता है ९ मूल्य द्वारा मोल लेने योग्य वस्तु के रूप मोक्ष फ-

लको ११ सुभ भक्त केलिये १२ देते हो १३ मूल्य रूप अपने आत्मा को १४
आपके लिये १५ निरंतर समर्पण करता है १५ इस महा वाक् द्वारा यह स
ब निश्चय ब्रह्म है यहां नाना प्रकार का कुछ नहीं है ॥ ५० ॥

अक्षन्नमी मदनत्त ह्यवप्रिया अधूषत । अस्तोष
तत्त्वमानवो विप्रान् विष्टया मती योजान् विन्दते हरी ५१
स्वमानवः । विप्रः । अक्षन्नः । न विष्टया । अमी मदनत्त । हि । प्रि
याः । अवाधूषत । अस्तोषत । इन्द्रः । नु । तो । मती । हरी । आयोज
५१ ॥ अथाधिदैवम् — साक मेध यज्ञ के मध्य पितृ यज्ञ नामक
मे आहवनीय के उपस्थान का मन्त्र १

ओं अक्षन्नित्यस्य (गोतम ऋ० विराड पंक्ति ऋ० इन्द्रो देवता) १
पदार्थः १ स्वयं प्रकाश २ मेधावी पितरों ने ३ हमारे दिये हुए हवि रूप
अन्न को भक्षण किया ४ अत्यंत नवीन स्वधा से ५ तब हुए ६ इस कारण
७ प्रिय अंगों को ८ कपित किया अर्थात् तत्सि सूचक संकेत को जतलाया
९ और स्तुति करने लगे कि अहो बड़ा स्वादु अन्न दिया वड़ी भक्ति है इस
कारण हे १० इन्द्र ११ श्रीघ्न १२ अपने १३ सम्मत १४ घोड़ों को १५ रथ में
जोड़ो अर्थात् आप का अभीष्ट पितृ यज्ञ सम्पन्न होने से तुम को उपनि
तों के साथ आना चाहिये ॥

अथाध्यात्मम् — १ जिनका प्रकाशक आत्मा है उन २ मेधावी म
न की वृत्तियों ने ३ इन्द्रिय रूप हविको भक्षण किया ४ संस्कार से शुद्ध
इन्द्रिय रूप हवि के द्वारा ५ तत्सि को प्राप्त हुए ६ जिस कारण ७ प्रिय अंगों
को ८ कपित किया अर्थात् तत्सि सूचक संकेत को जतलाया ९ और स्तुति
करने वाले हुए इस कारण हे १० महा विष्णु ११ श्रीघ्न १२ अपने १३ जी
वेश रूप १४ किरणों को १५ अपनी आत्मा में युक्त करे ॥ ५१ ॥

सुसन्दृशन्त्वावयम्मघवन्वन्दिषीमहि। प्रनूनम्पू
र्णवन्धुरस्तु तोयासिवशांश्च ॥ ५१ ॥ अथ योजान्विन्दु
तेहरी ॥ ५२ ॥

१ मघवन्। २ अ। ३ वयम्। ४ त्वा। ५ सुसन्दृशम्। ६ वन्दिषीमहि। ७ स्तुतुः। ८ पू
९ र्णवन्धुः। १० वशान्। ११ अनु। १२ नूनम्। १३ प्रयासि। १४ हे इन्द्र। १५ नु। १६ तोहरी
१७ योज ॥ ५२ ॥ अथाधिदैवम्-

जो सुसन्दृशमित्यस्य (गौतमऋ० विराट् पंक्तिच्छं० इन्द्रो देवता) १

पदार्थः १ हे लक्ष्मीपति २ विष्णु ३ भक्त हम् ४ तुम् ५ अनुग्रह दृष्टि से स
ब के दृष्टा को ६ स्तुति वा बन्दना करते हैं ७ स्तुति किये हुए ८ पूर्ण मित्र तुम् ९ आपके
चाहने वाले हम् यजमानों को १० देख कर ११ अवश्य १२ प्राप्त
होते हो १३ हे परमेश्वर तुम् १४ श्रीघ्न १५ अपने १६ व्यष्टि समष्टि सूर्य-
को १७ युक्त करो अर्थात् विराट् भाव को दो ॥ ५२ ॥

अथाध्यात्मम्- १ ब्रह्मा विष्णु महेश रूप धारण करने वाले २ हे म-
हाविष्णु ३ हम् योगी जन ४ तुम् ५ अनुग्रह दृष्टि से सब के दृष्टा को ६ स्तु
ति वा दंडवत करते हैं ७ स्तुति किये हुए ८ पूर्ण मित्र तुम् ९ आपके चा
हने वाले हम् योगियों को १० अनुलक्षी करके ११ अवश्य १२ प्राप्त हो
ते हो १३ हे काम के भगाने वाले महाविष्णु तुम् १४ श्रीघ्न १५ अपनी १६
जीव ईश रूप किरणों को १७ अपनी आत्मा में लय करो ॥ ५२ ॥

मनोन्वाहामहे नाराशंश्च सेनस्तोमैः। पितृ
णाम्मन्मभिः ५३ ॥
१ नाराशंसेन। २ स्तोमैः। ३ च। ४ पितृणाम्। ५ मन्मभिः। ६ नु। ७ मनः। ८ आ
९ हामहे ॥ ५३ ॥

अथाधिदैवम्- गार्हपत्य के उपस्थान का मन्त्र, १

ओं मनो नित्यस्य (बन्धुर्ऋतिपादनिवृत्ताय च मनोदेवता) १
 पदार्थः १ मनुष्यों के योग्य स्तुति वाले २ स्तोत्र ३ और ४ पितरों के ५ आकांक्षित
 तवाणी से ६ श्रीगुरु ७ मनोभिमानि देवता को ८ आवाहन करते हैं अर्थात्
 तपित यज्ञ के अनुष्ठान से हमारा चित्त पितर लोक की गयी सी दुःखाइस कारण
 आवाहन करते हैं ॥ ५३ ॥

अथाधिदैवम् - यदि अग्रोक्त मंत्रों का प्रयोग न हो तो योगी का दे-
 ह पात होवे उस कारण प्रारब्ध की सामासितक फिर प्रार्थना करते हैं १ मन-
 के योग्य स्तुति वाले २ स्तोत्र ३ और ४ मनोवृत्तियों के ५ आकांक्षित वचनों
 से ६ श्रीगुरु ७ मन वामनोभिमानि देवता का ८ आवाहन करते हैं ॥ ५३ ॥

आन एतु मनु पुनः क्रत्वेदक्षाय जीवसे ज्योक्
च सूर्यन्दृशे ५४
 १. मने ३. तस्मात् ४. ज्योक् ५. जीवसे ६. च ७. सूर्यन्दृशे ८. पुनः

आ एतु ॥ ५४ ॥ अथाधिदैवम्
 श्री आन एतित्यस्य (बन्धुर्ऋतिपादनिवृत्ताय च मनोदेवता) १
 पदार्थः १ हमारा २ पूर्वोक्त चित्त ३ यज्ञ सकल्य के लिये ४ तथा ५ स संक-
 ल्य की समृद्धि के अर्थ ५ पूर्णायुर्पर्यन्त ६ जीवने को ७ तथा ८ विराडोत्मासु-
 र्य के दर्शन को ९ फिर १० आओ ॥ ५४ ॥

अथाध्यात्मम् १ हम योगियों को २ मन ३ योग यज्ञ का सकल्य कर-
 ने को ४ इस सकल्य की समृद्धि के लिये ५ प्रारब्ध समासितक ६ जीवने-
 को ७ और ८ समाधि में ब्रह्म दर्शन के लिये ९ फिर १० आओ ॥ ५४ ॥

पुनर्नः पितरो मनो ददातु देव्यो जने जीव ब्रा
तु सचे महि ५५
 १. पितरः २. देव्यः ३. जने ४. नः ५. मनः ६. पुनः ७. ददातु ८. जीव ९. ब्रा १०. त ११. सचे १२. महि

सचेमहि॥ ५५॥ अथाधिदैवम्-
 ओं पुनर्मन्त्रस्य (बन्धुर्ऋ० निचदायत्री छं० मनो देवता) १
 पदार्थः- १ हे पितरो आपकी आज्ञा से २ देव सम्बन्धी ३ पुरुष ४ हमारे लि
 ये ५ पूर्वोक्तचित्त को ६ फिर ७ दो अथवा प्रेरणा कसे वैसा होने पर अनुष्ठान
 को करके आपकी कृपा से ८ जीवन वन्त ९ पुत्र पशु आदि गण को हम १० से
 वन करें॥ ५५॥

अथाध्यात्मम्- १ हे मनो वृत्तियो २ ब्रह्म सम्बन्धी ३ नरोत्तमनर ४ ह
 मारे लिये ५ मन को ६ फिर ७ दो ८ जीवांश रूप ९ इन्द्रिय समूह को १० ह
 म सेवन करें॥ ५५॥

वयं सोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः । प्रजा
 वन्ताः सचेमहि ५६
 सोम । प्रजावन्तः । वयं । व्रते । तव । तनूषु । मनः । विभ्रतः । स
 चेमहि॥ ५६॥ अथाधिदैवम्
 ओं वयमित्यस्य (बन्धुर्ऋ० गायत्री छं० सोमो देवता) १
 पदार्थः- १ हे पितृ सम्बन्धी देवता अथवा ब्रह्मो विष्णु महेश रूप धारी
 महा विष्णु २ पुत्र पौत्र आदि से सम्पन्न ३ हम यजमान ४ यज्ञ में अथवा ए
 कावशी आदि व्रत में ५ आप के ६ कृपा आदि स्वरूप में ७ चित्त को ८
 धारण करते ९ आप को सेवन करें अथवा आप से सम्बन्ध रखने वाले हो
 वें॥ ५६॥

अथाध्यात्मम्- १ हे आत्मा प्रति विंव २ प्राणवान् ३ हम आत्मा
 ४ योग यज्ञ में ५ तेरी ६ इन्द्रियों में ७ मन को ८ धारण करते ९ प्रारब्ध
 समाप्ति तक उन इन्द्रियों को सेवन करें॥ ५६॥

एष ते रूद्र भागः सह स्वस्त्वान्विकया तज्जुष

सु स्वाहे षते रुद्र भाग आखुस्ते पशुः ॥ ५७ ॥
 रुद्रः अम्बिकया । स्वस्वा । सह । ते । एषः । भागः । तमः । स्वाहा ।
 जुषस्व । रुद्रः । एषः । ते । भागः । आखुः । ते । पशुः ॥ ५७ ॥

अथाधिदैवम्—इस कंडिका में दो मंत्र हैं अवदान के होम का १५
 जमान के जितने पुत्र, पौत्र, भृत्य आदि पुरुष होवें उन को गिन कर प्र
 ति पुरुष एक २ पुरोडाश निरूपण कर फिर उन से एक अधिक पुरोडाश
 निर्वपन करो, सो इस एक अधिक को अतिरिक्त कहते हैं उस को न होम किल
 आखुत्कारार्थान्तरूपण समूह की तुल्य मूँसों की खोदी पृथिवी में बखेर दे उसका मंत्र
 ओं एष त इत्यस्य (बन्धुर्नृ० प्राजापत्या वृहती च०— रुद्रो देवता) १

तथा (तथा) याजुषी जगती च० तथा) २

पदार्थः—हे देहाभिमानि पुरुषों के रुलाने वाले पुरुष २ अम्बिकान
 म प्रकृति ३ वहन के ४ साथ ५ आप का ६ दम से दिया हुआ यह पुरो
 डाश ७ भाग है ८ इसको ९ सेवन करो १० ओष्ठ होम हो ११ हे रुद्र १२
 हमसे उप कीर्त्य मान यह पुरोडाश १३ तेरा १४ भाग है १५ किम कहेने
 पर जो न खाता है न देता है न होम करता है वह रूपण पुरुष १६ तेरा १७
 पशु है ॥ ५७ ॥

अथाध्यात्मम्—योगी प्राण से आर्चना करता है १ हे प्राणानि २ स
 रा रूप आत्म प्राणिनाम ३ वहन के ४ साथ ५ तुम्ह को ६ यह इन्द्रिय श
 क्ति समूह ७ स्वीकार योग्य है ८ उसको ९ मंत्र प्रभाव से १० सेवन करो
 ११ हे प्राण १२ यह आत्म प्रतिविम्ब १३ तुम्ह से १४ सेवन योग्य है और १५
 और काम १६ तेरा १७ पशु है ॥ ५७ ॥

प्रश्न—पशु समर्पण में क्या फल है उसका उत्तर श्रुति में यह है पशु सम
 र्पण से दूसरे पशुओं की रक्षा होती है और वर्तमान भविष्य काल की सन्तान रुद्र
 भय से छूट जाती है ॥

अवसूद्रमदीमहावदेवं च। अम्बकम्। यथानोवस्य सस्कर
 द्युथानः। अयं सस्कर द्युथानो व्यवसाययात् ॥ ५८ ॥
 रुद्रम्। अम्बकम्। देवम्। अवा। अवादीमहि। यथा। नः। वस्य
 सः। करत। यथा। नः। अयसेः। करत। यथा। नः। व्यवसायया
 त ॥ ५८ ॥

अथाधिदैवम् - आखूत्कर देश से आकर जप करता है उसका मंत्र
 वीं अवसूद्र मित्यस्य (वन्धुर्त्त० विराट् पंक्तिश्च० रुद्रो देवता) १

पदार्थः १ शत्रुओं के रूलाने वाले २ तीनों लोक के पिता ३ सर्ग आदि से
 क्रीडा करने वाले वा शत्रु जय शील वा सब प्राणियों में आत्मरूप से चेष्टा
 वान्धुति मान स्तोत्रों से स्तुत वा सर्वगत परमेश्वर को ४ गुरु शास्त्र द्वारा
 जान कर ५ हार्दिकाश में स्थापन करे ६ जिस प्रकार ७ हम को ८ ब्रह्म
 में वसन शील ९ करे १० जैसे ११ हम को १२ भक्तों में ओष्ठतर १३ करे १४
 जिस प्रकार १५ हम को १६ सिद्धांतों में निश्चय युक्त करे ॥ ५८ ॥

अथाध्यात्मम् - अम्बकम्। देवम्। रुद्रम्। अवा। अवा
 दीमहि। यथा। नः। वस्य सः। करत। यथा। नः। अयसेः। कर
 त। यथानः। व्यवसाययात् ॥ ५८ ॥

पदार्थः - १ पूरक। कुंभक। रेजक नाम तीतनेत्र वीले ३ द्युतिमान ३
 प्राण को ४ प्राप्त करके ५ हार्दिकाश में धारण करे ६ जिस प्रकार आरव्य
 के क्षय पर ७ हम को ८ ब्रह्म में वसन शील ९ करे १० जिस प्रकार ११ हम
 को १२ जीवन मुक्त १३ करे १४ जिस प्रकार १५ हम को १६ सिद्धांतों में
 निश्चय युक्त करे ॥ ५८ ॥

भेषजमसिभेषजइवेश्वायपुरुषायभेषजम् ॥
 सुखमेषायमेष्यै ५९

गवे। भेषजम्। अंसि। अश्वाय। भेषजम्। पुरुषाय। भेषजम्
मेषाय। मेष्यै। सुखम्॥ ५६॥ अथाधिदैवम्—
ओं भेषजमसीत्यस्य (बन्धुर्ऋ० स्वरङ्गायत्री छन्द० रुद्रो देवता) १

पदार्थः हे पशुपति तुम १ धेनु समूह के लिये २ औषधि की समान सब
उपद्रव के दूर करने वाले ३ हो ४ पशु समूह के लिये ५ औषधि की समान
सब उपद्रव के दूर करने वाले हो ६ हमारे पुरुष समूह के लिये ७ औषधि
की समान सब उपद्रव के दूर करने वाले हो ८ मेढ्रा समूह ९ और भेड़ों के
लिये १० आनन्द स्वरूप हो॥ ५६॥

अथाध्यात्मम्— हे प्राण तुम १ इन्द्रिय समूह के लिये २ संसार रोग
नाशक औषधि ३ हो ४ जादराग्नि के लिये ५ रोगनाशक औषधि हो ६
जीवात्मा के लिये ७ गगन मंडल मार्ग गति द्वारा संसार रोग की औषधि हो
८ इन्द्रियों के सीत्तने वाले मन तथा ९ ज्ञान से इन्द्रियों की सीत्तने वाली बु
द्धि के लिये १० आनन्द स्वरूप हो॥ ५६॥

अथ च यजामहे सुगन्धिं मुष्टिर्वद्धेनम्। उर्वारु
कमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। अथ च
यजामहे सुगन्धिं मुष्टिर्वेदेनम्। उर्वारु कमिव ब
न्धनान्दितोर्मुक्षीय मामृतात्॥ ५७॥
पुष्टिर्वद्धेनम्। अथ च यजामहे। मृत्योर्। मुक्षीय। इवा। सु
गन्धिम्। उर्वारुकम्। बन्धनात्। अमृतात्। माँ। पतिर्वेदेनम्
अथ च यजामहे। इति। मुक्षीय। इवा। सुगन्धिम्। उर्वारु
कम्। बन्धनात्। अमृतात्। माँ॥ ५७॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं उन को कहते हैं, जैसे पि
तृ मेध यज्ञ में पुत्र आदि पुरुष अपनी वाम उरु को ताड़न कर ३ उलटी प्र

दक्षिणा देते हैं और जैसे देवता की सेवा में दाहिनी उरू को ताड़न करते ३ सी
धी प्रदक्षिणा देते हैं तैसे यहां पुरुष पहिले अम्बुक मंत्र से अग्नि की उक्त प्र
दक्षिणा करता है उसका मंत्र १ यजमान की कुमारियां भी पूर्वोक्त पुरुष की
समान पिछले अम्बुक मंत्र से अग्नि की ३ परिक्रमा करती हैं उसका मंत्र २
ओं अम्बुकमित्यस्य (वसिष्ठ चर० ब्राह्मिनिष्टुप खन्दः रुद्रो देवता) १२

प्रदार्थः— पुरुष कहता है, १ सांसारिक पारमार्थिक पुष्टि के बढ़ाने वाले
३ तीनों लोकों के पिता वा तीनों लोक और काल में वेद रूपशब्द वाले वा ती
नों अकार उकार मकार शब्दों से सिद्ध होने वाले वा पृथ्वी अन्तरिक्ष स्वर्ग
नाम स्थान वाले महेश्वर को ३ हम पूजन करते हैं हे परमेश्वर ४ अपमृत्यु
वा संसार मृत्यु से ६ छुटाओ ६ जैसे ७ शोभन गन्ध से युक्त अर्थात् परि
पक्व उर्वारुक नाम फल को ७ अपने डाढ़ले से १० कम निर्व्विण नाम मो
क्ष से ११ मत छुटाओ कुमारियां कहती हैं १२ भर्त्ता के प्राप्त कराने वाले
१३ तीनों लोक के पिता महेश्वर को हम पूजन करती हैं १४ हे परमेश्वर जन्म
के कारण माता पिता के वर्ग से १६ तुम को तुम १७ ने से १८ शोभन
गन्ध से युक्त अत्यंत पक्के १९ उर्वारुक नाम फल को २० उसके डाढ़ले से छु
टाते हौ २१ पति के गृह वा पति लोक से २२ मत छुटाओ ॥ ६९ ॥

✽ जिस कारण पति ही स्त्रियों की शक्ति है, जैसा काशी खंड ४ अध्याय में लिखा है
स्त्री का एक पति शिव और विष्णु से भी अधिक है, स्त्री बिना पति की आज्ञा के व्रत उ
पवास और नियम को नहीं करे, जो प्रसन्न स्त्री बाहर से आते हुए पति को देख कर
शीघ्र आसन जल तांबूल पंखा पांव दावना आदितया सुन्दर वचन और पसीना पो
छने आदि से प्रिय पति को प्रसन्न वात्सल्य करे, मातां उसने तीनों लोक तृप्ति कि
ये पिता, भ्राता और पुत्र परिमित वस्तु को देते हैं, परंतु भर्त्ता अमित पदार्थों का
देने वाला है, उसी को सदा पूजन करे भर्त्ता देवता है, भर्त्ता गुरु धर्म तीर्थ और
व्रत है उस कारण सब को त्याग कर अपने ले पति को भले प्रकार पूजन करे, जि
सने प्रिय पति को पूजा उससे श्री कृष्ण पूजे गये क्योंकि विष्णु भगवान् आप पति

अथाध्यात्मम् - आत्मारूपयजमानप्रार्थना करता है १ देह और मोक्ष सम्बन्धी पुष्टि के बढ़ाने वाले २ पूरक कुम्भकरेचक तीन नेत्र वाले प्राण को ४ ह्रम पूजन करते हैं हे प्राण ४ गगनमार्ग से निकलने के द्वारा मृत्यु से ५ ह्रम को मुक्त करे ६ जैसे ७ सुगन्ध युक्त अर्घ्यात् पके हुए ८ ऊर्वास्तक नाम फल को ९ डांढले से छुटाते हौ १० विषय सेवन के कारण मोक्ष से ११ मत छुटाओ ॥ यजमान की पत्नी बुद्धिप्रार्थना करती है १२ आत्मारूप भर्ता के पास कराने वाले पूर्वोक्त गुण विशिष्ट प्राण को १३ ह्रम १४ पूजन करती हैं हे प्राण १५ इस संसार से १६ मुक्त करे १७ जैसे १८ पके १९ ऊर्वास्तक नाम फल को २० डांढले से छुटाते हौ २१ आत्मा से २२ मत छुटाओ ॥ ६१ ॥

एतत्तेरुद्रावसन्तेन परो मूर्जवतोतीहि । अवत
तधन्वापिनाकावसः कृत्तिवासा अहिं थं सनः
शिवोतीहि ॥ ६१ ॥
एतत्तेरुद्रावसन्तेन परो मूर्जवतोतीहि । अवत
तधन्वापिनाकावसः कृत्तिवासा अहिं थं सनः
शिवोतीहि ॥ ६१ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं उन को कहते हैं - चावल जो आदि को बाध कर लूणा वास आदि से बने हुए मृत नाम दो पात्रों में मंत्र क संवंधी शेष हवि को डाल कर अपने कंधे पर वांस की लठिया रख उसके दोनों शिरो से दोनों मूर्तों को बांध उत्तराभिमुख दूर जाकर रुद्र वास वाव्रता के व्रत के लिये प्रतिरूप हैं, सर्वदान, सर्वयज्ञ, सब तीर्थ सेवन, सब व्रत, तप उपवास आदि सत्य, सब देवताओं का पूजन, वह सब स्वाभि से बाक्री सोलहवीं कला के भी तुल्य नहीं है, जो स्त्री अच्छे पवित्र भारत वर्ष में प्रति सेवा को करती है वह स्वाभिके साथ वैकुण्ठ को जाती है और रुद्रा ब्रह्मा जी की पूर्णायुक्त रहती है ॥

वर्ष पर दोनो मृत सहित वांस की लाठी को छोड़ता है, गौ उसके सूंघने को भी समर्थ न होकर रोग को नही पाती उसका मंत्र १ ऊँचे वृक्ष पर दोनो मृत को लटका कर उन को न देखता लोट कर वेदी के समीप आकर जल स्पर्श करता है उसका मंत्र २,

ओं एतत्तद्व्यस्य (वाशिष्ठ ऋ० भुरिगास्तारपंक्ति ऋ० रुद्रो देवता) १ २

पदार्थः— निराकार शिव का साकार रूप है रुद्र २ यह शेष हवि ३ आप का ४ भोजन है अर्थात् देशान्तर में जाने वाले का मार्ग के बीच तटा आदिके समीप खाने योग्य ओदन विशेष है ५ उस कारण ६ हमारे शत्रुओं का निवारण करने से अवरोपित धनुष वाले ७ वस्त्र से आच्छादित धनुष वाले ८ श्रेष्ठ तुम ९ मूजवान पर्वत का १० अति कमण एक के जाओ हे रुद्र ११ चर्म्या मर धारी १२ को परहित आनंद स्वरूप तुम १३ हम को १४ न मारते १५ पर्वत को अति कमण करके जाओ ॥ ६१ ॥

अथाध्यात्मम्— १ हे आप २ यह ब्रह्मांड ३ तेरा ४ अन्न है ५ उस का ६ श्रेष्ठ तुम ७ नाडी संवेष्टित हृदय का ८ अति कमण करके भ्रुकुटि को जाओ फिर ९ अवरोपित आप रूप धनुष वाले १० आपसी आत्मा में प्रभाव कालय करने वाले ११ भ्रुकुटि रूप वस्त्र से आच्छादित १२ शिव रूप तुम १३ हम योगियों को १४ न मारते १५ अति कमण करके गंगान मंडल को जाओ ॥ ६१ ॥

आयुषं जन्मदग्नेः कश्यपस्य आयुषम् यद्दे

वेषु आयुषन्तन्नोस्तु आयुषम् ६२

यत्तु जन्मदग्नेः आयुषम् । कश्यपस्य । आयुषम् । देवेषु । आयुषम् । ततः । आयुषम् । नः । अस्तु ॥ ६२ ॥

अथाधिदैवम्— यजमान वपन (हजामत) काल परजप करता है उ

उसकामंत्र १

ॐ त्र्यायुष मित्यस्य (नारायण ऋ० उषाकृच्छं आशीर्देवता) १

पदार्थः १ जो २ जमदग्नि मुनि की ३ वाल्य यौ पन रुद्ध अवस्था का समाहार है ४ ब्रह्मा जी के पौत्र कश्यप प्रजापतिकी ३ तीनों अवस्थाओं का जो समाहार है ५ इन्द्र आदि देवताओं में ७ जो तीनों अवस्था का समाहार है ८ वे ९ त्र्यायु के तीनों भाग १० हम यजम्मनों को ११ प्राप्त हों अथवा अल्प मृत्यु से रक्षा हो ॥ ६२ ॥

अथाध्यात्मम्— पूर्व मंत्रों के प्रभाव से प्रारब्ध का क्षय न होने पर भी देह त्याग के भय से यजमान प्रार्थना करता है पदार्थ पूर्व की समान है ॥ ६२ ॥

शिवो नामासि स्वधितिस्तेऽपितानमस्ते अस्तु मा
माहि त्सीः निर्वर्तयाम्यायुषेन्नाद्याय प्रजन
नाय रायः स्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय ॥ ६३ ॥
नाम। शिवः। असि। स्वधितिः। ते। पिता। ते। नमः। अस्तु। मा। मा
हि त्सीः। आयुषे। अन्नाद्याय। प्रजननाय। रायः। पोषाय।
सुप्रजास्त्वाय। सुवीर्याय। निर्वर्तयामि ॥ ६३ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में क्षौरकर्म सम्बन्धी दो मंत्र हैं
ॐ शिवो नामासीत्यस्य (नारायण ऋ० भुरिजगती च० सुरेदे०) १
ॐ निर्वर्तयामीत्यस्य (तथा तथा लिङ्गोक्त दे०) २
पदार्थः— हे क्षुराभिमानि देवता तुम १ नाम करके २ शांत हो ४
वज्र पतेर ६ पिता है ७ तेरे अर्थ इ नमस्कार ८ हो १० मुझ को ११ मत
१२ पीड़ा दे हे यजमान मे तुम को १३ जीवन के लिये १४ अन्न भक्षण के
लिये १५ सन्तान की उत्पत्ति के अर्थ १६ धन की १७ पुष्टि के लिये १८
मुझ सन्तान के लिये १९ उत्तम सामर्थ्य के अर्थ २० मुंडन करता हूँ ॥ ६४ ॥
प्रश्न— क्षौरकर्म में क्या फल है उत्तर— श्रुति द्वारा पुरुष का अंग अपवित्र है इस

अथाध्यात्मम्- हे मन तुम १२ नाम करके २ शांत हो ४ ज्ञान वज्र ५ ते
राष्ट्र पिता है ७ तेरे अर्थ ८ विराट् रूप अन्न ९ हो १० मुक्त आत्मा को विषयासक्ति
से ११ १२ मत नाश कर मनोमिमानी देवता कहता है, हे यजमान तुम को
१३ नित्य आयु के लिये १४ विराट् रूप जो अन्न है उसको आत्मा में लय क
रने के लिये १५ अष्ट सिद्धि की उत्पत्तिके अर्थ १६ योगलक्ष्मी की १७ पुष्टि के
लिये १८ श्रेष्ठ प्राण के लाभार्थ १९ श्रेष्ठ योगबल की प्राप्ति के लिये २० प्रारब्ध
समाप्ति तक देह त्याग से निवारण करता हूँ ॥ ६३ ॥

इति श्री भृगुवंशावतंस श्री नाथूराम सूनु ज्वाला प्रसाद श
र्म कृते मुक्तयजुर्वेदीय ब्रह्म भाष्ये अग्न्याधानादिपि च्या
न्तस्तथा आत्म संस्कार कथनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥
आधान, अग्नि होत्र, अग्न्युपस्थान, चातुर्मास्य के मंत्र तीसरी अध्याय में
कहे अब चौथी अध्याय से प्रारंभ करके आठवी अध्याय की वत्तीसवीं कंडि
का तक अग्निष्टोम यज्ञ के मंत्र कहते हैं ॥

जिस अंग पर जल नहीं ठहरता, सिर के बाल डाढ़ी मूँछ और नखों पर जल नहीं ठहरता
है इस लिये उनके अलग करने से पवित्र होकर दीक्षा के योग्य होता है, कोई सम्पूर्ण वा
लों को मुंडन करते हैं यह समझ कर कि हम सम्पूर्ण पवित्र होकर दीक्षित हों ऐसा न करे
केवल केश डाढ़ी मूँछ और नखों के दूर करने से ही पवित्र हो जाता है। स्मृति आदि में
भी कहा है, जो मनुष्य व्रत, उपवास, आहुति आदि के संयम में क्षौर कर्म नहीं करता है व
ह सब कर्मों में अपवित्र है, परन्तु वह स्मृति के दिन क्षौर कराने में मान की हानि होती है, मु
क्तवीर्य को, सूर्य धन को मंगल आयु को नाश करता है और शनि और सब को नष्ट करता है
देव कार्य, पितृ आहुति, सूर्य ग्रहण और अपने जन्म मास और जन्म नक्षत्र में क्षौर कर्म न करे
रोहिणी, विशाखा, मृगशिरा, उत्तरा मघा और कृति कानक्षत्र में द्विजों को क्षौर कर
ना वर्जित है। जो मनुष्य क्षौर और मैथुन कर्म करके देवता और पितरों का तर्पण
करे वह तर्पण का जल रुधिर होवे और दाता नरक को जावे बिना देवता के अर्पण
किये अपने लाये आपही मूल माला का धारण करता और अपने घि से दण्ड चंदन

हरिः ॐ एदमगन्मदेवयजनं पृथिव्या यत्र देवा सोऽग्र
 जुषन्त विष्णवे । ऋक् सामाभ्यां थं सन्तरन्तो यजुर्भीरा
 यस्योषेण समिषा मदेम । इमा आपः शमु मे सन्तु देवी
 रोषधेनायस्व स्वधिते मेनं थं हि थं सीः ॥ १ ॥
 इदम । पृथिव्याः । देवयजनम् । आ । अगेन्म । यत्र । विष्णवे । देवा
 अजुषन्त । ऋक् सामाभ्यां थं । यजुर्भी । सन्तरन्तः । रायै । पो
 सेणा । इषा । सम्मदेम । इमा । देवीः । आपः । मे । शम् । ओ स
 न्तु । ओषधे । नायस्व । स्वधिते । एनं थं । मा । हि थं सीः ॥ १ ॥

अथाधिदैवम्- इस कडिका में ४ मंत्र हैं, यजमान सोलह ऋत्विजों
 का वरण करके अरणी में अग्नि का आरोपण कर शाला को जाता जप कर
 ता है उसका मंत्र १ कंधा से सिर के वालों की दाहिण जूटिका को काढ़ कर
 जल से भिगेता है उसका मंत्र २ सूक्ष्म कुशग्र को सुर से काट कर जल पत्र
 में डालता है उसका मंत्र ३ अध्वर्यु नाई को छुरा देता है वह नाई उस सुर से
 सिर के बाल और डाढ़ी मूछ को मूड़ता है उसका मंत्र ४ ॥

ॐ इदमग्ने त्यस्य (प्रजापति ऋ० विराड् ब्राह्मी जगती छ० देवयजनं दे०)

आप इत्यस्य (तथा तथा आपो दे०) २

ओषध इत्यस्य (तथा तथा ओषधि दे०) ३

स्वधित इत्यस्य (तथा तथा सुरो देवता) ४

कोलगाना और नाई के घर में क्षौर कराना ये कर्म इन्द्र से भी लक्ष्मी को हर्तले- चोथ
 छठ अष्टमी चतुर्दशी और पंचदशी को सदा ब्रह्म चारी होंगे । जो मनुष्य इन तिथि
 यों को शिरोभ्यगदत धावन और मैथुन करे उसके घर में लक्ष्मी नही ठहरती है ।
 गङ्गा सूर्य क्षेत्र में और मृतक दिन में आधान और सोम पान में क्षौर कही है ॥
 सम स्थल पर वैवाङ्मनस्य पूर्व ओष्ठ उत्तर मुख हो कर क्षौर करावे ॥

पदार्थः— १ इमं इत्सं २ पृथिवीसम्बन्धी ३ देवयजनस्थान में ४, ५ आये हैं
 ६ जिस देवयजनस्थान में ७ सब ८ देवता ९ प्रीति पूर्वक स्थिति हुए इत्सं १०
 ऋग्वेद सामवेद ११ और यजुर्वेद के मंत्रों से १२ समुद्रतुल्य गंभीर सोम
 याग को समाप्त करते १३ धन की १४ पुष्टि १५ और इच्छित अन्न से
 १६ दृष्ट और तृप्त होवें १७ ये १८ निर्मल प्रकाश मान १९ जल जो शिर
 में लगाये जाते हैं २० भुक्त यजमान के २१ सुखदाता २२ ही २३ हों २४
 हे कुशतरुणानामश्लेषधितम २५ यजमान को क्षुरा से रक्षा करो २६ हे
 क्षुरा २७ इस यजमान को २८, २९ मत पीडा दो ॥ १॥

अथाध्यात्मम्— योगी कहते हैं, इमं १ इत्सं २ मानसकमल के ३
 देवयजननामस्थान को जिसमें ब्रह्म परानारायणनाम देवताओं का पूजन
 होता है ४, ५ आये हैं ६ जिस मानसकमल में ७ सब ८ ब्रह्म परानाराय
 णनाम देवता ९ प्रीति पूर्वक स्थित हुए १० मनवाणी ११ और मन की वृत्तियों
 से १२ योगमार्ग को समाप्त करते इमं योगी १३ योगधन की १४ पुष्टि १५ औ
 र स्मृत वर्षा से १६ भले प्रकार आनन्दयुक्त होवें १७ ये १८ ज्योतिरूप १९ अ
 मृतसंप्रज्ञांश्च २० भुक्त योगी के २१ मोक्षकारण २२ ही २३ हों २४ हे इन्द्रि
 यशक्ति समूह २५ विषयों से रक्षा करो २६ हे मन २७ इस आत्मरूप यज
 मान को २८, २९ विषय सेवन से मत नाश करो अर्थात् मोक्षमार्ग से वि
 मुख मत करो ॥ १॥

आपोऽस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतं प्वः
 पुनन्तु। विश्वं हि रिप्सु वहन्ति देवी रुदिदाम्यः।
 सुचिरपूत एमि। दीक्षा तपसोस्तनूरे सितान्त्वाशि
 वाथ शग्मा म्परिदुधे भद्रवर्णपुष्यन् २
 मातरः। आपः। अस्मान्। शुन्धयन्तु। घृतं प्वः। घृतेन। नः।

पुनन्तु। हि। देवी। आपः। विश्वं। रिप्रम्। प्रवहन्ति। आभ्यः
मुत्तिः। आपूतः। उत। इत। एमि। दीक्षातपसोः। तनू। आसि।
तामे। शिवो थं। शग्मोम। त्वो। भद्र। वैणी। पुष्येन। परिदेधो२

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं, तड़ाग आदिके जल में स्नान करता है और जल से ऊपर आता है उसका मंत्र १ यजमान स्नान के पीछे आचमन करके जल से बाहर निकल कर सौम वस्त्र अथवा नित्य में पहने की धोती को जो कि धोबी ने नदी घोई हो और जिससे मूजोत्सर्ग न किया हो धारण करता है और नीवीनहीं करता है उसका मंत्र २ ओं आप इत्यस्य (प्रजापति ऋ० स्वराड् ब्राह्मी त्रिष्टुप्छं० आपो दे०) १ ओं दीक्षातपसोरित्यस्य (तथा तथा वासो दे०) २

पदार्थः - १ माता की समान पालन करने वाले २ हे जलो ३ हम क्षौर करने वाले यजमानों को ४ शुद्ध करो ५ हे स्नितजलों से पवित्र करने वाले जल देवताओ ६ स्नितजल से हम को ८ शुद्ध करो ९ जिस कारण १० द्योतमान ११ जल १२ सब १३ पाप को १४ दूर करते हैं १५ जल द्वारा १६ स्नान से बाहर शुद्ध १७ और आचमन से अंतःकरण में शुद्ध में १८ जल से ऊपर १९ ही २० जाता है हे सौम वस्त्र तुम २१ दीक्षा भिमानी और तपो भिमानी देवता के २२ शरीर तुल्य प्रिय २३ हौ २४ उस दीक्षातप के शरीर रूप २५ कल्याण स्वरूप २६ कौमल होने से सुख रूप २७ तुम्ह को २८ तेरे धारण से कल्याण रूप २९ कांतिको ३० बढ़ाता में ३१ धारण करता है ३२

अथाध्यात्मम् - १ जगत्का निर्माण करने वाले २ ब्रह्म ज्योतिरस रूप हे जलो ३ हम योगियों को ४ शुद्ध करो ५ और इन्द्रिय शक्तियों से पवित्र करने वाले प्राण ६ इन्द्रिय शक्ति द्वारा ७ हम आत्म रूप यजमानों को ८ शुद्ध करो ९ जिस कारण १० ब्रह्म ज्योति रूप ११ जल १२ सब १३

पाप को १४ दूर करते हैं १५ इनजलो के द्वारा १६ माया रहित १७ ब्रह्म भाव को प्राप्त में १८ प्राण को १९ ही प्राप्त करता हूँ २० हे हृदय मैं विद्यमान जीव रूप पर शक्ति तुम २१ योग यज्ञ की दीक्षा और योगानुष्ठान रूप तप को २२ विस्तार करने वाले २३ हौ २४ उस २५ आनंद स्वरूप २६ मोक्ष सुख रूप २७ तुम्ह को २८ ब्रह्मा विष्णु महेश और ब्रह्माग्नि २९ रूप को ३० ग्रहण करता मैं ३१ धारण करता हूँ ॥ २॥

महीनाम्पयोऽसिर्वर्चोदाऽसिर्वर्चो मे देहि । वृत्र

स्यासिकनीनकश्चसुर्दाऽसिर्वचसु

मे देहि ॥ ३ ॥

महीनाम्पयोः पयोः । असि । वर्चोदाः । असि । मे । वर्चो । देहि । वृत्रस्य कनीनकः । असि । चसुर्दाः । असि । मे । चसु । देहि ॥ ३ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं, यजमान शाला के पूर्व भाग में निकट ही कुशाओं पर पूर्व मुख बैठ कर गोक के मकरवृन् से मस्तक से पांव तक उबटना करता है उसका मंत्र १ त्रिकुतपर्वत के अंजन को अथवा उसके न मिलने में दूसरे अंजन को अधर्यु यजमान की दाहिनी आख में दो बार और बायीं आख में तीन बार लगाता है उसका मंत्र २ ओं महीना मित्यस्य (प्रजापतिं चरं भुरिगं विष्णुं च नवनीतं दे) १

ओ वृत्रस्यासीत्यस्य (तथा तथा अज्जनं दे) २

पटार्थः— हे नवनीता भिमानी देवता तुम शोशो के २ दुग्ध ३ हौ ४ अति क्षिप्र होने से कांति दाता ५ हौ ६ मुझ यजमान के लिये ७ कांति ८ दी जिये हे अंजना भिमानी देवता तुम ९ वृत्रा सुर के १० नेत्र की पुतली ११ हौ

अभ्यञ्ज— अंजन को देता सुर की पुतली क्यों कहा। उत्तर श्रुति से जब इन्द्र ने वृत्रा सुर को मारा तब उस की आख भूमि पर गिर कर त्रिकुतपर्वत हो गई जिस का अंजन होता है ॥

१२ दृष्टि के दाता १३ हो १४ मुझे १५ पूर्ण दृष्टि १६ दीजिये ॥ ३॥

अथाध्यात्मम् = हे इन्द्रिय शक्ति समूह तुम १ इन्द्रियों के २ रस ३ हो ४ ब्रह्म तेज के दाता ५ हो, क्योंकि इन्द्रियों के निरोध से ब्रह्म तेज की प्राप्ति होती है इस कारण ६ मुझे ७ ब्रह्म तेज ८ दीजिये, हे ज्ञानां जन तु ९ पाप के १० जमाई अर्थात् संतति द्वारा पाप के शोधक ११ हो १२ ज्ञान चक्षु के दाता १३ हो तिस कारण १४ मुझे १५ ज्ञान चक्षु १६ दीजिये ॥

चित्पतिर्मा पुनातु वाक् पतिर्मा पुनातु देवो मा स
विता पुनातु च्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः
तस्यैते पवित्रपते पवित्र पूतस्य यत्कामः पुनेतु च्छेदयेन्म
अच्छिद्रेण। पवित्रेण। सूर्यस्य। रश्मिभिः। चित्पतिः। मा। पुनातु।
वाक् पतिः। मा। पुनातु। सविता। देवः। मा। पुनातु। पवित्रपते। तस्य
पवित्र पूतस्य। तौ यतः। कामः। पुनो ततः। शक्यम् ॥ ४॥

अथाधिदैवम् = इस कंडिका में ३ मंत्र हैं, मूलाग्र सहित सात वातीन वा एक कुश पवित्रों से नामि के ऊपर दो बार और नामि के नीचे एक बार मार्जन करता है उसके मंत्र १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २१, २२, २३, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, ३२, ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५०, ५१, ५२, ५३, ५४, ५५, ५६, ५७, ५८, ५९, ६०, ६१, ६२, ६३, ६४, ६५, ६६, ६७, ६८, ६९, ७०, ७१, ७२, ७३, ७४, ७५, ७६, ७७, ७८, ७९, ८०, ८१, ८२, ८३, ८४, ८५, ८६, ८७, ८८, ८९, ९०, ९१, ९२, ९३, ९४, ९५, ९६, ९७, ९८, ९९, १००, १०१, १०२, १०३, १०४, १०५, १०६, १०७, १०८, १०९, ११०, १११, ११२, ११३, ११४, ११५, ११६, ११७, ११८, ११९, १२०, १२१, १२२, १२३, १२४, १२५, १२६, १२७, १२८, १२९, १३०, १३१, १३२, १३३, १३४, १३५, १३६, १३७, १३८, १३९, १४०, १४१, १४२, १४३, १४४, १४५, १४६, १४७, १४८, १४९, १५०, १५१, १५२, १५३, १५४, १५५, १५६, १५७, १५८, १५९, १६०, १६१, १६२, १६३, १६४, १६५, १६६, १६७, १६८, १६९, १७०, १७१, १७२, १७३, १७४, १७५, १७६, १७७, १७८, १७९, १८०, १८१, १८२, १८३, १८४, १८५, १८६, १८७, १८८, १८९, १९०, १९१, १९२, १९३, १९४, १९५, १९६, १९७, १९८, १९९, २००, २०१, २०२, २०३, २०४, २०५, २०६, २०७, २०८, २०९, २१०, २११, २१२, २१३, २१४, २१५, २१६, २१७, २१८, २१९, २२०, २२१, २२२, २२३, २२४, २२५, २२६, २२७, २२८, २२९, २३०, २३१, २३२, २३३, २३४, २३५, २३६, २३७, २३८, २३९, २४०, २४१, २४२, २४३, २४४, २४५, २४६, २४७, २४८, २४९, २५०, २५१, २५२, २५३, २५४, २५५, २५६, २५७, २५८, २५९, २६०, २६१, २६२, २६३, २६४, २६५, २६६, २६७, २६८, २६९, २७०, २७१, २७२, २७३, २७४, २७५, २७६, २७७, २७८, २७९, २८०, २८१, २८२, २८३, २८४, २८५, २८६, २८७, २८८, २८९, २९०, २९१, २९२, २९३, २९४, २९५, २९६, २९७, २९८, २९९, ३००, ३०१, ३०२, ३०३, ३०४, ३०५, ३०६, ३०७, ३०८, ३०९, ३१०, ३११, ३१२, ३१३, ३१४, ३१५, ३१६, ३१७, ३१८, ३१९, ३२०, ३२१, ३२२, ३२३, ३२४, ३२५, ३२६, ३२७, ३२८, ३२९, ३३०, ३३१, ३३२, ३३३, ३३४, ३३५, ३३६, ३३७, ३३८, ३३९, ३४०, ३४१, ३४२, ३४३, ३४४, ३४५, ३४६, ३४७, ३४८, ३४९, ३५०, ३५१, ३५२, ३५३, ३५४, ३५५, ३५६, ३५७, ३५८, ३५९, ३६०, ३६१, ३६२, ३६३, ३६४, ३६५, ३६६, ३६७, ३६८, ३६९, ३७०, ३७१, ३७२, ३७३, ३७४, ३७५, ३७६, ३७७, ३७८, ३७९, ३८०, ३८१, ३८२, ३८३, ३८४, ३८५, ३८६, ३८७, ३८८, ३८९, ३९०, ३९१, ३९२, ३९३, ३९४, ३९५, ३९६, ३९७, ३९८, ३९९, ४००, ४०१, ४०२, ४०३, ४०४, ४०५, ४०६, ४०७, ४०८, ४०९, ४१०, ४११, ४१२, ४१३, ४१४, ४१५, ४१६, ४१७, ४१८, ४१९, ४२०, ४२१, ४२२, ४२३, ४२४, ४२५, ४२६, ४२७, ४२८, ४२९, ४३०, ४३१, ४३२, ४३३, ४३४, ४३५, ४३६, ४३७, ४३८, ४३९, ४४०, ४४१, ४४२, ४४३, ४४४, ४४५, ४४६, ४४७, ४४८, ४४९, ४५०, ४५१, ४५२, ४५३, ४५४, ४५५, ४५६, ४५७, ४५८, ४५९, ४६०, ४६१, ४६२, ४६३, ४६४, ४६५, ४६६, ४६७, ४६८, ४६९, ४७०, ४७१, ४७२, ४७३, ४७४, ४७५, ४७६, ४७७, ४७८, ४७९, ४८०, ४८१, ४८२, ४८३, ४८४, ४८५, ४८६, ४८७, ४८८, ४८९, ४९०, ४९१, ४९२, ४९३, ४९४, ४९५, ४९६, ४९७, ४९८, ४९९, ५००, ५०१, ५०२, ५०३, ५०४, ५०५, ५०६, ५०७, ५०८, ५०९, ५१०, ५११, ५१२, ५१३, ५१४, ५१५, ५१६, ५१७, ५१८, ५१९, ५२०, ५२१, ५२२, ५२३, ५२४, ५२५, ५२६, ५२७, ५२८, ५२९, ५३०, ५३१, ५३२, ५३३, ५३४, ५३५, ५३६, ५३७, ५३८, ५३९, ५४०, ५४१, ५४२, ५४३, ५४४, ५४५, ५४६, ५४७, ५४८, ५४९, ५५०, ५५१, ५५२, ५५३, ५५४, ५५५, ५५६, ५५७, ५५८, ५५९, ५६०, ५६१, ५६२, ५६३, ५६४, ५६५, ५६६, ५६७, ५६८, ५६९, ५७०, ५७१, ५७२, ५७३, ५७४, ५७५, ५७६, ५७७, ५७८, ५७९, ५८०, ५८१, ५८२, ५८३, ५८४, ५८५, ५८६, ५८७, ५८८, ५८९, ५९०, ५९१, ५९२, ५९३, ५९४, ५९५, ५९६, ५९७, ५९८, ५९९, ६००, ६०१, ६०२, ६०३, ६०४, ६०५, ६०६, ६०७, ६०८, ६०९, ६१०, ६११, ६१२, ६१३, ६१४, ६१५, ६१६, ६१७, ६१८, ६१९, ६२०, ६२१, ६२२, ६२३, ६२४, ६२५, ६२६, ६२७, ६२८, ६२९, ६३०, ६३१, ६३२, ६३३, ६३४, ६३५, ६३६, ६३७, ६३८, ६३९, ६४०, ६४१, ६४२, ६४३, ६४४, ६४५, ६४६, ६४७, ६४८, ६४९, ६५०, ६५१, ६५२, ६५३, ६५४, ६५५, ६५६, ६५७, ६५८, ६५९, ६६०, ६६१, ६६२, ६६३, ६६४, ६६५, ६६६, ६६७, ६६८, ६६९, ६७०, ६७१, ६७२, ६७३, ६७४, ६७५, ६७६, ६७७, ६७८, ६७९, ६८०, ६८१, ६८२, ६८३, ६८४, ६८५, ६८६, ६८७, ६८८, ६८९, ६९०, ६९१, ६९२, ६९३, ६९४, ६९५, ६९६, ६९७, ६९८, ६९९, ७००, ७०१, ७०२, ७०३, ७०४, ७०५, ७०६, ७०७, ७०८, ७०९, ७१०, ७११, ७१२, ७१३, ७१४, ७१५, ७१६, ७१७, ७१८, ७१९, ७२०, ७२१, ७२२, ७२३, ७२४, ७२५, ७२६, ७२७, ७२८, ७२९, ७३०, ७३१, ७३२, ७३३, ७३४, ७३५, ७३६, ७३७, ७३८, ७३९, ७४०, ७४१, ७४२, ७४३, ७४४, ७४५, ७४६, ७४७, ७४८, ७४९, ७५०, ७५१, ७५२, ७५३, ७५४, ७५५, ७५६, ७५७, ७५८, ७५९, ७६०, ७६१, ७६२, ७६३, ७६४, ७६५, ७६६, ७६७, ७६८, ७६९, ७७०, ७७१, ७७२, ७७३, ७७४, ७७५, ७७६, ७७७, ७७८, ७७९, ७८०, ७८१, ७८२, ७८३, ७८४, ७८५, ७८६, ७८७, ७८८, ७८९, ७९०, ७९१, ७९२, ७९३, ७९४, ७९५, ७९६, ७९७, ७९८, ७९९, ८००, ८०१, ८०२, ८०३, ८०४, ८०५, ८०६, ८०७, ८०८, ८०९, ८१०, ८११, ८१२, ८१३, ८१४, ८१५, ८१६, ८१७, ८१८, ८१९, ८२०, ८२१, ८२२, ८२३, ८२४, ८२५, ८२६, ८२७, ८२८, ८२९, ८३०, ८३१, ८३२, ८३३, ८३४, ८३५, ८३६, ८३७, ८३८, ८३९, ८४०, ८४१, ८४२, ८४३, ८४४, ८४५, ८४६, ८४७, ८४८, ८४९, ८५०, ८५१, ८५२, ८५३, ८५४, ८५५, ८५६, ८५७, ८५८, ८५९, ८६०, ८६१, ८६२, ८६३, ८६४, ८६५, ८६६, ८६७, ८६८, ८६९, ८७०, ८७१, ८७२, ८७३, ८७४, ८७५, ८७६, ८७७, ८७८, ८७९, ८८०, ८८१, ८८२, ८८३, ८८४, ८८५, ८८६, ८८७, ८८८, ८८९, ८९०, ८९१, ८९२, ८९३, ८९४, ८९५, ८९६, ८९७, ८९८, ८९९, ९००, ९०१, ९०२, ९०३, ९०४, ९०५, ९०६, ९०७, ९०८, ९०९, ९१०, ९११, ९१२, ९१३, ९१४, ९१५, ९१६, ९१७, ९१८, ९१९, ९२०, ९२१, ९२२, ९२३, ९२४, ९२५, ९२६, ९२७, ९२८, ९२९, ९३०, ९३१, ९३२, ९३३, ९३४, ९३५, ९३६, ९३७, ९३८, ९३९, ९४०, ९४१, ९४२, ९४३, ९४४, ९४५, ९४६, ९४७, ९४८, ९४९, ९५०, ९५१, ९५२, ९५३, ९५४, ९५५, ९५६, ९५७, ९५८, ९५९, ९६०, ९६१, ९६२, ९६३, ९६४, ९६५, ९६६, ९६७, ९६८, ९६९, ९७०, ९७१, ९७२, ९७३, ९७४, ९७५, ९७६, ९७७, ९७८, ९७९, ९८०, ९८१, ९८२, ९८३, ९८४, ९८५, ९८६, ९८७, ९८८, ९८९, ९९०, ९९१, ९९२, ९९३, ९९४, ९९५, ९९६, ९९७, ९९८, ९९९, १०००

पदार्थ = १ वायुरूप २ पवित्रा से ३ और सूर्य की ४ किरणों से ५ जीवात्माओं का स्वामी ब्रह्मा ६ मुक्त यजमान को ७ मुक्त करे ८ वेद वचनों का स्वामी विष्णु ९ मुक्त को १० पवित्रा करे ११ ज्योति स्वरूप १२ ब्रह्मांड का आत्मा सब का प्रेरक ईश १३ मुक्त को १४ मुक्त करे, अध्वर्य कहता है १५ पवित्र वस्तु वा इन्द्रियों के स्वामी हे यजमान १६ उस १७ पूर्वोक्त पवित्रा से मुक्त १८ आपकी १९ जो २० सोम यागानुष्ठान रूप कामना है तथा मेरी २१ तुम को शोधन करता हूं २२ वह दोनों प्रकार की २३ जा

मना पूर्ण करने को समर्थ होऊँ ॥ ४ ॥

अथाध्यात्मम्— योगी प्रार्थना करता है, १ प्राण रूप २ पवित्रा से जो कि श्रुति के अनुसार एक वा प्राण, उदान, व्यान, नाम से तीन अथवा सात भी है ३ और मानस सूर्य की ४ किरणों से ५ जीवेश्वर का स्वामी ब्रह्म ६ मुझ को ७ पवित्र करो ८ बुद्धि ९ मुझ को १० पवित्र करो ११ इन्द्रियों का प्रकाशक १२ मन १३ मुझ को १४ पवित्र करो, ज्ञान चक्षु कहता है १५ हे प्राण पति यजमान १६ उस १७ पूर्वोक्त पवित्रा से शुद्ध १८ आप की १९ जो २० प्रति विंव होम रूप का मना है तथा में भी २१ तुम्हें शोधन करता हूँ २२ वह दोनों प्रकार की कामना २३ सिद्ध करने को समर्थ होऊँ ॥ ४ ॥

आवो देवास ईमहे वामम्रयत्युद्धरे। आवो देवा

स आशिषो यन्नि यासो हवामहे ॥ ५ ॥

देवासः। अध्वरः। प्रयेति। वामम्। वः। आ। ईमहे। देवासः। यजि
यासः। आशिषः। आ। वः। हवामहे ॥ ५ ॥

अथाधिदैवम्— अध्वर्यु यजमान से मंत्रोच्चारण कराता है ॥

ओं आवो देवास इत्यस्य (प्रजापति ऋ० निचुदार्ष्यनुष्टुप् छ० आशीर्दे) १

पदार्थः— १ हे देवता ओ हम २ यज्ञ ३ वर्तमान होने पर ४ यज्ञ फल को ५ तुम से ६, ७ मांगते हैं और ८ हे देवता ओ हम ९ यज्ञ सम्बन्धी १० फल ११ प्राप्त करने को १२ तुम्हें १३ आवाहन करते हैं ॥ ५ ॥

अथाध्यात्मम्— १ हे ब्रह्म परानारायण नाम देवता ओ हम २ योग यज्ञ वा ज्ञान यज्ञ के ३ वर्तमान होने पर ४ ब्रह्मा विष्णु महे श रूप सूर्य को ५ तुम से ६, ७ चाहते हैं ८ और हे देवता ओ हम ९ योग यज्ञ सम्बन्धी १० आशीर्वादे ११ प्राप्त करने को १२ तुम्हें १३ आवाहन करते हैं ५

स्वाहा यज्ञम्मनसः स्वाहा रो रन्तरिक्षात्। स्वाहा द्या
वापृथिवीभ्यां स्वाहा वातादारुभे स्वाहा ॥ ६ ॥
स्वाहा। यन्मू। मनसः। आरभे। स्वाहा। उरो। अन्तरिक्षात्
स्वाहा। द्यावापृथिवीभ्यां। स्वाहा। वातात्। स्वाहा ॥ ६ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ४ मंत्र हैं, पहले मंत्र से दोनों हा
थ की कनिष्ठिका अंगुलियों को सकोड़ कर शेष मंत्रों से दूसरी अंगुलि
यों को सकोड़ कर मुट्ठी बांध कर स्वाहा कह कर मौन हो कर फिर खोलता
है उसके मंत्र १, २, ३, ४, ॥

ओं स्वाहा यज्ञमित्यस्य (प्रजापतिर्ऋ० निच्युदार्थनुष्ठुपखं यज्ञोदे०) १, २, ३, ४

पदार्थः— १ वाणी का संयमन करना चाहिये, इस वेद वाक्य से २ यज्ञ को
३ मन से ४ आरंभ करता हूँ ५ श्रुति प्रमाण द्वारा ६ विस्तीर्ण ७ हृदय के अन्त
रिक्ष से यज्ञ को आरंभ करता हूँ ८ श्रुति प्रमाण द्वारा ९ मन और हृदय के अ
भिमानी देवताओं से यज्ञ को आरंभ करता हूँ १० श्रुति प्रमाण द्वारा ११ प्रा
ण से उस यज्ञ को प्रत्यक्ष आरंभ करता हूँ १२ श्रुति प्रमाण द्वारा अर्थात् वाणी
ही यज्ञ है उसको आत्मा में धारण करता है ॥ ६ ॥

अथाध्यात्मम्— १ गुरु के उपदेश से २ योग यज्ञ को ३ मन से ४ आरं
भ करता हूँ ५ श्रुति प्रमाण से वह मेरा मन शिव संकल्प हो ६ विस्तीर्ण ७ हृ
दय के अन्तरिक्ष से यज्ञ को आरंभ करता हूँ ८ इस श्रुति के प्रमाण से किय
हूँ हृदय प्रजापति है ब्रह्म है यह सब है ब्रह्म रूप हो ९ पृथिवी स्वर्ग के अ
भिमानी नीच ईश से यज्ञ को आरंभ करता हूँ १० इस श्रुति प्रमाण के द्वा
रा कि जैसे से उत्पन्न होता है वैसा ही होता है, इन दोनों का एकत्व हो ११
प्राण से यज्ञ को आरंभ करता हूँ १२ प्राण ब्रह्म है इस श्रुति के अनुसार
ब्रह्म भाव को प्राप्त करो ॥ ६ ॥

गर्भ २२ तथा हे विस्तीर्ण २३ अन्तरिक्ष तुम्हारे अर्थ २४ और ब्रह्म के लिये २५ हवि
२६ देते हैं २७ ओष्ठ होम हो ॥७॥

अथाध्यात्मम्— श्योग यज्ञ का जो संकल्प है उस की सिद्धि के अर्थ २८ सब के
मेरक २९ ब्रह्माग्नि के लिये ४ जीव रूप हवि दिया ५ अहं ब्रह्मास्मि, इस बुद्धि के लाभ
र्थ ६ मन रूप ७ अग्नि के लिये ८ इन्द्रिय रूप हवि दिया ९ योग यज्ञ का जो नि
यम है उस की सिद्धि के अर्थ १० विचारत्मक ब्रह्मज्ञान रूप ११ अग्नि के लिये
१२ सब कर्मों की आहुति हो १३ जो महा वाक् धारणा शक्ति है उसके अर्थ १४
पोषक १५ ब्रह्माग्नि के लिये १६ सब उपाधियां सुद्धत हों १७ हे ज्योतिस्वरूप
१८ महान् १९ सब को ब्रह्मानन्द देने वाले २० ब्रह्मज्योतिस्वरूप जलो
२१ हे भृकुटि मन २२ २३ हे विस्तारवान् हार्दन्ति रिक्ष तुम्हारे और २४ ब्रह्म के
लिये क्रम पूर्वक २५ जीव रूप हवि को २६ चारों ओर से देते हैं २७ ओष्ठ होम हो ७

विश्वो देवस्य ने तुर्मर्त्ते वुरीत सख्यम् । विश्वो
गय इषु ध्यति द्युम्नं वृणीत पुष्य से स्वाहा ॥ ८ ॥
विश्वो । मर्त्ते । नेतु । देवस्य । सख्यम् । वुरीत । पुष्य से । द्युम्नं वृणी
त । विश्वो । गयै । इषु ध्यति । स्वाहा ॥ ८ ॥

अथाधिदैवम्— पांचवें ओष्ठ भरण को होमता है उसका मंत्र १
जो विश्वो देवस्येत्यस्य (स्वस्त्या चेत्यन्तरं आर्ष्यं नुष्टुपं च संविता देव) १

पदार्थः १ सब २ मनुष्य ३ फल प्रापक ४ दान आदि गुण से युक्त परमेश्व
र के ५ सखि भाव अर्थात् भक्ति को ६ चाहौ ७ कर्म उपासना ज्ञान की पुष्टि
के लिये ८ अन्न को ९ चाहौ क्योंकि १० सब मनुष्य ११ धन के लिये १२ ईश्व
र से प्रार्थना करते हैं १३ उस परमेश्वर के लिये ओष्ठ होम हो ॥ ८ ॥

अथाध्यात्मम्— विना उपासना के योग प्राप्ति दुर्लभ है उस
कारण उपासना को कहते हैं १ सब २ राज प्रधान सत्व प्रधान तम प्रधान

शुद्ध सत्व मय-चारप्रकार के पुरुष ३ सबके प्रेरक ४ हृदयस्थ नारायण की ५ अनन्य भक्ति को ६ चाहौ ७ कर्म उपासना ज्ञान की पुष्टि केलिये ८ अन्न को ९ चाहौ क्योंकि १० सूत्र मनुष्य ११ सांसारिक धन वा योग संपत्ति केलिये १२ नारायण से प्रार्थना करते हैं १३ उस नारायण के अर्थ श्रेष्ठ होम हो ॥ ८ ॥

**ऋक्ता मयोः शिल्पे स्यस्तेवामारभेते मापातमा
स्य यज्ञस्योद्वचः । शर्म्मासि शर्म मे यच्छुनम**

मस्ते अस्तु मामाहि ११ सीः ६

ऋक् सामयोः १ शिल्पे २ स्यः ३ ते ४ वा ५ आरभे ६ ते ७ मा ८ अस्य
यज्ञस्य ९ आउद्वचः १० पात ११ शर्म्मा १२ असि १३ मे १४ शर्म्मा १५ यच्छु
ते १६ नमः १७ अस्तु १८ मा १९ मा २० हि २१ सीः २२ ॥ ६ ॥

अथाधिदैवम् — इस कंडिका में दो मंत्र हैं, यजमान मृगचर्म के शुक्ल रुषा वर्ण रोमों की संधि को हाथ से स्पर्श करता है उसका मंत्र १ यजमान मृगचर्म पर दाहिने जानु से चढ़ता है और पश्चिम भाग में उसी दक्षिण जानु से बैठता है उसका मंत्र २

ऋक्ता मयोरित्यस्य आद्रि रसऋक् आर्षी पक्ति ऋक् रुषा जिनदे १ २

प्रदार्थः — हे मृगचर्म में विद्यमान श्वेत श्याम रेखा ओतुम १ ऋग्वेद और सामवेद के २ समान ३ हौ ४ उस प्रकार की ५ तुम को ६ स्पर्श करता हूँ ७ वेतुम ८ मुझ को ९ इस १० यज्ञ की ११ समाप्तिक १२ रक्षा करो हे रुषा जिन तुम १३ शरण १४ हौ इस कारण १५ मुझे १६ शरण १७ दीजिये १८ तुमको १९ नमस्कार २० हौ २१ मुझ यजमान को २२ २३ मत मागे ॥ ६ ॥

अथाध्यात्मम् — हे हृदय में विद्यमान इडा पिंगला नाडी तुम दो नो १ ऋग्वेद और सामवेद के २ सदृश ३ हौ ४ उन ५ दोनों को ६ स्पर्श

करता हूँ ७ वेतुम ८ मुक्त को ९ इस १० योग यन्त्र की ११ सुषुम्ना मध्य प्राप्ति-
चिन्ता नाम नाडी की प्राप्तितक १२ रक्षा करो हे हृदय तुम १३ शरण १४ हो
१५ सुभे १६ शरण १७ दीजिये १८ तुमको १९ नमस्कार २० हो २१ सुभ-
योगी को २२, २३ मत नाश करो ॥ ७ ॥ ८ ॥

उर्गस्याङ्गिरस्यूर्णमृदा ऊर्जम्मयिधेहि । सोमस्य
नीविरसि विषाणोः शर्म्मसि शर्मयजमानस्येन्द्र
स्य योनिरसि सुसस्याः कृषी स्तुधि । उच्छ्रयस्त
वनस्पत ऊर्ध्वीमा पाह्य ७ इ स आस्य यूज्ञस्योद्वः १०
आङ्गिरसी । ऊर्क । ऊर्ण मृदा । अस्ति । ऊर्जम् । मयि । धेहि ।
सोमस्य । नीवि । अस्ति । विषाणो । शर्म्म । अस्ति । यजमान-
स्य । शर्म्म । इन्द्रस्य । योनिः । अस्ति । कृषिः । सुसस्याः । क-

७ मन्त्र, नाडियों के मध्य कौन मुख्य हैं, इडा, पिंगला, सुषुम्ना, सरस्वती, अ-
लम्बूषा, कुहू, शशिनी, त्रिनिणी, विश्वोदरी, विश्व मुखी ये दश नाडी योग
मार्ग मे कही हैं। उनमें तीन नाडी मुख्य कही हैं इडा नाडी वाम ओर स्थित है
पिंगला दाहिनी ओर है, उन दोनों के मध्य सुषुम्ना नाडी कही है। चंद्र सूर्य
अग्नि स्वरूप ओर ब्रह्म स्थान में विद्यमान वह नाडी शिर से दोनों पादाङ्गुष्ठ तक
चली गई है, उस सुषुम्ना के मध्य योगियों की प्रिय चिन्ता नाम नाडी विद्यमान
है, उसमें कमल सूत्र के तुल्य श्रेष्ठ ब्रह्मरन्ध्र को कहा है ॥ इडा में चन्द्रमा ओर
पिङ्गला में सूर्य चलता है, योग निदान के जानने वालों ने उन दोनों को सुषुम्ना
में जाना है योगी इडा नाडी के द्वारा बाह्य वायु को १६ मात्रा तक खींचे और पूरि-
त वायु को ६४ मात्रा तक धारण करे श्रेष्ठ योगी सुषुम्ना के मध्य प्राप्त वायु को १२
मात्रा में धीरे २ पिङ्गला नाडी द्वारा भले प्रकार निकाले, योग शास्त्र के जानने
वालों ने इस को प्राणा याम कहा है ॥ ८ ॥

धिः^{३१}। वनस्पते^{३३}। उच्छ्रयस्व^{३३}। ऊर्द्धिः^{३४}। अस्त्य^{३५}। यज्ञस्य^{३६}। आउ^{३७} दृचः^{३८}। मा^{३९}
अ^{४०} थं हसः^{४०}। पोहि॥ १० ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ६ मंत्र हैं, उन को कहते हैं यजमानवेणीके आकार तिहरी शण मूंज मिश्रित मेखला धोती के भीतर बांधता है उस का मंत्र १ नीवी करता है उस का मंत्र २ डुपट्टा वा पगडी से शिर का आच्छादन करता है उस का मंत्र ३ रुषा ऋग की विषाण को तीन वा पांच ग्रंथि से युक्त करके ऊंची दशा में बांधता है यदि शरीर में कण्ड उत्पन्न हो तो उस से खुजाता है और दक्षिण भोह के ऊपर ललाट में स्पर्श करता है उस का मंत्र ४ उसी विषाण से वेदी के बाहर पूर्व में रेखा करता है उस का मंत्र ५ यजमान के मुख के बराबर गूलर का दण्ड अध्वर्यु यजमान को देता है और यजमान उसे ऊंचा करता है उस का मंत्र ६ ओऊर्गसीत्यस्य (आङ्गिरसऋ० निचुर्दार्षीजगती० मेखलानीविस्वरुषा विषाणादे) ओउच्छ्रयस्तेत्यस्य (आ० ऋ० साम्नी विष्टुप० रुषा विषाणा दण्डौदे) ५, ६

पदार्थः— हे मेखला तुम १ अङ्गिरा वंशी ऋषियों से सम्बन्ध रखने वाली २ अन्नरस रूप ३ ऊन की समान कोमल ४ हो तुम ५ अन्नरस को ६ मुक्त में ७ स्थापन करो, हे मेखला तुम ८ सोम देवता की ९ प्रिय ग्रंथि १० हो हे वस्त्र तुम ११ व्यापक यज्ञ पुरुष के १२ सुख हेतु १३ हो इस कारण १४ यजमान का १५ सुख करो, हे रुषा विषाण तुम १६ इन्द्र के १७ प्रादुर्भाव स्था

१० स्वर्गलोक की जाते अङ्गिरा वंशी ऋषियों ने अन्नरस का विभाग किया निभाग करते बचा हुआ अन्नरस भूमि पर गिरा और शण मुञ्ज नामट्टाण रूप से प्रकट हुआ इस कारण शण मुञ्ज की मेखला करते हैं और इसी से वह अङ्गिरा वंशी ऋषियों से सम्बन्ध रखने वाली है ॥ (२० मूल और अंगु के एकीकरण को नीवी अर्थात् गांठ कहते हैं ॥

न १८ हौं १९ यजमान की खेतियां २० चावल जौ आदि शोभन अन्नो से युक्त
२१ करो २२ हे वृक्ष के अंग दंड २३ ऊंचा हो २४ और ऊंचा हो कर २५ इस-
२६ यज्ञ की २७ समाप्ति पर्यंत २८ मुझ को २९ पाप से ३० रक्षा कर ॥ १०

अथाध्यात्मम् — हे सुषुम्नानाडी तुम १ प्राण सम्बन्धी २
देह रूप अन्न की सार भूत ३ ऊन की समान को मूल ४ हौं ५ विराट् रूप
अन्न को ६ मुझ में ७ स्थापन करो ८ तुम अमृत मोक्ष की ९ ग्रथि १० हौं
अर्थात् तुम में मुक्ति स्थित है हे भृकुटि तुम ११ दीक्षित योगी की ॥ १२
ब्रह्मा नन्द हेतु १३ हौं इस कारण १४ यजमान को १५ मोक्ष सुख प्राप्त क
राओ हे महा वाक् और ज्ञान यन्त्र के मिथुन तुम १६ यजमान के १७ जी
वन मुक्ति रूप से प्रादुर्भाव के कारण १८ हौं ॥ १९ अष्ट सिद्धि और नव नि-
धि रूप खेतियों को २० फल युक्त २१ करो २२ हे नासिका गत प्राण के स्वा
मी शिव रूप आत्मा २३ गगन मंडल को जाओ २४ गगन मंडल में स्थि-
त हो कर २५ इस २६ योग यज्ञ की २७ समाप्ति तक २८ अपने प्रति विष्
मुझ को २९ पाप से ३० रक्षा करो ॥ १० ॥

॥ अति कहती है, यजमान के दो नाम हैं, दीक्षा में विष्णु होता है और
जब यज्ञ करता है तब यजमान कहा जाता है ॥

॥ अति कहती है, कि यज्ञ ने महा वाक् को ध्यान किया कि मेरा इसके सा-
थ मिथुन हो उससे युक्त होऊँ इन्द्र रूप यजमान ने विचार किया कि इस यज्ञ
और महा वाक् के मिथुन से बड़ा प्रतापी उत्पन्न होगा वह मेरा तिरस्कार न करे
यह शोच कर इन्द्र ही गर्भ हो कर इस मिथुन में प्रवेश हुआ, एक वर्ष में जन्म
ले कर विचार यह योनि बड़े योग बल वाली है जिसने मुझ को धारण किया
और मेरे उल्टे महान हुआ इस लिये अब को ईदूसरा इससे जन्म न ले जो मेरा ति-
रस्कार करे ऐसा विचार कर उसको गुप्त किया अर्थात् उसको सूर्य में धारण किया ॥

व्रतङ्कृणुताग्निर्वह्नाग्निर्यज्ञो वनस्पतिर्यज्ञियः
 दैवीन्धियम्मना महे सुमृडी कामभिष्टयेवर्चधिं
 यज्ञवाहसं सुतीर्थानो असद्वशे ये देवा मनोजा
 तामनो युजो दक्षकतवस्तेनो वन्तु तेनः पान्तु तेभ्यः
 स्वाहा ॥ ११ ॥

व्रतम् । कृणुत । अग्निः । ब्रह्म । अग्निः । यज्ञः । वनस्पतिः । य-
 ज्ञियः । अभिष्टये । दैवी । सुमृडी । काम । वर्चधिं । यज्ञवाहसं
 सुतीर्थानो । नः । वशे ॥ असत् । ये । म-
 नोजाताः । मनोयुजः । दक्षकतवः । देवाः । ते । नः । अवन्तु ।
 तेभ्यः । स्वाहा ॥ ११ ॥

अथाधिदैवम्— इसकंडिका में तीन मंत्र हैं, पूर्व मुख बैठा हुआ
 जो दीक्षित यजमान है वह अध्वर्यु का भेजा हुआ आह वनीय अग्नि के स-
 न्मुख हो कर तीन बार व्रतं कृणुतेति इस मंत्र को पढ़ कर (अग्नि ब्रह्म) इ-
 स एक बार पढ़े हुए मंत्र से वाग् विसर्जन करता है उस का मंत्र १ मृगचर्म
 पर बैठा हुआ यजमान व्रत अर्थात् दुग्ध पान के लिये हाथ धोता है उसका
 मंत्र २ अपने आसन पर बैठा हुआ यजमान मिट्टी के पात्र में दुग्ध पान क-
 रता है उसका मंत्र ॥ ३ ॥

ओं व्रतं कृणुतेत्यस्य (आङ्गिरस ऋषयः • स्वराड्ब्राह्मयुनुष्टुप् छंदः यज्ञो देवः) १
 ओं दैवीन्धियमित्यस्य (तथा • प्राजापत्या जगती छंदः तथा) २
 ओं ये देवा इत्यस्य (तथा • प्राजापत्या त्रिष्टुप् छंदः अग्नि मित्रावरु-
 णादित्य विष्णवे देवा देवः) ३

पदार्थः— १ दुग्ध को २ दोहन आदि से संपादन करे क्योंकि ३ जाठराग्नि
 ब्रह्म है ५ ईश रूप अग्नि ६ यज्ञ पुरुष है ७ देह वृक्ष ८ यज्ञ रूप-

४ गीता में भगवान ने कहा है, मैं वैष्णव रूप हो कर आपिणी के देह में आश्रित और श्री

है ८ सन्मुखप्राप्ति सिद्धि के लिये १० देवता सम्बन्धी ११ श्रेष्ठ सुख की कारण १२ तेज की धारण करने वाली १३ यज्ञ का निर्वह करने वाली १४ बुद्धि को १५ हम चाहते हैं १६ वह सुख से प्राप्ति योग्य अथवा श्रेष्ठ अवतरण मार्ग वाली बुद्धि १७ हमारे १८ वश में १९ प्राप्त हो २० जो २१ दर्शन अवस्था आदि इच्छा रूप मन से उत्पन्न होने वाले २२ और रूप आदि के दर्शन समय भी मन से युक्त अथवा स्वप्नावस्था में मन से योग करने वाले २३ संकल्प कर सिद्धि में कुशल २४ चक्षु आदि इन्द्रिय रूप प्राण हैं २५ वे २६ हम को २७ यज्ञानुष्ठान का विघ्न दूर करने से रक्षा करौ २८ उन प्राण रूप देवताओं के लिये २९ यह दुग्ध हो म हो ॥ ११ ॥

अथाध्यात्मम्— १ योग यज्ञ के व्रत को २ करो क्योंकि ३ आत्माग्नि ४ ब्रह्म है ५ ब्रह्माग्नि ६ यज्ञ पुरुष ईश है ७ नासिका में विद्यमान प्राण का स्वाभीजीवात्मा ८ यज्ञ योग्य हवि है ९ विष्णु और परा शक्ति के यजनार्थ १० ब्रह्म सम्बन्धिनी ११ ब्रह्मानन्द की कारण १२ ब्रह्म तेज की धारक योग यज्ञ १३ का निर्वह करने वाली १४ बुद्धि को १५ हम चाहते हैं १६ वह श्रेष्ठ रूप बुद्धि १७ हमारे १८ वश में १९ हो २० जो २१ मन से उत्पन्न २२ मन में योग शील २३ ज्ञान यज्ञ में कुशल २४ चक्षु आदि इन्द्रियां हैं २५ वे २६ हम योगियों को २७ संसार से रक्षा करो २८ उनके लिये २९ महावाक् जिन का अर्थ यह है कि प्राण, वाणी, चक्षु, श्रोत्र, मन, हृदय ये सब ब्रह्म रूप हैं ॥ ११ ॥

प्रवात्राः पीता भवत यूय मां पोशस्माकं मन्त्रं रुद्रे सुशेवाः । ता अस्मभ्यं मयि हस्माश्रनं मीवाश्रनं गंसः स्वदन्तु देवी रम्यतां चरता वृधः ॥ १२ ॥

▽ यज्ञ साधन होने से वनस्पति को यज्ञ रूप कहा क्योंकि श्रुति कहती है, मनुष्य यज्ञान ही करे जो वनस्पति नहीं होवे ॥

आपः१। यूयम्२। पीतोः३। श्वाचाः४। भवतः५। अस्माकं६। अन्तरि७
 रे। सुशेवाः८। ताः९। अयस्माः१०। अनमीवाः११। अनागसः१२। ऋता-
 वधः१३। देवीः१४। अमृतोः१५। अस्मभ्यम्१६। स्वदन्तु१७॥ १२॥

अथाधिदैवम्— नाभिका स्पर्शकरता है उसका मंत्र।

ओं श्वाचा इत्यस्य (आद्भिः रस ऋ० जगती छं० आपो देवता) १

पदार्थः— १ हे दुग्धरूपजलो २ तुम ३ मुझ से पान किये हुए ४ जल को
 घृ में गमन करने वाले ५ हजियै ६ हमारे ७ जलपाक स्थान में ८ ओष्ठ सु-
 खरूप हजियै ९ वे १० प्रवल रोग राज से रहित ११ सामान्य रोग के दूर करने वा-
 ले १२ अपराध हरने वाले १३ मानस सूर्य की वृद्धि के कारण १४ कूपनदी
 आदि में झीडा करने वाले १५ अमृत रूप तुम १६ हमारे उपकार के लि-
 ये १७ स्वाद युक्त हजियै॥ १२॥

अथाध्यात्मम्— आपः१। यूयम्२। अस्माकं६। अन्तरि७
 पीतोः३। श्वाचाः४। सुशेवाः८। भवतः५। शेषं पूर्ववत्— १ हे अन्तरिक्षो
 २ तुम ३ हमारी ४ भकुटि हृदय और मन के मध्य ५ परमात्मा और परा श-
 क्ति मिथुन से युक्त ६ ब्रह्मा विष्णु महेश रूप आत्मा के रक्षक ७ ब्रह्मानन्द से
 युक्त ८ हजियै ९ वे अन्तरिक्ष १० शंका, भ्रम, मोह, कोप, मान, काम और
 महा क्षोभ से रहित ११ संसार रोग से पृथक् १२ अधर्म रहित १३ ब्रह्म तेज
 की वृद्धि के कारण १४ द्योतमान १५ मृत्यु निवर्तक होकर १६ हमारे उ-
 पकार के लिये १७ आत्म प्रति विव और इन्द्रियों का निरोध करो॥ १२॥

इयन्ते यज्ञियां तनूरपो मुञ्चामि न प्रजाम्।

अथ हो मुचः स्वाहा कृताः पृथिवी मा विशत

पृथिव्या सम्भव १३
 इयम्। तौ यज्ञिया। तनूः। अपः। मुञ्चामि न। प्रजाम्।

अथ हो मुचः। स्वाहं कृताः। पृथिवीम्। अविशत। पृथिव्या
सम्भवा॥ १३॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में तीन मंत्र हैं, यजमान मूत्र पुरीष का
रना चाहता काले हिरण की सींगड़ी से कुच्छे कमिटी का ढेला वातण काट
आदि ग्रहण करता है उसका मंत्र १ मूत्र पुरीष करता है उसका मंत्र २ स्म-
ति के अनुसार शोच को करके ग्रहण किये ऊए ढेले वातण आदि को
भूमि पर पटकता है उसका मंत्र ३

इयन्न इत्यस्य (आङ्गिरस ऋषयः० प्राजापत्या गायत्री छं० यज्ञोदे) १
अपोमुञ्चामीत्यस्य (तथा ० याजुषी० छं० यजमानोदे) २
पृथिव्या सम्भवेत्यस्य (तथा ० प्राजापत्या गायत्री छं० पृथिवीदे) ३

पदार्थः— हे यज्ञ पुरुष १ यह पृथिवी २ तेरा ३ यज्ञ योग्य ४ शरीर है इस
कारण मूत्र की अपवित्रता दूर करने के लिये ढेले वातण आदि को लेता
हूँ यह भाव है ५ मूत्र रूप जल ६ छोड़ता हूँ ७ न कि ८ सन्तानोत्पत्ति के का-
रण वीर्य को इस कारण हे मूत्र नाम जलो ९ पाप से मुक्त करने वाले १०
और दुग्ध पान के समय स्वाहा मंत्र से स्वीकृत तुम ११ पृथिवी में १२
प्रवेश करो हे लोष्ट आदि क तुम १३ भूमि के साथ १४ एकीभाव को प्राप्त
करो ॥ १३॥

१ स्मृति पुराणों में मूत्र पुरीष की जो विधि लिखी है उसको कहते हैं (विष्णु प-
रण) मनुष्य प्रातः काल उठ कर नैऋत दिशा में वाण विक्षेप की समान चल कर
पुरीष विचर्जन करै (आपस्तम्ब) दक्षिण दिशा वानैऋत कोण में जा कर मूत्र पुरीष
करै, परन्तु सूर्य के अस्त होने पर गांव से बाहर और घर से दूर जा कर मूत्र पुरीष-
कर्म को न करै (वायु पुराण) सुष्क तृण जिन में कुशा आदि न हो, काष्ठ जिन में
क आदि की लकड़ी यज्ञ सम्बंधी न हो, पत्र वास का टुकड़ा मिट्टी के पात्रों से पृथि-

वीकोढक कर मूत्र विष्टा का त्याग करै (मनुः) मूत्र विष्टा का त्याग दिन में उत्तर मुख हो कर रवि में दक्षिण मुख हो कर और दोनों संध्या में उत्तर मुख हो कर करै (यमः) प्रातः काल पश्चिम मुख हो कर और सायंकाल पर पूर्व मुख हो कर और मध्याह्न पर उत्तर मुख हो कर रवि में दक्षिण मुख हो कर मूत्र विष्टा का त्याग करै (मनुः) छाया (पाखाना) अंधकार और रवि में तथा प्राणवाधा के भय में यथारुचि मुख करै (हारीतः) नाक और र मुंह को वस्त्र से ढक कर मूत्र विष्टा का त्याग करै (यमः) शिर को ढक कर मूत्र विष्टा का त्याग करै (मनुः) मार्ग, भस्म, गोशाला, हल से जो ता हुआ खेत, जल श्मशान, पर्वत, पुराना मंदिर, जीवों के विल और जीव युक्त गढे लों में मूत्र विष्टा का त्याग न करै (देवलः) वावड़ी, कूप, नदी, गोशाला, अग्नि, चवूतरा आदि पर मूत्र विष्टा का त्याग न करै (विष्णुः) ऊसर, हरियाली भूमि, और दूसरे मनुष्य की विष्टा पर बाग, जल के समीप और असंवृत स्थान में मूत्र विष्टा का त्याग न करै (वायु पुराण) छोटा सरोवर, बड़ा तालाब, नदी, भिरना, पर्वत, गोवस, भस्म, जुता खेत, भूसा, अङ्गार, खोपड़ी, देव मंदिर, राज मार्ग, खलियान, चौराहा, जल, जल के समीप वृक्ष की जड़, चैत्य वृक्ष, फटी भूमि के विल पर मूत्र विष्टा का त्याग न करै (हारीतः) चवूतरा, द्वार के समीप, तीर्थ, सस्य संपन्न भूमि यज्ञिय वृक्षों के नीचे मूत्र विष्टा का त्याग न करै (आपस्तम्बः) जिस छाया में अधिक जन बैठे अथवा दूसरे मनुष्य की छाया में मूत्र विष्टा का त्याग न करै अपनी छाया में तो मूत्र त्याग करै और खड़ा उष्टिरे हुए मूत्र विष्टा का त्याग न करै (मनुः) चलता और खड़ा हुआ भी दोनों कर्म न करै (शत्रु लिखित) नग्न शरीर भी दोनों कर्म को न करै (गौतमः) वायु, अग्नि, ब्राह्मण, सूर्य, जल, देवता, और गौओं को देखता मूत्र विष्टा को न त्यागै (याज्ञवल्क्यः) सूर्य, अग्नि, गौ, चन्द्रमा, संध्या, जल, स्त्री और ब्राह्मणों के सम्मुख दोनों कर्म न करै (विष्णु पुराण) मूत्र पुरीष के स्थान में अति दूर तक न डहरे (हारीतः) ठेला वा शुष्क काष्ठ

से गुदालिङ्ग पूछे फिर जल से शुद्ध करै (गौतम) पत्ता-संगड और पाषाण से मूत्र-पु-
रीष को न पौछे (व्यासः) पाषाण, मूल, फल, कोयला इत्यादि, अस्थि और कुशा-
से उक्त शुद्धि न करै (अथ शौचं) मनुः) सावधान पुरुष लिङ्ग-ग्रहण कर उठाये हुए
जल से शौच करै जिसे गन्ध लेप का क्षय हो (ब्रह्म पु०) मौन पुरुष उठाये हुए-
जल और मृत्ति का कोले कर दिन में उत्तर मुख और एवि में दक्षिण मुख हो क-
र शौच करै (यमः) ब्राह्मण बालू सहित मृत्ति का को तालाव आदि के तट से लेवे
परंतु चूहे की खोदी मिट्टी और बवई धूल की च मार्ग और ऊसर की मिट्टी और दू-
सरे के शौच से बची हुई मिट्टी को न लेवे (विष्णु पुराण) जल के भीतर की मिट्टी-
स्थान की मिट्टी जीव युक्त मिट्टी हल से खोदी मिट्टी को त्याग करै (ब्रह्म पु०) जल-
से धोकर मिट्टी लगावे और मिट्टी को जल से धोवै (मनुः) शुद्धि चाहने वाले पुरुष
को मृत्ति का लिङ्ग पर एक बार गुदा पर तीन बार, बावे हाथ में दश बार फिर दो-
नों हाथ में सात बार लगानी चाहिये (यमः) शुद्धि चाहने वाले पुरुष को
सदा मृत्ति का दोनों पांव में तीन बार लगानी चाहिये (मनुः) यह शौच गृह-
स्थों का है, ब्रह्मचारियों का द्विगुण है वानप्रस्थों का त्रिगुण है और सन्यासि-
यों का चैगुण है (आपस्तम्बः) दिन में जो शौच कहा उस का आधा एवि में और
र चौथाई मार्ग में जानना चाहिये और रोगी बल के अनुसार करै (ऋथ्य अङ्ग)
जिस स्थान पर शौच किया उस को जल से शुद्ध करै जो स्थान शोधन नहीं क-
रता उस की शुद्धि नहीं होती (दक्षः) मूत्रोत्सर्ग में मृत्ति का को लिङ्ग पर एक बार
बावे हाथ में तीन बार और दोनों हाथ में दो बार लगावे यही विधि वीर्योत्सर्ग में है
(देवलः) धर्मज्ञ पुरुष नाभि से नीचे के अंगों को दाहिने हाथ से शुद्ध करै उसी प्रकार
र नाभि से ऊपर के अंगों को बांयें हाथ से न धोवै परंतु रोग आदि में विलोम कर्म
का निषेध नहीं है (हारीतः) शौच के पीछे गोबर वा मिट्टी से लोटा को मांज क-
र हाथ जो बांयें हाथ से करै, मूत्रोत्सर्ग का दाहिने हाथ से करै (ब्रह्म पु०) दोनों

अथाध्यात्मम्— हे विष्णु १ यह २ यज्ञ योग्य मन हृदय भृकुटिरूप भूमि ३ तेरा ४ शरीर है इस कारण ५ कर्म को ६ त्याग करता हूँ ७ पराश्रोत्र ब्रह्म की भक्ति को ८ नहीं त्यागता हूँ धीपाप से मुक्ति देने वाली १० वेद वाक्य से की हुई किया ओ ११ देह में १२ प्रवेश हूँ जियै हे कर्तृत्वाभिमान तुम १३ देह के साथ १४ एकी भाव को प्राप्त करो ॥ १३ ॥ ॐ

अग्ने त्वं सुजागृहिवयं सुमन्दिषी महि
रक्षाणो अप्रयुच्छन् प्रवुधेनः पुनस्त्वाधि ॥ १४ ॥
 अग्ने । त्वं । सुजागृहि । वयं । सुमन्दिषी महि । अप्रयुच्छन् । नः । नः । आरक्ष । नः । पुनः । प्रवुधे । क्वाधि ॥ १४ ॥

अथाधिदैवम्— यजमान आह वनीय अग्नि से दक्षिण दिशा में उत्तर-मुख वा पूर्व को शिर करके अग्नि की अपेक्षा नीचली भूमि में शयन करता है उसका मंत्र ॥

ॐ अग्ने त्वं मित्यस्य (आङ्गिरस ऋषयः ० अनुष्टुप् छं ० अग्नि दे०) १

पदार्थः— १ हे अग्नि २ तुम ३ भले प्रकार जागियै ४ हम यजमान सुख पूर्वक ५ सो वे ६ सावधानी करते तुम ७ हमको ८ चारों ओर से रक्षा करो ९ हम को १० फिर ११ १२ जगाओ सोने के समय अग्नि की प्रार्थना राक्षसों

पांव में दो बार मिट्टी लगा कर धोकर अच्छे धोये हुए हाथ से तीन आचमन कर सनातन विष्णु को स्मरण करके शुद्ध होवै (शंख लिखतौ) आचमन करके शिवजी को मन से ध्यान करै (व्यासः) शौच करके मूत्र विष्टा को न देखै, देख कर सूर्य अग्नि वा चन्द्रमा का दर्शन करै इस स्थान पर बशिष्ठजी ने गौब्राह्मण का दर्शन अधिक कहा है ॥

ॐ गीता में भगवान ने कहा है जो पुरुष सब कर्मों को प्रकृतिके किये हुए और आत्मा को अकर्ता देखता है वह सर्वदर्शी है ॥

केनाशार्थ है ॥ १४ ॥

अथाध्यात्मम् - समाधिकर्त्ता ब्रह्माग्नि से प्रार्थना करता है १ हे ब्रह्मा
नि २ तुम ३ भले प्रकार जागो ४ हम योगी जन ५ सुषुप्ति रूप समाधि को करे
६ सावधानी करते तुम ७ हम को ८ सब ओर से रक्षा करो ९ हम को १० फि
र ११ उत्थान के लिये १२ समर्थ करो ॥ १४ ॥

पुनर्मनिः पुनरायुर्म आगन् पुनः प्राणः पुनर
त्मा आगन् पुनश्चक्षुः पुनः श्रोत्रम् आगन् ।
वैश्वानरो अदब्धस्तनूपा अग्निर्नः पातु दुरि
तादेव द्यात् ॥ १५ ॥

१ मे। २ मनः। ३ पुनः। ४ आगन्। ५ आयुः। ६ पुनः। ७ प्राणः। ८ पुनः। ९ आगन्।
१० मे। ११ आत्मा। १२ पुनः। १३ चक्षुः। १४ पुनः। १५ मे। १६ श्रोत्रम्। १७ पुनः। १८ आगन्। १९ वैश्व
नरः। २० अदब्धः। २१ तनूपाः। २२ अग्निः। २३ अवद्यात्। २४ दुरितात्। २५ नः। २६ पातु
१५ ॥ अथाधिदैवम् - निद्रारहित फिर जागने वाले और आह वनी
य अग्नि के सन्मुख होने वाले यजमान को अध्वर्यु यह मंत्र कह लाता है १
ओ पुनर्मनि इत्यस्य (आङ्गिरस ऋषयः ० भुरि ब्राह्मी वृद्धती ६० अग्निदे १)
पदार्थः - १ मुझ यजमान का २ मन ३ फिर जाग्रत अवस्था में ४ प्रास ऊ
आ अर्थात् सुषुप्ति काल में लय हो कर फिर अवशरीर में विद्यमान ऊ ५
मेरी आयु स्वप्न समय नष्ट प्राय हो कर ६ फिर प्रास ऊ ७ प्राण ८ फिर
प्रास ऊ ९ मेरा १० जीवात्मा ११ फिर प्रास ऊ १२ चक्षु इन्द्रि १३
फिर प्रास ऊ १४ मेरी १५ अवगोन्द्रिय १६ फिर १७ प्रास ऊ १८ स
ब मनुष्यों का उपकारक १९ अविनाशी २० हमारे शरीर का रक्षक २१ ई
शाग्नि २२ निन्दित २३ पाप से २४ हम को २५ रक्षा करो ॥ १५ ॥

अथाध्यात्मम् - उत्थान अवस्था में उप करता है १ मुझ योगी

कारमनसमाधि के बीच ब्रह्म में लीन हुआ ३ फिर उत्थानश्रवस्था में ४ प्राप्त हुआ ५ मेरी आयु समाधि के बीच जीव ईश्वर का एकत्व होने पर नष्ट प्राय होकर ६ फिर उत्थानश्रवस्था में प्राप्त हुई शेष पूर्व की समान है ॥ १५ ॥

त्वमग्ने व्रतपा असि देव आमर्त्येषा त्वं यज्ञोष्ठीद्व्यः
राखेयत्सो मा भूयो भर देवो नः सविता वसो ह्यिता
वस्वदात ॥ १६ ॥

अग्ने । देव । त्वम् । आमर्त्येषु । व्रतपाः । असि । यज्ञेषु । आ ।
ईद्व्यः । हे सोम । इयूत । राखे । भूयो । आभर । वसो । दाता ।
सविता । देव । नः । वसु । अदात ॥ १६ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं, दीक्षित क्रोध करके अथवा व्रत के विरुद्ध उच्चारण करके प्रायश्चित्त के लिये जप करता है उस कामत्र २ यज्ञ में प्राप्त धन को स्पर्श करके पढ़ता है उस कामत्र २ जो त्वमग्न इत्यस्य (भुरि गार्गी पन्तिच्छं अग्नि सौमौ देवते) १२

पदार्थः— १२ हे द्योतनात्मक अग्नि ३ तुम ४ मनुष्य पर्यंत सब प्राणियों में ५ यज्ञकर्म के रक्षक ६ हो ७ यज्ञों में ८ सब ओर से रक्षा करना और पूजन योग्य हो १० हे सोम ११ इतना धन १२ दीजिये १३ फिर भी १४ धन को दे जिस कारण १५ धन के १६ दाता १७ सविता १८ देवता ने १९ हमारे लिये २० धन २१ दिया ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम्— १ हे ब्रह्माग्नि २ ज्योति स्वरूप ३ तुम ४ प्राण पर्यंत सब इन्द्रियों में ५ योगानुष्ठानव्रत के रक्षक ६ हो ७ ज्ञान यज्ञों में ८ सब ओर से रक्षित हो सब ब्रह्म है यहां नाना प्रकार का कुछ नहीं है ऐसी स्तुति के योग्य हो १० हे आत्म प्रतिविंब तुम ११ मन प्राण आत्मा ईश को १२ ग्रहण करो १३ फिर १४ अपनी आत्मा में धारण करो इस कारण १५ योग्य

ज्ञ के १६ दाता १७ द्योत मान १८ मनवा प्राण ने १९ हमारे लिये २० योग य
ज्ञ २१ दिया ॥ १६ ॥

एषा तैश्चकृतनूरेतद्वर्चस्तया सम्भवभ्राजङ्गच्छ।

जूरसिधुतामनुसाजुष्टा विष्ठावे ॥ १७ ॥
शुक्ल। एषा। तौ। तनूः। एतत्। वर्चः। तथा। सम्भव। भ्राजम्।
गच्छ। जूः। मनसा। धृतौ। विष्ठावे। जुष्टा। अस्मि ॥ १७ ॥

अथाधिदेवम् — इस कंडिका में दो मंत्र हैं, अध्वर्यु ध्रुवा के आज्य में से
जुह को चार बार भर के तिस घृत में दर्भ तृणों में बंधे हुए सुवर्ण को छोड़ता है उ
सका मंत्र १ उस घृत को आहवनीय अग्नि में समिदा धान पूर्वक हो मता है उस
कामंत्र २ ॥

ओं एषा तैश्चकृतनूरेतद्वर्चस्तया सम्भवभ्राजङ्गच्छ ॥ १७ ॥

ओं जूस्तीत्यस्य (तथा २० तथा २१ वाग्देवता) २
पदार्थ १ हे दीप्यमान अग्नि २ यह आज्य लक्षण विभूति ३ तेरा ४ शरीर है
५ यह सुवर्ण ६ तेज है ७ दोनों प्रकार के तेज से ८ एकी भाव को प्राप्त कर तिस
के पीछे ९ सोम देवता को १० प्राप्त कर हे काक् ११ वेग युक्त १२ १३ मन से नि
यमित १४ तुम यज्ञ पुरुष के लिये १५ प्रीति युक्त १६ हौ ॥ १७ ॥

अथाध्यात्मम् १ हे शुद्ध आत्मा २ यह माया ३ तेरा ४ शरीर है ५ यह
प्रति विव ६ तेज है ७ परा अपरा रूप दोनों प्रकार की उस प्रकृति के साथ ८ एकी
भाव को प्राप्त कर अर्थात् अपनी आत्मा में लय कर तिस के पीछे ९ विराट् के आ
त्मा सूर्य को अर्थात् विराट् भाव को १० प्राप्त कर हे महाबाक् ११ सरस्वती रूप १२
मन से १३ अनुभूत १४ तुम विष्णु के अर्थात् १५ सेवित १६ हौ ॥ १७ ॥

तस्यास्ते सत्यसवसः प्रसवेतन्वो यत्र मशीयु
खाहो। शुक्लमसिचन्द्रमस्य मृतमसिवैश्व

देवमसि॥ १८॥

तस्याः^१ ते। सत्य^२ सवसः। प्रसवे। तन्वाः। यन्म^३। अशीया। स्वाहा।
श्रुकम्। असि। चन्द्रम्। असि। अमृतम्। असि। वैश्वदेवम्।
असि॥ १८॥

अथाधिदैवम् - जुहू में से तृण वद्ध सुवर्ण को निकाल कर तृण के
वेदी के मध्य डालता है उसका मंत्र १

ओं तस्यास्तइत्यस्य (वत्सङ्ग० सुराङ्गर्षी वृद्धती छंदो वाक्पट्टिरायेदे०) १

पदार्थः १ उ स २ तु भ ३ सत्य अनुज्ञावाली वेदवाणी की ४ अनुज्ञा में व
र्त्तमान में ५ शरीर के ६ नियमन दृढ़ता को ७ प्राप्त करूँ ८ इस घृत की आहु
ति हो हे सुवर्ण तुम ९ दीप्यमान १० हो ११ आल्हाद के दाता १२ हो १३ जीव
न के उपाय १४ हो १५ सर्वदेव सम्बन्धी १६ हो क्योंकि सब देवता सुव
र्णदान से तृप्त होते हैं॥ १८॥

अथाध्यात्मम् - १ उ स २ तु भ ३ सत्य अनुज्ञावाले महावाक्का ४ फ
ल होने पर ५ व्यष्टि समष्टि देह के ६ नियमन को ७ प्राप्त करूँ ८ श्रुति वाक्प
ट्टि से जो वह है वह पुरुष शरीर के नियमन को लब्ध करता है जो कि यज्ञ की स
माप्ति को पाता है हे आत्म प्रतिविवृतम् ९ हृदय के सूर्य १० हो ११ मानस
ज्योति १२ हो १३ जीवन के साधन १४ हो १५ इन्द्रियों के आत्मा १६ हो १८

चिदसि मनासि धीरसि दक्षिणासि सुत्रियासि
यज्ञियास्यदितिरस्युभयतः शीर्षा। सानः सु
प्राची सुप्रतीच्ये धिभिन्नस्त्वा पदिवन्धीताम्पुषा

ध्वनस्यात्विन्द्रियाध्यसाय। १८

चित्। असि। मनः। असि। धीः। असि। दक्षिणा। असि। सुत्रि
या। असि। यज्ञिया। असि। अदिति। असि। उभयतः शीर्षा। सो।

नः। सुप्राची। सुप्रतीची। एधि। मित्रः। पदि। त्वा। वध्नीतां। पूषा। अध्ये-
 स्थाय। इन्द्राय। अध्वनः। पातु॥ १८॥

अथाधिदैवम् - वाग्रूपाधारोपकल्पनाकरके सोमक यणीगौ
 की स्तुति करते हैं उस का मंत्र १॥

ओं चिदसीत्यस्य (वत्स० भुरिग्राह्णी पंक्तिश्च० वागदे०) १

पदार्थः हे सोमक यणी गौ तुम १ चिदात्मा २ हो ३ ब्रह्मा विष्णु महेश

रूप पूज्य ४ हो ५ दुग्धदान से प्रज्ञाशक्ति ६ हो ७ यज्ञ में दक्षिण रूप ८ हो

९ दाता को कष्ट से रक्षा करने वाली १० हो ११ यज्ञ सम्बन्धी होने से यज्ञ के

योग्य १२ हो १३ अखण्डिता पराशक्ति रूप १४ हो १५ पृथिवी स्वर्ग की ओर

शिर रखने वाली अर्थात् दिव्य भोग भोगों की दाता हो १६ वह तुम १७ हमारे

रे लिये १८ सोम वेचने वाले की ओर पूर्व मुखी हो कर १९ पीछे सोम स-

हित हमारे पास आने को पश्चिम मुखी २० हूजिये २१ सूर्य २२ दक्षिण प-

द में २३ तुम को २४ रक्षा के लिये बंधन करौ २५ पृथिवी २६ यज्ञ के स्ता-

मी २७ इन्द्र की प्रीति के लिये २८ मार्ग में २९ रक्षा करौ ॥ १८॥ अथवा-

इस कड़िका का यह अर्थ है, हे वाक तुम १ चिदधातु ब्रह्म २ हो ३ विदे-

वरूप यज्ञ ४ हो ५ ज्ञानत्व रूप ६ हो ७ परब्रह्मानुवर्तिनी ८ हो ९ ससा-

र रूप रोग से रक्षा करने वाली १० हो ११ यज्ञ योग्य १२ हो १३ मंत्र रूप से

अखण्डित १४ हो १५ बध्न मोक्ष की ओर शिर रखने वाली हो १६ ससा श्रुतिक

हती है जब इस वाणी के द्वारा समान ब्रह्म को विपरीत कहता है तब अपर

को पूर्व और पूर्व को अपर करता है तिस कारण वाणी दोनों ओर शिर रख

ने वाली है १६ वह तुम १७ हमारे लिये १८ सोम वेचने वाले की ओर पूर्व मुखी

हो कर १९ पीछे सोम सहित हमारे पास आने को पश्चिम मुखी २० हूजिये २१ सूर्य २२ दक्षिण प-

मी २७ ईश्वर की प्रीति के लिये तुम्ह को २८ मार्ग में २९ रक्षा करौ ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम्— हे मानस सूर्यरूप पराशक्ति तुम १ चित्त २ हौ ३ मन
४ हौ ५ बुद्धि ६ हौ ७ नर रूप ८ हौ ९ जीव रूप १० हौ ११ यज्ञ के योग्य ईश-
रूप १२ हौ १३ अखंडित ब्रह्म ज्योति १४ हौ १५ जड़ चैतन्य के मध्य वर्त्त-
न शील हौ १६ वह तुम १७ हमारे प्रेरणा के लिये १८ समष्टि प्रति विंव वेचने
वाले की ओर पूर्व मुखी हो कर १९ पीछे समष्टि प्रति विंव सहित हमारे पास आने को पं-
श्चिम मुखी २० हूजियै ११ प्राण २२ ब्रह्म में २३ तुम्ह को २४ युक्त करौ २५ मन २६
२७ महा विष्णु वा ब्रह्म के अर्थ २८ पित्त यान आदि से तुम्ह को २९ रक्षा करौ ॥ १९ ॥

अनुत्वा माता मन्यता मनु पिता भ्राता सग

भ्यो नु सखा सयूथ्यः । सा देवि देव मच्छे हीन्द्रा

य सोमं रुद्र स्त्वा वर्त्तयतु त्वस्ति सोम सखा

पुनरेहि । २० ॥

१ त्वा । २ माता । ३ अनु मन्यताम् । ४ पिता । ५ अनु । ६ सगभ्यः । ७ भ्राता । ८ अनु । ९ सयूथ्यः । १० सखा । ११ अनु । १२ देवि । १३ सोम । १४ हीन्द्राय । १५ सोमम् । १६ देव-
म । १७ मच्छेहि । १८ रुद्रः । १९ त्वा । २० वर्त्तयतु । २१ सोम सखा । २२ त्वस्ति । २३ पुन-
रेहि ॥ २० ॥

अथाधिदैवम्— गौ की प्रार्थना का मंत्र १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १०० १०१ १०२ १०३ १०४ १०५ १०६ १०७ १०८ १०९ ११० १११ ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ ११८ ११९ १२० १२१ १२२ १२३ १२४ १२५ १२६ १२७ १२८ १२९ १३० १३१ १३२ १३३ १३४ १३५ १३६ १३७ १३८ १३९ १४० १४१ १४२ १४३ १४४ १४५ १४६ १४७ १४८ १४९ १५० १५१ १५२ १५३ १५४ १५५ १५६ १५७ १५८ १५९ १६० १६१ १६२ १६३ १६४ १६५ १६६ १६७ १६८ १६९ १७० १७१ १७२ १७३ १७४ १७५ १७६ १७७ १७८ १७९ १८० १८१ १८२ १८३ १८४ १८५ १८६ १८७ १८८ १८९ १९० १९१ १९२ १९३ १९४ १९५ १९६ १९७ १९८ १९९ २०० २०१ २०२ २०३ २०४ २०५ २०६ २०७ २०८ २०९ २१० २११ २१२ २१३ २१४ २१५ २१६ २१७ २१८ २१९ २२० २२१ २२२ २२३ २२४ २२५ २२६ २२७ २२८ २२९ २३० २३१ २३२ २३३ २३४ २३५ २३६ २३७ २३८ २३९ २४० २४१ २४२ २४३ २४४ २४५ २४६ २४७ २४८ २४९ २५० २५१ २५२ २५३ २५४ २५५ २५६ २५७ २५८ २५९ २६० २६१ २६२ २६३ २६४ २६५ २६६ २६७ २६८ २६९ २७० २७१ २७२ २७३ २७४ २७५ २७६ २७७ २७८ २७९ २८० २८१ २८२ २८३ २८४ २८५ २८६ २८७ २८८ २८९ २९० २९१ २९२ २९३ २९४ २९५ २९६ २९७ २९८ २९९ ३०० ३०१ ३०२ ३०३ ३०४ ३०५ ३०६ ३०७ ३०८ ३०९ ३१० ३११ ३१२ ३१३ ३१४ ३१५ ३१६ ३१७ ३१८ ३१९ ३२० ३२१ ३२२ ३२३ ३२४ ३२५ ३२६ ३२७ ३२८ ३२९ ३३० ३३१ ३३२ ३३३ ३३४ ३३५ ३३६ ३३७ ३३८ ३३९ ३४० ३४१ ३४२ ३४३ ३४४ ३४५ ३४६ ३४७ ३४८ ३४९ ३५० ३५१ ३५२ ३५३ ३५४ ३५५ ३५६ ३५७ ३५८ ३५९ ३६० ३६१ ३६२ ३६३ ३६४ ३६५ ३६६ ३६७ ३६८ ३६९ ३७० ३७१ ३७२ ३७३ ३७४ ३७५ ३७६ ३७७ ३७८ ३७९ ३८० ३८१ ३८२ ३८३ ३८४ ३८५ ३८६ ३८७ ३८८ ३८९ ३९० ३९१ ३९२ ३९३ ३९४ ३९५ ३९६ ३९७ ३९८ ३९९ ४०० ४०१ ४०२ ४०३ ४०४ ४०५ ४०६ ४०७ ४०८ ४०९ ४१० ४११ ४१२ ४१३ ४१४ ४१५ ४१६ ४१७ ४१८ ४१९ ४२० ४२१ ४२२ ४२३ ४२४ ४२५ ४२६ ४२७ ४२८ ४२९ ४३० ४३१ ४३२ ४३३ ४३४ ४३५ ४३६ ४३७ ४३८ ४३९ ४४० ४४१ ४४२ ४४३ ४४४ ४४५ ४४६ ४४७ ४४८ ४४९ ४५० ४५१ ४५२ ४५३ ४५४ ४५५ ४५६ ४५७ ४५८ ४५९ ४६० ४६१ ४६२ ४६३ ४६४ ४६५ ४६६ ४६७ ४६८ ४६९ ४७० ४७१ ४७२ ४७३ ४७४ ४७५ ४७६ ४७७ ४७८ ४७९ ४८० ४८१ ४८२ ४८३ ४८४ ४८५ ४८६ ४८७ ४८८ ४८९ ४९० ४९१ ४९२ ४९३ ४९४ ४९५ ४९६ ४९७ ४९८ ४९९ ५०० ५०१ ५०२ ५०३ ५०४ ५०५ ५०६ ५०७ ५०८ ५०९ ५१० ५११ ५१२ ५१३ ५१४ ५१५ ५१६ ५१७ ५१८ ५१९ ५२० ५२१ ५२२ ५२३ ५२४ ५२५ ५२६ ५२७ ५२८ ५२९ ५३० ५३१ ५३२ ५३३ ५३४ ५३५ ५३६ ५३७ ५३८ ५३९ ५४० ५४१ ५४२ ५४३ ५४४ ५४५ ५४६ ५४७ ५४८ ५४९ ५५० ५५१ ५५२ ५५३ ५५४ ५५५ ५५६ ५५७ ५५८ ५५९ ५६० ५६१ ५६२ ५६३ ५६४ ५६५ ५६६ ५६७ ५६८ ५६९ ५७० ५७१ ५७२ ५७३ ५७४ ५७५ ५७६ ५७७ ५७८ ५७९ ५८० ५८१ ५८२ ५८३ ५८४ ५८५ ५८६ ५८७ ५८८ ५८९ ५९० ५९१ ५९२ ५९३ ५९४ ५९५ ५९६ ५९७ ५९८ ५९९ ६०० ६०१ ६०२ ६०३ ६०४ ६०५ ६०६ ६०७ ६०८ ६०९ ६१० ६११ ६१२ ६१३ ६१४ ६१५ ६१६ ६१७ ६१८ ६१९ ६२० ६२१ ६२२ ६२३ ६२४ ६२५ ६२६ ६२७ ६२८ ६२९ ६३० ६३१ ६३२ ६३३ ६३४ ६३५ ६३६ ६३७ ६३८ ६३९ ६४० ६४१ ६४२ ६४३ ६४४ ६४५ ६४६ ६४७ ६४८ ६४९ ६५० ६५१ ६५२ ६५३ ६५४ ६५५ ६५६ ६५७ ६५८ ६५९ ६६० ६६१ ६६२ ६६३ ६६४ ६६५ ६६६ ६६७ ६६८ ६६९ ६७० ६७१ ६७२ ६७३ ६७४ ६७५ ६७६ ६७७ ६७८ ६७९ ६८० ६८१ ६८२ ६८३ ६८४ ६८५ ६८६ ६८७ ६८८ ६८९ ६९० ६९१ ६९२ ६९३ ६९४ ६९५ ६९६ ६९७ ६९८ ६९९ ७०० ७०१ ७०२ ७०३ ७०४ ७०५ ७०६ ७०७ ७०८ ७०९ ७१० ७११ ७१२ ७१३ ७१४ ७१५ ७१६ ७१७ ७१८ ७१९ ७२० ७२१ ७२२ ७२३ ७२४ ७२५ ७२६ ७२७ ७२८ ७२९ ७३० ७३१ ७३२ ७३३ ७३४ ७३५ ७३६ ७३७ ७३८ ७३९ ७४० ७४१ ७४२ ७४३ ७४४ ७४५ ७४६ ७४७ ७४८ ७४९ ७५० ७५१ ७५२ ७५३ ७५४ ७५५ ७५६ ७५७ ७५८ ७५९ ७६० ७६१ ७६२ ७६३ ७६४ ७६५ ७६६ ७६७ ७६८ ७६९ ७७० ७७१ ७७२ ७७३ ७७४ ७७५ ७७६ ७७७ ७७८ ७७९ ७८० ७८१ ७८२ ७८३ ७८४ ७८५ ७८६ ७८७ ७८८ ७८९ ७९० ७९१ ७९२ ७९३ ७९४ ७९५ ७९६ ७९७ ७९८ ७९९ ८०० ८०१ ८०२ ८०३ ८०४ ८०५ ८०६ ८०७ ८०८ ८०९ ८१० ८११ ८१२ ८१३ ८१४ ८१५ ८१६ ८१७ ८१८ ८१९ ८२० ८२१ ८२२ ८२३ ८२४ ८२५ ८२६ ८२७ ८२८ ८२९ ८३० ८३१ ८३२ ८३३ ८३४ ८३५ ८३६ ८३७ ८३८ ८३९ ८४० ८४१ ८४२ ८४३ ८४४ ८४५ ८४६ ८४७ ८४८ ८४९ ८५० ८५१ ८५२ ८५३ ८५४ ८५५ ८५६ ८५७ ८५८ ८५९ ८६० ८६१ ८६२ ८६३ ८६४ ८६५ ८६६ ८६७ ८६८ ८६९ ८७० ८७१ ८७२ ८७३ ८७४ ८७५ ८७६ ८७७ ८७८ ८७९ ८८० ८८१ ८८२ ८८३ ८८४ ८८५ ८८६ ८८७ ८८८ ८८९ ८९० ८९१ ८९२ ८९३ ८९४ ८९५ ८९६ ८९७ ८९८ ८९९ ९०० ९०१ ९०२ ९०३ ९०४ ९०५ ९०६ ९०७ ९०८ ९०९ ९१० ९११ ९१२ ९१३ ९१४ ९१५ ९१६ ९१७ ९१८ ९१९ ९२० ९२१ ९२२ ९२३ ९२४ ९२५ ९२६ ९२७ ९२८ ९२९ ९३० ९३१ ९३२ ९३३ ९३४ ९३५ ९३६ ९३७ ९३८ ९३९ ९४० ९४१ ९४२ ९४३ ९४४ ९४५ ९४६ ९४७ ९४८ ९४९ ९५० ९५१ ९५२ ९५३ ९५४ ९५५ ९५६ ९५७ ९५८ ९५९ ९६० ९६१ ९६२ ९६३ ९६४ ९६५ ९६६ ९६७ ९६८ ९६९ ९७० ९७१ ९७२ ९७३ ९७४ ९७५ ९७६ ९७७ ९७८ ९७९ ९८० ९८१ ९८२ ९८३ ९८४ ९८५ ९८६ ९८७ ९८८ ९८९ ९९० ९९१ ९९२ ९९३ ९९४ ९९५ ९९६ ९९७ ९९८ ९९९ १०००

हे गौ वाहे वाक् १ सोम लाने में प्रवृत्त तुम्ह को २ पृथिवी ३ अनुज्ञा
दो ४ स्वर्ग ५ अनुज्ञा दो ६ सहोदर ७ भाई अर्थात् ईश ८ अनुज्ञा दो ९ १०
एक युथ में प्रकट होने वाला सखा अर्थात् आत्म प्रति विंव ११ अनुज्ञा दो १२
हे सोम कयणी १३ वह तुम्ह १४ ईश्वर के लिये १५ १६ ज्योति मान सोम के
१७ प्राप्त करने को जाओ १८ रुद्र देवता वा प्राण १९ तुम्ह सोम धारी को २०

हमारी ओर लौटाओ २१ सोम सहित तुम २२ क्षेम पूर्वक २३ फिर २४ आओ ॥ २० ॥
अथाध्यात्मम् - हे जीवात्मन् १ तुम्हें को २ एकुति ३ अनुज्ञा दो ४
 पुरुष ५ अनुज्ञा दो ६ ७ देहस्थ ईश ८ अनुज्ञा दो ९ १० प्राण ११ अनुज्ञा दो
 १२ हे जीवरूप पराशक्ति १३ वह तुम १४ माया दूर करने वाले महानारायण के
 लिये १५ १६ ज्योतिरूप समष्टि प्रति विंव के १७ प्राप्त करने को जाओ १८ प्राण १९
 तुम्हें २० लौटाओ वा कर्म में प्रवृत्त करौ २१ समष्टि प्रति विंव के सखा तुम २२
 कल्याण पूर्वक २३ फिर २४ आओ ॥ २० ॥

वस्युस्पदिति रस्यादित्यासि रुद्रासि चन्द्रासि।
 वहस्पतिष्ठा सुम्ने रम्णातुरुद्रो वसुभिर्वाचके २१
 वसुवी। असि। अदितिः। असि। आदित्यो। असि। रुद्रा। असि। च
 न्द्रा। असि। वहस्पतिः। त्वा। सुम्ने। रम्णातुरुद्रः। वसुभिः। वाच
 के ॥ २१ ॥

अथाधिदेवम् - अभि मंत्रण के अनंतर किसी से उत्तर में प्राप्त की हुई
 सोम कृपाणी के पीछे अध्वर्यु और यजमान चलते हैं उस काम में ॥ १ ॥
 ओं वस्तीत्यस्य (वत्स ३८० विराडाधी वहती छं वागावौ देवते) १
पदार्थः हे वाकवाहे गौ तुम १ अष्टवसरूप ० अथवा यज्ञ स्वरूप २ हो ३
 देव माता परस्वरूप ४ हो ५ द्वादश सूर्य रूप ६ हो ७ एकादश रुद्र रूप ८ हो
 ९ चंद्र रूप १० हो ११ ब्रह्म १२ तुम को १३ सुख में १४ रमण कराओ १५ पशु
 पति यजमान में १६ यज्ञों के कारण १७ तुम को चाहता हूँ ॥ २१ ॥

अथाध्यात्मम् - हे मानस सूर्य रूप पराशक्ति तुम १ देहस्थ कमल रूप
 हो ३ अखंडित ब्रह्म ज्योति ४ हो ५ दश इन्द्रिय मन बुद्धि रूप ६ हो ७ प्राण रू
 प ८ हो ९ मन रूप १० हो ११ प्राण १२ तुम को १३ ब्रह्मानन्द में १४ रमण करा
 ओ १५ शिव रूप योगी में १६ कमल मागों से १७ तुम्हें अपनी आत्मा में

लयकरनाचाहता हू॥२१॥

अदित्यास्त्वामूर्द्धनाजिघर्षिदेवयजनेऽपि
इडायास्पदमसि घृतवत्स्वाहा अस्मे रमस्वास्मे
तेवन्धुस्त्वे रायो मे रायो मावयथ रायस्पोषेण वि

यौष्मतो तो रायः २२

अदित्याः१ अपि२ व्याः३ मूर्द्ध४ ना५ जि६ घर्षि७ दे८ व९ य१० ज११ ने१२ त्वा१३ आ१४ जि१५ घर्षि१६ इ१७ डा१८ या१९ प२० द२१ म२२ सि२३ घृ२४ त२५ व२६ त्स२७ वा२८ हा२९ अ३० स्मे३१ र३२ म३३ त्स३४ वा३५ स्मे३६ तो३७
व१६ न्धु१७ त्वे१८ रा१९ यो२० मे२१ रा२२ यो२३ व२४ य२५ म२६ रा२७ यो२८ पो२९ षे३० ण३१ वि३२ यौ३३ ष्म३४ तो३५ तः३६ रा३७ यः३८ ॥ २२ ॥

अथाधिदैवम्-

इस कंडिका में ७ मंत्र हैं उनको कहते हैं, सोमकयणी के पूर्वदक्षिण पदसम्बन्धी छैपदों को छोड़ कर सातवें पद कालक्षणा कर उसमें सुवर्ण रख कर होम करता है उसका मंत्र १ अध्वर्यु स्पर्श से गौ के पदा कित भूमि में तीन रेखा करता है उसका मंत्र २ त्वर्ण को हटा कर पदसम्बन्धी धूल को उठाकर हाथ में लेकर थाली में डालता है उसका मंत्र ३ गौ के उगयद्वा पद के स्थान पर जल डाल कर वह उगया हुआ पद यजमान को देता है उसका मंत्र ४ थाली में स्थित उस पद को यजमान ग्रहण करता है उसका मंत्र ५ अध्वर्यु अपने हृदय को स्पर्श करता है उसका मंत्र ६ अध्वर्यु यजमान से पद लेकर पत्नी को देता है और नेष्टा पुरुष मंत्रोच्चारण करता है उसका मंत्र ७
ॐ अदित्यास्त्वेति (वत्स३०, ना३१, हा३२, पत्ति३३, दः३४, गार्ग्य३५ देव३६) १
ॐ अस्मे रमस्त्वेति (तथा३०, तथा३१, स्थान३२) २
ॐ अस्मे तेवधुरिति (तथा३३, तथा३४, पद३५) ३
ॐ ले राय इति (तथा३६, तथा३७, यजमानो३८) ४
ॐ मे राय इति (तथा३९, तथा४०, तथा४१) ५

ओं मावयमिति (तथा • तथा • अध्वर्युदे) ६

ओं तोत इति (तथा • तथा • पत्नी दे) ७

पदार्थः - हे आज्य १ अखंडित २ अधिवी के ३ मस्तक रूप ४ देव यजन स्थान पर ५ तुम्ह को ६ छोड़ता हूं हे स्थान विशेष तुम्ह ७ गोपद से अंकि त होने के कारण गोपद रूप ८ हो १० घृत युक्त करने को ११ ओष्ठ होम हो हे गोपद तुम्ह १२ मुम्ह में १३ कीड़ा करो हे सोम कयणी पद १४ हम १५ तेरे १६ वधु है हे यजमान १७ तुम्ह में १८ धन वा पशु इस पद रूप से ठह रौ १९ मुम्ह यजमान के पास २० धन वा पशु हो २१ अध्वर्यु आदि हम २२ २३ धन की पुष्टि से २४ २५ वियोग न पावे २६ पत्नी सहित जो ब्रह्मा वि ष्णु महेश परा रूप धारी यजमान है उस को २७ धन वा पशु प्राप्त हो २८

अथाध्यात्मम् - हे इन्द्रिय शक्ति समूह १ अखंडित २ मानस भूमि के ३ मस्तक रूप ४ ब्रह्म परानारायण नाम देवताओं के याग योग्य स्थान पर ५ तुम्ह को ६ छोड़ता हूं हे मानसालय तुम्ह ७ जीव रूप इवि के ८ इन्द्रिय शक्तियुक्त ९ स्थान १० हो ११ गुरु उपदेश से हे आत्म प्रतिविंब तुम्ह १२ तु म्ह आत्मा में १३ रमाण करो १४ तेरा १५ वधु अर्थात् काम १६ मुम्ह आत्मा में है १७ तुम्ह में १८ जो अष्ट सिद्धि नव निधि रूप योगै श्वर्य है वे १९ भौ र्ही २० धन है बौक आदि करत्विज कहते हैं २१ हम २२ योग लक्ष्मी की २३ पुष्टि से २४ २५ वियोग न पावे जिस कारण २६ शक्ति सहित विदेव रूप धारी योगी के ही २७ योगै श्वर्य है अर्थात् दूसरे के नहीं है २८

समंख्ये देव्याधियासन्दक्षिणयो रूचक्षसा

माम् आयुः प्रमोषी मों अहन्त व वीरं विदेयतव

देवि सन्दक्षि २३

१ देव्या २ दक्षिणाया ३ उरुचक्षसा ४ धिया ५ समा समाख्ये

मो० आयुः१० मो० प्रमोषी११ तवो१२ आयुः१३ अहमा१४ मो० उ० देवि१५ त-
वो१६ सन्दृशि१७ वीरम्१८ विदेयं१९ ॥२३॥

अथाधिदैवम् - सोमकयणी को देखती पत्नी से अध्वर्यु कुरु कह
लाता है उस का मंत्र ॥

सोमसाम्य इत्यस्य (वत्सञ्जट० आस्तारपंक्तिश्च० वाग् दे०) १॥

पदार्थः पत्नी प्रार्थना करती है १ हे सोमकयणी वाग् वाहे गौ २ तुम प्र-
काश मान ३ दूसरे की इच्छा अनुसार वर्तने वाली ४ विस्तीर्ण दर्शनी वा-
ली के द्वारा ५ बुद्धि पूर्वक में ६ यज्ञ पुरुष विष्णु को देखती हूँ तुम मेरी
१ आयु को १०, ११ खंडित मत करो १२ मैं १३ तुम सोमकयणी की १४ आ-
यु को १५, १६ खंडित न ही करूँ १७ हे गौ १८ तेरे १९ दर्शनी होते २०
उव को २१ प्राप्त करूँ ॥ २३ ॥

अथाध्यात्मम् - जीवात्मा यजमान की पत्नी ज्ञान स्वरूपा बुद्धि प्र-
ार्थना करती है १ हे पराशक्ति २ तुम ज्योति स्वरूप ३ आश्रय रूप ४ दीर्घ
दर्शिनी ५ ज्ञान स्वरूपा के द्वारा मे ६ विष्णु को ७ आरब्ध समासित कर दे र-
ती हूँ मेरे ८ इन्द्रिय रूप अन्न को १०, ११ खंडित मत करो १२, १३ मेरे १४
जीवरूप अन्न को १५, १६ अज्ञान से खंडित न ही करूँ १७ हे पराशक्ति
१८ तेरे १९ भले प्रकार दर्शनी होने पर २० ब्रह्माग्नि पराशक्ति ईश्वर समू-
ह रूप ब्रह्म को २१ प्राप्त करूँ ॥ २३ ॥

एषते गायत्रो भाग इति मे सोमाय वृता देषते वैष्ट
भो भाग इति मे सोमाय वृता देष ते जाग तो भाग
इति मे सोमाय वृता च्छन्दो नामानां सा भ्राज्य
इच्छेति मे सोमाय वृता दास्मा को सि शुक्ल ले य
हो विचित्रे रत्ना विनिचानु ॥ २४ ॥

मो^{१३} इति^{१३}। सोमाय^{१४}। ब्रूतात्^{१५}। तौ^{१६}। एषौ^{१७}। भागुः^{१८}। गायत्री^{१९}। तौ^{२०}। एषौ^{२१}। भागुः^{२२}।
त्रैष्टुभः^{२३}। इति^{२४}। मो^{२५}। सोमाय^{२६}। ब्रूतात्^{२७}। एषौ^{२८}। तौ^{२९}। भागुः^{३०}। जागतः^{३१}। इति^{३२}।
मो^{३३}। सोमाय^{३४}। ब्रूतात्^{३५}। छन्दोनामानां^{३६}। साम्राज्यम्^{३७}। गच्छ^{३८}। इति^{३९}।
मो^{४०}। सोमाय^{४१}। ब्रूतात्^{४२}। अस्माकः^{४३}। अस्मि^{४४}। श्रुक्^{४५}। तौ^{४६}। ग्रह्यौ^{४७}।
विचितः^{४८}। त्वा^{४९}। विचिन्वन्तु॥२४॥

अथाधिदैवम्— इसकंडिका में दो मंत्र हैं अध्वर्यु सोम की ओर जाने वाले यजमान को कहलाता है उसका मंत्र १ यजमान पूर्वमुख बैठकर सोम को स्पर्श करता है उसका मंत्र २

ओं एषत इत्यस्य (वत्सकर० ब्राह्मीजगती छंदो लिङ्गोक्त दे०) १

ओं अस्माको सीत्यस्य (तथा० याजुषी पंक्ति छंद० तथा) २

पदार्थः— हे अध्वर्यु १ मेरा २ यह वचन ३ सोम से ४ कहौ हे सोम ५ तेरा ६ यह आगे दीखता ७ भाग ८ गायत्री सम्बन्धी है अर्थात् गायत्री छन्द केलिये तेरा मोल लेना है नकि वध केलिये ९ तेरा १० यह ११ भाग १२ त्रिष्टुप् छंद सम्बन्धी है १३ यह १४ मेरा अभिप्राय १५ सोम से १६ कहौ १७ यह १८ तेरा १९ भाग २० जगती छंद सम्बन्धी है २१ यह २२ मेरा अभिप्राय २३ सोम से २४ कहौ २५ उष्णिक् आदि छंदों के २६ आधिपत्य को २७ प्राप्त करो २८ यह २९ मेरा वचन ३० सोम से ३१ कहौ ३२ हे सोम तुम मोल लिये हुए ३३ हमारे ३४ हौ ३५ श्रुक् यह ३६ तुम से ३७ ग्रहण योग्य है ३८ विवेक से चयन करने वाले ३९ तुम को ४० सार असार का विवेक करके सार रूप को इकट्ठा करो ४१ हे जो पुरुष सोम को छन्दों का आधिपत्य देकर मोल लेता है वह अपनों के आधिपत्य को प्राप्त करता है यह नितिर श्रुति का वचन है, यहां इन मंत्रों के द्वारा सोम को राज्य की प्रामिजत लाई गायत्री आदि छन्दों के देवता जहां रहते हैं व ह छंद लोक है॥

अथाध्यात्मम्— हे मनवा हे ज्ञानचक्षु १ मेरा २ यह वचन ३ अष्टि प्रति
 विंव से ४ कहौ कि हे सोम ५ तेरा ६ यह ७ भाग ८ गायत्री सम्बन्धी है ९ तेरा १०
 यह ११ भाग १२ त्रिष्टुप् छंद सम्बन्धी है १३ यह १४ तेरा अभि प्राय १५ आत्म
 प्रति विंव से १६ कहौ १७ यह १८ तेरा १९ भाग २० जगती छंद सम्बन्धी है २१
 यह २२ तेरा अभि प्राय २३ प्रति विंव से २४ कहौ २५ प्राणों के २६ आधिप-
 त्य को २७ प्राप्त करो २८ यह २९ मेरा वचन ३० आत्म प्रति विंव से ३१ कहौ कि
 तुम ३२ हम योगियों के ३३ हौ ३४ समष्टि प्रति विंव सूर्य ३५ तुम से ३६ य
 ह्वा योग्य है अथत् अपनी आत्मा में युक्त करना चाहिये ३७ मन बुद्धि
 आदि ३८ तुम्हें ३९ अन्वेषण करौ ॥ ३४ ॥

अभित्यन्देव थं सविता रमो एयोः कविः कृतमर्चिः
मि सत्यं सव थं रत्न धामभि प्रियम् मतिः कुर्विम् ॥
उद्धी यस्या मतिर्भा अदि द्युतत्सवी मनि हिरण्य पाणि
णि रमि मीत सुकृतुः कृपास्वः । प्रजाभ्यः स्त्वा प्रजा
स्त्वानु प्राणान्तु प्रजा स्त्व मनु प्राणि हि ॥ ३५ ॥
तमः । ओ एयोः । देवमी । कविकृतम् । सत्यं सवम् । रत्न धाम
अभिप्रियम् । मतिम् । कविम् । सविता रम् । अभ्यर्चनीम् । यस्ये
अमितिः । उद्धी । भोः । सुवीमनि । अदि द्युतत् । हिरण्य पाणिः
सुकृतुः । कृपा । स्त्वः । यः । अमि मीतः । प्रजाभ्यः । त्वा । प्रजा
त्वा । अनु । प्राणान्तु । त्वम् । प्रजाः । अनु । प्राणि हि ॥ ३५ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उनके कहते हैं सो
 म बांधने के कप्रड़ा को डहरातिहरा करके उसमें ११ सुकट सोम डाले
 १ फिर अंचर्यु सोम को इकट्ठा कर उष्णीष में बांधता है उसका मंत्र उ
 ष्णीष में बंधे सोम का स्वास वरु के वस लिये छिद करता है उसका मंत्र

ओम्प्रामित्यमित्यस्य (वत्सवः० वाट् ब्राह्मी जगती छं० सविता दे०) १

ओम्प्रामित्यमित्यस्य (तथा० निचुर्दार्षी गायत्री छं० तथा) २

पदार्थः १ उस २ एषिवी स्वर्गके ३ परात्मा ४ ब्रह्म संकल्प से प्रकट ५ सत्य प्रेरणा वाले ६ रत्नों के धारक ७ सब ओर से प्रीति के विषय ८ मनन योग्य ९ ब्रह्म स्वरूप १० सूर्य को ११ सब ओर से पूजन करता हूँ १२ जिस सूर्य की १३ अनंत १४ आकाशाभिमुखी १५ दीप्ति १६ आकाश अथवा अपरा प्रकृति रूप ब्रह्मांड को १७ प्रकाशित करती है १८ ज्योतिरूप हाथ रखने वाले १९ साधु संकल्प २० विराट् देह और वैदिक क्रिया के रक्षक २१ सूर्य ने २२ जिस सोम का २३ परिमाण निश्चय किया है सोम २४ प्रजाओं के उपकारार्थ २५ तुम्हें बाधता हूँ सोम २६ प्रजा २७ २८ तोरे अनुसार २९ स्वास लो ३० तुम ३१ ३२ प्रजा के अनुसार ३३ स्वास लो प्रजाओं का और तेरा कभी स्वास रोध मत हो इसी अभिप्राय से छिद्र का करना है ३४ ॥ अथाध्यात्मम् - पूर्वमंत्र से अच्छा बोधित व्यष्टि प्रति विंव कहता है १ उस २ एषिवी स्वर्ग के ३ परात्मा ४ ब्रह्म संकल्प से प्रकट ५ सत्य प्रेरणा वाले ६ रत्नों के धारक ७ सब ओर से प्रीति के विषय ८ मनन योग्य ९ ब्रह्म स्वरूप १० सूर्य को ११ सब ओर से पूजन करता हूँ १२ जिस सूर्य की १३ अनंत १४ आकाशाभिमुखी १५ दीप्ति ने १६ अपरा विकार रूप ब्रह्मांड में १७ प्रकाश किया उस १८ ज्योतिरूप हाथ रखने वाले १९ साधु संकल्प २० विराट् देह और वैदिक क्रिया के रक्षक २१ सूर्य ने मुझ व्यष्टि प्रति विंव को २२ निश्रिण किया है समष्टि प्रति विंव सूर्य २३ आपों के उपकारार्थ २५ तुम को धारण करता हूँ २६ प्राण २७ तुम को २८ देख कर २९ स्वास लो ३० तुम ३१ आपों को ३२ देख कर ३३ स्वास लो ॥ २५ ॥ अथाध्यात्मम् ॥ २५ ॥

अज्ञा रूप उत्तम २० पशु के वदले २१ मोल लिये जाते हैं आप की कृपा से २२ जिस प्रकार पुत्र पशु आदि सहस्रों का पालन हो उसी प्रकार २३ धन आदि से पुष्ट होऊँ अथवा यह अर्थ है, हे अज्ञातू १४ प्रजा पति के १५ तप का १६ रूप है क्योंकि उसी से उत्पन्न है और १७ प्रजा पति का वर्ण १८ है क्योंकि तीन गुण के कारण प्रजा पति के तीन रूप हैं और अज्ञा भी प्रति वर्ष तीन बार जनती है ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम् - हे समष्टि प्रति विंशतुम् दीप्तिमान् २ नाश रहित ३ सूर्य रूप ४ को ५ नाश रहित ६ मानस सूर्य के वदले ७ मोल लेता हूँ हे भर्गव ब्रह्मन् तेरा धर्म ब्रह्मा विष्णु महेश रूप आत्मा १० यज्ञ मान में ठहरो ११ तुम्हें को दी हुई १२ जीवात्म सहित इन्द्रियां १३ मुक्त व्यष्टि प्रति विंश में लो दकर आरब्ध समाहित क ठहरो हे प्रकृति तुम १४ ब्रह्मा विष्णु महेश शक्ति नाम चार रूप वाले प्रजा पति की १५ देह और १७ रूप १८ हैं हे सूर्य तुम १९ उत्तम २० पशु मानस सूर्य नाम के वदले २१ मोल लिये जाते हैं आप की कृपा से २२ ब्रह्म ज्योति दाता योग पुष्टि को २३ बढ़ाऊँ ॥ २६ ॥

मित्रो न एहि सुमित्र ध इन्द्र स्योरुमा विशदक्षि
णामुशन्नु शन्तं स्योनः स्योनम् । त्वान् भ्राजा
द्वारे वम्भारे हस्त सुहस्त कशाना वेतेवः सोमक
यणास्तान् रक्षध्वम्मा वौदभन् ॥ २७ ॥
मित्रः सुमित्र धः नः । एहि उशन् । स्योनः । इन्द्रस्य । उश
न्तम् । स्योनम् । दक्षिणम् । ऊरुम् । आविश । त्वान् भ्राज ।
अद्वारे वम्भारे । हस्त । सुहस्त । कशानो । वेः । एते । सोमके
यणास्तान् । रक्षध्वम् । वेः । मा । दभन् ॥ २७ ॥

अथाधिदैवम् - इस कड़िका में तीन मंत्र हैं उन को कहते हैं वा

हैं हाथ से अजा को देना सोम को ग्रहण करता है उस का मंत्र १ फिर अधर्यु-
वस्त्र पर सोम को स्थापन कर उस वस्त्र वद्ध सोम को यजमान के दक्षिण ऊरु
पर रखता है उस का मंत्र २ सोम वेचने वाले को देखता यजमान जप करता है
और गौ आदि सोम के मूल्य को सोम विक्रयी के आधि देवता भूत गन्धर्वों के
निवेदन करता है उस का मंत्र ३

ओं मित्रो न इत्यस्य (वत्स ऋ० भुरिग्राह्णी पंक्ति ऋ० सोमः सोम रक्षा काश्र दे०) १३२

पदार्थः - हे सोम १ सखा प्रीति युक्त २ मित्रों के पोषक तुम ३ हमारे पास ४
आओ ५ ऊरु को चाहते ६ सुख रूप तुम ७ यजमान की सो मेच्छु रूप वा प्रिय
८ बैठक में सुख दाता ९ दाहिनी १० ऊरु पर ११ बैठे हैं १२ स्थान १३ भ्राज
१५ अङ्गारि १६ वम्भारि १७ हस्त १८ सुहस्त १९ कृशानु नाम सोम रक्षा क
देव विशेष २० तुम्हारे २१ ये २२ सुवर्ण आदि सोम के मूल्य पदार्थ आगे
स्थापित हैं २३ उन पदार्थों को २४ रक्षा करो २५ तुम को २६ २७ शत्रु पी-
डा मत दो ॥ २७ ॥

अथाध्यात्मम् - हे समष्टि प्रति विंव १ सूर्य रूप २ और भक्तों के पो-
षक तुम ३ हमारे पास ४ आओ ५ अपने अंश रूप अष्टि प्रति विंव को चाहने-
वाले वा प्रिय ६ आनंद स्वरूप तुम ७ यजमान के रूपी आनंद रूप तेरे चाह-
ने वाले वा प्रिय १० परब्रह्म नुवर्त्ती ११ मन हृदय अकुटि में ब्रह्मा विष्णु
महेश रूप धारी जीवात्मा में १२ अवेश करो १३ हे आकाश वा दिशा १४
हे प्रकाश मान पराज्योति १५ हे पाप नाश के भूरिग्य ज्योति १६ हे विश्व पो-
षक वायु १७ हे हृष्ट रूप चन्द्रमा १८ हे समुद्र १९ हे अग्नि २० तुम्हारे २१
ये ओन्न बुद्धि वृत्ति जीवात्मा आण मन जिह्वा वाणी रूप पदार्थ २२ सोम
के मूल्य हैं २३ उन अपने अंश रूपों को २४ रक्षा करो कामादि २५ तुम
रक्षा को २६ मत पीडा दो ॥ २७ ॥

परिमाणे दुश्चरिताद्वाधस्वा मासु चरिते भज।
उदायुषा स्वायुषोदस्था ममृता २॥ अनु २॥
अने दुश्चरित्वा। मो। परिवाधस्व। सुचरिते। मो। आमजा।
उदायुषा। स्वायुषा। अमृतान्। अनु। उदस्थाम्। २॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं, सोम ग्रहण करने वा
ले यजमान को उच्चारण करता है उसका मंत्र १ यज मान ऊक्त के ऊपर
से सोम को हाथ से लेकर उठता है उसका मंत्र २

ओ परिमाण इत्यस्य (वत्स कर० - साम्नी वृहती छं० अग्नि दे०) १
ओ उदायुष इत्यस्य (तथा ० साम्नी उष्णिक छं० तथा ०) २

पदार्थः— हे अग्नि २ पाप से ३ मुक्त को ४ चारों ओर से निवारण करो अ
र्थात् पाप में से ही अवृत्ति न हो ५ सदा चार रूप शुभ पुण्य रूप कर्म में हे मुक्त
यजमान को ६ स्थापन करो ७ चिरजीवन रूप उत्कृष्ट आयु तथा ८ योगदान
दि कर्म युक्त आयु के द्वारा १० सोम आदि देवताओं को ११ लेकर १२ में उ
ठाई।

अथाध्यत्मिम्— हे ब्रह्माग्नि २ विषयों की आसक्ति से ३ मुक्त को
४ निवारण करो ५ योग के अनुष्ठान में ६ मुक्त को ७ स्थापन करो ८ अ
ण और मातृसं सूर्य सम्बन्धी आयु के कारण १० ब्रह्म पर नारायण नाम दे
वताओं को ११ अनुलक्ष करके १२ समाधि से उठाई।
प्रतिपन्थी मपेद्वहि स्वस्ति गामनेह सम। येन
विश्वान्परिद्विषो वृणक्ति विन्दते वसु। २॥
स्वस्ति गाम्। अनेह सम। पुन्यो म। प्रत्यपेद्वहि येन वि
श्वान्। द्विषान्परिद्विषो वृणक्ति वसु। विन्दते। २॥

अथाधिदैवम्— अपने चिरपर सोम को रख कर ओं शिरपर

हाथ रख कर शकट की ओर जाता है उस का मन्त्र-१

ओं प्रतिपंथा मित्यस्य (वत्स ऋ० निचदार्थनुष्टुप् छं० पथो दे०) १

पदार्थः १ क्षेम से गमन योग्य २ पाप रूप चौर आदि की बाधा से रहित पथ
कजनों के मुख देने वाले ३ मार्ग को ४ हम प्राप्त होवें ५ जिस मार्ग के द्वारा
६ सब ७ देवी चौर आदि को ८ चारों ओर से दूर करता है ९ और धन को १०
प्राप्त करता है ॥ २६ ॥

अथाध्यात्मम्- १ मोक्ष के लिये गमन योग्य २ पाप रहित ३ मोक्ष मार्ग को ४ हम प्राप्त करें ५ जिस मोक्ष मार्ग के द्वारा ६ सब ७ कामादि शत्रुओं को ८ चारों ओर से निवारण करता है ९ और मोक्ष लक्ष्मी को प्राप्त करता है ॥

अदित्यास्त्वगस्यदित्यै सदु आसीद । अस्तन्नाद

द्यां वृषभो अन्तरिक्ष मभि मीत वरिमाणम् पृथिव्याः

आसीद द्विश्वा भुवनानि सन्म्रा विश्वे तानि वरुण

स्य व्रतानि ॥ ३० ॥

अदित्याः । त्वक् । असि । ए । अदित्याः । सदः । आसीद । वृषभः ।

द्याम् । अन्तरिक्षम् । अस्तन्नात् । पृथिव्याः । वरिमाणम् । अभि ।

मीत । सन्म्रा । विश्वाः । भुवनानि । आसीदत् । विश्वाः । इत् ।

वरुणस्य । व्रतानि ॥ ३० ॥

अथाधिदैवम्- इस कंडिका में तीन मन्त्र हैं उन को कहते हैं शकट के पश्चात् भाग में मृग चर्म को बिछाता है उसका मन्त्र १ उस बिछे मृग चर्म पर अर्घ्य सोम को स्थापन करता है उस का मन्त्र २ यजमान को सोम का स्पर्श करा के कहलाता है उसका मन्त्र ३

ओं अदित्यास्त्वगित्यस्य (वत्स ऋ० स्वराइ याजुषी निष्टुप् छं० कृष्णाजिनो दे०) १

ओं अदित्यै सदित्यस्य (तथा० विगडाषी निष्टुप् छं० सोमो दे०) २

ओंअस्तन्नादद्यामित्यस्य (तथा० तथा० वणो दे०) ३

पदार्थः - हे रुषाजिन तुम १ पृथिवी के २ त्वचारूप ३ हो ४ हे सोम तुम ५ भूमि सम्बन्धी ६ स्थान में ७ वैदो ८ ब्रह्म ने ९ स्वर्ग १० और अन्तरिक्ष को ११ तन्मि त किया १२ पृथिवी के १३ उरुत्व को १४ निर्माण किया १५ विष्णु रूप हो कर १६ सव १७ भुवनो में १८ प्रवेश हुआ १९, २० सवही २१ विष्णु के २२ कर्म है ३०॥

अथाध्यात्मम् - हे हृदय वा हे मन तुम १ पराप्रकृति के २ आवरण ३ हो ४ हे सूर्य तुम ५ पराप्रकृति के ६ स्थान हृदय में ७ ठहरो ८ आप के आत्मा भर्ग ने ९ भृकुटि १० और हृदय को ११ तन्मि त किया १२ मानस कमल के १३ उरुत्व को १४ निर्माण किया १५ तथा विष्णु रूप धारी भर्ग १६ सव १७ कमलोपर १८ विराजमान हुआ १९, २० सवही २१ भर्ग के २२ कर्म है ॥ ३०॥

वनेषु व्यन्तरिक्षन्तान् वाजमर्वत्सु पयउस्त्रियासु । हत्सु कतुवसो विद्वन्निन्दु विसूर्यमदधात्सान् मद्रौ ३१

वरुण । वनेषु । व्यन्तरिक्षसु । विततान् । अर्वत्सु । वाजम् । उस्त्रियासु । पयः । हत्सु । कतुम् । विद्वन् । अग्निम् । दिवि । सूर्यम् । मद्रौ । सोमम् ॥ ३१ ॥

अथाग्निदेवम् - सोमवाधने का जो कपड़ा है उससे सोम को सव और सलपेट कर जप करता है उसका मन्त्र ॥

ओं वनेष्वित्यस्य (वत्स ३०० विराडाषी त्रिष्टुप ३० वरुणो दे०) १

पदार्थः १ विष्णु ने २ वन गत छहों के अग्र में ३ आकाश को ४ विस्तृत किया ५ पुरुषों में ६ वीर्य को ७ गौओं में ८ दुग्ध को ९ हृदयों में १० सकल आत्मक मन को ११ प्रजापति में १२ जह्मरानि को १३ स्वर्ग में १४ सूर्य को १५ पर्वत में १६ वल्ली रूप सोम को स्थापित किया ॥ ३१ ॥

अथाध्यात्मम्- १ महानारायणनेत्र जलपरिणामशरीरों में ३ इंद्रिय मध्यगत आकाश को ४ विस्तृत किया ५ जीवात्माओं में ६ योगबल को ७ आत्मा की किरणों में ८ प्राण को ९ हृदयों में १० प्रज्ञा शक्ति को ११ प्राणों में १२ आत्माग्नि को १३ भृकुटि में १४ शिवरूप आत्मा १५ गगन मंडल के मेघ में १६ अमृत को स्थापन किया ॥ ३१ ॥

सूर्यस्य चक्षुरा रोहाग्ने रक्षणाः कनीनकम् ॥ ३२ ॥
यत्रैतौ शोभिरीयसे भ्राजमानो विपश्चिता ॥ ३२ ॥
 सूर्यस्य चक्षुः । अग्नेः । अक्षणाः । कनीनकम् । आरोह । यत्र ।
 विपश्चिता । भ्राजमानः । एतौ शोभिः । इयसे ॥ ३२ ॥

अथाधिदैवम्- आसन के लिये जो दो मृगचर्म हैं उनमें से एक को शकट के पूर्वभाग में युग के समीप ऊँचे दंड में लगाता है यदि आसन के लिये एक ही मृगचर्म हो तो उसकी ग्रीवा को कंठ प्रदेश में काटकर शकट के पूर्वभाग में लगाता है उसका मंत्र १
 ओं सूर्यस्येत्यस्य (वत्सः० निचदार्थं नृपपञ्चं कृष्णाजिनो दे०) १ ॥ ३३ ॥

पदार्थः हे कृष्णाजिन तुम १ सूर्य के २ नेत्र ३ और अग्नि के ४ नेत्र के ५ तारे पर ६ आरोहण करौ ७ जहाँ इन दोनों के दर्शन में ८ सर्वत्र सूर्य और अग्नि से ९ दीप्यमान होता १० घोड़ों की सवारी से ११ चलता है । तात्पर्य यह कि सूर्य और अग्नि की दृष्टि का विषय होने से मार्ग रक्षकों की वाधा से रहित होता है यह तित्तिरि श्रुति का वचन है ॥ ३३ ॥

अथाध्यात्मम्- हे हृदय तुम १ ईश्वर के २ नेत्र और ३ ब्रह्माग्नि के ४ नेत्र की ५ पुतली का ६ दृष्टिगोचर हो ७ जहाँ इन दोनों के दर्शन में ८ ज्ञानी योगी से ९ दीप्यमान होता १० इन्द्रियों के साय ११ ब्रह्म में प्राप्त होता है ॥ ३४ ॥

उत्सावेतन्धूर्षाहौ युज्येथामनश्च अवीरह
णौ ब्रह्मचोदनौ । त्वस्ति यजमानस्य गृहा

न गच्छतम् ॥ ३३ ॥

उत्सो । धूर्षाहौ । अनश्च । अवीरहणौ । ब्रह्मचोदनौ । एत
म् । युज्येथाम् । त्वस्ति । यजमानस्य । गृहान् । गच्छतम्

॥ ३३ ॥ अथाधिदैवम् - वैलों को शकट में जोड़ता है उस काम

उत्सावेतमित्यस्य (वत्सऋ० ऊर्ध्वं दृढतीक्ष्णं अनडं वाहौ दे०) १

पदार्थः १ है वैलो २ शकटधुर के धारण करने में समर्थ ३ उत्साहवान्

४ सींगों से बालकों के न मारने वाले ५ ब्राह्मणों को यज्ञ में प्रेरणा करने वाले

तुम दोनों ६ इस शकट में ७ युक्त हजिये ८ और सेम पूर्वक ९ यजमान के

गृहों को १० जाओ ॥ ३३ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे व्यष्टि समष्टि सूर्य २ योगरथ की धुरी के धारण क

रने में समर्थ ३ उत्साहवान् वापीडा रहित ४ पापन करने वाले ५ महावाक्

से प्रेरित तुम दोनों ६ इस योगरथ में ७ युक्त हजिये ८ और कल्याण पूर्वक

९ यजमान के १० गृहों अर्थात् भृकुटि आदि कमलों में ११ जाओ ॥ ३३ ॥

भद्रो मेसि प्रच्यवस्व भुवस्पते विश्वान्यभिधामानि

मात्वा परि परिणो विदन्मात्वा परि पन्थिनो विद

न्मात्वा वृका अघायवो विदन्श्येनो भूत्वा प

रापत यजमानस्य गृहान् गच्छतनौ सधंस्तु

तम् ॥ ३४ ॥

मे । भद्रं । असि । भुवस्पते । विश्वानि । धामानि । अभिप्रच्य

वस्व । त्वा । परि परिणः । मा । विदन् । परि पन्थिनः । त्वा ।

मा । विदन् । अघायवः । वृकाः । त्वा । मा । विदन् । श्येनः

^{१३}भूत्वा^{३४}। परपेत^{३५}। यजमानस्य^{३६}। गृहाने^{३७}। गच्छ^{३८}। तत^{३९}। नो^{४०}। सं
स्तुतम्॥३४॥

अथाधिदैवम्— सोम लेकर शाला में जाने वाले यजमान को अध्वर्यु कहलाता है उसका मंत्र,

ओं भद्रो मे सीत्यस्य (वत्स ऋ० भुरि गार्गी गायत्रादि छन्दो० सोमो दे०) १॥

पदार्थः— हे सोम तुम १ मुझ यजमान के उपकारार्थ २ कल्याण स्तुत ३ हो ४ हे यजमान अध्वर्यु आदि के पालक सोम तुम ५ सब ६ स्थानों पत्नी शाला हविर्धान आदि को ७ देखकर ८ चलो ९ तुम्ह को १० सब ओर घूमने वाले चोर विशेष ११, १२ मत जानो १३ याग के प्रतिषेधक शत्रु १४ तुम्ह को १५, १६ मत जानो १७ दूसरे का अपराध करने वाले १८ विकर्तनशील (काटने वाले) वन के पशु वा दुर्जन १९ तुम्हें २०, २१ मत जानो २२ मध्य स्थान देवता २३ होकर २४ सन्मुख चलो २५ यजमान के २६ गृहों को २७ जाओ २८ वह ब्रह्मण्य का स्थान २९ हम तुम दोनों के लिये ३० सब उपकरण से संयुक्त है ॥३४॥

अथाध्यात्मम्— हे सूर्य तुम १ मेरे २ शिव रूप आत्मा ३ हो ४ हार्दन्ति रिक्ष पालक ५ सब ६ कमलों को ७ देखते ८ गमन करो ९ तुम्ह को १० काम आदि ११, १२ मत जानो १३ क्रोध आदि १४ तुम्ह को १५, १६ मत जानो १७ दूसरे का अपराध करने के इच्छा मान १८ विषय भोग १९ तुम्हें २०, २१ मत जानो २२ मध्य स्थान का देवता २३ होकर २४ ऊर्ध्व गमन कर २५ भूतात्मा के २६ गृहों अर्थात् भृकुटि आदि कमलों को २७ जाओ २८ वह ब्रह्मपुर २९ हम तुम दोनों जीव ईश के लिये ३० वेद के मंत्रों से संस्कार किया गया है ॥३४॥

नमो मित्रस्य वरुणस्य चक्षसे महो देवा यत दृढं

संपर्यत। दूरे दृशे देवजाताय केतवे दिवस्युनाय

मित्रस्य। वरुणस्य। चक्षसे। मृहोदेवाय। दूरदेशे। देवजाता
या। केतवे। दिवः। पुत्राय। सूर्याय। नमः। ततः। ऋतम्। स
पर्यतो। शंसत॥ ३५॥

अथाधिदैवम्- शालाके पूर्वमें प्रतिप्रस्थाता रुष्णासारंगं पशुको अ
थवा उसके नमिलने में लोहित सारंग पशुको लेकर स्थित होता है उसका मंत्र
ॐ नम इत्यस्य (वत्स ऋ० निचदाधीजगती छं० सूर्यो दे०) १६ - ३५। ३५।
पदार्थः- इस मंत्र में सूर्यरूप से सोम की स्तुति करते हैं, १ प्राण के २ और जी
वात्मा के ३ दृष्टा ४ ज्योतिस्वरूप ५ दूरदर्शी ६ ब्रह्म से प्रादुर्भूत ७ अन्तरा रूप मत्स्य
रंग के परब्रह्माविष्णुमहेश रूप ८ सूर्य के अर्थ १० नमस्कार ११ उस १२ सत्य
ब्रह्म की १३ सेवा करे १४ तथा स्तुति करे ॥ ३५॥

वरुणस्योत्तमन्मनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनी
स्यो वरुणस्य ऋतु सदन्यसि वरुणस्य ऋतु स

दनमसि वरुणस्य ऋतु सदन मृसीद॥ ३६॥
वरुणस्य। उत्तमन्मनम्। अस्मि। वरुणस्य। स्कम्भसर्जनी। स्थो
वरुणस्य। ऋतु सदनम्। अस्मि। वरुणस्य। ऋतु सदनम्। अस्मि
वरुणस्य। ऋतु सदनम्। आसीद॥ ३६॥

अथाधिदैवम्- इस कंडिका में ५ मंत्र हैं उनको कहते हैं शालाके स
मीप शकट को पूर्व मुख वा उत्तर मुख खड़ा करके तिपाये से त्रांघता है उस का
मंत्र १ शकट को तिपाये पर स्थापन करके दोनों शंभ्या ऊपर को नि कालता है
उस का मंत्र २ आध्वर्यु आदि चारों ऋत्विज गूलर की लकड़ी से बनी हुई ईनाभि
प्रमाण वाले पायों से युक्त आग्निमान् अंगों से युक्त मूँज की रसी से बनी हुई
सञ्चिका को सोम रखने के लिये शकट के समीप लाते हैं ओ स्थाध्वर्यु हाथ
से स्पर्श करता है उस का मंत्र ३ सूर्यात्स को दो समंजस का पर विज्ञाता है उ

सकामञ्च ४ निसञ्चासं दी पर विच्छेद ए मृगचर्म परवस्त्र वद्ध सोम को स्थापन कर
ता है उसका मञ्च ५॥

ओं वरुणस्येत्यस्य (वत्स ऋ० विराड् ब्राह्मी वृद्धती छं० वरुणो दे०) १ से ५ तक

पदार्थ है काष्ठाभिमानि देवता तु १ शकट रूप देहस्थ सोम का २ उत्तम्भन-

३ है हे दोनों शम्या ओतुम ४ पूर्वोक्त सोम की ५ रेकने वाली ६ हौ है आसं दी तुम

७ सोम सम्बन्धी ८ यज्ञासिद्धि के लिये आसन रूप ९ हौ है मृगचर्म तुम १० सोम

के ११ यज्ञ सम्बन्धी आसन रूप १२ हौ है सोम तुम १३ अपने १४ यज्ञ सम्बन्धी आस

न आसं दी स्थ मृगचर्म पर १५ सुख पूर्वक बैठो ॥ ३६ ॥

अथाध्यात्मम्— हे मन तुम १ सूर्य के २ उत्तम्भन ३ हौ है प्राण अपान

तुम दोनों ४ सूर्य का ५ निरोध करने वाले ६ हौ है ब्रह्म राष्ट्र शरीर तुम ७ सूर्य

के ८ योग यज्ञ सम्बन्धी आसन ९ हौ है हृदय तुम १० सूर्य के ११ यज्ञार्थ आ

सन १२ हौ है सूर्य तुम १६ व्यष्टि सूर्य जीवात्मा के १४ योग यज्ञ सम्बन्धी आस

न हृदय में १५ विराजमान हुआ है ॥ ३६ ॥

याते धामानि हविषाय जन्ति ताते विश्वा परिभूर

स्तुयन्तम्। गयस्फानः प्रतरणाः सुवीरो वीरहा प्र

चरा सोमदुर्यानि ॥ ३७ ॥

सोमा ॥ ते ॥ यो ॥ धामानि ॥ हविषा ॥ यन्तां ॥ यजन्ति ॥ ते ॥ ता ॥ वि

श्वान् ॥ परिभून् ॥ अस्तु ॥ गयस्फानः ॥ प्रतरणाः ॥ सुवीरः ॥ अवीर

हा ॥ दुर्यानि ॥ प्राचर ॥ ३७ ॥

अथाधिदैवम्— सोम के प्रविष्ट होने पर अध्वर्यु यजमान को कह

लाता है उसका मञ्च १

ओं यात इत्यस्य (गोतम ऋ० निरुदाणी विष्णु पृष्ठं० सोमो दे०) १

पदार्थ— हे सोम २ ते ३ जित ४ स्थानों में ५ सब वश आदिको आकर ५

तेरे सरूप हविसे ६ यज्ञ पुरुष को ७ गोस्थ उर्वश्यस्यायुरसि पुरु
आप ११७ १२ सब ओर से प्राप्त हजियै १ छन्द सामंथामि त्रैष्टुभेन
प्राप्त कराने वाले १५ हम ऋत्विजों अथवा १ तेन त्वा छन्द सामंथामि २
उक्त तीनों के रक्षक तुम १७ यज्ञ गृहों को स्थः । उर्वशी । असि । आयुः । अ
अथाध्यात्मम् - १ हे सूर्य तेरे ३ जे १३ छन्द सा । त्वा । मन्यामि । त्रैष्टु
पने आत्मा रूप हविसे ६ महानारायण को ७ गतेन । छन्द सा । त्वा । मथा
जों को ११७ १२ आप प्राप्त हजियै १३ वष्टि देह
आपत्ति निवारक १५ पराज ह्य विष्णु महेश और १ उन को कहते हैं यज्ञ सन्वधी
त्वा से व्यतिरिक्त माया कल्पित संसार के नाशक तुम १ सकामं च १ उत्त शकल प
को १७ प्राप्त कीजियै ॥ ३७ ॥ १ ऊपर नीचे के अराणि
इति श्री भृगुवंशावतंस श्री नाथू राम सूनु ज्वा १ गलीग त आज्य को
कते भुक्त यजुर्वेदीय ब्रह्म भाष्ये शाला गमा द्वा १ अधराणि के
थाऽऽत्म संस्कार नाडी महिमा वणि पूर्वकं व्यष्टि १ कामन्थनक
पिपोन सूर्य रूप सोम जय कथनं नाम चतुर्थी ध्या १
चौथे अध्या १ ऋत्विज सहित यजमान के शाला अवेश से ले के १ से प्रतक
म के शाला १ विशतक मंत्र कहे अव पांचवां अध्याय जिस की आदि १
व्यष्टि के मध्य हवि ग्रहण आदि के मंत्र कहे जाते हैं ॥ १
हरिः ओं अग्नेस्तनूरसि विषावेत्वा सोमस्य तनू १
रसि विषावेत्वा त्रिये रातिथ्यमसि विषावेत्वा श्ये १
नायत्वा सोममृते विषावेत्वा ग्नयेत्वा रायस्योष १
देविषावेत्वा १
अग्नेः । तनूः । असि । विषावे । त्वा । सोमस्य । तनूः । असि । त्वा
विषावे । अतिथ्ये । अतिथ्यम् । असि । त्वा । विषावे । सोममृ

सकामञ्च ४ तिस आसदी पर विछेड़ा मृगचर्म ^{११}नेये। त्वो ^{२३}। त्वो ^{२३}। रायस्योषदे ^{२४}
ता है उसका मञ्च ५॥

उंवरुणस्येत्यस्य (वत्सन्त० विराड् ब्राह्मी मञ्च)

पदार्थः हे काष्ठाभिमानि देवता तू १ श्वराड् ब्राह्मी ब्रह्मती छं० विष्णुदे १०

३ है हे दोनों शम्याओ तुम ४ पूर्वोक्त सो शरीर ३ हो क्योंकि उसको तृप्त करते

५ सोमसम्बन्धी यज्ञसिद्धि के लिये ग्रहण करता है ६ तुम सोम देवता का ७

के ११ यज्ञसम्बन्धी आसन रूप १२ है विष्णु के अर्थ ग्रहण करता है अतिथि सोम दे

त आसदी स्थ मृगचर्म पर १५ फार रूप १३ हो १४ उस तुम्हको १५ विष्णु के अर्थ

अथाध्यात्मम्- हे सोम लाने वाले १७ श्येन रूप धारी गायत्री के अधि

तुम दोनों ४ सूर्य का ५ त्वं तुम्हें ग्रहण करता है १६ उस तुम्हको २० विष्णु के अर्थ

के ८ योग यज्ञसम्बन्धी अग्निके अर्थ २२ तुम्हें ग्रहण करता है २३ उस तुम्हको २४

सन् १२ हो हे सूर्य १५ विष्णु के लिये ही ग्रहण करता है ॥ १॥

नृहृदयमे १५ विष्णु के अर्थ ग्रहण करता है तथा ६ समष्टि प्रतिविव सूर्य के ७ श

स्तुय उस तुम्हको १० विष्णु के अर्थ ग्रहण करता है ११ अतिथि रूप सूर्य के

१३ हो १४ उस तुम्हको १५ विष्णु के लिये ग्रहण करता है १६ स्वर्ग से

सोम लाने वाले १७ गायत्री के अधिष्ठाता देवता के लिये १८ तुम्हें ग्रहण करता

है १६ उस तुम्हको २० विष्णु के लिये ही ग्रहण करता है २१ ब्रह्माग्नि के लिये

२२ तुम्हें ग्रहण करता है २३ उस तुम्हको २४ योगेश्वर्यदाता २५ विष्णु के लि

ये ही ग्रहण करता है ॥ १॥

१६ स्तुति में लिखा है कि जो यज्ञ के अर्थ ग्रहण करता है वह विष्णु के लिये ही ग्रहण

करता है और गीता में भी भगवद्वाक्य है कि मैं ही सब यज्ञों का भोक्ता और प्रसू हूँ सु

क्तों को तब पूर्व में ही जानते हैं इस कारण च्युत होते हैं ॥

अग्नेर्जनित्रमसि वृषणोऽस्थ उर्वश्यस्यायुरसि पुरू-
रवा असि। गायत्रेण त्वा छन्दसा मन्थामि त्रैष्टुभेन
त्वा छन्दसा मन्थामि जागतेन त्वा छन्दसा मन्थामि २
अग्नेः। जनित्रम्। असि। वृषणोः। स्थः। उर्वशी। असि। आयुः। अ-
सि। पुरूरवाः। असि। गायत्रेण। छन्दसा। त्वा। मन्थामि। त्रैष्टु-
भेन। छन्दसा। त्वा। मन्थामि। जागतेन। छन्दसा। त्वा। मन्था-
मि॥ २॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ८ मंत्र हैं उन को कहते हैं यज्ञ सम्बंधी
वृक्ष की शकल को लेकर वेदी पर उत्तराग्र रखता है उसका मंत्र १ उस शकल प-
र शतरुण को पूर्वग्र रखता है उसका मंत्र २ कुशतरुण के ऊपर नीचे के अरणि-
काष्ठ को उत्तराग्र रखता है उसका मंत्र ३ उत्तराणि से आज्य स्थालीगत आज्य को
स्पर्श कर उस उत्तराणि अधरणि के ऊपर रखता है उसका मंत्र ४ अधरणि के
सन्मुख ~~अरुण~~ की रखता है उसका मंत्र ५ तीन मंत्र से दोनों अरणि का मन्थन क-
रता है उसका मंत्र ६, ७, ८
ॐ अग्नेर्जनित्रमित्यस्य (गोतम ऋषिः आर्षी गायत्री छं० शकलादिदे०) १ से प्रतक।
ॐ गायत्रेत्युत्तरस्य (तथा० आर्षी विष्टुप छं० अग्निर्दे०) ६, ७, ८

पदार्थः— हे शकल तुम १ अग्नि के २ आदुर्भाव स्थान ३ हो हे दर्भो तुम ४ सीव
ने वाली अर्थात् अरणि काष्ठा में अग्नि जनन सामर्थ्य को देने वाली ५ हो हे नीचे के अ-
रणि काष्ठ तुम ६ वृद्ध भोक्त्री स्त्री रूप ७ हो हे स्थालीगत आज्य तुम ८ दोनों अरणि से
प्रादुर्भूत अग्नि के अन्तर् ९ हो हे ऊपर के अरणि काष्ठ तुम १० वेद पाद आदि वहुत शब्द
करने वाले पति रूप ११ हो हे अग्नि १२, १३ गायत्री छन्दो भिमानी देवता के द्वारा
मैं १४ तुम्ह को १५ अरणि मथन से प्रकट करता हूँ १६, १७ त्रिष्टुप छन्दा भिमानी
देवता के द्वारा मैं १८ तुम्हें १९ प्रकट करता हूँ २०, २१ जगती छन्दा भिमानी देवता

स्वधारीतयानानवस्था में ४ ब्रह्म पराविष्णु महा विष्णु व्यष्टि समष्टि प्रतिविम्ब रूप धारीत
या सिद्ध अवस्था में ५ प्रकृति आकाश अग्नि वायु पृथिवी जल अहङ्कार महत्
से रहित ६ हृजिये ७ योग यज्ञ को ८ धन धन की जिये ९ १० ११ जीवात्मा को स
सार वं धन से पीड़ितन की जिये १२ अव अवर्थात् इसी जन्म में १३ हमारे लिये १४
आनन्द स्वरूप १५ हृजिये ॥ ३ ॥

अग्नावग्निश्चरति प्रविष्टे ऋषीणां पुत्रोऽग्नि
शस्त्रिपावा। सनः स्योनः सुयजा यजे ह देवेभ्यो

हव्यं सदमुपयुच्छं त्वाहा ॥ ४ ॥

ऋषीणां पुत्रो वा। अग्नि शस्त्रिपाः। अग्निः। अग्नौ। प्रविष्टः
चरति। सानः। स्योनः। सदमुपयुच्छन्। इह। सुयजा।
देवेभ्यो। हव्यं। यजो। स्वाहा ॥ ४ ॥

अथाधिदेवम् - स्थाली से घृत को ले कर डाली हुई अग्नि के ऊपर हो
म करता है उसका मंत्र ॥

ॐ अग्नावग्निरित्येस्य (गोतम ऋषेः आर्षी विष्टु पृच्छं अग्निदेवे) १ आग्ने

पदार्थः - १ मंत्रों से २ प्रादुर्भूत ३ और ४ अभिशाप तथा याचना से रक्षक पद

अग्नि अग्नि दे आहुतनीय अग्नि में ५ प्रवेश करता ६ हवि को भक्षण करता है
है अग्नि ७ वहुत ८ हमारे लिये ९ सुख रूप हो ते १० सदा ११ सावधान हो ते
१२ इस स्थान में १३ अभय नृ द्वा १४ देवताओं के अर्थ १५ सोम आदि स्वे हवि
को १६ दीजिये अर्थात् हमारी दिया हुआ हवि देवताओं को प्राप्त करा दिये १७
तेरे लिये यह घृत का अष्ट होम हो १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

अथाध्यात्मम् - १ मंत्रों से २ प्रादुर्भूत ३ और ४ हिंसा से रक्षक पद

अग्नि दे अग्नि में ५ प्रवेश होता ६ जीव स्वे पद हवि को भक्षण करता है अर्थात्
सको अपनी आत्मा में लेय करता है अग्नि देवतम् ७ हमारे लिये ११ आन

दस्वरूप होते १२ ब्रह्मा विष्णु महेश रूपधारी यजमान को १३ बोधित करते १४ इस हा
र्दाकाश में १५ ज्ञानयज्ञ द्वारा १६ परानर नारायण नाम देवताओं के लिये १७ व्यक्ति
समष्टि रूप प्रतिविंब को १८ दीजिये १९ ओष्ठ होम हो ॥ १५ ॥

आपतयेत्वा परिपतयेत् गृह्णामितनून त्रैशाक्
रयशक्नञ्जो जिष्ठाया अनाधृष्टमस्यानाधृ
ष्यन्देवानामो जो नमि शस्यमिशस्तिपाश्र्वनमिश
स्तेन्यमुञ्जसा सत्यमुपगेष ॥ ५ ॥ स्तिते माधाः ॥ ५ ॥
त्वा परिपतयेत् तनून त्रैशाक्कराय शक्ने ओजिष्ठाया आ
पतयेत् गृह्णामि अनाधृष्टम् अनाधृष्ट्यम् देवानाम ओ
जः अनमिशस्ति अभिशस्तिपं असि आ अञ्जसा अन
मिशस्तेन्यम् सत्यम् उपगेषम् स्तिते माधाः ॥ ५ ॥

अथाधिदेवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं व्रतप्रदान नाम पात्र में शु
वा द्वारा स्थाली से दो बार आज्य को लेता है उसका मंत्र १ उसतानून त्रैनामघृ
त को वेदी के दक्षिण ओणी पर रख कर ऋत्विज और यजमान एक साथ स्पर्श क
रते हैं उसका मंत्र २
ओं आपतयेत्वेत्यस्य (गोतम ऋषि कृष्ण वायुदेवता) १
ओं अनाधृष्टमित्यस्य (तथा भूरिगाधीपंति ऋषि आज्यदेवता) २

पदार्थः— हे आज्य १ तुम्हें २ सर्व व्यापी ३ आत्मा के पौत्र ४ आकाश के पुत्र
५ सवर्कर्मों में समर्थ ६ बलवान् ७ निरंतर गतिवान् वायु के लिये ८ ग्रहण कर
ता हूँ हे आज्य तुम ९ अब से पहिले भी सब से अति रक्तुत १० और इससे पीछे भी ति
रस्कार के अयोग्य ११ अग्नि आदि देवताओं के १२ बल १३ अनिन्दित १४ निंदा से
रक्षित १५ हो जाओ कि धृग से हवि के सुत्वादित होने पर कोई निंदा नही कर स

नेवाले १६ नारायण को २० प्राप्त करूँ २१ शोभनमार्ग यत्न कर्म में २२ मुक्त को २३ स्थापन करा ॥ ५॥

अथाध्यात्मम्— हे इन्द्रियशक्तिसमूह १ तुम्हें २ आणके लिये ३ मनके लिये ४ जीवात्माके लिये ५ विष्णुके लिये ६ परारूपप्रकाशमें स्थित ७ सर्वशक्तिमान महाविष्णुके लिये ८ ग्रहण करता हूँ हे इन्द्रियशक्तिसमूह तुम ९ इससे पहिले काम आदिसे अतिरक्त १० इससे पीछे भीतिरक्कारके अयोग्य ११ इन्द्रियोंके १२ तेज १३ अनन्तित १४ और निन्दित मायासे रक्षक १५ हो १६ हे इन्द्रियशक्तिसमूह मैं १७ अनन्य भक्ति वा योग मार्ग द्वारा १८ मोक्षमार्ग प्राप्त कराने वाले १९ महानारायण को २० प्राप्त करूँ २१ मोक्षमार्गमें २२ मुक्त को २३ स्थापन करा ॥ ५॥

अग्नेव्रतपास्त्वेव्रतपायातवतनूरियथ साम

यियोममतनूरेषासात्वयि। सहनैव्रतपतेव्रता

न्यनुमेदीक्षान्दीक्षापतिर्मन्यतामनुतपस्तप

स्पतिः ॥ ६॥

१ अ॥ २ अ॥ ३ दे॥ ४ उ॥ ५ व्रतपाः॥ ६ अग्ने॥ ७ व्रतपाः॥ ८ अस्तु॥ ९ तव॥ १० या॥ ११ तनूः॥ १२ सा॥ १३ इयं॥ १४ मयि॥ १५ यो॥ १६ मम॥ १७ तनूः॥ १८ सा॥ १९ एषा॥ २० त्वयिव्रतपते॥ २१ नो॥ २२ व्रतानि॥ २३ सहादीक्षापतिः॥ २४ मे॥ २५ दीक्षाम्॥ २६ अनुमन्यताम्॥ २७ तपस्पतिः॥ २८ तपः॥ २९ अनु॥ ३० ॥ ६॥

अथाधिदैवम्— आहवनीय और गार्हपत्यमें समिध डालने काम १ ओ अग्नदेवस्य (गोतम ऋषि विराड् ब्राह्मी पंक्तिः छंदः अग्निर्वै) २

पदार्थः— १ ब्रह्मा २ विष्णु ३ परा ४ शिवरूप ५ सब व्रतों के रक्षक ६ अग्नि तुम ७ व्रत के रक्षक ८ हूँ जिये ९ तेरा १० जो ११ शरीर है १२ वह १३ यह १४ तुममें हो १५ जो १६ मेरा १७ शरीर है १८ वह १९ यह २० तुममें हो २१ हे व्रतपा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तना आदर है उतना ही आप का हो २५ और दीक्षा का रक्षक सोमदेवता २६ मेरी २७
दीक्षा को २८ मानो २९ उपसद रूपत प कारक्षक सोमदेवता ३० मेरे उपसद रूप
को ज्ञानो ॥ ६ ॥

अथाध्यात्मम्— १ ब्रह्मा २ विष्णु ३ परा ४ शिवरूपधारी ५ योगव्रतके
रक्षक ६ है ब्रह्मान्नि तुम ७ योगव्रतके रक्षक ८ हूजियै ९ तेरी १० जो ११ पराश
क्ति है १२ वह १३ यह शुभ में स्थित हो १५ जो १६ मेरी १७ शक्ति जीवनाम है १८
वह १९ यह २० तुम में स्थित हो २१ हे योगयज्ञ के रक्षक ब्रह्माग्नि २२ उत्पत्तिपा
लन आदि कर्म २३ हम तुम दोनों के २४ साथ हों जीव ईश्वर के एकत्व से २५ विराट्
का आत्मा सूर्य २६ मेरे २७ योगयज्ञ की दीक्षा को २८ स्वीकार करो २९ व्यष्टि
प्रतिविक्र का रक्षक सूर्य ३० व्यष्टि प्रतिविम्ब को ३१ स्वीकार करो ॥ ७ ॥

अथं सुरं शुभे देव सोमाप्यायतामिन्द्रायैकं
धनं विदे आतुभ्यमिन्द्रः प्यायतामात्वमिन्द्रा
यप्यायस्व। आप्याययास्मान् सखीन् सन्यामे
धया स्वस्ति ते देव सोम सुत्या मशीया एष्टा रायः
प्रेषे भगाय ऋतमृतवादिभ्यो नमो द्यावापृथिवीभ्याम् ॥ ७ ॥

सोमा देवाते। अथं शुः अथं शुः एकं धनं विदे इन्द्रायै
आप्यायताम। तुभ्यमे। इन्द्रः। आप्यायताम। त्वे। इन्द्रायै
आप्यायस्व। सखीन्। अस्मान्। सन्याम्। मेधया। आप्याय
स्व। सोमं। देवाते। स्वस्ति। सुत्याम्। मशीया। एष्टा। रायः। प्रे
षे। भगायै। ऋतमृतवादिभ्यः। नमो। द्यावापृथिवीभ्याम्। नमः॥ ७ ॥

अथाधिदेवम्— इसका डिकामें जो मेरा है ब्रह्मा उद्गाता होता अथ

युञ्जन्ती प्रये पांचोऽऽत्विज और छटा यजमान सोम को वृद्धि देते हैं उसका मंत्र
सवऽऽत्विज प्रस्तर के ऊपर दोनों हाथों को ऊंचा करके अथवा दाहिने हाथ को
ऊपर रख कर रक्षा के लिये सोम की परिचर्या करते हैं उसका मंत्र
ओं अ० शु० इत्यस्य (गोतमऽऽ० आर्षी वृद्धी छं० सोमो दे०) १
ओं ए० नाराय इति (वत्सऽऽ० आर्षी जगती छं० लिङ्गोक्त दे०) २

पदार्थः— १ हे सोम २ देवता ३ तेरा ४, ५ सव अवयव ६ तुझ मुख्य धन के जो
स करने वाले ७ नारायण के अर्थ ८ वृद्धि पाओ और ९ तेरे पान के लिये १० ना
रायण भी ११ प्रादुर्भूत हों १२ तुम भी १३ नारायण के अर्थ १४ सव और से वृद्धि
पाओ १५ सरवा की तुल्य प्रीति के विषय १६ हम ऽऽत्विजों को १७ धन दान
और १८ अर्थ धारण शक्ति वृद्धि से १९ बढ़ाओ २० हे सोम २१ देवता २२ तेरा २३
कल्याण हो आप की कृपा से में २४ सोमाभिष्वक्किया के समास दिन को २५ प्रा
प्त करू २६ हमारे अपेक्षित २७ धन २८ अत्यंत प्रिय २९ त्रिदेव रूप धारी महा
नारायण के लिये न कि अपने भोग के लिये ३० ब्रह्मवादियों के लिये ३१ सत्य ब्र
ह्म और ३२ स्वर्ग पृथिवी के अभिमानी देवताओं के लिये ३३ यज्ञ, यज्ञ फल
और यन्त्रा ३४

अथाध्यात्मम्— वाणी आदि ऽऽत्विज कहते हैं १ हे समष्टि प्रति विव
ज्योतिस्वरूप सूर्य ३ तेरा ४, ५ प्रत्येक व्यष्टि प्रति विव ६ मुख्य धन आत्म प्रति
विव की अपनी आत्मा में लय करने वाले ७ महा विष्णु के लिये ८ वृद्धि पाओ
हे व्यष्टि प्रति विव ९ तेरे पान के लिये १० महा विष्णु ११ प्रादुर्भूत हो हे सूर्य १२
तुम भी १३ महा विष्णु के लिये १४ वृद्धि पाओ १५ सरवा की तुल्य प्रीति के विष
य १६ हम वारागिदि ऽऽत्विजों को १७ शमदम आदि रूप धन के दान और १८
ब्रह्म धारण शक्ति रूप वृद्धि के द्वारा १९ बढ़ाओ २०, २१ हे ज्योतिस्वरूप सूर्य
२२ तेरा २३ कल्याण हो आप की कृपा से में २४ प्रति विव याग की समासिको

प्रासकरं २६ हमारे अपेक्षित २७ योगैश्वर्य २८ अत्यंत प्रिय २९ महाविष्णु के लिये हों क्योंकि उनमें आसक्ति मोक्ष में विघ्न करने वाली है ३० योगियों के लिये ३१ सत्य ब्रह्म ३२ पृथिवी स्वर्गाभिमानि देवताओं के लिये ३३ देह रूप अन्न ॥ ७ ॥

याते अग्नेयः शयात नूर्वर्षिष्ठा गह्वरेष्ठा उग्रं
वचो अपावधी त्वेष वचो अपावधी त्त्वाहा।
याते अग्ने रजः शयात नूर्वर्षिष्ठा गह्वरेष्ठा उ
ग्रं वचो अपावधी त्वेष वचो अपावधी त्त्वाहा।
याते अग्ने हरि शयात नूर्वर्षिष्ठा गह्वरेष्ठा उग्रं
वचो अपावधी त्वेष वचो अपावधी त्त्वाहा। ८

अग्ने। या। ते। अयः शया। तनूः। वर्षिष्ठा। गह्वरेष्ठा। उग्रं।
वचः। अपावधीत। त्वेष। वचः। अपावधीत। त्त्वाहा। अग्ने। या।
ते। रजः शया। तनूः। वर्षिष्ठा। गह्वरेष्ठा। उग्रं। वचः। अपावधीत।
त्वेष। वचः। अपावधीत। त्त्वाहा। अग्ने। या। ते। हरि शया। तनूः।
वर्षिष्ठा। गह्वरेष्ठा। उग्रं। वचः। अपावधीत। त्वेष। वचः। अपाव
धीत। त्त्वाहा ॥ ८ ॥

अथाधिदैवम्- इस कंडिका में ३ मंत्र हैं उनको कहते हैं जुहू आदि में प्रसार
को परिधि स्थापन पूर्वक सुवा से उपसदनाम अग्नि में हो म करता है उसका मंत्र १
दूसरे और तीसरे दिन दूसरी और तीसरी उपसदनाम अग्नि में हो मता है उसके मंत्र २
और तीसरे दिन दूसरी और तीसरी उपसदनाम अग्नि में हो मता है उसके मंत्र ३
अयात इत्यस्य (गोतम ऋ० विराडाषी वृहती छं० अग्निर्दे०) १
अयात इति द्वितीय (वत्स ऋषि निचिदाषी वृहती छं० तथा) २
तृतीययोः

पदार्थः- यह मंत्र भूत भविष्य का वक्ता है शिव जी ने इसी मंत्र के द्वारा
त्रिपुर को दग्ध किया था १ अग्नि २ जो ३ तेरी ४ लोह मय पुर व्यापी ५ शक्ति ६ दे

वताओं पर वांछित फल की वर्षा करने वाली ७ असुरों विषम देश में स्थिति शील है उस
ने ८ मारो छेदो इत्यादि असुरों के कहे हुए तीव्र वचनों को १० प्रत्येक कल्प में
विनाश किया तथा ११, १२ असुरों के कहे हुए देवाधि क्षेप रूप दीप्त वाक्य को १३
विनाश किया १४ वै से उपकारक तुम्ह अग्नि के लिये हवि दिया १५ हे अग्नि
१६ जो १७ तेरी १८ रजत मय पुर व्यापी १९ शक्ति है उसने २० देवताओं के वां
छित फल की वर्षा करने वाली और २१ असुरों के विषम देश में स्थित होकर २२
२३ मारो छेदो इत्यादि असुरों से कहे हुए तीव्र वचनों को २४ विनाश किया २५, २६
तथा असुरों के कहे हुए देवाधि क्षेप रूप प्रदीप्त वाक्य को २७ विनाश किया २८ वै
से उपकारक तुम्ह अग्नि के लिये हवि दिया २९ हे अग्नि ३० जो ३१ तेरी ३२ सुनहरी
पुर व्यापीनी ३३ शक्ति है उसने ३४ देवताओं पर वांछित फल की वर्षा करने वाली
३५ असुरों के विषम देश में स्थित होकर ३६, ३७ मारो छेदो इत्यादि असुरों के क
हे हुए तीव्र वचनों को ३८ विनाश किया ३९, ४० तथा असुरों के कहे हुए देवाधि
क्षेप रूप प्रदीप्त वाक्य को ४१ विनाश किया ४२ वै से उपकारक तुम्ह अग्नि के
लिये हवि दिया ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथाध्यात्मम् - तै ए त्रिगुणमय आत्मा कि सप्रकार मेरे योग्य है इस प्रश्न के
उत्तर को कहते हैं १ हे ब्रह्माग्नि २ जो ३ तेरी ४ नाभि कमल शायी विष्णु रूप ५ शक्ति
है उस ६ योग मार्ग से अमृत वर्षा करने वाली ७ नाभि कमल रूप गुहा में स्थित ने ८
हिंसात्मक वचन को १० त्याग किया ११ पश्चात्ताप संबंधी १२ वचनों को १३ वि
नाश किया १४ यह सब ब्रह्म है इस महा वाक के प्रभाव से १५ हे ब्रह्माग्नि १६ जो
९ श्रुति में लिखा है प्रजापति के पुत्र देवता और असुरों में परस्पर वैर था इस लिये असु
रों ने तीनों लोक में तीन पुरवनाएँ पृथिवी लोक में लोहे का, अन्तरिक्ष में रूपहरी, स्वर्ग
में सुनहरी देवताओं ने विचार कर के अग्नियों की उपासना की उपासना से अग्नियों को ना
म उपसद ह्वाउ स उपासना के फल से तीनों पुर को तोड़ा और तीनों लोक को जीता इसी प्र
कार जो कोई इस लोक में उन अग्नियों की उपासना करता है वह शत्रु के दुर्ग आदि को तो ड
ता है और जय पाता है ॥ ८ ॥

१७ तेरी १८ जोगुणप्रधानब्रह्मरूप १९ शक्ति है २० योगमार्ग से अमृत वर्षा करने वाली २१ हृदय कमल रूप गुहा में स्थित उस शक्ति ने २२ हिंसात्मक २३ वचन को २४ विनाश किया २५ पञ्चात्मापसंबंधी २६ वचन को २७ नष्ट किया २८ महावाक् के प्रभाव से २९ हे ब्रह्माग्नि ३० जो ३१ तेरी ३२ शिवरूप ३३ शक्ति है ३४ योग से अमृत वर्षा करने वाली ३५ भृकुटिकमल रूप गुहा में स्थित उस शक्ति ने ३६ हिंसात्मक ३७ वचन को ३८ नष्ट किया ३९ पञ्चात्माप सम्बंधी ४० वचन को ४१ नष्ट किया ४२ महावाक् के प्रभाव से उस कारण मेरा आत्मा तुझ में हो म करने के योग्य है

तत्प्रायनी मेसि वित्तायनी मेस्य वतान्मानाथिता

दवतान्माव्यथितात्। विदेदग्निर्नभोनामग्निः

द्विरश्रायुनानाम्नेहियोस्यामृथिव्यामसियत्ते

नाधृष्टन्नामयजियन्तेनत्वादधेविदेदग्निर्नभो

नामग्नेद्विरश्रायुनानाम्नेहियो द्वितीयस्याम

ृथिव्यामसियत्तेनाधृष्टन्नामयजियन्तेनत्वाद

धेविदेदग्निर्नभोनामग्नेद्विरश्रायुनानाम्ने

हियस्तृतीयस्यामृथिव्यामसियत्तेनाधृष्टन्नाम

यजियन्तेनत्वादधे। अनुत्वा देव वीतये ॥ ६॥

मै। तत्प्रायनी। असि। मै। वित्तायनी। असि। मा। नाथितात्।

अवतात्। मा। व्यथितात्। अवतात्। नभः। नाम। अग्निः। विदे

त्। अद्विरः। अग्ने। आयुना। नाम्ना। एहि। यः। अस्या। पृथि

व्याम। असि। ते। यत्। यजियम्। अनाधृष्टम्। तेन। त्वा। आद

धे। नभः। नाम। अग्निः। विदेत्। अगिरः। अग्ने। आयुना। नाम्ना

। एहि। यः। द्वितीयस्याम। असि। ते। यत्। अनाधृष्टम्। यजि

यम्। नाम। तेन। त्वा। आदधे। नभः। नाम। अग्निः। विदेत्।

ॐ अग्निः ॥ अग्निः ॥ आयुना ॥ नाम्ना ॥ एहि ॥ यो तृतीयस्याम ॥ एधिव्या
मा ॥ असीतो ॥ यतो ॥ अनाद्यष्टम् ॥ यज्ञियम् ॥ नामातेनो नाम्ना ॥ त्वाष्ट्राद
धो देववीतये ॥ त्वा ॥ अनु ॥ ६ ॥

अथाधिदैवम्- इसकंडिका में ७ मंत्र हैं उनको कहते हैं प्रत्येक दिशामें श
म्या को रखकर उस रक्वी इर्द्ध शम्या के मध्य पार्श्व में भीतर स्फ्य से रेखा करता है
इस प्रकार १२ अंगुल वाला समकोण चतुर्भुज चात्वाल पर चिन्हित होता है उस
का मंत्र १ यजमान के स्पर्श करने पर अर्ध्र्युमिटी खोदने के लिये प्रहार करता है
उसका मंत्र २ खोदी इर्द्ध मिटी को अर्ध्र्युमिटी हाथ वा स्फ्य से लेता है उसका मंत्र ३ उस
उगई इर्द्ध मिटी को उत्तर वेदी के पूर्व भाग में स्थापित शङ्कु के पास डालता है उस
का मंत्र ४ जैसे पहिले वेदी के अर्ध तीन मंत्रों से मिटी खोद कर ले कर डाली उसी
प्रकार फिर भी दो बार करता है उसके मंत्र ५, ६ जैसे पहिले तीन पर्यायों में मिटी
ले कर पद की ऐसे चौथे में भी प्रक्षेपण पर्यन्त मृदा हरण करता है उसका मंत्र ७

ॐ अंत्यायनीत्यस्य (गोतम ऋ० भुरिगापी गायत्री छं० एधिवी दे०) १=४ तक

ॐ विदेदग्निरित्यस्य (वत्स ऋ० भुस्त्रिहो वृद्धी छं० अग्नि दे०) ५

ॐ अग्ने अद्भिरित्यस्य (तथा १० निचद्वाही जगती छं० लिङ्गाक्त दे०) ६

ॐ अनुत्वेत्यस्य (तथा १० याजुष्यनुष्टुप् छं० तथा) ७

पदार्थः हे एधिवी तु मे १ मेरे अनुग्रह के लिये २ निर्धनता से दुखी पुरुष के
शरण स्थान रूप वा उस को प्राप्त होने वाली ३ दौ ४ मेरे लिये ५ घनायी पुरुष
को धनवान करने वाली ६ दौ तु मे ७ मुझ को ८ याचना से धरसा करो ९ मु
झ को ११ भय वा स्थान भ्रंश से १२ रसा करो हे चात्वाल में विद्यमान मृत्ति का १३
नम १४ नाम १५ अग्नि जो कितने राशि प्राता है १६ मुझ से खोदी इर्द्ध तुझ को जा
ने १७ हे गतिमान १८ अग्नि तु मे १९ आयु नाम से विख्यात होते २० आओ हे
अग्नि २१ जो तु मे २२ इस दृश्यमान २४ भूमि में २५ दौ २६ तेरा २७ जो रूप २८

यज्ञयोग्य२८ सबसेअतिरस्कृत है ३० उसनामसेयुक्त ३१ तुमको ३२ स्थापन करता
हूँ हे मृत्तिके ३३, ३४, ३५ नभनामअग्नि ३६ तुम्हें जानै ३७ हे गतिमान ३८ अग्नि तुम ३९
४० आयुनामसेविरव्यात ४१ आओ ४२ जोकि ४३ दूसरी ४४ पृथिवीअर्थात् अन्त
रिक्षमें ४५ हौ ४६ तेरा ४७ जो ४८ सबसेअतिरस्कृत ४९ यज्ञयोग्य ५० नाम है ५१
उसनामसेविरव्यात ५२ तुम्हको ५३ स्थापन करता हूँ हे मृत्तिका ५४, ५५, ५६ नभ
नामअग्नि ५७ तुम्हें जानै ५८ हे गतिमान ५९ अग्नि तुम ६०, ६१ आयुनामसेविरव्या
त ६२ आओ ६३ जो तुम ६४ तीसरी ६५ पृथिवीअर्थात् स्वर्गमें ६६ हौ ६७ तेरा ६८ जो
६९ सबसेअतिरस्कृत ७० यज्ञ योग्य ७१ नाम है ७२ ७३ उसनामसेविरव्यात ७४
तुम्हको ७५ स्थापन करता हूँ हे मृत्तिका ७६ नारायणदेवता वा देवताओं की प्री
ति के अर्थ ७७ तुम्हको ७८ लेता हूँ ॥ ८॥

अथाध्यात्मम् - हे मानसभूमितुम १ मेरे अनुग्रह के अर्थ २ जागरण
में तपःपुरुषको प्राप्त होने वाली अथवा उसका शरण स्थापन ३ हौ हे हार्दभूमितुम
४ मेरे अनुग्रह के अर्थ ५ विज्ञात ब्रह्म की प्राप्ति का स्थान ६ हौ हे भृकुटिभूमितुम
७ तुम्हको ८ याचित विषयसे ९ रक्षा करो हे गगनमंडलभूमि १० तुम्हको ११ यो
गभ्रंश वा भय युक्त संसारसे १२ रक्षा करो हे मनमें विद्यमान कामशरीर की मिट्टी १३ ज्ञा
नप्रकाशहीन १४ नामसेविरव्यात १५ कामका आत्मा १६ तुम्हसे खो दी हुई तुम्ह
को जानै १७ हे गतिमान १८ कामके आत्मा तुम १९ अपने कारण में लयशील २०
नामसेविरव्यात २१ अपने कारण को प्राप्त करौ २२ जोकि तुम २३ इस २४ मानस
भूमिमें २५ हौ २६ तेरा २७ जो अंश २८ योग यज्ञके योग्य २९ विषयोंसे अतिरस्कृ
त है ३० उस अंशसे ३१ तुम्हको ३२ स्थापन करता हूँ हे हृदयमें विद्यमान क्रोध
देह की मिट्टी ३३ ज्ञानप्रकाशहीन ३४ नामसेविरव्यात ३५ क्रोधका आत्मा ३६
तुम्हसे खो दी तुम्हको जानै ३७ हे गतिमान ३८ क्रोधके आत्मा ३९ लयशी
ल ४० नामसेविरव्यात तुम ४१ अपने कारण को प्राप्त करौ ४२ जोकि तुम ४३

४४ ह्यर्दान्तरिक्षमें ४५ ह्यौ ४६ तेरा ४७ जो अंश प्रजाधर्म रक्षक ४८ कामसे अतिर
 स्कृत ४९ योगयज्ञके योग्य ५० विख्यात है ५१ उस अंश से ५२ तुम्ह को ५३ स्थाप
 न करता हूँ हे भृकुटि में विद्यमान लोभदेह की मिट्टी ५४ ज्ञानप्रकाश हीन ५५
 नामसे विख्यात ५६ लोभका आत्मा ५७ मुझ से खो दी हुई तुम्ह को जानै ५८ हे
 गतिमान ५९ लोभके आत्मा तुम ६० लयशील ६१ नामसे विख्यात ६२ अपने
 कारण कौप्रत्यकरौ ६३ जो कि तुम ६४, ६५ भृकुटि भूमिमें ६६ ह्यौ ६७ तेरा ६८
 जो अंश नारायणके अर्चणमें प्रवृत्त ६९ विषयों से अति रस्कृत ७० योगयज्ञके
 योग्य ७१ विख्यात है ७२ उस अंश से ७३ विख्यात ७४ तुम्ह को ७५ स्थापन क
 रता हूँ हे अज्ञानदेह की मिट्टी ७६ महानारायण की प्राप्ति के अर्थ ७७ तुम्ह को
 पूर्ववत् ७८ पृथक् करता हूँ ॥ ४॥

सिथ ह्यसि सपत्न साही देवेभ्यः कल्पस्व सिथ

ह्यसि सपत्न साही देवेभ्यः शुन्धस्व सिथ ह्यसि

सपत्न साही देवेभ्यः शुम्भस्व १०

सिथ ही। सपत्न साही। असि। देवेभ्यः। कल्पस्व। सिथ ही।
 सपत्न साही। असि। देवेभ्यः। शुन्धस्व। सिथ ही। सपत्न सा
 ही। असि। देवेभ्यः। शुम्भस्व॥ १०॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ३ मंत्र हैं उनको कहते हैं उत्तरवेदीको
 विशेषकर मिट्टी से समान और जल से प्रोक्षण करता है और बालू को उस पर
 डालता है उसके मंत्र १, २, ३

ओं सि ह्यसीत्यस्य (गोतम ऋ० ब्राह्म्युषिण कृ० वेदिर्दे०) १, २, ३

पदार्थः— हे उत्तरवेदी जो तुम १ सिंही के समान हो ती २ शत्रुओं को ३
 पराभवहार) देने वाली ३ है इस कारण ४ देवताओं के उपकारार्थ ५ रचित
 हो ६ सिंही समान हो ती ७ शत्रुओं का तिरस्कार करने वाली ८ है ९ देवता

ओं के लिये १० शुद्ध हो ११ सिंही समान होती १२ शत्रुओं का अपमान करने वालीः
१३ है १४ देवताओं के अर्थ १५ बालू पड़ने से शोभित हो ॥ १० ॥

अथाध्यात्मम् - हे मानसवेदी तुम १ सिंही रूप होती २ कामशत्रु का प
राभव करने वाली ३ है इस कारण ४ ब्रह्म परा नारायण के अर्थ ५ समर्थ हो हे ह
ृदय रूपवेदी तुम ६ सिंही रूप होती ७ क्रोधशत्रु का तिरस्कार करने वाली ८ है
९ ब्रह्म परा नारायण के अर्थ १० शुद्ध हो हे भृकुटि वेदी तुम ११ सिंही रूप होती
१२ लोभशत्रु का अपमान करने वाली १३ है १४ ब्रह्म परा नारायण नाम देवता
ओं के लिये १५ अलङ्कृत हो ॥ १० ॥

इन्द्रघोषस्त्वावसुभिः पुरस्तात्पातु प्रचेतास्त्वा

रुद्रैः पश्चात्पातु मनोजवास्त्वा पितृभिर्दक्षिण

तः पातु विश्वकम्मीत्वादित्यै उत्तरतः पात्वित्

महन्तसं वार्षीर्हि धायन्तानिः स्तजामि ॥ ११ ॥

इन्द्रघोषः । वसुभिः । त्वा । पुरस्तात् । पातु । प्रचेताः । रुद्रैः । प

श्चात् । त्वा । पातु । मनोजवाः । पितृभिः । दक्षिणतः । त्वा । पा

तु । विश्वकम्मी । आदित्यैः । उत्तरतः । त्वा । पातु । अहम् ।

इदम् । तस्य । वाः । यन्ताते । वहिः । आ । निः । स्तजामि ॥ ११ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ५ मंत्र हैं उनके कहते हैं अध्वर्यु

अग्नि दूसरे को देकर वेदी के भीतर अथवा उत्तरवेदी के दक्षिण पार्श्व में

वेदी के मध्य उत्तरमुख स्थित हो कर उत्तरवेदी का प्रोक्षण करता है उसके

मंत्र १, २, ३, ४ फिर अध्वर्यु प्रोक्षण शेषजल को वेदी के बाहर प्रदेश में

वेदी के दक्षिण भाग से लगा हुआ डालता है उसका मंत्र ५ ॥ १२ ॥

ओं इन्द्रघोषस्त्वेत्यस्य (गौतमऋ० निरुद्धा हीति उपसं० उत्तरवेदिर्दो०) १५

पदार्थः हे उत्तरवेदी इन्द्र नाम से विख्यात देवता २ अध्वर्युओं से

युक्त होता ३ तुम्हको ४ पूर्वदिशा में ५ रक्षा करौ ६ श्रेष्ठ बुद्धि वाला वरुण देवता ७ ग्यारह रुद्रों के साथ ८ पश्चिम दिशा में ९ तुम्हको १० रक्षा करौ ११ मन की तुल्य वेगवान् यम देवता १२ स्वर्गवासी देव पितरों के साथ १३ दक्षिण दिशा में १४ तुम्हको १५ रक्षा करौ १६ विश्व की उत्पत्ति पालन आदि करने वाला ईश्वर १७ वारह आदित्यों के साथ १८ उत्तर दिशा में १९ तुम्हको २० असुरों से रक्षा करौ २१ हे वेदी २२ मैं २३ इस २४ प्रोक्षण शेष तत् २५ जल को २६ यज्ञ से २७ बाहर प्रदेश में २८ चारों ओर २९ डालता हूँ ॥ ११॥

अथाध्यात्मम्— हे तीन रूप वाली वेदी १ महा विष्णु का महा वाक् रूप शब्द २ ब्रह्मा विष्णु महेश परम से युक्त होता ३ तुम्हको ४ पूर्व दिशा में ५ रक्षा करौ ६ आत्मा ७ प्रतिविव सहित प्राणों के साथ ८ पश्चिम दिशा में ९ तुम्हको १० रक्षा करौ ११ जाठराग्नि १२ मन की वृत्तियों के साथ १३ दक्षिण दिशा में १४ तुम्हको १५ रक्षा करौ १६ प्राण १७ एक दश इन्द्रिय मन और बुद्धि के साथ १८ उत्तर दिशा में १९ तुम्हको २० काम आदि से रक्षा करौ २१ हे वेदी २२ ज्ञान चक्षु मैं २३ इस प्रोक्षण शेष २४ तत् २५ गगनामृत नाम जल को २६ यजमान से २७ बाहर २८ चारों ओर २९ डालता हूँ— अभिप्राय यह कि वह काम आदि का भाग है ॥ ११॥

सि० ह्यसि स्वाहा सि० ह्यस्यादित्यवनिः स्वाहा सि० ह्यसि ब्रह्मवनिः सन्नवनिः स्वाहा सि० ह्यसि सुप्रजावनी रायस्योषवनिः स्वाहा सि० ह्यस्यावहदेवान्यजमानाय स्वाहा भूतेभ्यस्त्वा ॥ १२॥

सि० ह्यसि स्वाहा आदित्यवनिः सि० ह्यसि ब्रह्मवनिः सन्नवनिः सि० ह्यसि सुप्रजावनी रायस्योषवनिः सि० ह्यस्यावहदेवान्यजमानाय स्वाहा भूतेभ्यस्त्वा ॥ १२॥

यजमानाया देवान्। आवेह। स्वाहा। त्वा। भूतेभ्यः॥ १२॥

अथाधिदैवम्— इसकंडिकामें दो मंत्र हैं, अध्वर्यु उत्तरवेदी के उत्तर ओर वै
ठकर ५ वार ग्रहण किये हुए आज्य को जुहू में ले कर नाभिके दक्षिणोत्तर स्क
न्ध और दक्षिणोत्तर ओणि और नाभिके मध्य में सुवर्ण को रख कर उसको देवता को
पा सूत्र प्रदेश से होम करता है उसका मंत्र १ होम के लिये नीचे की हुई श्रुति को उत्तीक
रता है उसका मंत्र २

ओंसिधं ह्यसीत्यस्य (गोतम ऋ० भुरिग्राह्णी पंक्ति ऋ० वेद श्रुचौ दे०) १२

पदार्थः— हे उत्तरवेदी तुम १ असुरों का भक्षण करने वाली २ हो ३ तेरे अर्घ्य हवि
दिया ४ आदित्य नाम देवताओं को तृप्त करने वाली ५ असुर भक्षिका ६ है ७ तुम
को हवि दिया ८ ब्राह्मण क्षत्री जाति को तृप्त करने वाली ९ सिंही ११ है १२ तुम को हवि
दिया १३ पुत्र पौत्र आदि शुभ संतान का संपादन करने वाली १४ सिंही १५ है १६
सुवर्ण चांदी आदि धन पुष्टि का संपादन करने वाली १७ सिंही १८ है १९ तुम को
हवि दिया २० यजमान के उपकारार्थ २१ देवताओं को २२ लाओ २३ तुम को हवि
दिया हे होम विशेष घृत से युक्त जुहू २४ तुम को २५ जरायुज, अंडज आदि चार
प्रकार के जीव समूह की प्रीति के अर्घ्य उत्ती करता हूँ॥ १२॥

अथाध्यात्मम्— हे मानसवेदी तुम १ काम आदि की भक्षक २ हो ३ तुम
को इन्द्रिय रूपः हवि दिया हे हृदय वेदी तुम ४ इन्द्रिय शक्तियों की सेव्य ५ सिं
ही ६ हो ७ तुम को इन्द्रिय शक्ति रूप हवि दिया हे भृकुटि वेदी तुम ८ मन से से
व्यर्थाओं से सेवनीय ९ सिंही ११ हो १२ तुम को प्राण आदि रूप हवि दिया
तुम १३ शमदम आदि से प्रार्थनीय १४ सिंही १५ हो १६ अष्ट होम हो १७ यो
गैश्वर्य की पुष्टि से सेवनीय १८ सिंही १९ हो २० यजमान के अर्घ्य २१ ब्रह्म प
रानारायण नाम देवताओं को २२ प्राप्त कराओ २३ जीव नाम हवि का अर्घ्य
होम हो हे भूतात्म युक्त महा वाक् २४ तुम को २५ देहाभिमानियों के लिये

ज्वाकरता ह॥ १२॥

ध्रुवोसि एथिवीन्द थं ह ध्रुवक्षिदस्यन्तरिक्षन्द थं
ह अच्युतक्षिदसि दिवन्द थं हाग्नेः पुरीष मसि ॥ १३ ॥
ध्रुवः ॥ असि ॥ एथिवीमो द थं ह ॥ ध्रुवक्षित ॥ असि ॥ अन्तरिक्षम् ॥ द थं
ह ॥ अच्युतक्षित ॥ असि ॥ दिवम् ॥ द थं ह ॥ अग्नेः ॥ पुरीषम् ॥ असि ॥ १३ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं, देवदारु वृक्षज प्रादेश मात्र मध्य
म दक्षिण उत्तर परिधियों को उत्तर वेदी के नाभि देश पर स्थापन करता है उस
का मंत्र १ गुग्गुल आदि संभार समूह को नाभि देश पर डालता है उस का मंत्र २
(ओ ध्रुवो सीत्यस्य (गोतम ऋ० भुरिगार्घ्यनुष्टुप् छं० परिधयो दे) १
ओं अग्ने रित्यस्य (तथा ० दैवी जगती छं० गुग्गुलादिक संभारो दे) २

पदार्थः हे मध्य परिधितुम १ स्थिर २ हौ इस कारण ३ एथिवी को ४ दृढ
करे हे दक्षिण परिधितुम ५ स्थिर यन्त्र में वास करने वाली ६ हौ इस कारण ७
अन्तरिक्ष को ८ दृढ करे हे उत्तर परिधितुम ९ विनाश रहित इस यन्त्र में निवा
स करने वाली १० हौ इस कारण ११ स्वर्ग को १२ दृढ करे हे गुग्गुल आदि सं
भार समूह तुम १३ अग्नि के १४ पूरक १५ हौ ॥ १३ ॥

अथाध्यात्मम् - हे जीवनाम परिधितुम १ अचल २ हौ इस कारण ३ मन
को ४ दृढ करे हे नारायण नाम परिधितुम ५ जीव में व्यापक ६ हौ इस कारण ७ हा
दन्ति रिक्ष को ८ दृढ करे हे नारायण नाम परिधितुम ९ ब्रह्म में निवास शील
१० हौ इस कारण ११ भृकुटि को १२ दृढ करे हे ब्रह्माड तुम १३ ब्रह्माग्नि के
१४ पूरक १५ हौ ॥ १३ ॥

युज्जते मन उत युज्जते धियो विप्रा विप्रस्य
वृद्धतो विपश्चितः । विदोना दधे वयुना वि
देक इन्मही देवस्य सवितुः परिधृतिः स्वाहा ॥ १४ ॥

वृहेतुः। विपश्चितः। विप्रस्य। विप्राः। होत्राः। मनूः। युञ्जन्ति।
धियः। उत। युञ्जते। वयनोविता। एकैः। इतो। विदधे। सवितुः। दे-
वस्ये। परिष्पतिः। मही। स्वाहा ॥ १४ ॥

अथाधिदेवम्— हविर्धानमंडप बनाकर अर्धयुगशाला में प्रवेश हो-
कर आज्य का संस्कार करके चार बार ग्रहण किये हुए आज्य को परिस्तर-
ण समिधा धान पूर्वक शाला द्वार्य अग्नि में होमता है उसका मंत्र १०। ११। १२।
१३। १४। १५। १६। १७। १८। १९। २०। २१। २२। २३। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०।
३१। ३२। ३३। ३४। ३५। ३६। ३७। ३८। ३९। ४०। ४१। ४२। ४३। ४४। ४५। ४६। ४७। ४८। ४९। ५०।
५१। ५२। ५३। ५४। ५५। ५६। ५७। ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३। ६४। ६५। ६६। ६७। ६८। ६९। ७०।
७१। ७२। ७३। ७४। ७५। ७६। ७७। ७८। ७९। ८०। ८१। ८२। ८३। ८४। ८५। ८६। ८७। ८८। ८९। ९०।
९१। ९२। ९३। ९४। ९५। ९६। ९७। ९८। ९९। १००।

पदार्थः— १ वेदपाठ से महत्त्व को प्राप्त २ सर्वज्ञ ३ यज्ञमान के ४ वेदज्ञाता
५ होम करने वाले ऋत्विज ६ मन को ७ एकाग्र करते हैं ८ इन्द्रियों को ९
भी १० यज्ञ कर्मों में नियुक्त करते हैं जिस कारण ११ सब प्राणियों के मन-
बुद्धि की वृत्तियों को जानने वाले १२, १३ अकेले सृष्टि कर्ता ने ही १४ विष्णु को
उत्पन्न किया १५ उस सब के प्रेरक अंतर्धामी १६ देवता की वेद आदि में कथित स्तु-
ति १७ बड़ी है १८ उस पर मे श्वर के लिये श्रेष्ठ होम हो ॥ १४ ॥

अथाध्यात्मम्— १ ब्रह्म भाव सम्पन्न २ सर्वज्ञ ३ वेदान्त पारंगामी
आत्मा रूप यज्ञमान के ४ वेदज्ञाता ५ वाक् आदि ६ मन को ७ आत्मा में युक्त
करते हैं ८ बुद्धि मन प्राणों को ९ ही १० आत्मा में युक्त करते हैं जिस कारण-
११ सर्वधी साक्षी १२, १३ अकेले योगी ने ही १४ अभाव रूप संसार को भाव
रूप किया १५ उस सब के प्रेरक १६ योगा रूढ योगी की १७ वेदोक्त स्तु-
ति १८ बड़ी है १९ ब्रह्म वित् ब्रह्म ही होता है, इस श्रुति के प्रमाण से ॥ १४ ॥

इदं विष्णुर्विचक्र मेनेधानिदधे पदम्। समू-
ढमस्य पाथं सुरे स्वाहा १५ ॥
उ। विष्णुः। अस्य। इदम्। विचक्रमे। पाथं सुरे। समूढम्। प-
दम्। नेधां। निदधे। स्वाहा ॥ १५ ॥

अथाधिदैवम्— फिर घृत को संस्कार कर और चार बार ग्रहण किये इस
ए को लेकर दक्षिण हविर्धान के दक्षिण-चक्र मार्ग में सुवर्ण को रख कर शा-
ला द्वार की अग्नि में होमता है उसका मंत्र १

ओं इदं विष्णुरित्यस्य (मेधातिथि ई० भुरिगाभी गायत्री छं० विष्णु दे०) १-

पदार्थः १ देवताओं के ईश्वर २ विष्णु ने ३, ४ प्रधान के कार्य इस विष्णु को
विशेष कर अपनी किरणों से व्याप्त किया ६ प्रधान कार्य के विस्तार से चौदह भु-
वनों से व्याप्त जो संसार है उसमें ७ भले प्रकार अंतर्हित ८ प्राप्ति योग्य अद्वैत-
ब्रह्म को ९ त्रिदेव रूप से १० स्थापित किया ११ उस विष्णु के लिये हविर्दिया

अथवा इस कंडिका का यह दूसरा अर्थ है॥

ॐ विष्णुः । इदम् । विचूकमे । त्रेधा । पदम् । निदधे । अस्य ।
पाथं सुरे । समूढम् । त्वाहा ॥

१ देवताओं के ईश्वर २ त्रिविक्रमावतार वामन रूप विष्णु ने ३ इस विष्णु को
४ विभाग पूर्वक उलंघन किया ५ तीन प्रकार से ६ पद ७ रक्वा अर्थात् भूमि में
में एक अन्तरिक्ष में दूसरा और स्वर्ग में तीसरा पद रक्वा ८ इसका पद ९ चतुर्द-
श भुवन रूप ब्रह्मांड में १० मध्यवर्ती ऊँचा ११ उस विष्णु के अर्थ हविर्दिया १५

त्रेधा । समूढम् । पदम् । शेष पूर्ववत्— **अथाध्यात्मम्**—

१ शिव रूप २ योगी ने ३ इस देह के ४ इस सुषुम्ना मार्ग को ५ विभाग पूर्वक उ-
लंघन किया ६ अज्ञान भूमि में ७ ज्ञाता ज्ञात, ज्ञेय नाम तीन प्रकार के भेद से ८
भले प्रकार अंतर्हित छिपे हुए ९ प्राप्ति योग्य ब्रह्म को १० अपनी आत्मा में धा-
रण किया ११ निश्चय सब ब्रह्म है यहाँ नाना प्रकार का कुछ नहीं है इस महा-
वाक्य के प्रभाव से॥ १५॥

इरावती धेनु मती हि भूतश्च सूर्यवसिनी मनवेद
शस्या । व्यक्तं नारोदसी विष्णवे तेषां धर्मं पृथिवी

मभितो मयूषैः स्वाहा ॥ १६ ॥

इरावती१ धेनु२ सती३ सूर्यवसिनी४ मनवे५ दशस्या॥ भूतमे६ वि०
षाणो॥ अ० एते० रोदसी॥ व्यस्क० भ्नाः॥ पृथिवीमे॥ मयूषैः० अभि०
तः॥ दधै० स्वाहा ॥ १६ ॥

अथाधिदेवम्— प्रतिप्रस्थाता अध्वर्यु के दिये हुए श्रुवा और स्थाली को लेकर उत्तर हविर्धनि के दक्षिण चक्र मार्ग में सुवर्ण रख कर चार बार लिपेटे हुए घृत को होमता है उसका मंत्र १-

इरावतीत्यस्य (वसिष्ठ ऋ० स्वरुडाधीनिष्टपृक् विष्णुर्दे०) १

पदार्थः— हे पृथिवी स्वर्गतुम दोनों १ अन्नजल रखने वाली २ बहु धेनु से युक्त ३ सुन्दर तृण रखने वाली ४ ज्ञानी यजमान के लिये ५ यज्ञ साधनों की देने वाली ६ हूजियै ७ हे सर्व व्यापी ८ विष्णु तुम ईद्वन ९ स्वर्ग पृथिवी को १० स्तम्भन करो जिस प्रकार १२ अन्तरिक्ष को १३ अपने तेज रूप सूर्यचन्द्र आदि के द्वारा १४ सब ओर से १५ धारण किया १६ उस तुम्ह के लिये हवि दिया ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम्— समाधि में ब्रह्म प्राप्तिके अनन्तर आरब्ध समासित कफिर प्रार्थना करता है हे हृदय मन के कमलो तुम १ प्राणवान् २ बुद्धि से युक्त ३ जीवात्मा ओम् वाक् चक्षु त्वक् ईश मन घ्राण से युक्त ४ योगी के लिये ५ योग यज्ञ साधनों के देने वाले ६ हूजियै ७ हे सर्व व्यापी ८ योगी ईद्वन हृदय मन को ११ अपनी किरणों से स्तम्भन करो जिस प्रकार १२ गगन मंडल को १३ अपनी किरणों से १४ सब ओर १५ धारण किया १६ गुरु के उपदेश से ॥ १६ ॥

देवश्रुतौ देवेष्वधौषतम्याचीपेतमद्वरद्व

ल्पयन्ती ऊर्ध्वयत्नयत्तम्या जिह्वरतम् ॥

स्वद्वो ष मावदतन्देवी दुर्यशायुर्म्मनिर्वी

दिष्टमृजाम्मानिर्वदिष्टमंत्रमेष्टान्वर्धन्यधिव्याः १७
 देवुश्रुतौ। देवेषु। श्रुघोषेतम्। अध्वरम्। कल्पयन्ती। प्राची।
 प्रेतम्। यज्ञम्। ऊर्ध्व। नयतम्। मा। जिह्वेतम्। दुय। देवी।
 स्व। गोष्ठ। आवदतम्। आयुः। मा। निर्वदिष्टम्। प्रजाम्। मा।
 निर्वदिष्टम्। एधिव्याः। अत्र। वर्धनम्। रमेष्टां॥ १७॥

अथाधिदैवम्— इसकंडिका में ४ मंत्र हैं उन को कहते हैं, शाला के द-
 क्षिण द्वार से लाई ऊर्ध्व पत्नी ४ बार लिये ऊँह होय से शेष घृत को लेकर दो-
 नो अक्ष के धुर में लगती है उस का मंत्र १ शकटों के चलते यजमान को कह-
 लाता है वह मंत्र ४ चक्र घषिण से उत्पन्न अव्यक्त शब्द शकट में होने पर यज-
 मान से कह लाता है वह मंत्र ३ उत्तर वेदी की तीन परिक्रमा हो जाने पर दोनो शक-
 ट को मध्यफल का धार स्थ करके अध्वर्यु दोनों शकटों को एक साथ अभिमंत्र-
 ण करता है उसका मंत्र ४॥

ओ देव श्रुता तित्यस्य (वशिष्ठ ऋ० याजुषी पंक्ति ऋ० अक्षधुरौ दे०) १
 ओ प्राची प्रेतमित्यस्य (तथा ० निरुदाषी गायत्री छं० हविर्धानं दे०) २
 (ओ स्वगोष्ठमित्यस्य (तथा ० भुरिगाषी गायत्री छं० तथा ०) ३
 ओ अत्र रमेष्टा तित्यस्य (तथा ० याजुषी पंक्ति ऋ० तथा ०) ४

पदार्थः— १ हे देव सभा में प्रसिद्ध अक्ष के अग्र भाग तुम दोनों २ देवताओं
 में ३ उच्च धनि से कहौ कि यजमान यज्ञ करता है ४ इस कर्म को ५ समर्थ क-
 रते तुम ६ पूर्व मुख ७ जाओ ८ इस यज्ञ को ९ १० स्वर्ग वासी देवताओं के पा-
 स प्राप्त करौ ११ १२ कुटिल वाचलित मत होओ १३ १४ हे गृह समान शक-
 ट रूप देवताओं १५ अपने १६ गोष्ठ (गो शाला) में १७ सब ओर कहौ १८ य-
 जमान की आयु को १९ २० पशु धन आदि से रहित मत उच्चारण करौ २१ य-
 जमान की प्रजा पुत्र आदि रूप को २२ २३ दुष्ट वाक्य मत कहौ अर्थात् श्रुति-

के अनुसार दोनों और से बंधा हुआ असुर वरुणा देव रूप और दुष्ट वाक्य है उस का
रण शाप रूप दुर्वच्य के परिहारार्थ आशीर्वाद रूप सुवाक्य इस मंत्र से प्रार्थना
किया जाता है हे शक्तो तम दोनों २४ पृथिवी के २५ इस २६ देह रूप देव
यजन स्थान में २७ कीड़ा करौ॥ १७॥

अथाध्यात्मम्- १ हे प्राण अपान तुम दोनों २ ब्रह्म पर नारायण नाम देवताओं में ३ उच्चारण करौ ४ योग यन्त्र को ५ समर्थ करते ६ गगनमंडल को ७ जाओ ८ यजमान को ९ ब्रह्म में १० प्राप्त करौ ११, १२ कुटिल वाचलित मत होओ १३, १४ हे सूक्ष्म लिंग शरीर देवताओं १५ अपने १६ इंद्रिय स्थान में १७ सब ओर कथन करौ १८ प्रारब्ध समासित कयजमान की आयु को १९, २० खंडित मत करौ २१ प्राण को २२, २३ खंडित मत करौ हे सूक्ष्मलिङ्ग शरीर २४ भूमिसम्बन्धी २५ इस २६ स्थूल शरीर में २७ जीड़ा करौ ॥ १७ ॥

विष्णोर्नृकं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि वि
ममे रजांश्च। योऽप्यस्त्वं भायदुत्तरं सध
स्थं विचक्रमाणस्ते धोरुगा यो विष्णावेत्वा १८
नृकं। विष्णोः। वीर्याणि। प्रवोचं यः। पार्थिवानि। रजांश्च। वि
ममे रजांश्च। योऽप्यस्त्वं भायदुत्तरं सध
स्थं विचक्रमाणस्ते धोरुगा यो विष्णावेत्वा १८

अथाधितैवम्- इस कड़िका में दो मंत्र हैं उन को कहते हैं, अध्वर्यु-
दोनों हवि धनि को उत्तर ओर से परिक्रमण कर दक्षिण हवि धनि को स्तम्भ
पर खड़ा करता है उस का मंत्र १ शकट वंधन के अर्थ स्थूणा को अग्नि कोण-
में गाड़ता है उसका मंत्र २ इति ऋग्यजुःसामाग्नेयं । तदाहो विष्वातो नृपः ।
इति विश्वानुकमित्यस्य (औत्थ्यादीर्घतमादि० स्वराडाधीनिष्टपुङ्खं विष्वादे

पदार्थः— जो १ ब्रह्मा विष्णु महेश रूपधारी हैं उस २ सर्वव्यापी परमात्मा के ३ कर्मों को ४ में कहता हूं ५ जिस विष्णु ने ६ भूमि अन्तरिक्ष स्वर्ग संबंधी ७ ज्योतियों को ८ निम्नीया किया ९ जिस १० अग्नि वायु सूर्य रूप से ११ लोकों में तीन पद रखने वाले १२ महात्माओं से स्तुति किये गये ने १३, १४ देवताओं के सह वास स्थान ब्रह्म लोक को १५ स्तंभित किया हे काष्ठ के स्तूप १६ विष्णु की प्रीति के अर्थ १७ तुम्हें गाड़ता हूं ॥ १८ ॥

अप्राध्यात्मम् - जो १ नाभि हृदय भृकुटि में विष्णु ब्रह्म शिव रूप धारी योगी है उस २ योगी के ३ योग यन्त्र सम्बंधी कर्मे को ४ कहता हूं ५ जिसने ६ इन्द्रिया स्थानों के अन्तरिक्ष सम्बंधी ७ ज्योतियों को ८ निर्माण किया ९ जिस १० जाटु रागिण प्राण मानस सूर्य रूप से ११ तीन प्रदर खने वाले १२ वाग् आदि से स्तुत योगी ने १३ १४ इन्द्रियों के सहवास स्थान प्रधान मानस कमल को १५ स्तुत किया है सूक्ष्म देह के स्तम्भ रूप अस्थि १६ योगी के लिये १७ तुम्हें अचल करता हू ॥ १८ ॥

दिवे वा विष्णा उत वा पृथिव्या महो वा विष्णा
उरो न्तरिक्षात् । उभा हि हस्ता वसुना एण स्वा
प्रयच्छ दक्षिणा दोत सव्या द्विषा वेत्वा ॥ १८ ॥
विष्णो । विष्णो । दिवे । वा । पृथिव्याः । उत । वा । महः । उरो । अ
न्तरिक्षात् । वा । वसुना । उभा । हि । हस्ता । एण स्व । दक्षिणात् ।
सव्यात् । उत । आ प्रयच्छ । विष्णा वे । त्वा ॥ १८ ॥

अथाधिदैवम्—प्रतिप्रस्थाता उत्तर हविर्धनि को खड़ा करता है
उसका मंत्रः १। अथ अधिदेवाय नमो भूतभुवनेश्वर्यै नमो ब्रह्मात्मने नमो विष्णवे नमो शिवाय नमो
ओं दिवे वेत्यस्य (औ तद्यो दी र्तत मा ऋत् । नि चृ दा र्षी ज ग ती दं । वि ष्णु र्दे) १

पदार्थः- १. हे सर्व व्यापी २. विष्णु ३. स्वर्गलोक से ४. और ५. पृथिवीलो

क से ६ भी ७ और ८ वड़े ९ विस्तीर्ण १० अन्तरिक्ष से ११ भी १२ द्रव्य द्वारा १३ दोनों १४ ही १५ हाथों को १६ पूर्ण करौ फिर १७ दहिने हाथ से १८ और वाम हाथ से १९ भी २० हम को दोहे काष्ठ के घूणा २१ विष्णु की प्रीति के अर्थ २२ तु भेगाड़ता हूं ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम्— वाक् आदि ऋत्विज कहते हैं १ हे सर्व व्यापी २ योग यज्ञ के यजमान ३ भ्रुकुटि ४ और ५ मन से ६ भी ७ और ८ वड़े ९ विस्तीर्ण १० हार्दन्तरिक्ष से ११ भी १२ योग संपत्ति द्वारा १३ दोनों १४ ही १५ हाथों को १६ पूर्ण करौ फिर १७ दहिने हाथ से और १८ वाम हाथ से १९ भी २० हम को दोहे लिङ्ग देह के स्तम्भ रूप अस्थि २१ योगी के लिये २२ तु भेगाड़ करता हूं ॥ १६ ॥

प्रतद्विष्णुस्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो
गिरिष्ठाः । यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणीष्वधिक्षि

यन्ति भुवनानि विष्वा २०
ततः भीमः । कुचरः । मृगः । नू । गिरिष्ठाः । विष्णुः । वीर्येण ।
प्रस्तवते । यस्य । उरुषु । त्रिषु । विक्रमनेषु । विष्वा । भुवनानि । अधिक्षि यन्ति ॥ २० ॥

अथाधिदैवम्— मध्यम छदी का स्पर्श कर उच्चारण करता है वह मंत्र १ ॥

जै प्रतद्विष्णुरित्यस्य (ओत प्यो दीर्घतमा ऋ विराडा षी त्रिष्टुप छं विष्णुर्दि) १
पदार्थः १ वह २ राम आदि अवतारों से असुरों का भयदाता ३ पृथिवी में
मत्स्य आदि रूप से गमन शील ४ वाराह आदि अवतार धारण करने वाला ५
और ६ वेद वाणी वा देह में अंतर्गामी रूप से स्थित ७ विष्णु ८ इति हास पुरा
ण में कथित असुर बध भक्त धर्म रक्षण रूप पराक्रम से ९ स्तुति किया

जाता है १० जिस विष्णु के ११ वहुत बड़े १२, १३ जीव ईश प्रति विंव रूप पाद प्रक्षेप-
ण स्थान तीनों लोक में १४ सब १५ चतुर्दश संख्या वाले भुवन १६ निवास करते हैं
॥२०॥ **अथाध्यात्मम्** - १ वह २ काम आदि का भयदाता ३ योग भूमि में
गमन शील ४ ब्रह्म दर्शन के अर्थ चेष्टा मान ५ और ६ भृकुटि वागगन मंडल में
वसन शील ७ योगी ८ योग बल के कारण ९ स्तुति किया जाता है १० जिस योगी
के ११, १२, १३ विस्तीर्ण पाद प्रक्षेपण स्थान षट्चक्रों में १४ सब १५ भुवन १६ नि-
वास करते हैं ॥२०॥

विष्णोः रराटमसि विष्णोः अन्त्रे स्थो विष्णोः स्यू
रसि विष्णोः ध्रुवोसि। वैष्णोवमसि विष्णोवेत्वा २१
विष्णोः। रराटम। असि। विष्णोः। अन्त्रे। स्थो। विष्णोः। स्यूः। अ-
सि। विष्णोः। ध्रुवः। असि। वैष्णोवम। असि। विष्णोवे। त्वा॥२१॥

अथाधितैवम् - इस कड़िका में ५ मंत्र हैं उन को कहते हैं दोनों ह-
विर्धनि शकट को दक्षिणोत्तर भाग में स्थापन कर उन के आवरण रूप हवि-
र्धनि नाम मंडप को बनाता है और वह मंडप जिस का देवता विष्णु है विष्णु
कहाता है और मूर्ति धारी विष्णु के सब अवयव होने से ललाट नाम अवयव
है उसी प्रकार हविर्धनि मंडप के पूर्व द्वारवर्ती त्तम्भ के मध्य कोई दर्भ माला
गूटी जाती है उस माला को वा उस के वंधना धार तिरछे वांस को सम्बोधन-
कर पुरुष ललाट रूप कहते हैं उस का मंत्र १ उज्झाई ललाट की प्रांतों को
स्पर्श कर उच्चारण करता है उस का मंत्र २ फिर अध्वर्यु काठ की सूची में पि-
रेई इई रस्सी से द्वार की चारों धूण द्वार शारवाओं को सीता है उस का मंत्र ३
॥ प्रश्न दो अर्थ के सम्भव में विष्णु और ज्ञानी का एकत्व सिद्ध होता है उस में क्या
प्रमाण है उत्तर ब्रह्मवित ब्रह्म ही होता है यह श्रुति ज्ञानी तो मेरा ही आत्मा है
यह गीतो का वचन प्रमाण है ॥

सीवन के आरंभ में रस्सी की जड़ में गांठ लगाता है उस का मंत्र ४ पूर्वाय वासों के मंडप को बना कर स्पर्श करता है उसका मंत्र ५

ओं विष्णो रराट मित्यस्य (औतथ्यो दीर्घतमान्तरं याजुषी उष्णिक् छं विष्णुर्दे०) १

ओं विष्णो रित्यस्य (तथा ० देवी पंक्ति म्छं तथा ०) २

ओं वैष्णव मित्यस्य (तथा ० याजुषी वृहती छं तथा ०) ५

पदार्थः— हे दर्भमय माला के आधार वांस तुम १ विष्णु रूप हविर्धनि मंडप के २ ललाट स्थानीय ३ हौ हे ललाट की प्रांत तुम दोनों ४ विष्णु नामक हविर्धनि मंडप के ५ ओष्ठ संधि रूप ६ हौ हे काठ की सुई तुम ७ हविर्धनि के सूची ८ हौ हे रस्सी की गांठ तुम ९ हविर्धनि की ११ ग्रंथि १२ हौ हे हविर्धनि तुम १३ विष्णु सम्बन्धी १४ हौ इस कारणा १५ विष्णु प्रीति के अर्थ १६ तुम स्पर्श करता हूँ ॥ २१ ॥

अथाध्यात्मम्— हे स्थूल शरीर तुम अपने अवयव से १ योगी के ललाट ३ हौ हे ललाट में विद्यमान इडा पिंगला नाडी तुम ४ योगी की ५ ओष्ठ संधि रूप ६ हौ हे सुषुम्ना तुम ७ योगी के अर्थ च जीव ईश का योग करने वाली ८ हौ हे उक्त नाडियों के संगम स्थान तुम ९ योगी की ११ ग्रंथि १२ हौ हे शिर तुम १३ योगी सम्बन्धी १४ हौ १५ योगी की प्रीति के अर्थ १६ तुम स्पर्श करता हूँ ॥ २१ ॥

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवे श्विनो वाङ्म्याम्पू
षो हस्ताभ्याम् । आददे नार्य सीदमहं
रक्षसां ग्रीवा अपि कन्तामि वृहन्नसि वृहदे
वा वृहतीमिन्द्रा युवा च वद ॥ २२ ॥
सवितुः । देवस्य प्रसवे श्विनो वाङ्म्याम्पू
षो हस्ताभ्याम् । आददे नारी । असि वृहते वृहद्वेवा । असि

^{१५} इन्द्राय । ^{१६} बृहतीम् । ^{१७} वाच । ^{१८} वद । ^{१९} इदम् । ^{२०} अहं ११ । ^{२१} रक्ष सोम । ^{२२} ग्री-
वाः । अपि । कृन्तानि ॥ २२ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उन को कहते हैं काठ-
से निर्मित खोदने की साधन अग्नि को ले कर यूप वाट को चिन्हित करता है
उसका मंत्र १ चिन्ह कम से उपर वों को खोदता है उसके मंत्र २, ३, ४
ओं देवस्य त्वेत्यस्य (औ तथ्यो दीर्घ तमा ऋ० प्राजा पत्या बृहती छं० अग्निर्दे०) १
ओं आददे इत्यस्य (तथा ० याजुषी गायत्री छं० ० तथा) २
ओं इदमित्यस्य (तथा ० आसुरी उष्णिक् छं० ० रक्षो भोदे) ३
ओं बृहन्न सीत्यास्य (तथा ० आषी पंक्ति छं० ० उपर वो दे०) ४
वैष्णवीमित्यस्य (तथा ० वीष्णु पंक्ति छं० ० उपर वो दे०) ५

पदार्थः— हे अग्नि १ सविता २ देवता की ३ आज्ञा में वर्तमान होता में ४ अ-
श्विनी कुमार की ५ बाहु भाव को प्राप्त अपनी भुजाओं और ६ पूषा देवता के ७
हस्त भाव को प्राप्त अपने हाथों से ८ तुम्ह को ९ ग्रहण करता हूं तुम तो १० खोद-
ने का साधन और कर्म में उपयोगी होने से अनुष्ठाता मनुष्यों से सम्बंध रखने-
वाली ११ हौं हे उपर व नाम गढ़े ले तुम १२ वर्तुल गढ़े ले के प्रादेश मात्र परिमा-
ण और बाहु मात्र खोदने से बड़े १३ और बड़ी ध्वनि वाले १४ हौं १५ इन्द्र के अ-
र्थ १६ बड़ी ध्वनि वाले १७ वचन को १८ कहौं १९ यह २० मैं अर्घ्य २१ यज्ञ-
विनाशक राक्षसों के २२ कंठ स्थानों को २३ ही २४ काटता हूं ॥ २२ ॥

अथाध्यात्मम्— हे बुद्धि १ २ गुरु देवता की ३ आज्ञा में वर्तमान होता
में ४ पृथिवी स्वरूप हृदय मन की ५ ग्रहण शक्तियों और ६ मानस सूर्य की-
७ ग्रहण शक्तियों से ८ तुम्ह को स्वीकार करता हूं ९ तुम तो १० नर सम्बन्धी
११ हौं हे गगन मंडल रूप गर्त तुम १२ मद्दान १३ अनाहत शब्द वाले १४ हौं
१५ यजमान के अर्थ १६ ब्रह्म सन्वाधिनी १७ तत्त्व मांस नाम वचन की १८

समूहवाचांडाल आदि^{१५} जिस कृत्या का मेरे वध के लिये प्रयोग किया तथा ६
 मंत्री ने ७ जिस कृत्या का ८ मेरे वध के लिये ९ प्रयोग किया १० में ११ उस
 १२ इस १३ कृत्या को १४ हराता हूं १५ धन कुल आदि से समान मनुष्य ने १६
 जिस कृत्या को और १७ धन कुल आदि में न्यून वा अधिक ने १८ जिस कृ-
 त्या को १९ मेरे वध के लिये २० प्रयोग किया २१ में २२ उस २३ इस २४ कृत्या
 को २५ दूर फेंकता हूं^{२६} कुल शील आदि से समान मामा फूफी के वेटे आदि-
 ने २७ जिस कृत्या को २८ उस के विपरीत मनुष्य ने २९ जिस कृत्या को ३०
 मेरे वध के लिये ३१ प्रयोग किया ३२ में ३३ उस ३४ इस ३५ कृत्या को ३६ दूर
 फेंकता हूं ३७ भाई ने ३८ जिस कृत्या को ३९ उस के विपरीत मनुष्य ने
 ४० जिस कृत्या का ४१ मेरे वध के लिये ४२ प्रयोग किया ४३ में ४४ उस ४५
 इस ४६ कृत्या को ४७ दूर फेंकता हूं ४८ तथा प्रयोग करने वाले शत्रुओं से
 संपादित कृत्या को ४९ उठा कर दूर फेंकता हूं ॥ २३५ ॥ **अथाध्या० पूर्व**
 सनोक्त वचन १ कामादि के वध से सम्बन्ध रखन वाला २ कामादि से प्रेरित कृत्या
 कानाशक ३ यजमान सम्बन्धी है ४ इन्द्रिय समूह ने ५ जिस कृत्या को ६ मनने
 जिस कृत्या को ८ मेरे संसार वधन के अर्थ ९ प्रयोग किया १० में ११ उस १२
 इस १३ देह में विद्यमान विषय वासना को १४ दूर फेंकता हूं १५ जीवने १६
 जिस को १७ देह ने १८ जिस को १९ मेरे वधन के लिये २० प्रयुक्त किया २१
 में २२ उस २३ इस २४ विषया सक्ति को २५ दूर फेंकता हूं २६ प्रति विवने
 २७ जिस को २८ कामने २९ जिस को ३० मेरे वधन के लिये ३१ प्रयुक्त किया
 ३२ में ३३ उस ३४ इस ३५ देह में विद्यमान विषय वासना को ३६ दूर फेंक
 ता हूं ३७ प्रारब्ध ने ३८ जिस को ३९ वर्तमान जन्म के कर्म फलने ४० जि-
 स को ४१ मेरे वधन के लिये ४२ प्रयुक्त किया ४३ में ४४ उस ४५ इस ४६
 विषया सक्ति को ४७ दूर फेंकता हूं तथा ४८ प्रयोग करने वाले कामादि

शत्रुओं से संपादित कृत्या को धँस उठा कर दूर फेंकता हूँ ॥ ३३ ॥

स्वराडसि सपत्नहा सत्रराडस्यभिमातिहा जन्

राडसि रक्षोहा सर्वराडस्य मित्रहा ॥ २४ ॥

सपत्नहा । स्वराट् । असि । अभिमातिहा । सत्रराट् । असि । रक्षोहा । जनराट् । असि । अमित्रहा । सर्वराट् । असि ॥ २४ ॥

अथाधिदैवम्— अध्वर्यु उन उपर वों को खनन कम से यजमान को स्पर्श कराता है उससे मंत्र १ से ४ तक ॥

ओं स्वराडसीत्यस्य (औतथ्यो दीर्घतमा ऋ० प्राजापत्या गायत्री छं० उपर वों दे) १

ओं सत्रराडसीत्यस्य (तथा ० याजुषी वृद्धती छं० ० तथा) २

ओं जनराडसीत्यस्य (तथा ० प्राजापत्या गायत्री छं० तथा) ३

ओं सर्वराडसीत्यस्य (तथा ० तथा ० तथा) ४

पदार्थः— हे प्रथम गर्त तुम १ शत्रुनाशक २ आपही प्रकाशमान ३ हो हे द्वितीय गर्त तुम ४ शत्रुघाती ५ द्वादशाह आदि यज्ञों में शोभामान ६ हो हे तीसरे गर्त तुम ७ यज्ञविनाशक राक्षसों को मारने वाले ८ यजमान आदिके मध्य शोभामान ९ हो हे चौथे गर्त तुम १० शत्रुनाशक ११ और सबके मध्य शोभामान १२ हो ॥ २४ ॥

अथाध्यात्मम्— हे श्रोत्ररूप गर्त तुम १ भगवत् कथां श्रवण से काम आदि के नाशक २ आत्मा में शोभामान ३ हो हे चक्षुरूप गर्त तुम ४ भगवद् विभूति के दर्शन से कामादि का शत्रु के नाशक ५ आत्मारूप यजमान में शोभामान ६ हो हे नासिकारूप गर्त तुम ७ प्राणायाम से कामादि शत्रु के नाशक ८ और योगी में शोभामान ९ हो हे मुखरूप गर्त तुम १० पाठ आदिके द्वारा कामादि शत्रु के नाशक ११ और विष्णु नामोच्चारण से शोभामान १२ हो— इस अर्थ में श्रुति प्रमाण है और वह यह है इसका शिरहविधान

है और शिर में श्रोत्र आदि ४ कूप हैं ॥ २४ ॥

रक्षो हणो वो वल गहनः प्रोक्षामि वैष्णवान् रक्षो
हणो वो वल गहनो वन यामि वैष्णवान् रक्षो हणो
वो वल गहनो वस्त एमि वैष्णवान् रक्षो हणो
वां वल गहना उपदधामि वैष्णावी रक्षो हणो वां
वल गहनौ पर्युहामि वैष्णावी वैष्णाव मसि वैष्णा
वास्थ ॥ २५ ॥

रक्षो हणो^१। वल गहनः^२। वैष्णावान्^३। वः^४। प्रोक्षामि^५। रक्षो हणो^६।
वल गहनः^७। वैष्णावान्^८। वः^९। अवन यामि^{१०}। रक्षो हणो^{११}। वल ग-
हनः^{१२}। वैष्णावान्^{१३}। वः^{१४}। अवस्त एमि^{१५}। रक्षो हणो^{१६}। वल गहनो^{१७}।
वैष्णावी^{१८}। वां^{१९}। उपदधामि^{२०}। रक्षो हणो^{२१}। वल गहनौ^{२२}। वैष्णावी^{२३}।
वां^{२४}। पर्युहामि^{२५}। वैष्णावम^{२६}। असि^{२७}। वैष्णावाः^{२८}। स्थ ॥ २५ ॥

अथाधिदैवम्।— इस कंडिका में ७ मंत्र हैं उन को कहते हैं, अधर्पु-
लौकिक जल से इन उपरवों को प्रोक्षण करता है उस का मंत्र १ गर्तों में प्रोक्ष-
ण शेष जल का सींचना और कुशाओं से आच्छादन करना यह दोनों कर्म करता है उ-
सके मंत्र २, ३ उन उपरवों के ऊपर सूक्ष्म स्थूल पूर्वाग्र्य वा उत्तराग्र्य कुशाओं को
फेंला कर दौ अधिषवण फलक (जिन पर सोम निचोड़ते हैं) को पूर्वाग्र्य पर स्पर्श
मिले हुए वा दो अंगुल के अंतर से रखता है और उनके चारों ओर मिट्टी लगाता
है उसके मंत्र ४ ॥ उन दोनों अधिषवण फलक के ऊपर सब ओर से लाल वर्ण
चारों ओर काटने से समान किये हुए अधिषवण चर्म को रखता है उस का मंत्र
५ उस चर्म पर सोमाभिषवके कारण ५ पांच पाषाण को स्थापित करता है उस
का मंत्र ७ ॥

हो रक्षो हणो इत्येव (और रक्षो हणो इत्येव मात्रा आना प्रत्यानुप्रसक्तं विधाते) ॥ २५ ॥

ओं रसो हण इत्यस्य क्षित्यो दीर्घतमा ऋ० भुरिग्राजापत्यानुष्टुप छं० उपर वो दे० २				
तथा	(तथा	• तथा	तथा ०) ३	
ओं रसो हणौ वामित्यस्य (तथा	• आर्ची गायत्री छं०	विष्णुर्दे०) ४		
ओं रसो हण इत्यस्य (तथा	• भुरिग्राजापत्यानुष्टुप छं०	उपर वो दे० ५		
ओं वैष्णवमित्यस्य (तथा	• दैवी पंक्ति छं०	• विष्णुर्दे० ६		
ओं वैष्णवास्थेत्यस्य (तथा	• दैवी वृहती छं०	• तथा ०) ७		

पदार्थः— १ राक्षसनाशक २ मारणप्रयोग कौनष्ट करने वाले ३ विष्णु को देवता रखने वाले ४ तुम गर्त्तो को ५ प्रोक्षण करता हूं ६ राक्षसनाशक ७ मारणप्रयोग कौनष्ट करने वाले ८ विष्णु को देवता रखने वाले ९ तुम गर्त्तो को १० सींचता हूं ११ राक्षसनाशक १२ मारणप्रयोग कौनष्ट करने वाले १३ विष्णु को देवता रखने वाले १४ तुम गर्त्तो को १५ कुशाग्रों से आच्छादन करता हूं हे अधिषवण फलक १६ राक्षसनाशक १७ कृत्याविनाशक १८ विष्णु को देवता रखने वाले १९ तुम दोनों को २० एकगर्त्तपर स्थापन करता हूं हे अधिषवण फलक २१ राक्षसनाशक २२ कृत्याविनाशक २३ विष्णु को देवता रखने वाले २४ तुम दोनों को २५ मिट्टी से चारों ओर आच्छादन करता हूं हे चर्म तुम २६ यज्ञरक्षक विष्णु सम्बन्धी २७ हौ हे पाषाणो तुम २८ यज्ञरक्षक विष्णु सम्बन्धी २९ हौ ॥ २५ ॥

अथाध्यात्मम्— हे शिरमें विद्यमान ब्रह्म आदि १ काम आदि के नाशक २ काम आदि से रचित विषय वासना के नाशक ३ योगी सम्बन्धी ४ तुम को ५ प्राण में विद्यमान ब्रह्म ज्योतिरस रूप जलों से प्रोक्षण करता हूं ६ काम आदि के नाशक ७ काम आदि से रचित विषय वासना के नाशक ८ योगी सम्बन्धी ९ तुम को १० पूर्वोक्त जलों से सींचता हूं ११ काम आदि के नाशक १२ काम आदि से रचित विषय वासना के नाशक १३ योगी सम्बन्धी १४ तुम

को १५ लोम रूपदर्भों से अच्छा दन करता हूँ हे अधिषवण फलक रूप हनू १६ का
मादि के नाशक १७ काम कृत्या के विनाशक १८ योगी सम्बन्धी १९ तुम दोनों को २०
दोनों नेत्र के ऊपर स्थापन करता हूँ हे हनू २१ कामादि के नाशक २२ काम कृत्या
के विनाशक २३ योगी सम्बन्धी २४ तुम दोनों को २५ दृढ़ करता हूँ हे जिह्वा तुम-
२६ योगी सम्बन्धी २७ हौं हे दन्तो तुम २८ योगी सम्बन्धी २९ हौं यंज मान के शिर-
का संस्कार किया ॥ २५ ॥

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवे श्विनो वह्निभ्याम्पूषो ह
स्ताभ्याम् । आददे नार्य सीदमहं रक्ष साङ्गी वा
अपि कृन्तामियवोसि यवयास्महेषो यवया रीती
दिवे त्वान्तरिक्षाय त्वा एधियै त्वा मुन्धन्तां लोकाः

पितृषदनाः पितृषदनमसि ॥ २६ ॥

सवितुः । देवस्य । प्रसवे । श्विनोः । वाङ्म्याम् । पूषोः । हस्ताभ्या
मा । त्वा । आददे । नारी । असि । इदम् । अहं । रक्ष । साम । ग्रीवाः ।
अपि । कृन्तामि । यवः । असि । द्वेषः । अस्मत् । यवयोः । अरातीः ।
यवयोः । दिवोः । त्वा । अन्तरिक्षाय । त्वा । एधियै । त्वा । पितृषद
नाः । लोकाः । मुन्धन्ताम् । पितृषदनम् । असि ॥ २६ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में धर्म है उनमें तीन का विन योग कह चुके
यंज मान के शरीर की समान चूलर की शाखा को सद नाम मंडप के बीच गाड़ता है
और गाड़ने से पहले वह शाखा यूप की समान भूमि पर पड़ी होती है यूपावट खनन
के अनुसार अभिस्वीकार से लेकर कुशोपलक्षण पर्यंत सब पदार्थों को मंत्रों से ही क
रता है उसका मंत्र १ अभिलेख गर्त के चिह्नित करता है उसके मंत्र २, ३ ज
ल पात्र में जौ डाल कर उस जल से अग्र मध्य मूल को प्रोक्षण करता है इसके मंत्र ४
६, ७ शेष जल को अवट में सींचता है उसका मंत्र ८ उस अवट में पूर्विय वा उत्तर एयु कु

शाश्वों को विद्याता है उसका मंत्र ६

ओं देवस्य त्वा देवस्य त्वा— इसके तीनों विन योग ऊपर लिख चुके १२, ३

ओं यवो सीत्यस्य (ओतय्यो दीर्घतमा ऋ० आसुरी उष्णिक् छं० यवो दे०) ४ से ६ तक

ओं दिवे त्वेत्यस्य (तथा ० याजुषी जगती छं० औदुम्बरी दे०) ७

ओं मुन्धन्तामित्यस्य (तथा ० याजुषी पंक्ति ऋ० पितरो दे०) ८

ओं पितृषटनमित्यस्य (तथा ० दैवी जगती छं० तथा ०) ९

पदार्थः— हे अग्नि १ सविता २ देवता की ३ आज्ञा में वर्तमान मैं ४ अश्वनी कुमार की वाह
भाव को प्राप्त अपनी भुजाओं ६ पूषा देवता के ७ हस्त भाव को प्राप्त अपने हाथों से
८ तुम्हें ९ ग्रहण करता हूँ तुम १० नर सम्बन्धिनी ११ हो १२ यह १३ मैं १४ कामा
की १५ ग्रीवाओं को १६ भी १७ काटता हूँ हे यव तुम १८ शत्रुओं के हराने वाले
१९ हो २० शत्रु वादों भाग्य को २१ हम से २२ दूर करौ २३ अदानु शील वा शत्रुओं
को २४ दूर करौ हे औदुम्बरी के अग्र भाग २५ स्वर्ग लोक की प्रीति के अर्थ २६
तुम्हें प्रोक्षण करता हूँ हे मध्य भाग २७ अन्तरिक्ष लोक की प्रीति के अर्थ २८
तुम्हें प्रोक्षण करता हूँ हे मूल भाग २९ पृथिवी की प्रीति के अर्थ ३० तुम्हें प्रोक्षण क
रता हूँ ३१ पितरों के वास स्थान ३२ लोक ३३ इस जल सेवन से सुख हो हे कु
शा तुम ३४ पितरों के वैठने का आसन ३५ हो ॥ २६ ॥

अथाध्यात्मम्

अवलिङ्ग शरीर

का संस्कार वर्णन करते हैं हे बुद्धि रूप वज्र १२ गुरु देवता की ३ आज्ञा में वर्तमान मैं ४ हृदय मन की ५ ग्रहण शक्तियों और ६ मानस सूर्य की ७ ग्रहण शक्तियों
से ८ तुम्हें ९ ग्रहण करता हूँ तुम १० नर सम्बन्धी ११ हो १२ यह १३ मैं १४ कामा
दि की १५ ग्रीवाओं को १६ भी १७ काटता हूँ हे प्राण तुम १८ कामादि के हराने
वाले १९ हो २० कामादि को २१ हम से २२ दृक् करौ २३ विषयों को २४ दृष्ट
करौ हे लिङ्ग शरीर के अग्र भाग २५ भृकुटि की प्राप्ति के अर्थ २६ तुम्हें प्रोक्ष

ए करता हूं हे लिंग शरीर के मध्य भाग २७ हार्दन्तरिस्स की प्राप्ति के अर्थ २८ तुम्हें
प्रोक्षण करता हूं हे लिंग शरीर के मूल भाग २९ मानस कमल की प्राप्ति के अर्थ
३० तुम्हें प्रोक्षण करता हूं ३१ मनो वृत्ति के आलय रूप ३२ लोक ३३ मुद्ध हों हे
मानस कमल तुम ३४ मनो वृत्ति स्थान ३५ हौ ॥ २६ ॥

उद्दिवं ॐ स्तव भानान्तरिस्स मृण स्तद ॐ हस्व
पृथिव्या न्युतान स्त्वा मारुतो मिनोतु मित्रा वरुणो
ध्रुवेण धर्मेण । ब्रह्म वनित्वा सत्र वनि राय स्पोष व
नि पर्युहामि ब्रह्म दं ॐ हस्व तन्दं ॐ हायुर्द ॐ ह
प्रजान्द ॐ ह ॥ २७ ॥

दिव ॐ उत्तमान । अन्तरिस्सम् । मृणः । पृथिवीम् । आद ॐ
हस्व । मित्रा वरुणो । द्युतानः । मारुतः । ध्रुवेण । धुर्मणा । त्वा ।
मिनोतु । ब्रह्म वनि । सत्र वनि । राय स्पोष वनि । त्वा । पर्युहामि । ब्र
ह्म । द ॐ ह । सत्र । द ॐ ह । आयुः । द ॐ ह । प्रजाम् । द ॐ ह ॥ २७

अथाधिदैवम्- इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उनको कहते हैं, औदुम्बरी को
कुंजी करता है उसका मंत्र १ औदुम्बरी शारदा को गर्त में डालता है उसका मंत्र २
पर्युहण से लेकर उपसेवन पर्यन्त जैसा यूप में किया वैसा यहां भी करता है औ
र यूप के अकट को मिट्टी से पूरित करता है उसका मंत्र ३ अध्वर्यु उस मृत्ति का पू
रित गर्त को मैत्रावरुण दंड से कूटता मिट्टी को अवट के भीतर प्रवेश करता है
उसका मंत्र ४

ॐ उद्दिवमित्यस्य (औतय्यो दीर्घतमा ऋ० भुरिप्रज्ञा प्रत्यानुष्टुप छं० औदुम्बरीदे०)
ॐ द्युतानरित्यस्य (तथा ० आर्षुषाक छं० तथा) २
ॐ ब्रह्मवनीत्यस्य (तथा ० भुरिसान्नी बहती छं० तथा) ३
ॐ ब्रह्मेत्यस्य (तथा ० आसुरी गायत्री छं० तथा) ४

पदार्थः— हे औदुम्बरी तुम १ स्वर्गलोक को २ स्तम्भन करौ ३ अन्तरिक्ष को ४ पूरित करौ ५ पृथिवी को ६ दृढ़ करौ हे औदुम्बरी ७ मित्रावरुण नाम दोनों देवता ८ तथा दीप्यमान ९ वायु देवता १० स्थिर ११ धारण के द्वारा १२ तुम्हें १३ गर्त में डालो हे औदुम्बरी १४ ब्राह्मणों से सेवनीय १५ क्षत्रियों से सेवनीय १६ धन पुष्टि के लिये सेवनीय १७ तेरे चारों ओर १८ मिट्टी डालता हूँ हे औदुम्बरितुम् ब्राह्मण जाति को १९ दृढ़ करौ २० क्षत्री जाति को २१ दृढ़ करौ २२ जीवन को २३ दृढ़ करौ २४ पुत्र आदि रूप-प्रजा को २५ दृढ़ करौ ॥ २७ ॥

अथा ध्यात्मम्— हे भूतात्मन तुम १ भृकुटि को २ स्तम्भन करौ ३ हार्दन्तरिक्ष को ४ पूरित करौ ५ मानस कमल को दृढ़ करौ ७ प्राण उदान तथा ८ दीप्यमान ९ अपान १० ११ योग मार्ग से १२ तुम्हें को १३ पुरुष में डालो हे भूतात्मन १४ मन से सेवनीय १५ प्राण से सेवनीय १६ योग पुष्टि के लिये सेवनीय १७ तुम्हें को १८ अचल करता हूँ हे भूतात्मन १९ मन को २० दृढ़ कर २१ प्राण को २२ दृढ़ कर २३ आयु को २४ दृढ़ कर अर्थात् अल्प मृत्यु से रक्षा कर २५ इन्द्रियों को २६ दृढ़ कर ॥ २७ ॥

ध्रुवासि ध्रुवो यं यजमानोऽस्मिन्नायतने प्रजयाप-

शुभिर्भूयात्। दृतेन द्यावा पृथिवी पूर्यथा मिन्द्र

स्य हृदि रसि विश्वजनस्य छाया ॥ २८ ॥

ध्रुवाः असि। अयम्। यजमानः। अस्मिन्। आयतने। प्रजया। पशुभिः। ध्रुवः। भूयात्। दृतेन। द्यावा पृथिवी। पूर्यथामे। इन्द्रस्य। हृदिः। विश्वजनस्य। छाया। असि ॥ २८ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उनको कहते हैं औदुम्बरी को स्पर्श कर पढ़ता है वह मंत्र १ अध्वर्यु औदुम्बरी के द्विशाखात्पत्ति प्रदेश में खुवा द्वारा दृत से होम करता है उसका मंत्र २ औदुम्बरी गाड़ने के पीछे सद नाम मंडप को निर्माण कर उसके ऊपर आवरण के लिये तथा निर्मित करके आ

रोपण करता है उस का मंत्र ३

ओं ध्रुवा सीत्यस्य (ओतथ्यो दीर्घतमा ऋ० निच दाषी गायत्री छं० ओदुम्बरी दे०) १

ओं छतेनेत्यस्य (तथा ० याजुषी त्रिष्टुप् छं० द्यावा एधि वी दे०) २

ओं इन्द्रस्येत्यस्य (तथा ० साम्युष्णिक् छं० इन्द्रो देवता) ३

पदार्थः— हे ओदुम्बरि तुम १ स्थिर २ हो ३ यह ४ यजमान ५ इस ६ अपने-
गृह में ७ संतान ८ और गौ आदि पशुओं से ९ स्थिर १० होवै होमे ड्रा ११ घृत से-
१२ एधिवी तर्ग १३ पूरित हो हे तृण मय कट तुम १४ इन्द्र सम्बन्धी १५ कट और
१६ सद मध्यवर्ती यजमान ऋत्विज रूप प्राणि यों के १७ आवरण के लिये छाया-
१८ हो क्योंकि सद का देवता इन्द्र है ॥ २८ ॥

अथाध्यात्मम्— हे लिंग शरीर रूप माया तुम १ अचला २ हो ३ यह ४ आ-
त्मा रूप यजमान ५ इस ६ भृकुटि स्थान में ७ प्राण ८ और इन्द्रियों के साथ ९ अच-
ल १० होवै होमी ड्रई ११ इन्द्रियों की शक्ति से १२ मन और भृकुटि १३ कम पूर्व-
क पूरित हो हे नाडी रचित कट तुम १४ यजमान के १५ कट १६ और इन्द्रिय स-
मूह के १७ आवरण के लिये छाया १८ हो ॥ २८ ॥

**परित्वा गिर्विणो गिरः इमा भवन्तु विश्वतः । वृ-
द्धायुमनु वृद्धयो जुष्टा भवन्तु जुष्टयः ॥ २९ ॥**
**गिर्विणः । इमा । अनु वृद्धयः । गिरः । त्वा । वृद्धायुमा विश्वतः ।
परि भवन्तु । जुष्टयः । जुष्टाः । भवन्तु ॥ २९ ॥**

अथाधिदैवम्— छावने के पीछे लोक प्रसिद्ध हैं परिवार को से सद-
को त्वारों और आच्छादन करता है उस का मंत्र १
ओं परित्वेत्यस्य (ओतथ्यो दीर्घतमा ऋ० अनुष्टुप् छं० इन्द्रो दे०) १
पदार्थः— हे स्तुति योग्य परमेश्वर २ यह ३ सवन कर्म से वृद्धि युक्त ४
लोत्र शास्त्र रूप वाणी ५ तुम्ह ६ वड़े अन्न वात को ७ सब और से ८ ग्रहण

कीजियो और ६ हमारी सेवा तेरी १० प्रिय ११ हूजियो ॥ २६ ॥

अथाध्यात्मम्— लिङ्ग शरीर कहता है १ हे स्तुति योग्य आत्मा २ यह
३ कम से वृद्धि युक्त ४ महा वाक्य ५ तुम्ह ६ प्राण आदि बड़े अन्न वाले को ७ स
ब और से ८ ग्रहण करौ ९ और हमारी सेवा १० तेरी प्रिय ११ हों ॥ २६ ॥

इन्द्रस्य सूरसीन्द्रस्य ध्रुवोऽसि। ऐन्द्रमसि

वैश्वदेवमसि ॥ ३० ॥

इन्द्रस्य १ सूर्यः २ असि ३ इन्द्रस्य ४ ध्रुवः ५ असि ६ ऐन्द्रम् ७ असि ८
वैश्वदेवम् ९ असि १० ॥ ३० ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उन को कहते हैं, पूर्व द्वार के
दक्षिण स्थूण आदि के प्रदक्षिण क्रम से चारों द्वार्य का परिषी वन रस्ती में गा
व लगाना और स्पर्श करता है उसके मंत्र १, २, ३ हविर्धानि मंडप के वायव्य को
ए के उत्तर भाग में आग्नीध्र नामक अग्नि स्थान को निर्याण कर उस का स्पर्श
करता है उस का मंत्र ४ ॥

ओं इन्द्रस्येत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ० याजुषी गायत्री छं० इन्द्रो दे० १, २)

ओं ऐन्द्रमित्यस्य (तथा ० देवी रहती छं० तथा ०) ३

ओं वैश्वदेवमित्यस्य (तथा ० याजुषी गायत्री छं० विश्वे देवा दे० ४)

पदार्थः— हेरस्सी तुम १ सदे भिमानि इन्द्र देवता से सम्बन्ध रखने वाली
२ सीवने की वस्तु ३ हो है ग्रथित ४ इन्द्र सम्बन्धी होकर ५ स्थिर ६ है हे सद्
तुम ७ इन्द्र सम्बन्धी ८ हो है आग्नीध्र तुम ९ सर्वदेव सम्बन्धी १० हो ॥ ३० ॥

अथाध्यात्मम्— हे पुष्पन्ना तुम १ यजमान को २ ब्रह्म से युक्त
करने वाली ३ हो है श्रुति की ज्योति तुम ४ यजमान के ५ आत्मा ६ हो है ह
दय रूप सद् तुम ७ यजमान सम्बन्धी ८ हो है मानसान्तरिक्ष तुम ९ इन्द्रिय
समूह संबंधी १० हो ॥ ३० ॥

अब सोलह धिषा के मंत्रों को कहते हैं,

विभूरसि प्रवाहणे वह्नि रसि हव्य वाहनः । श्वा

त्रोसि प्रचेता स्तुथोसि विश्व वेदाः ॥ ३१ ॥

विभुः । प्रवाहणः । असि । वह्निः । हव्य वाहनः । असि । श्वा-
त्रः । प्रचेता । असि । तुथः । विश्व वेदाः । असि ॥ ३१ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उन को कहते हैं, अध्वर्यु
उत्तर मुख बैठ कर अग्नि यों के आश्रय भूत छोटी वेदी रूप धिषायों को मिट्टी-
से बनाता है वहां प्रथम आग्नीध्र की वेदी को संभालता है उसका मंत्र १ तिस-
के पीछे पश्चिम मुख अध्वर्यु पूर्व में सद के द्वार को उसके उत्तर में हो ता के धि-
षाय को सम्हालता है उसका मंत्र २ फिर उत्तर मुख अध्वर्यु औदुम्बरी के अ-
ग्नि कोण और होत्र धृषय के दक्षिण दिशा में मैत्रावरुण के धिषाय को स-
म्हालता है उसका मंत्र ३ होत्र धृषय के उत्तर ब्राह्मणाच्छंसि, पोता, नेत्रा, अ-
च्छा वाक् चारों ऋत्विजों के समानांतर धिषायों को सम्हालता है उनमें प-
हिले का मंत्र ४

ॐ विभूरसीत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ० प्राजापत्या गायत्री छं० अग्निर्दे०) १

ॐ वह्निरसीत्यस्य (तथा ० याजुषी वहती छं० तथा) २

ॐ श्वात्रासीत्यस्य (तथा ० याजुषी गायत्री छं० तथा) ३

ॐ तुथोसीत्यस्य (तथा ० देवी जगती छं० तथा) ४

पदार्थः— हे आग्नीध्र धिषाय के अग्नि तुम १ नाना रूप धारक २ ह-
वि के प्रवाहक ३ हो हे होत्र धिषाय के अग्नि तुम ४ यज्ञ कर्म के निर्वहक
५ देवताओं को हव्य प्राप्त कराने वाले ६ हो हे मैत्रावरुण धिषाय के अग्नि तुम
७ शीघ्र गामी मित्र रूप ८ और ओष्ठ ज्ञान वाले वरुण रूप ९ हो हे ब्राह्मणा-
च्छंसि धिषाय के अग्नि तुम १० पत्न्य रूप अध्वर्यु के धिषाय के अग्नि तुम ११

करने वाले और ११ सर्वज्ञ १२ है ॥ ३१ ॥

अथाध्यात्मम्— हे हार्दन्तरिक्ष के अग्नि तुम १ कमलों पर विदेव आदि रूप धारण करने वाले २ ब्रह्म परानारायण के अर्थ हवि के पङ्कचाने वाले ३ हो हे वागा भिमानी अग्नि तुम ४ ज्ञान यज्ञ के निर्वहक ५ ब्रह्म परानारायण के अर्थ हव्य प्रापक ६ हो हे मानसाग्नि तुम ७ शीघ्र गामी ८ अष्टज्ञान से युक्त ९ हो हे अहङ्कार नामनो वृत्ति विशेष तुम १० ब्रह्म रूप ११ और सर्वज्ञ १२ हो ॥ ३१ ॥ अथवा इस का दूसरा अर्थ यह है, हे ब्रह्माग्नि तुम १ अपनी माया से वद रूप धारी २ अपनी आत्मा को प्राप्त कराने वाले ३ हो ४ ईशाग्नि ५ और जीव को अपनी आत्मा में धारण करने वाले ६ हो ७ ब्रह्मा विष्णु महेश के रक्षक ८ और ज्ञान स्वरूप ९ हो १० ब्रह्म ११ और सर्वज्ञ १२ हो ॥ ३१ ॥

**उशिगसि कविर्द्वारिरसिवम्भारिरवस्युरसि
दुवस्वाच्छुन्ध्युरसि माज्जीलीयः सम्राडसि कृ
शानुः परिषद्योसि पवमानो नभोसि प्रतक्का मृ
ष्टोसि हव्यसूदनः ऋतधामासि स्वर्ज्योतिः ३२**
उशिक । कवि । असि । अद्वारिः । वम्भारिः । असि । अवस्युः । दु-
वस्वान । असि । शून्युः । माज्जीलीयः । असि । सम्राट् । कृशानु-
असि । परिषद्यः । पवमानः । असि । नभः । प्रतक्का । असि । मृ-
ष्टः । हव्यसूदनः । असि । ऋतधामा । स्वर्ज्योतिः । असि । ३२

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ९ मंत्र हैं उन को कहते हैं, पोतानेवा और अच्छा वाक् के धिषायो को सम्हालता है उनके मंत्र १, २, ३ माज्जीलीय धिषाय को सम्हालता है उस का मंत्र ४ अध्वर्यु सद के पूर्व द्वार के पूर्व भाग में स्थित हो कर आह वनीय वहिष्यमान देश, चात्वाल, शामित्र, और ओदुम्बरी को देखता है उनके मंत्र ५ से ९ तक-

ओं उशि ग सीत्यस्य (मधुच्छंदाऋ० याजुषी गायत्री छं० अग्निर्दे०) १	
ओं अङ्गुरीत्यस्य (तथा ० याजुष्यनुष्टुप् छं० तथा) २	
ओं अवसूरसीत्यस्य (तथा ० तथा ० तथा) ३	
ओं मुन्ध्यूरसीत्यस्य (तथा ० तथा ० तथा) ४	
ओं सम्राडसीत्यस्य (तथा ० याजुष्युष्णिक् छं० आहवनीयो दे०) ५	
ओं परिष द्यो सीत्यस्य (तथा ० याजुषी गायत्री छं० वहिष्यमानो दे०) ६	
ओं नभो सीत्यस्य (तथा ० तथा ० चात्वालो दे०) ७	
ओं मिष्ट्यो सीत्यस्य (तथा ० याजुष्यनुष्टुप् छं० शामित्रो दे०) ८	
ओं ऋत धामा सीत्यस्य (तथा ० तथा ० औदुम्बरीर्दे०) ९	

पदार्थः— हे पौत्रधिषयाग्ने तुम १ काम नीय २ और जात दर्शी ३ हो हे नेष्ट धिषाय के अग्नि तुम ४ पाप के नाशक ५ और पोषक ६ हो हे अच्छा वाक धिषाय के अग्नि तुम ७ अन्न चाहने वाले ८ और हविष्मान् ९ हो क्योंकि अच्छा वाक ही पुरोडाश के भाग को पाता है हे मार्जलीय धिषाय के अग्नि तुम १० पवित्र करने वाले ११ और मार्जन करने वाले १२ हो क्योंकि उस स्थान पर पात्र धोये जाते हैं हे उत्तर वेदी में विद्यमान आहवनीय तुम १३ वज्र प्रकार की आहुति धारण करने से भले प्रकार शोभा मान औ १४ पयोव्रत आदि से रुशयज मान के अनुगामी १५ हो हे वहिष्यमान देश तुम १६ स्तुति कारक ऋत्विजों की सभा के योग्य १७ और पवित्र करने वाले १८ हो हे चात्वाल तुम १९ छिद्र रूप होने से आकाश स्वरूप और २० ऋत्विजों के प्रदक्षिण चलने से प्रत कानाम २१ हो हे शामित्र तुम २२ यन्त्र में हिंसा के अभाव से हिंसा होने पर भी मुद्र २३ और हविषाक का कारण २४ हो हे औदुम्बरी तुम २५ साम गान को उपवेशन स्थान रखने वाली २६ और सूर्य ज्योति से प्रकाशित २७ हो ॥ ३२ ॥

अथाध्यात्मम्— हे चित्तनामाग्नि तुम १ काम नीय २ सर्वत्र जात द-

शी मेधावी ३ हौ हे ज्ञानाग्नि तुम ४ पापनाशक ५ और पोषक ६ हौ हे वाग् ह
 तिविशेष तुम ७ विराटरूप अन्न को प्रकृति में युक्त करने वाले ८ और प्रति-
 विवरूप हवि से युक्त ९ हौ हे विज्ञानाग्नि तुम १० पवित्र कारक ११ और ज्यो-
 तीरसरूप अमृत से मार्जन करने वाले १२ हौ हे ईशाग्नि तुम १३ सर्वेश्व-
 र होने से शोभा मान १४ और माया विकारों से क्षीण यज्ञ मान के अनुगा-
 मी १५ हौ हे योग भूमि तुम १६ स्तुति कारक योगी वा भक्तों की सभा के यो-
 ग्य १७ और पवित्र करने वाली १८ हौ हे विष्णु रूप अग्नि तुम १९ आकाश
 वत् व्यापक २० प्राप्ति योग्य २१ हौ हे ज्ञानाग्नि तुम २२ ज्ञान द्वारा सब उपाधि-
 यों के नाश करने में भी शुद्ध २३ और जीवात्म रूप हवि पाक के कारण २४
 हौ हे लिङ्ग शरीराग्नि तुम २५ ब्रह्म ज्योति से युक्त २६ और सूर्य ज्योति से
 युक्त २७ हौ ॥ ३२ ॥ अथवा इसका दूसरा अर्थ यह है

हे ब्रह्माग्नि तुम १ विष्णु, शिव, परा, और ब्रह्मा का रूप धारण करने वाले
 ३ और सर्वज्ञ ३ हौ ४ पाप के शत्रु ५ और सब के पोषक ६ हौ ७ विराटरू-
 प अन्न को अपनी आत्मा में लय करने वाले ८ और प्रति विवरूप हवि से
 संपन्न ९ हौ १० पवित्र कारक ११ और ज्योतीरसरूप जल से मार्जन कर-
 ने वाले १२ हौ १३ भले प्रकार शोभा मान १४ और माया विकारों से क्षीण
 योगी के अनुगामी १५ हौ १६ स्तुति कारक भक्तों की सभा के योग्य १७
 और पवित्र करने वाले १८ हौ १९ आकाश वत् व्यापक २० और प्राप्ति-
 योग्य २१ हौ २२ शुद्ध २३ और माया रूप हवि के नाशक २४ हौ २५ स-
 त्यज्योति २६ और सूर्यज्योति २७ हौ ॥ ३२ ॥

समुद्रो सि विश्व व्यचा अजो स्येक पाद हिर
 सि बुध्ना वा गस्येन्द्र मसि सदो स्युत स्य द्वा
 रौ मा सा सन्ता समद्धना मध्व पते प्रमातिर

स्वस्ति मेस्मिन्पथिदेवयानेभूयात् ३३

समुद्रः^१। विस्वव्यचः^२। असि^३। अजः^४। एकपात^५। असि^६। अहिः^७। बुध्या^८।
असि^९। वाक्^{१०}। असि^{११}। ऐन्द्रमा^{१२}। असि^{१३}। सदः^{१४}। असि^{१५}। ऋतस्य^{१६} द्वारौ^{१७}। मा^{१८}। मा^{१९}।
सन्ता^{२०} प्रमु^{२१}। अश्वपते^{२२}। अश्वना^{२३}। मा^{२४}। प्रतिर^{२५}। अस्मिन्^{२६}। देवयाने^{२७}।
पथि^{२८}। मे^{२९}। स्वस्ति^{३०}। भूयात्^{३१}॥ ३३॥

अथाधिदैवम्- इस कंडिका में ६ मंत्र हैं उन को कहते हैं, अथर्व
सद के पूर्व द्वार के पूर्व भाग में स्थित होता ब्रह्मा सन शाला द्वार और प्राजहि
त को देखता है उन के मंत्र १, २, ३ सद का स्पर्श करता है उस का मंत्र ४ सद
के द्वार में लगे हुए धूप धूणों को स्पर्श करता है उस का मंत्र ५ सूर्य को अभि मंत्र
ण करता है उस का मंत्र ६

ओं समुद्रोसीत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ० प्राजापत्या गायत्री छं० ब्रह्मा सन देवतो)
ओं अजोसीत्यस्य (तथा • दैवी पंक्तिश्छंद • अग्निर्दे०)
ओं अहिरसीत्यस्य (तथा • दैवी पंक्तिश्छंद • गार्हपत्याग्निर्दे०)
ओं वागसीत्यस्य (तथा • याजुषी वृहती छं • सदोदे०)
ओं ऋतस्येत्यस्य (तथा • याजुषी पंक्ति छं • द्वार्यशाखेदे०)
ओं अश्वनामित्यस्य (तथा • निचदाषी गायत्री छं • सूर्योदे०)

पदार्थः - हे ब्रह्मा सन तुम १ सब देवताओं के सन्मुख आने का स्थान
अथवा समुद्र वत ज्ञान से गंभीर ब्रह्मा का आसन २ यज्ञ में ऋत अर्कत के दे
खने का स्थान ३ हो हे प्राचीन वंश शाला द्वार वर्त्ती अग्नि तुम ४ आहवनीय रूप
से यज्ञ प्रदेश में जाने वाले अथवा अजन्मा ५ अकैले रसक अथवा सब प्रा
णी जिस का एक पाद है ऐसे से ६ हो हे पत्नी शाला पश्चिम भाग वर्त्ती प्राजहि
त नाम गार्हपत्याग्नि तुम ७ शाला द्वारी यनूतन गार्हपत्य के उत्पन्न होने पर
भी अक्षय रूप ८ और आधान काल में प्रथम स्थापित होने के कारण मूल

रूप १० है सद तुम १० अपने मध्यवाक् से कर्म होने के कारण वाग् रूप ११ है
 १२ इन्द्र को देवता रखने वाले १३ है १४ बैठने के स्थान १५ है १६ हे यज्ञ द्वार
 देश में स्थापित शाखाओं तुम दोनों १७ मुझ को १८, १९ मत संतप्त करो २०
 हे मार्ग रक्षक सूर्य २१ मार्गों के मध्य वर्त्तमान २२ मुझ को २३ वृद्धि दो २४
 इस २५ देव यज्ञ प्रापक २६ यज्ञ मार्ग में २७ मेरा २८ कल्याण २९ होवे ॥

३३॥ **अथाध्यात्मम्** — है मानस कमल तुम १ समुद्र वत् गभीर
 २ और विश्व रूप ३ है हे सुस्वाग्नि तुम ४ मानस सूर्य से उत्पन्न ५ और विष्णु
 रूप ६ है हे जीवाग्नि तुम ७ अविनाशी ८ और ब्रह्म में प्रादुर्भूत ९ है हे उ
 दराग्नि तुम १० प्राण वायु को चारों ओर से प्राप्त ११ है १२ यज्ञ मानस स्वधी
 १३ है इन्द्रियों के भोग स्थान १५ है १६ हे मोक्ष के द्वार ब्रह्मरूप और सूर्य
 १७ मुझे १८, १९ संतप्त मत करो २० हे मार्ग रक्षक सूर्य २१ मार्गों के मध्य
 वर्त्तमान २२ मुझ को २३ वृद्धि दो २४ इस २५ देव यान २६ मार्ग में २७ मे
 रा २८ कल्याण २९ होवे ॥ ३३

दूसरा अर्थ — हे ब्रह्माग्नि तुम १ भले प्रकार उत्कृष्ट मोक्ष के दाता २ सर्वग
 त ३ है ४ अजन्मा ५ ब्रह्मा विष्णु महेश और महा माया रूप से रक्षक ६ है
 हे जीवात्मा तुम ७ अविनाशी ८ और ब्रह्म में प्रकट मानसान्तरिक्ष में प्रा
 दुर्भूत ९ है हे ब्रह्मांड के उदर तुम १० समष्टि वायु से चारों ओर युक्त ११ है
 १२ ईश्वर सम्बन्धी १३ है १४ भोग स्थान १५ है १६ हे मोक्ष के द्वार भक्ति
 ज्ञान १७ मुझ को १८, १९ संतप्त मत करो २० हे मोक्ष मार्ग रक्षक महा विष्णु
 २१ कर्म उपासना ज्ञान नाम मार्गों के मध्य वर्त्तमान २२ मुझ को २३ वृद्धि दो
 जिस प्रकार २४ इस २५ देव यान २६ मार्ग में २७ मेरा २८ कल्याण २९ हो
 वे ॥ ३३॥

मित्रस्य माचक्षुषेः सध्वमग्नयः सर्गराः सगैरा

स्थ सगरेणानाम्ना रौद्रेणानीकेन पातमाग्नयः
पितृतमाग्नयोगोपायतमानमोवोस्तुमामाहि

ॐ सिष्ट ॥ ३४ ॥

मित्रस्य च सुषा मा इक्षध्वम् अग्नयः सगराः सगरेणानाम्ना सगराः स्थ अग्नयः रौद्रेणानीकेन मा पातमाग्नयः मा पितृतमाग्नयोगोपायतव नमः अस्तु मा मा हि ॐ सिष्ट ॥ ३४ ॥

अथाधिदेवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं उन को कहते हैं यज्ञमान स ब्रह्मर्षि जो को अभि मंत्रण करता है उस का मंत्र १ अध्वर्यु आग्नी धीय आ दि आगे धिषायो को अभि मंत्रण करता है उस का मंत्र २
ॐ मित्रस्येत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ० याजुषी बृहती छं० ऋत्विजो दे०) १
ॐ अग्नय इत्यस्य (तथा ० निच द्वाह्य नुष्टपछं० धिषाया दे०) २

पदार्थः - हे ऋत्विजो १ सरवा के २ नेत्र से ३ मुक्ते ४ देखो ५ हे धिषायो की अग्नि यो ६ स्तुति सहित तुम ७ स्तुति युक्त ८ नाम धिषाय करके ९ स्तुति कि ये ऊपर १० हो ११ हे अग्नि यो १२ उग्र १३ सेना वा मुख से १४ मुक्त को १५ रक्षा करो १६ हे अग्नि यो १७ मुक्त को १८ धन आदि से परि पूर्ण करो १९ मुक्त को २० रक्षा करो २१ तुम को २२ नमस्कार २३ हो २४ मुक्त को २५ २६ मत मा रो अर्थात् यज्ञ को निर्विघ्न करो ॥ ३४ ॥

अथाध्यात्मम् - हे वाक् आदि ऋत्विजो १ सरवा के २ नेत्र से ३ मुक्त को ४ देखो ५ हे इंद्रिय रूप धिषायो ६ संसार बंधन रूप विष वा रोग से सहित तुम ७ ८ सगर नाम करके ९ अन्तरिक्ष रूप १० हो ११ हे इन्द्रिय धिषाय मे विद्य मान ब्रह्माग्नि की किरणो तुम १२ काम आदि के भयंकर १३ शमदमादि समूह से १४ मुक्त को १५ रक्षा करो १६ हे इन्द्रिय शक्तियो १७

मुक्त को १८ योग लक्ष्मी से पूरित करौ १९ मुक्त को २० संसार से रक्षा करौ-

२१ मुक्त को २२ नमस्कार २३ हो २४ मुक्त को २५, २६ मत मारौ ॥ ३४ ॥

ज्योतिरसि विश्व रूपं विश्वेषां देवानां थं स
मित। त्वं सोम तनू कृद्भ्यो द्वेषोभ्यो न्य कृते
भ्य उरु यन्तासि वरूथ थं स्वाहा। जुषाणो अ-
गु रज्यस्य वेतु स्वाहा ॥ ३५ ॥

विश्व रूपं। ज्योतिः। अ० स०। विश्वेषां। देवानां थं। समित।
सोम। त्वं। अन्य कृतेभ्यः। द्वेषोभ्यः। तनू कृद्भ्यः। यन्ता।
उरु। वरूथ थं। अ० स०। स्वाहा। जुषाणः। अ० सुः। अ० रज्यस्य। वे-
तु। स्वाहा ॥ ३५ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उन को कहते हैं, ध्रुवा
में से दधिमि अ० बार लिये हुए पृषदाज्य को लेता है उस का मंत्र १ प्रदीप्त
इध्म के ऊपर एक बार लिये हुए घृत को जुहू से होम कहा है उस का मंत्र २
फिर भी जुहू में एक बार ग्रहण किये हुए घृत को लेकर प्रदीप्त इध्म के ऊपर
दूसरी आहुति को होमता है उस का मंत्र ३

ओं ज्योति रसीत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ० सामान्यनुष्टुप् छं० विश्वे देवा दे०) १

ओं त्वं सोमेत्यस्य (भृगु सुत कतुर्ऋ० अनवसाना गायत्री छं० सोमो दे०) २

ओं जुषाण इत्यस्य (तथा ० एक पदा विराट् छं० तथा ०) ३

पदार्थः— है अज्य तुम १ रूपदान से विश्व के रूप २ और दीप्ति दान से
ज्योति ३ हो ४ सब ५ देवताओं के ६ भले प्रकार दीपक हो ७ है सोम ८ तुम
९ हमारे विरोधियों से प्रेरित १० शत्रुओं ११ और शरीर छेदक राक्षसों के
लिये १२ दंड दाता १३ और बड़े १४ बल रूप १५ हो १६ उस तुम के लिये
पह होम हो १७ प्रसन्न १८ सोम १९ घृत का २० पान करौ २१ उस सोम

केलिये ओष्ठ होम हो ॥ ३५ ॥

अथाध्यात्मम्— हे इन्द्रिय शक्ति समूह तुम १ विश्वरूप २ ज्योति
३ हो ४ सब ५ इन्द्रियों के ६ भले प्रकार दीपक हो ७ हे समष्टि सूर्य चतुर्भुज
माया से रचित १० द्वेष कारक ११ काम आदि के लिये १२ दंड दाता १३ और
बड़े १४ बल १५ हो १६ उस तुम के लिये यह होम हो १७ प्रसन्न १८ सूर्य
१९ इन्द्रिय शक्ति समूह का २० पान करौ २१ उसके लिये ओष्ठ होम हो ३५

अग्नेन य सु पथा राये अस्मान् वि प्र वा नि देव व
यु नानि विद्वान् । यु यो ध्य स्म ज्जु ह रा ण मे नो भू
यि ष्ठा न्ते न म उ क्तिं वि धेम ॥ ३६ ॥
देव । अग्ने । विश्वो नि । वयु नानि । विद्वान् । अस्मान् । राये
सु पथा । न य । अस्मत् । जु ह रा ण मे नो भू
यि ष्ठा । न म उ क्तिं । वि धेम ॥ ३६ ॥

अथाधिदैवम्— आग्नीध्र प्रति गमन के लिये प्रवृत्त होने पर
ध्वर्यु यजमान को कह लाता है उस का मन्त्र १

ओं अग्ने न ये त्य स्य (अगस्त्य ऋ० त्रिष्टुप् छन्दः ० अग्निर्दे०) १

पदार्थः— १२ हे अग्नि देवता ३ सब ४ ज्ञानों को ५ जानने वाले तुम ६
हम अनुष्ठाताओं को ७ धन और यज्ञ फल के लिये ८ शोभन मार्ग से ९
प्राप्त करौ १० हम अनुष्ठाताओं के ११ अभिलषित क्रिया के प्रति बधक
पाप को १३ पृथक् करौ १४ तेरे लिये १५ वद्धत १६ नमस्कार विषयक
वक्त्र को १७ उच्चारण करते हैं ॥ ३६ ॥

अथाध्यात्मम्— सूर्य भाव को प्राप्त यजमान प्रार्थना करता है १ हे
ज्योति स्वरूप २ ब्रह्माग्नि ३ सब ४ ज्ञानों को ५ जानने वाले तुम ६ हम
योगियों को ७ योग लक्ष्मी के लिये ८ शुभ मार्ग देवयान द्वारा ९ अपने

आत्मा में प्राप्त करौ १० हम से ११ योग के प्रतिबंधक १२ पाप को १३ पृथक् करौ १४ आप के लिये हम १५ ब्रह्म १६ हविषा षण् बचन को १७ उच्चारण करते हैं ॥ ३६ ॥

अयन्नो अग्निर्वरिवस्क्रणोत्वयन्मृधः पुरा
तु प्रमिन्दन् । अयवाजाञ्जयतुवाजसातावयथं
शत्रूञ्जयतुजहृषाणाः स्वाहा ॥ ३७ ॥

अयम् । अग्निः । निः । वरिवः । कणोतु । अयम् । मृधः । प्रमिन्दन् । पुरः । एतु । अयः । वाजसातौ । वाजान् । जयतु । जहृषाणाः । अयं थं । शत्रून् । जयतु । स्वाहा ॥ ३७ ॥

अथाधिदैवम् — सदैवके उत्तर भाग में सब को ले जा कर आग्नीषीय षिषय में अग्नि को स्थापन करता है उसका मंत्र १

ओअयन्न इत्यस्य (अगस्त्य ऋ० — आषीन्निष्ठपृष्ठं० अग्निदेवता) १

पदार्थः — १ यह २ अग्नि ३ हमारे ४ धन को ५ संपादन करौ ६ यह अग्नि ७ संग्रामों को ८ विदीर्ण करता है आगे १० आगे ११ यह १२ अन्न विभाग के निमित्त १३ अन्नो को १४ हमें देने के लिये जीतौ १५ अत्यंत हर्षित होता १६ यह अग्नि १७ शत्रुओं को १८ जीतौ १९ उसके लिये अष्ट होम हो ॥ ३७ ॥

अथाध्यात्मम् — १ यह २ ब्रह्माग्नि ३ हमारी ४ योग लक्ष्मी को ५ संपादन करौ ६ यह ७ कामादिके संग्रामों को ८ विदीर्ण करता है सन्मुख १० आस हो ११ यह १२ योग यज्ञ के दानार्थ १३ इन्द्रिय आदि रूप अन्नो को १४ जय करौ १५ अत्यंत हर्षित १६ यह ब्रह्माग्नि १७ काम आदि शत्रुओं को १८ जीतौ १९ उसके लिये जीव रूप हवि दिया ॥ ३७ ॥

उरु विषाणो विक्रमस्वोरुक्षया यनस्कृधि । घृत
इ घृतयोनेपिवृप्रप्रयज्ञपतिन्तिरस्वाहा ॥ ३८ ॥

विष्णो॥ उरु॥ विक्रमस्व॥ क्षयाय॥ नः॥ उरु॥ कधि॥ चत० योने॥ चत०
प्रपिवा॥ यन्तपति॥ प्रतिरे॥ स्वाहा॥ ३८॥

अथाधिदैवम्— आहवनीय अग्नि में एक बार लिये हुए चत को जुहू से
होमता है उसका संज्ञ १
उंउरुविष्णवित्यस्य (अगस्त्य ऋ० भुरिगार्थनुष्टुप् छं० विष्णु दे०) १

पदार्थः— १ हे सर्व व्यापी आहवनीय २ बहुत ३ पराक्रम करौ ४ और ब्रह्म में
निवास के अर्थ ५ हम को ६ विराद भाव से संपन्न ७ करौ ८ हे अग्नि ९ चत को
१० पीवो ११ यजमान को १२ वृद्धि दो १३ उस तुम के लिये श्रेष्ठ होम हो ॥

अथाध्यात्मम्— वाक् आदि कहते हैं १ हे योगी २ ३ बड़ा पराक्रम करौ
अर्थति ससाधि करौ ४ और ब्रह्म में निवास के लिये ५ हम को ६ ब्रह्म रूप ७ क
रौ ८ हे इन्द्रियों के कारण ९ इन्द्रिय शक्ति समूह को १० पान करौ ११ आत्म
प्रति विव को १२ वृद्धि दो अर्थति समष्टि प्रति विव रूप करौ १३ महा वाक् के
प्रभाव से ॥ ३८॥

देवसवितरेषते सोमस्त ॥ रक्षस्व मात्वा दमन्
एतत्त्वन्देव सोम देवो देवा ॥ उपागा इदमहम्
नुथान सह रायस्योषेण स्वाहा निर्वरेणस्य

पाशान्मुच्ये ॥ ३९॥
सवितः॥ देवः॥ एषः॥ सोमः॥ ते॥ तं॥ रक्षस्व॥ त्वा॥ मा॥ दमन्॥ सो
मो॥ देवः॥ एततो॥ देवः॥ त्वम॥ देवान्॥ आ॥ उपागाः॥ इदम॥ अहम्
॥ रायस्योषेण॥ सह॥ मनुथान्॥ स्वाहा॥ वरुणस्य॥ पाशा॥ तानि
मुच्ये॥ ३९॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ३ मंत्र हैं उनको कहते हैं जुहू
आदि से लेकर आज्य स्थाली तक स्थापन करके उसके पीछे उन का स

श्रीआत्मस्पर्श और जलस्पर्श करके ब्राह्मण वा यजमान के सकाश से सोम को लेकर हविर्धान में प्रवेश कर फिर दक्षिण हविर्धान के नीड़ में प्राग् ग्रीवा और उत्तर लोम मृगचर्म को बिछा कर उस पर सोम को रखता है उस कामंत्र १ यजमान सोम का उपस्थान करता है उस कामंत्र २ हविर्धान मंडप से निकलने का मंत्र ३

ओं देवसवितरित्यस्य (अगस्त्य ऋ० आषी गायत्री कुं० सविता दे०) १

ओं एतत्त्वमित्यस्य (तथा ० प्राजापत्या त्रिष्टुप कुं० सोमो दे०) २

ओं स्वाहानिरित्यस्य (तथा ० याजुषी त्रिष्टुप कुं० लिङ्गोक्त दे०) ३

पदार्थः— १ हे सब के प्रेरक २ देवता ३ यह ४ सोम ५ तेरे अर्थ अर्पण किया ६ उस सोम को ७ रक्षा करौ असुर ८ तुझ सोम रक्षक को ९, १० मत पीड़ा दो ११ हे सोम १२ देव १३ यह १४ देवता १५ तुम १६ देवताओं को १७ चारों ओर से १८ प्राप्त हो जाओ १९ यह २० मैं यजमान २१ पशु आदि धन पुष्टि के २२ साथ २३ अपने मनुष्यों को प्राप्त हूँ २४ सोम रूप अन्न देवताओं के अर्थ दान हो इस सोम दान के द्वारा मैं २५ वरुण की २६ पाश से २७ निरंतर मुक्त हूँ ॥ ३९ ॥

अथाध्यात्मम्— १ हे मनु २ देवता ३ यह ४ मानस सूर्य ५ तेरे अर्पण किया ६ उस मानस सूर्य को ७ आरब्ध समाप्ति तक पालन करौ कामादि ८ तुझ को ९, १० पीड़ा मत दो ११ हे आत्म प्रतिविव १२ देव १३ यह १४ देवता १५ तुम १६ इन्द्रियों को १७ सब ओर से १८ आरब्ध समाप्ति तक प्राप्त हूँ जियै १९ यह २० मैं आत्मा २१ योग धन की पुष्टि के २२ साथ २३ सनकादि रूप गुरुओं को प्राप्त हूँ २४ महावाक् के प्रभाव से २५, २६ सार से २७ निरंतर मुक्त हूँ ॥ ३९ ॥

अग्नेव्रत पास्त्वेव्रत पायातवतू नम्य भू देवा

सात्वयियो मम तनूस्त्वय्यभूदियं सामयि। यथा
यथ नो ब्रत पते व्रतान्यनु मे दीक्षां दीक्षा पति

रुमं स्तानु तपस्तपस्पतिः॥ ४०॥

अद्वा अग्ने। व्रत पाः। अस्तु। तव। या। व्रत पाः। तनूः। मयि। अभू
त। सो। एषा। त्वयि। या। उ। मम। तनूः। त्वयि। अभूत। सो। इ
यम्। मयि। व्रत पते। नो। व्रतानि। यथा यथ। दीक्षा पतिः। मे
दीक्षां। अन्वमस्त। तपस्पतिः। तपः। अन्मै॥ ४०॥

अथाधिदैवम् - आह वनीय में समिध रख कर मदन्ती का स्पर्श क
रणाद्वतर मुष्टि मेखला को करता है उस का मंत्र १

ॐ अग्ने व्रत पा इत्यस्य (अगस्त्य ऋ० निरु द्वा ह्री विष्टु पृ० अग्नि दे०) १

पदार्थः १ हे लक्ष्मी नारायण रूप २ अग्नि तुम ३ मेरे व्रत के रक्षक ४
हो ५ आप का ६ जो ७ व्रत रक्षक ८ आत्मा प्रति विवर्ध मुझ में १० प्रकट
हुआ है ११ वह १२ यह १३ तुम में लय हो १४, १५ और जो १६ मेरा १७ आ
त्मा १८ तुम में १९ प्राप्त हुआ है २० वह २१ यह २२ मुझ में है २३ हे व्रत पा
लक २४ हम तुम दोनों के २५ कर्म २६ अपने सम्बंध को अति कमन काके
हो जिस कारण २७ दीक्षा के त्वामी तुमने २८ मेरी २९ दीक्षा को ३० अर्प
ण कर किया ३१ सब के रक्षक तुमने ३२ मेरे उपसद रूप तप को ३३ अर्पण
कर किया ॥ ४० ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे ब्रह्म पर रूप २ ब्रह्माग्नि तुम ३ योग यज्ञ के
रक्षक ४ हूजिये ५ तेरा ६ जो ७ व्रत रक्षक ८ ईश रूप ९ मुझ में १० विरा
जमान हुआ है ११ वह १२ यह १३ तुम में लय हो १४, १५ और जो १६ मेरा
१७ आत्मा १८ तुम में १९ प्राप्त हुआ है २० वह २१ यह २२ मुझ में है २३
हे योग व्रत के रक्षक ब्रह्माग्नि २४ हम तुम दोनों के २५ भक्ति पूजन और

भोक्ष दान नाम कर्म २६ अपने सम्बन्ध को अति कर्मन करके हों जिस का
 राण २७ दीक्षा पति तुमने २८ मेरे २९ योग यज्ञ की दीक्षा को ३० अंगीकार
 किया ३१ और तप के स्वामी तुमने ३२ मेरे प्राणायाम, समाधि आदि रूप-
 तप को ३३ अंगीकार किया ॥ ४० ॥

अथ पशुयागः

उरुविषाणो विक्रमस्वोरुक्षयायनस्तुधि। घृतहु
 तयोनेपिवप्रप्रयुजतपतिन्तिरुस्वाहा ॥ ४१ ॥

यूप का देने को जाना चाहता ४ वार लिये हुए घृत को आह वनीय अग्नि
 में होमता है उस का मंत्र १ इस मंत्र की व्याख्या ३८ वें मंत्र में हो चुकी ४१

अत्यन्यांश्च अगान्नान्यांश्च उपागामर्वात्का

परेभ्यो विदं स्परो वरेभ्यः। तन्त्वा जुषामहे देव

वनस्पते देव यज्यायै देवास्त्वा देव यज्यायै जुष

न्तां विषावेत्वा। ओषधे च यस्व स्वधिते मे न

हिंसी ४२

अन्यांश्च। अत्यगाम्। अन्यांश्च। न। उपागामां त्वा। परेभ्यः।

अर्वात्क। अवेरेभ्यः। परं। अविदंम्। वनस्पते। देवा। देव यज्या

यै। तां त्वा। जुषामहे। देवा। देव यज्यायै। त्वा। जुषन्तां। त्वा

विषावे। ओषधे। च यस्व। स्वधिते। एनंश्च। मा। हिंसी।

४२॥ अथाधिदैवम् = इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उन को कहते हैं

आज्य स्याली को यूप उड़ति केलिये संस्कार कर और आज्य ओष को ले कर

अर्घ्य सूत्रधार तक्षा के साथ यूप छेदन केलिये वन में जाता है यूप को

स्पर्श करता है और पूर्व मुख स्थित हो कर अभि मंत्र पा करता है उस का

मंत्र १ इस यूप वृक्ष को छेदन प्रदेश में घृत लिम खुवा से स्पर्श करता है

उसका मंत्र ३ कुश तरुण को रख कर उसके ऊपर कुठार से प्रहार करता है
 उसका मंत्र ३ यूप के कटने पर जो पहिला दुकड़ा गिरता है उस को यूप
 वट के मध्य डालने के लिये किसी सुगुप्त देश में रखता है उस का मंत्र
 ओं अत्यन्त्या नित्यस्य (अगस्त्य ऋ० भुरिग्राह्मी वृहती छं० वनस्पतिर्दि०) १
 ओं विष्णवे त्वेत्यस्य (तथा ॥ ० ॥ तथा ० ॥ तथा) २
 ओं औषध इत्यस्य (तथा ॥ ० ॥ याजुषी गायत्री छं० ॥ कुशतरुणोदे०) ३
 ओं स्वधित इत्यस्य (तथा ॥ ० ॥ देवी जगती छं० ॥ परशुर्दे०) ४
पदार्थः - हे आगे वर्त्तमान यूप वृक्ष में १ तुम्ह से अन्य वृक्षों को २ उ
 लंघन किया है ३ दूसरे यूप योग्य वृक्षों के ४ ५ समीप नही गया ६ तुम्ह को
 ७ दूर वर्त्ती वृक्षों से निकट और ८ निकटों से १० ओष्ठ ११ पाया १२ हे वृक्ष
 १३ देवता १४ देव यागार्थ १५ उस १६ तुम्ह को हम १७ सेवन करते हैं १८
 देवता भी १९ देव यजन के लिये २० तुम्ह को २१ सेवन करौ हे यूप वृक्ष २२
 तुम्ह २३ यज्ञ के लिये स्पर्श करता हूँ २४ हे औषधितुम्ह २५ वज्र भय से मुझ
 को रक्षा करौ २६ हे परशु २७ इस यूप को २८ २९ मत्त मारौ ॥ ४२ ॥
अथाध्यात्मम् - हे यजमान रूप स्थूल शरीर में १ तुम्ह से अन्य
 वृद्धतजन्मों को २ अतिक्रमण किया है ३ वर्त्तमान देह से अन्य देहों के
 ४ ५ समीप नही गया ६ तुम्ह को ७ देवता आदिके शरीरों से ८ पञ्चाङ्ग
 वता पूर्व ९ और पशु आदि से १० ओष्ठ ११ पाया १२ हे देह वृक्ष १३ दे
 वता १४ ब्रह्माग्नि के यागार्थ १५ उस १६ तुम्ह को हम १७ सेवन करते हैं
 १८ इन्द्रिया भी १९ देव यजन के लिये २० तुम्ह को २१ सेवन करौ हे देह वृक्ष
 २२ तुम्ह २३ योग यज्ञ के लिये स्पर्श करता हूँ २४ हे इन्द्रिय शक्ति समूह
 २५ ससार से रक्षा करौ २६ हे ज्ञान वज्र २७ इस भूतात्मा को २८ २९ स
 सार बंधन से मतनष्ट करौ ॥ ४३ ॥

द्याम्नालेखीरन्तरिक्षम्माहिंसीः पृथिव्या
सम्भवाश्रयं हि त्वा स्वधितिस्तेति जानः प्रणि
नायमहते सौभगाय। अतस्त्वन्देव वनस्पतेश्च
तवल्शो विरोह सहस्वल्शा विवयं रुहेम॥

॥ ४३ ॥

१ द्याम्। २ मा। ३ लेखीः। ४ अन्तरिक्षम्। ५ मा। ६ हिंसीः। ७ पृथिव्या।
८ सम्भवा। ९ हि। १० अश्रयं। ११ तेति जानः। १२ स्वधितिः। १३ महते। १४ सौभगाय
१५ त्वा। १६ प्रणिनाय। १७ वनस्पते। १८ देव। १९ अतः। २० त्वं। २१ शतवल्शः। २२ विरोह
२३ वयं। २४ सहस्वल्शाः। २५ विरुहेम॥ ४३॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उन को कहते हैं
गिरते हुए यूप को अभि मंत्रण करता है उस का मंत्र १ कुगर से छिन्न यूप
वृक्ष के पत्ते आदि को गिरा कर शोधन करता है उस का मंत्र २ आज्य स्थाली
से एक बार लिये हुए घृत को जुहू में लेकर छेदन प्रदेश में होमता है और
छेदन प्रदेश को होम से संस्कार युक्त करता है उस का मंत्र ३
ओं द्यामा लेखी रित्यस्य (अगस्त्य ऋ० निचत्साम्नी वृहती छं० वनस्पतिर्दे०) १
ओं अयमित्यस्य (तथा ० साम्नी विष्णु छं० ० तथा ०) २
ओं अतस्त्वमित्यस्य (तथा ० आपी वृहती छं० ० तथा ०) ३

पदार्थः - हे यूप वृक्ष तुम स्वर्गलोक को १३ मत स्पर्श करो अन्तरिक्ष को ५६
मत पीड़ा दो ७ पृथिवी के साथ ८ संगम करता त्वर्य यह यूप के वज्र रूप हो
ने से लोकों की शान्ति मांगता है ९ जिस कारण १० यह ११ अति तीक्ष्ण १२
कुगर १३ वड़े १४ ऐश्वर्य के लाभार्थ १५ तुम्ह को १६ यूप रूप करता है १७
१८ हे वृक्ष देवता १९ इस स्थाणु से २० तुम २१ बड़त आदुर वाले होते
२५ उपजौ और २३ हम २४ पुत्र पौत्र आदि द्वारा बड़त शारवा वाले २५ हो

वे॥ ४३॥

अथाध्यात्मम्— हे देहवृक्षतुमविराट् भाव को प्राप्त करके १ स्वर्गलो-
क को २, ३ मतस्पर्श करो ४ अंतरिक्ष को ५, ६ मतनष्ट करौ ७ विस्तार शील-
अपराप्रकृति के साथ ८ संगम करौ ९ जिस कारण १० यह ११ अति तीक्ष्ण
१२ ज्ञानवज्र १३ बड़े १४ योगैश्वर्य के लिये १५ तुम्ह को १६ कारण में प्रा-
प्त करने के लिये काटता है १७, १८ हे भूतात्मन् १९ इस प्रारब्ध से २० तुम्ह को
देऊँ भी २१ वृद्धत अंकुरवाले होते २२ प्रारब्ध समाहित क उपजौ २३ ह-
म वाक् आदि भी २४ धारणाध्यान समाधि आदि के द्वारा वृद्धत शाखावा-
ले २५ होवे॥ ४३॥

इति श्री भृगु वंशावतंस श्री नाथूराम सूनुज्वालाप्रसादश-
र्मकृते शुक्लयजुर्वेदीय ब्रह्म भाष्ये आतिथ्यात्स्थाणु होमा-
न्तस्तथाप्रतिविहोमविधिर्वर्णनं नाम पंचमोऽध्यायः॥ ५॥
सोमसम्बन्धी वेदी जिसमें प्रधान है, उस पांचवीं अध्याय में आतिथ्य से
लेकर यूपनिर्मित क मंत्र कहे, अब जिसमें अग्नीषोमीय पशुप्रधान है
उस छठी अध्याय में यूप संस्कार से लेकर सोमभिषव के उद्योग तक
कहते हैं॥

हरिः ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवे श्विनो वृद्धभ्या-
म्पूषो हस्ताभ्याम् । आदेदे नार्यसी दमहं रक्ष-
साद्रीवा अपि कृन्तामि । यवोसियव यास्मद्वेपो-
यवयार तीर्दिवेत्वान्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वा-
सुन्धन्तां लोकाः पितृष देनाः पितृष देनमसि १
पांचवीं अध्याय में २६ कंडिका के मध्य इस मंत्र की व्याख्या की वहां
लिंगशरीर का संस्कार था यहां तौ स्थूलशरीर का संस्कार वर्णन होता है

अग्नेणी रसि स्वावेश उन्नेत्तृणा मेतस्य वित्ताद
धित्वा स्या स्यति देव स्त्वा सविता मध्वानक्तु
सुपिप्पलाभ्यस्त्वौ षधीभ्यः । द्यामग्नेणा स्पृ
क्षन्त रिक्षममध्ये ना प्राः पृथिवी सुपरेणा

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १०० १०१ १०२ १०३ १०४ १०५ १०६ १०७ १०८ १०९ ११० १११ ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ ११८ ११९ १२० १२१ १२२ १२३ १२४ १२५ १२६ १२७ १२८ १२९ १३० १३१ १३२ १३३ १३४ १३५ १३६ १३७ १३८ १३९ १४० १४१ १४२ १४३ १४४ १४५ १४६ १४७ १४८ १४९ १५० १५१ १५२ १५३ १५४ १५५ १५६ १५७ १५८ १५९ १६० १६१ १६२ १६३ १६४ १६५ १६६ १६७ १६८ १६९ १७० १७१ १७२ १७३ १७४ १७५ १७६ १७७ १७८ १७९ १८० १८१ १८२ १८३ १८४ १८५ १८६ १८७ १८८ १८९ १९० १९१ १९२ १९३ १९४ १९५ १९६ १९७ १९८ १९९ २०० २०१ २०२ २०३ २०४ २०५ २०६ २०७ २०८ २०९ २१० २११ २१२ २१३ २१४ २१५ २१६ २१७ २१८ २१९ २२० २२१ २२२ २२३ २२४ २२५ २२६ २२७ २२८ २२९ २३० २३१ २३२ २३३ २३४ २३५ २३६ २३७ २३८ २३९ २४० २४१ २४२ २४३ २४४ २४५ २४६ २४७ २४८ २४९ २५० २५१ २५२ २५३ २५४ २५५ २५६ २५७ २५८ २५९ २६० २६१ २६२ २६३ २६४ २६५ २६६ २६७ २६८ २६९ २७० २७१ २७२ २७३ २७४ २७५ २७६ २७७ २७८ २७९ २८० २८१ २८२ २८३ २८४ २८५ २८६ २८७ २८८ २८९ २९० २९१ २९२ २९३ २९४ २९५ २९६ २९७ २९८ २९९ ३०० ३०१ ३०२ ३०३ ३०४ ३०५ ३०६ ३०७ ३०८ ३०९ ३१० ३११ ३१२ ३१३ ३१४ ३१५ ३१६ ३१७ ३१८ ३१९ ३२० ३२१ ३२२ ३२३ ३२४ ३२५ ३२६ ३२७ ३२८ ३२९ ३३० ३३१ ३३२ ३३३ ३३४ ३३५ ३३६ ३३७ ३३८ ३३९ ३४० ३४१ ३४२ ३४३ ३४४ ३४५ ३४६ ३४७ ३४८ ३४९ ३५० ३५१ ३५२ ३५३ ३५४ ३५५ ३५६ ३५७ ३५८ ३५९ ३६० ३६१ ३६२ ३६३ ३६४ ३६५ ३६६ ३६७ ३६८ ३६९ ३७० ३७१ ३७२ ३७३ ३७४ ३७५ ३७६ ३७७ ३७८ ३७९ ३८० ३८१ ३८२ ३८३ ३८४ ३८५ ३८६ ३८७ ३८८ ३८९ ३९० ३९१ ३९२ ३९३ ३९४ ३९५ ३९६ ३९७ ३९८ ३९९ ४०० ४०१ ४०२ ४०३ ४०४ ४०५ ४०६ ४०७ ४०८ ४०९ ४१० ४११ ४१२ ४१३ ४१४ ४१५ ४१६ ४१७ ४१८ ४१९ ४२० ४२१ ४२२ ४२३ ४२४ ४२५ ४२६ ४२७ ४२८ ४२९ ४३० ४३१ ४३२ ४३३ ४३४ ४३५ ४३६ ४३७ ४३८ ४३९ ४४० ४४१ ४४२ ४४३ ४४४ ४४५ ४४६ ४४७ ४४८ ४४९ ४५० ४५१ ४५२ ४५३ ४५४ ४५५ ४५६ ४५७ ४५८ ४५९ ४६० ४६१ ४६२ ४६३ ४६४ ४६५ ४६६ ४६७ ४६८ ४६९ ४७० ४७१ ४७२ ४७३ ४७४ ४७५ ४७६ ४७७ ४७८ ४७९ ४८० ४८१ ४८२ ४८३ ४८४ ४८५ ४८६ ४८७ ४८८ ४८९ ४९० ४९१ ४९२ ४९३ ४९४ ४९५ ४९६ ४९७ ४९८ ४९९ ५०० ५०१ ५०२ ५०३ ५०४ ५०५ ५०६ ५०७ ५०८ ५०९ ५१० ५११ ५१२ ५१३ ५१४ ५१५ ५१६ ५१७ ५१८ ५१९ ५२० ५२१ ५२२ ५२३ ५२४ ५२५ ५२६ ५२७ ५२८ ५२९ ५३० ५३१ ५३२ ५३३ ५३४ ५३५ ५३६ ५३७ ५३८ ५३९ ५४० ५४१ ५४२ ५४३ ५४४ ५४५ ५४६ ५४७ ५४८ ५४९ ५५० ५५१ ५५२ ५५३ ५५४ ५५५ ५५६ ५५७ ५५८ ५५९ ५६० ५६१ ५६२ ५६३ ५६४ ५६५ ५६६ ५६७ ५६८ ५६९ ५७० ५७१ ५७२ ५७३ ५७४ ५७५ ५७६ ५७७ ५७८ ५७९ ५८० ५८१ ५८२ ५८३ ५८४ ५८५ ५८६ ५८७ ५८८ ५८९ ५९० ५९१ ५९२ ५९३ ५९४ ५९५ ५९६ ५९७ ५९८ ५९९ ६०० ६०१ ६०२ ६०३ ६०४ ६०५ ६०६ ६०७ ६०८ ६०९ ६१० ६११ ६१२ ६१३ ६१४ ६१५ ६१६ ६१७ ६१८ ६१९ ६२० ६२१ ६२२ ६२३ ६२४ ६२५ ६२६ ६२७ ६२८ ६२९ ६३० ६३१ ६३२ ६३३ ६३४ ६३५ ६३६ ६३७ ६३८ ६३९ ६४० ६४१ ६४२ ६४३ ६४४ ६४५ ६४६ ६४७ ६४८ ६४९ ६५० ६५१ ६५२ ६५३ ६५४ ६५५ ६५६ ६५७ ६५८ ६५९ ६६० ६६१ ६६२ ६६३ ६६४ ६६५ ६६६ ६६७ ६६८ ६६९ ६७० ६७१ ६७२ ६७३ ६७४ ६७५ ६७६ ६७७ ६७८ ६७९ ६८० ६८१ ६८२ ६८३ ६८४ ६८५ ६८६ ६८७ ६८८ ६८९ ६९० ६९१ ६९२ ६९३ ६९४ ६९५ ६९६ ६९७ ६९८ ६९९ ७०० ७०१ ७०२ ७०३ ७०४ ७०५ ७०६ ७०७ ७०८ ७०९ ७१० ७११ ७१२ ७१३ ७१४ ७१५ ७१६ ७१७ ७१८ ७१९ ७२० ७२१ ७२२ ७२३ ७२४ ७२५ ७२६ ७२७ ७२८ ७२९ ७३० ७३१ ७३२ ७३३ ७३४ ७३५ ७३६ ७३७ ७३८ ७३९ ७४० ७४१ ७४२ ७४३ ७४४ ७४५ ७४६ ७४७ ७४८ ७४९ ७५० ७५१ ७५२ ७५३ ७५४ ७५५ ७५६ ७५७ ७५८ ७५९ ७६० ७६१ ७६२ ७६३ ७६४ ७६५ ७६६ ७६७ ७६८ ७६९ ७७० ७७१ ७७२ ७७३ ७७४ ७७५ ७७६ ७७७ ७७८ ७७९ ७८० ७८१ ७८२ ७८३ ७८४ ७८५ ७८६ ७८७ ७८८ ७८९ ७९० ७९१ ७९२ ७९३ ७९४ ७९५ ७९६ ७९७ ७९८ ७९९ ८०० ८०१ ८०२ ८०३ ८०४ ८०५ ८०६ ८०७ ८०८ ८०९ ८१० ८११ ८१२ ८१३ ८१४ ८१५ ८१६ ८१७ ८१८ ८१९ ८२० ८२१ ८२२ ८२३ ८२४ ८२५ ८२६ ८२७ ८२८ ८२९ ८३० ८३१ ८३२ ८३३ ८३४ ८३५ ८३६ ८३७ ८३८ ८३९ ८४० ८४१ ८४२ ८४३ ८४४ ८४५ ८४६ ८४७ ८४८ ८४९ ८५० ८५१ ८५२ ८५३ ८५४ ८५५ ८५६ ८५७ ८५८ ८५९ ८६० ८६१ ८६२ ८६३ ८६४ ८६५ ८६६ ८६७ ८६८ ८६९ ८७० ८७१ ८७२ ८७३ ८७४ ८७५ ८७६ ८७७ ८७८ ८७९ ८८० ८८१ ८८२ ८८३ ८८४ ८८५ ८८६ ८८७ ८८८ ८८९ ८९० ८९१ ८९२ ८९३ ८९४ ८९५ ८९६ ८९७ ८९८ ८९९ ९०० ९०१ ९०२ ९०३ ९०४ ९०५ ९०६ ९०७ ९०८ ९०९ ९१० ९११ ९१२ ९१३ ९१४ ९१५ ९१६ ९१७ ९१८ ९१९ ९२० ९२१ ९२२ ९२३ ९२४ ९२५ ९२६ ९२७ ९२८ ९२९ ९३० ९३१ ९३२ ९३३ ९३४ ९३५ ९३६ ९३७ ९३८ ९३९ ९४० ९४१ ९४२ ९४३ ९४४ ९४५ ९४६ ९४७ ९४८ ९४९ ९५० ९५१ ९५२ ९५३ ९५४ ९५५ ९५६ ९५७ ९५८ ९५९ ९६० ९६१ ९६२ ९६३ ९६४ ९६५ ९६६ ९६७ ९६८ ९६९ ९७० ९७१ ९७२ ९७३ ९७४ ९७५ ९७६ ९७७ ९७८ ९७९ ९८० ९८१ ९८२ ९८३ ९८४ ९८५ ९८६ ९८७ ९८८ ९८९ ९९० ९९१ ९९२ ९९३ ९९४ ९९५ ९९६ ९९७ ९९८ ९९९ १०००

उन्नेत्तृणाम् । स्वावेशः । अग्नेणीः । अग्निः । एतस्य । वित्तात् ।
त्वा । अधि । स्यास्यति । सविता । देवः । मध्वान् । त्वौ । अनक्तु ।
सुपिप्पलाभ्यः । ओषधीभ्यः । त्वा । अग्नेण । द्या । अस्पृक्षः ।
मध्येन । अन्तरिक्षम् । ओ । अप्रोः । उपरेण । पृथिवीम् । अ
हं हीः ॥ २ ॥

अथाधिदैवम् — इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उन को कहते हैं, यूप
के अवद (गाढेले) में प्रथम शकल (यूपारवंड) को डालता है उस का मंत्र
१ यत् से यूप को सार्जित करता है उस का मंत्र २ ऊपर द्यत से लिस चषा
ल (काष्ठ वालोहे का कड़ा जिस से पशु बांधा जाता है) को यूपग्र पर
स्थापन करता है उस का मंत्र ३ उस यूप को उच्चा करता है उस का मंत्र ४
ओं अग्नेणी रित्यस्य (शाकल्य ऋ० निच द्वायत्री छं० शकलो दे०) १
ओं देवस्त्वेत्यस्य (तथा ० याजुषी पंक्तिष्कं० यूपो दे०) २
ओं सुपिप्पलाभ्यस्त्वेत्यस्य (तथा ० याजुषी वृहती छं० चाशालो दे०) ३
ओं द्यामित्यस्य (तथा ० निच द्वायत्री छं० यूपो दे०) ४

पदार्थ — हे यूप शकल तुम १ उठाने वाले अध्वर्यों की २ सुरव
पूर्वक प्रवेश करने के योग्य तथा ३ कदते यूप से प्रथम प्राप्त होने वाली
अथवा प्रथम यूप के अवद में प्राप्त होने वाली ४ द्यौ वृह तुम ५ इस कर्म
को ६ जानों जो यूप ७ तेरे ८ ऊपर ९ स्थिति करेगा हे यूप १० सविता ११

देवता १२ मधुर घृत से १३ तुम्हें १४ सींचो हे त्रपाल १५ शुभ फल युक्त १६ ओषधियों के लिये १७ तुम्हें को घूम के आगे छोड़ता हूं हे यूपतम ने १८ अग्र भाग से १९ स्वर्ग को २० स्पर्श किया है २१ मध्य भाग से २२ अंतरिक्ष को २३ चारों ओर से २४ पूर्ण किया है २५ अघो भाग से २६ पृथिवी को २७ दृढ़ किया है ॥२॥

अथाध्यात्मम् - हे सूक्ष्म शरीर तुम्हें १ वाग् आदि ऋत्विजों के द्वारा २ अपरा में मंत्र पूर्वक प्रवेश करने योग्य प्रधान में प्राप्त होने वाले ४ होवह तुम्हें ५ दस कर्म को ६ जानों जो स्थूल शरीर ७ तुम्हें ८ आगे करके ९ प्रकृति में स्थिति करेगा हे यजमान रूप स्थूल शरीर १०, ११ ज्ञान प्रकाश से युक्त मन १२ इन्द्रिय शक्ति समूह के द्वारा १३ तुम्हें १४ सींचो हे मन १५ शुभ फल से युक्त १६ इन्द्रिय शक्ति समूह के लिये १७ तुम्हें छोड़ता हूं हे स्थूल शरीर तुम्हें १८ शिर से १९ स्वर्ग को २० स्पर्श किया २१ शरीर के मध्य भाग से २२ अंतरिक्ष को २३ चारों ओर से २४ पूर्ण किया है २५ अघो भाग से २६ पृथिवी को २७ दृढ़ किया है अर्थात् विराट् भाव को प्राप्त किया है ॥२॥

याते धामान्युग्रमसिगमद्वेयत्र गावो भूरिष्टङ्गा
अयासः। अत्राह तदुरु गायस्य विष्णोः परमम्पु
दमवभारि भूरि। ब्रह्म वनि त्वाक्षत्र वनि रायस्यो
षवनि पर्यूहामि ब्रह्म दत्तं हस्तं दत्तं हायुर्दत्तं
ह प्रजान् दत्तं ह। ३।
या। ते। धामानि। सिगमद्वेयः। उग्रमः। यत्र। भूरिष्टङ्गाः। गावः।
अयासः। अत्र। उरु गायस्य। विष्णोः। परमम्। पदम्। आह।
तत्। भूरि। अमवभारि। ब्रह्म वनिः। क्षत्र वनिः। रायस्योषवनिः।
त्वा। पर्यूहामि। ब्रह्म दत्तं ह। क्षत्रं दत्तं ह। आयुः। दत्तं ह।
प्रजाम्। दत्तं ह॥ ३॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ३ मंत्र हैं उनको कहते हैं अवट के मध्य यूप की जड़ को प्रवेश करता है उसका मंत्र १ अर्धयुग्यूप के अवट को धूल से भरता है और मैत्रा बरुण नाम दंड से उस धूल भरे गढ़ले को कूट कर पक्का करता है उसके मंत्र २, ३

ओं यात इत्यस्य (दीर्घतमा ऋ० त्रिष्टुप् छ० ० यूपो दे०) १

ओं अत्रा हेत्यस्य (तथा ० साम्युष्णिक् छ० ० तथा) २

ओं ब्रह्म वनि त्वेत्यस्य (तथा ० निचृत्वाजा पत्या वहती छ० तथा) ३

पदार्थः - हे यूप १ जो २ तेरे ३ तेज ४ विष्णु में ५ लय करने के लिये ६ हम चाहते हैं ७ जिस विष्णु में ८ वद्धत प्रज्वलित ९ किरणों १० हैं ११ इस वैष्णव ज्योति में १२ महात्माओं से स्तुति किये हुए १३ विष्णु के १४ उत्कृष्ट १५ प्राप्ति स्थान ब्रह्म को १६ कहते हैं १७ वह १८ वद्धत प्रकार से १९ प्रकाश करता है हे यूप २० ब्राह्मणों से स्वीकार योग्य २१ क्षत्रियों से चाहने योग्य २२ धन पुष्टि के अर्थ स्वीकृत २३ तुम्हें पर २४ चारों ओर से मिट्टी डालता हूँ हे यूप २५ ब्राह्मण जाति को २६ दृढ़ कर २७ क्षत्री जाति को २८ यज्ञकर्म में दृढ़ कर २९ जीवन को ३० दृढ़ कर ३१ पुत्र आदि सन्तान को ३२ दृढ़ कर ॥ ३॥

अथाध्यात्मम् - हे स्थूल शरीर १ जो २ तेरे ३ मन बुद्धि प्राण जीवरूप तेज हैं हम उन को ४ विष्णु में ५ लय करने के लिये ६ चाहते हैं ७ जिस विष्णु में ८ वद्धत ज्वालामान ९ किरणों १० हैं ११ इस वैष्णव ज्योति में १२ महात्माओं से स्तुत १३ विष्णु के १४, १५ परमपद अर्थात् ब्रह्म को १६ कहते हैं १७ वह १८ वद्धत प्रकार से १९ प्रकाश करता है हे स्थूल शरीर २० मन से स्वीकृत २१ प्राण से स्वीकृत २२ योगैश्वर्य सिद्धि के लिये स्वीकृत २३ तुम्हें २४ स्थिर करता हूँ हे स्थूल शरीर तुम्हें २५ मम को २६ दृढ़ करौ २७ प्राण को २८ दृढ़ करौ २९ आरब्ध समाप्ति तक जीवन को ३० दृढ़ करौ ३१ इन्द्रियों को ३२ दृढ़ करौ ॥ ३॥

विष्णोः कर्माणि पश्यतु यतो व्रतानि पस्पशे ।

इन्द्रस्य युज्यः सुरवा ४

विष्णोः । कर्माणि । पश्येत् । यतः । इन्द्रस्य । युज्यः । सुरवा ।
व्रतानि । पस्पशे ॥ ४ ॥

पदार्थः

— उस अथर्व को कूटने से भूमि के समान कर लौकिक जलों से
सींच कर यूप स्पर्श करने वाले यजमान को कहलाता है उसका मंत्र १
ॐ विष्णोरित्यस्य (मेधातिथिर्ऋ० निचृदाषी गायत्री छं० विष्णुर्दे०) १
हे ऋत्विजो वा वाक् आदि १ विष्णु के २ स्थिति संहार आदि कर्मों को ३ देखो ४ जि
स कारण ५ यजमान के ६ संयोग योग्य ७ मंत्र उस विष्णु ने ८ द्रव्ययुक्त और ज्ञा
न यज्ञ नाम कर्मों को ९ अपने भक्त के मोक्षार्थ निर्माण किया ॥ ४ ॥

तद्विष्णोः परममृदं ७ सदा पश्यन्ति सूर

यः । दिवी वचुस्तुराततम् ५

सूरयः । विष्णोः । तेत । परमम् । पदं ७ । सदा । पश्यन्ति । इ
वा दिवि । आततम् । चक्षुः ॥ ५ ॥

अथर्व्युचपाल देखते यजमान को कहलाता है उसका मंत्र १
ॐ तद्विष्णोरित्यस्य (मेधातिथिर्ऋ० निचृदाषी गायत्री छं० विष्णुर्दे०) १
पदार्थः १ वेदान्त पार गामी विद्वानयोगीजन २ विष्णु के ३ उस ४ उत्कृष्ट ५ प
द अर्थात् प्राप्ति योग्य ब्रह्म को ६ सब काल वा सब अवस्था में ७ ज्ञान दृष्टि से देखते
हैं ८ जैसे ९ मानस कमल वा स्वर्ग में १० व्यास ११ मानस सूर्य वा विराट् आलास
र्य को प्रत्यक्ष देखते हैं ॥ ५ ॥

परिवीरसि परित्वा दैवी विशो व्ययन्ताम्परी

मं यजमान ७ रायो मनुष्याणाम् । दिवः सूर

स्योषते पृथिव्यां लोक आरुण्यस्ते पशुः ॥ ६ ॥

परिवीः। असिः। देवीः। विशः। त्वः। परिव्युयन्ताम्। मनुष्याणां। रायुः। इमं
यजमानं॥ परिः। दिवः। सूनः। असिः। एधिव्या। एषाते। लो
कः। आरण्यः। पशुः। ते॥ ६॥

अथाधिदेवम्— इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उनको कहते हैं, तीन ल-
डवाली कुशा की रस्सी से यूप के नाभि प्रदेश में तीन लपेट देता है उसका मंत्र
१ अष्टकोण यूप का जो आग्नेय कोण है उसके उत्तर भाग पर रस्सी में स्वरुना-
म शकल को प्रवेश करता है उसका मंत्र २ बर्षिष्ठ यूप के दक्षिण भाग में विना
झिले बारहवें यूप को स्थापन करता है गाड़ता नहीं उसका मंत्र ३

ओं परिवीरित्यस्य (दीर्घतमा ऋ० प्राजापत्या विष्टुष्व० यूपो दे०) १

ओं दिवः सूनरसीत्यस्य (तथा ० देवी विष्टुष्व० स्वरुदे०) २

ओं एषत इत्यस्य (तथा ० साम्युष्णिक० यूपो दे०) ३

पदार्थः— हे यूप तुम १ चारों ओर रस्सी से वेष्टित अथवा हमसे परिवारि-
त धिरे डए) २ हौ ३ देवता सम्बन्धी ४ मरुत् गण आदि प्रजा अथवा पशु पतु-
भ को ६ चारों ओर से चेरौ ७ मनुष्य सम्बन्धी ८ धन ९ इस १० यजमान को ११
चारों ओर से व्याप्त करौ हे स्वरु तुम १२ स्वर्गलोक के १३ पुत्र १४ हौ हे यूप १५
एधिवी पर १६ यह १७ तेरा १८ आश्रय स्थान है १९ विन सम्बन्धी २० पशु २१
तेरा ही है ॥ ६॥

अथाध्यात्मम्— हे स्थूल शरीर तुम १ हम वारु आदि ऋत्विजों से-
परिवारित २ हौ ३ यजमान सम्बन्धी ४ प्राण जो कि श्रुति प्रमाण से पशु रूप हैं
५ तुम को ६ व्याप्त करौ ७ सन कादि ऋषियों के ८ योगै श्रुत्य ९ इस १० यज-
मान रूप आत्मा को ११ चारों ओर से वेष्टन करौ हे मन तुम १२ मानस कम-
० स्वर्गलोक से वर्षा होती है उससे यूप उत्पन्न होता है यूप से स्वरु इस-
लिये स्वरु को स्वर्गका पुत्र कहा ॥

ल के १३ पुत्र १४ हौ हे स्थूल शरीर १५ पृथिवी पर १६ यद्वा भारत वर्षनाम कर्म भू
मि १७ तेरा १८ आश्रय स्थान है १९ वान प्रस्थ धर्म में तत्पर २० इन्द्रिय समूह
२१ तेरा ही है ॥ ६ ॥

उपावीरस्युपदेवान्देवीविंशः प्रागुरुशिजोव
ह्निमान्। देवत्वपूर्वसुरमहव्यातेस्वदन्ताम् १
उपावीः। असौ। देवीविंशः। उशिजः। वृंहितमान्। देवा-
न्। उपप्रागुः। देव। त्वष्टः। वसुः। रमा। तौ। इव्यौ। स्वदन्ताम् २
अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उनको कहते हैं तृण

लेकर उससे पशु को स्पर्श करता है उसके मंत्र १ से ४ तक ॥

ॐ उपवीरित्यस्य (मेधातिथिर्ऋ० देवी पंक्तिश्छं० तृणं दैवतं) १

ॐ उपदेवानित्यस्य (तथा निचत्साम्नी वृहती छं० लिङ्गोक्तदे०) २

ॐ देवेत्यस्य (तथा प्राजापत्या गायत्री छं० त्वष्टा दे०) ३

ॐ इव्यादित्यस्य (तथा देवी त्रिष्टुप् छंद० पशुर्दे०) ४

पदार्थः हे तृण विशेष तुम १ समीप में रक्षक और पशु के दूसरे सरवार
हो २ पशु जो हैं वे ४ मेधावी अथवा हविचाहने वाले ५ यजमान के स्वर्ग दा
ता देवताओं में श्रेष्ठ तुम ६ अग्नीषोम आदि देवताओं को ७ प्राप्त हो ८
हे त्वष्टा देवता तुम १० पशु लक्षण धन से ११ रमन करौ हे पशु १२ तेरे १३
हवि १४ स्वादु युक्त हो ॥ ७ ॥

अथाध्यात्मम् - हे सुषुम्ना तुम १ समीप में रक्षक और आत्म प्रति
विव की सरखी २ हौ ३ योगी के प्राण ४ हम इतना चाहने वाले ५ श्रेष्ठ अग्नि रूप ६
ज्योति स्वरूप परानर नारायण को ७ प्राप्त हो ८ हे ईश्वर तुम १० आत्म प्रति
धीन रोम आरस आदि जितने मानुष देश हैं उन सबके समूह को भारत वर्ष कहते
हैं अन्य ऋषि और ऋषिपुत्र इत्येक हैं जैसे आकाश में तारा गण ॥

विवरूप धन में ११ रमन करौ हे भूतात्मन् १२ तेरी १३ इन्द्रियां १४ स्वादु युक्त हों ॥ ७ ॥

रेवती रमद्धमृहस्पते धारयावसूनि । ऋतस्य
त्वा देव हविः पाशेन प्रति मुञ्चामि धर्षामानुषः ८
रेवतीः । रमध्वम् । वृहस्पते । वसूनि । रया । धा । देव हविः ।
ऋतस्य । पाशेन । त्वा । प्रति मुञ्चामि । अ । मानुषः । धर्षा ८

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं उन को कहते हैं दो व्या-
मलम्बी दुलडी कुशा की रस्सी से नाग पाश बना कर पशु के सींगों में बांधता
है और आदि अंत में प्रार्थना करता है उसके मंत्र ॥ १२ ॥
ॐ रेवती रमध्वमित्यस्य (दीर्घतमा ऋ० प्राजापत्यानुष्टुप छं० वृहस्पतिर्दे०) १
ॐ ऋतस्य त्वेत्यस्य (तथा ० निवृत्त्याजापत्या वृहती छं० पशुर्दे०) २

पदार्थः - १ हे क्षीर आदि धन वाली गौओ २ यजमान के गृह में भले प्रकार
रकीड़ा करौ ३ हे ब्रह्मांड के स्वामी महा नारायण ४ पशुओं को ५ धन द्वारा ६
पोषण करौ ७ हे देवताओं के हविरूप पशु ८ फल रूप होने से सत्य रूप
जोयज्ञ है उसकी ९ पाश से १० तुम को ११ बांधता हूं १२ काम रूप १३ देह
भिमानी १४ तेरा शमिता है ॥ ८ ॥

अथाध्यात्मम् - हे शमदम आदि धन से युक्त इन्द्रियो २ आत्म
रूप यजमान के शरीर में कीड़ा करौ ३ हे महा विष्णु ४ प्राण और इन्द्रियो
को ५ योग लक्ष्मी से ६ पोषण करौ ७ हे भूतात्मन् ८ योग यज्ञ के ९ पा
श से १० तुम को ११ बांधता हूं १२ विष्णु रूप १३ प्राण भिमानी देवता
१४ तेरा शमिता है ॥ ८ ॥

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेश्विनो वह्नभ्याम्पू
षा इस्ताभ्याम् । अग्नीषोमाभ्याञ्जुष्टुनियु

नज्मि। अद्भ्यस्त्वौषधीभ्यो नुत्वा माता मन्यतामनु
पितानुभ्राता सगर्भ्यो नु सर्वा सयूथ्यः। अग्नीषो
माभ्यां नुत्वा जुष्टम्यो क्षामि॥ ६॥

सवितुः। देवस्य। प्रसूवौ। अग्नीषोमाभ्याम्। जुष्टम्। त्वौ। अश्वि
नोः। वाहभ्याम्। पूषाः। इस्ताभ्याम्। नियुनज्मि। अग्नीषो
माभ्याम्। जुष्टम्। त्वौ। अद्भ्यः। औषधीभ्यः। प्रोक्षामि। त्वौ।
माता। अनुमन्यताम्। पिता। अनु। सगर्भ्यः। भ्राता। अनु।
सयूथ्यः। सर्वा। अनु॥ ६॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं, यूप से पशु को बांधता
है उसका मंत्र १ संस्कार किये हुए जलों से पशु को प्रोक्षण करता है उ-
सका मंत्र २ अद्भ्यस्त्वौषधीभ्यो नुत्वा माता मन्यतामनु
ओं देवस्य त्वेत्यस्य (दीर्घतमा ऋ० भुरिगाची पक्ति ऋ० लिङ्गोक्त दे०) १
ओं अद्भ्यस्त्वेत्यस्य (तथा ० आषी पक्ति ऋ० पशुर्दे०) २

पदार्थः— हे पशु १ सविता २ देवता की ३ आज्ञा होने पर ४ अग्नीषोम
देवताओं के लिये ५ प्रिय द्रुतम् को ६ अश्विनी कुमारों की ७ वाह भाव को
प्राप्त अपनी भुजाओं और ८ पूषा देवता के ९ इस्त भाव को प्राप्त अपने हा
थों से १० बांधता हूँ हे पशु ११ अग्नीषोम देवताओं के अर्घ्य १२ प्रिय १३ द्रु-
तम् को १४ जल और औषधियों से १५ प्रोक्षण करता हूँ इस प्रकार प्रोक्षित १६
तुम्हें १७ पृथिवी १८ आज्ञा दो १९ स्वर्ग २० आज्ञा दो २१ सहोदर २२ भा
ई २३ आज्ञा दो २४ २५ समान यूथ वाला सुहृद् २६ आज्ञा दो॥ ६॥

अथाध्यात्मम्— प्रति विव के होम से पहले भूतात्मा के होम को
कहते हैं। हे भूतात्मन् १२ गुरु देव की ३ आज्ञा में वर्तमान में ४ प्रकृति प
रुष के लिये ५ प्रिय द्रुतम् को ६ मन हृदय की ७ ग्रहण शक्तियों ८ और

मानसं सूर्य की १० ग्रहण शक्तियों से ११ निश्चल करता हूँ हे भूतात्मन् १२ प्रकृति पुरुष के लिये १३ म्रिय १४ तुम्ह को १५ १६ ज्योति रस रूप जल और जन्म रूप रोग नाश कान्ता न स्वरूपी औषधियों से १७ प्रोक्षण करता हूँ इस प्रकार प्रोक्षित १८ तुम्ह को १९ प्रकृति २० आन्ता दो २१ पुरुष २२ आन्ता दो २३ २४ सहोदर भाई अर्थात् जीवात्मा २५ आन्ता दो २६ २७ समान यूथ वाला सर्वा अर्थात् ईश २८ आन्ता दो ॥ ९ ॥

अपाम्पेरुरस्या पो देवीः स्वदन्तु स्वात्तज्चित्स

देव हविः । सन्ते प्राणो वातेन गच्छता १० समं

द्रानि यजत्रैः संयन्तु पतिराशिषा ॥ १० ॥

अपाम्पेरुरः । असि । देवीः । आपः । स्वदन्तु । देव हविः । स्वात्तम । सत । चित । ते । प्राणः । वातेन । सुगच्छताम् । अद्रानि । यजत्रैः । सं । यन्तु पतिः । आशिषा । सं ॥ १० ॥

अथाधिदैवम्- इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उन को कहते हैं पशु के मुख के नीचे लगी हुई प्रोक्षणी को पान के लिये रखता है उसका मंत्र १ पशु के वदर और हृदय प्रदेश में प्रोक्षण करता है उसका मंत्र २ उत्तर चार होम के पीछे धुवा समज्जन से पहले पशु के ललाट दोनों स्कंध और दक्षिणे तर कटि को जुहू में स्थित घृत से मार्जन करता है उसका मंत्र ३

ओं आपाम्पेरुरित्यस्य (मेधातिथिर्जट० याजुषी गायत्री छं० पशुर्दे०) १

ओं आपो देवी रित्यस्य (तथा ० आसुरी गायत्री छं० आपो दे०) २

ओं सत इत्यस्य (तथा ० भुरिगार्च्यनुष्टुप छं० पशुर्दे०) ३

पदार्थः- हे पशु तुम १ जलों के २ पीने वाले ३ हो ४ दीप्यमान ५ ज्योतिरस अमृतरूप जल तुम्ह को ६ भले प्रकार भक्षण करौ ७ जिस कारण ८ देवताओं का हवि ९ अच्छा भक्षित होता १० चिद्रूप अर्थात् मुक्त होता है हे प

सु ११ तेरा १२ प्राण १३ समष्टि प्राण से १४ संयोग को पाओ १५ तेरे अंग १६ देव
ताओं से १७ संयोग को पाओ १८ यजमान १९ यज्ञफल से २० संयोग को पाओ १०

अथाध्यात्मम् - हे भूतात्मन् तुम १ ब्रह्मज्योतिरस अमृत के २ पान
करने वाले ३ हो ४ ब्रह्मज्योतिरस रूप ५ जल तुम को ६ भक्षण करौ जिस का
रणा ७ ईश का हवि ८ अच्छा भक्षित होता ९ ब्रह्म रूप होता है हे भूतात्म
न् ११ तेरा १२ प्राण १३ समष्टि प्राण से १४ संयोग को पाओ १५ तेरे अंग १६
देवताओं से १७ संयोग को पाओ १८ आत्मा रूप यजमान १९ योग यज्ञ के फ
ल से २० संयोग को पाओ ॥ १० ॥

घृतेना॑क्तौ॒ प॒शू॒ ॥ १ ॥ स्वा॒येया॒ ॥ रेव॑ति॒ यज॑माने
प्रि॒यन्धा॑ आ॒विश॑ उ॒रो र॑न्त॒ रिक्सा॑त्स॒जूर्दे॒वेन॑ वा॒ते
ना॒स्य ह॒विष॑ स्त॒मना॑ य॒ज्ञस॑म॒स्य त॒न्वा भ॒व। वर्षी॑
वर्षी॑ य॒सि य॒ज्ञो य॒ज्ञ प॑ति॒न्धाः स्वाहा॑ दे॒वेभ्यो॑ दे॒वे
भ्यः॑ स्वाहा॑ ॥ ११ ॥

घृतेन॑। अ॒क्तौ॒। प॒शून्॒। ना॒येया॑म्। रेव॑ति॒। यज॑माने॒। प्रि॒यम्
। धाः॑। दे॒वेन॑। वा॒तेन॑। स॒जूर्। उ॒रो। अ॒न्त॒रिक्सा॑त्। आ॒विश॑।
अ॒स्य॑। ह॒विष॑ स्त॒मना॑। य॒ज्ञो। अ॒स्य॑। त॒न्वा। स॒म्भ॒व। वर्षी॑। वर्षी॑
य॒सि। य॒ज्ञो। य॒ज्ञो प॑ति॒न्धाः॑। दे॒वेभ्यः॑। स्वाहा॑। दे॒वेभ्यः॑। स्वाहा॑
॥ ११ ॥

अथाधिदैवम् - इसकांडिका में ५ मंत्र हैं उनको कहते हैं
शमिता से दी हुई शास (कदारी) को लेकर आप ही घूप से स्वरु को लेकर स्व
र्ग और स्वरु को जुहू के अग्र में घृत से लिस कर उन दोनों से पशु के ललाट का
स्पर्श करता है उसका मंत्र १ यजमान को कहलाता है वह मंत्र २ शमित्र क
र्म के पीछे पूर्वाग्र एक तृण को पटकता है उसका मंत्र ३ फिर अर्धयु वसा हो
म हवनी में एक बार ग्रहण किये हुए घृत को लेकर आहवनीय में होमता है

उसके मंत्र ४, ५

ओं घृतेनाक्तावित्यस्य (मेधातिथि ऋ० याजुष्यनुष्टुप् छं० स्वरुशासौ देवते) १

ओं रेवतीत्यस्य (तथा ० ब्राह्म्युषिणक् छं० वाक् दे०) २

ओं वर्षट्वात्यस्य (तथा ० आसुर्यनुष्टुप् छं० तृणं दैवतं) ३

ओं देवेभ्यः इति द्वयोः (तथा ० दैवीं पंक्तिं ऋ० यज्ञो देवता) ४, ५

पदार्थः— हे स्वरुशास तुम दोनों १ घृत से २ लिप्त होते ३ पशु को ४ पालन करो ५ हे धनवति वाणी देवता ६ यजमान में ७ मन वांछित को ८ धारण कर ९ प्रकाश मान १० प्राण से ११ समान प्रीति वाली होकर १२, १३ गुरु के हार्दन्तिरिक्त से १४ ज्ञान दान द्वारा यजमान में प्रवेश कर और १५ पशु के १६ हविरूप देह का १७ होम कर १८ इस पशु के १९ आत्मा से २० प्रकट हो अर्थात् पशु को यह ज्ञान हो कि मैं शुद्ध आत्मा हूँ २१ हे वर्षा से उत्पन्न तृण तुम २२ विस्तीर्ण तर २३ यज्ञ पुरुष विष्णु में २४ यजमान को २५ धारण करौ २६ देवताओं के अर्थ २७ होम हो २८ देवताओं के अर्थ २९ होम हो। श्रुति प्रमाण से दो बार कहे हुए देवता पृथक् २ हैं ॥ ११ ॥

अथाध्यात्मम्— हे बुद्धि मन तुम दोनों १ इन्द्रिय शक्ति समूह से २ लिप्त होते ३ भूतात्मा के अंग प्राण आदि को ४ रक्षा करौ ५ हे महावाक् ६ आत्मा में ७ अभिप्रेत मोक्ष को ८ धारण कर ९ प्रकाश मान १० प्राण से ११ समान प्रीति वाला होकर १२, १३ गुरु के हार्दन्तिरिक्त से १४ ज्ञान दान द्वारा यजमान में प्रवेश कर १५ इस भूतात्मा के १६ हविरूप देह का १७ होम कर १८ इस भूतात्मा के १९ शरीर से २० अहं ब्रह्मास्ति इस वाक् द्वारा प्रकट हो २१ हे विस्तीर्ण सुषुम्ना २२ विस्तीर्ण तर २३ विष्णु में २४ आत्मा को २५ धारण कर २६ कर्मेन्द्रिय लय स्थान के देवताओं के अर्थ २७ होम हो २८ ज्ञानेन्द्रिय लय स्थान देवताओं के अर्थ २९ होम हो ॥ ११ ॥

माहिर्भूर्मा पृदाकुर्नमस्तस्मात्तानानर्वा प्रेहि।
 घृतस्य कुल्या उप ऋतस्य पथ्या अनु ॥ १२ ॥
 अहिः। पृदाकुः। मा। भूः। आतान। तौ नमः। अनर्वा। प्रेहि।
 ऋतस्य। पथ्याः। घृतस्य। कुल्याः। अनु। उप प्रेहि ॥ १२ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं, वषा अण के दोनों काष्ठों के द्वारा दुहरी पशु बंधन रस्सी को चात्वाल में डालता है उसका मंत्र १ प्रति प्रस्थाता अथवा नेष्टा पुरुष जल पात्र हाथ में रखने वाली पत्नी को गार्हपत्य के समीप से पशु शोधन के अर्थ लाता कहता है उसका मंत्र २
 ओं माहिर्भूरित्यस्य (मेधातिथि ऋतः) दैवी जगती छंदः रजुर्दे० १
 ओं नमस्तदित्यस्य (तथा ० प्राजा पत्या पंक्तिश्चं यन्नो दे०) २

पदार्थः— हे रस्सी तुम १ सर्पाकार २ अजगराकार ३४ मत हो ५ हे यजमान तुम को ७ नमस्कार तुम ८ शत्रु रहित होते ९ समाहित क विद्यमान रहो १० यज्ञ के ११ मार्ग में विद्यमान १२ घृत की १३ नदियों को १४ देख कर १५ आओ ॥ १२ ॥

अथाध्यात्मम्— हे सुषुम्ना तुम १ कुटिल २ विष्णु के समान काटने वाली ३४ मत हो ५ हे यजमान ६ तेरे अर्थ ७ भूतात्म रूप अन्न हो तुम ८ कामादि शत्रु से रहित होते ९ सुषुम्ना मार्ग से चलो १० ११ ब्रह्म मार्ग में रहित करी १२ इन्द्रिय शक्ति समूह की १३ नदियों को १४ देख कर १५ विदेव रूपधारी महा विष्णु को प्राप्त करौ ॥ १२ ॥

देवी रापः शुद्धा वोढुं १ सुपरि विष्टा देवेषु
 सुपरि विष्टा वयम्परिवेष्टारो भूयास्म ॥ १३ ॥
 देवीः। आपः। शुद्धाः। सुपरि विष्टाः। देवेषु। वोढुं। सुपरि विष्टा
 वयम्। परिवेष्टारः। भूयास्म ॥ १३ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं, जल स्तुति का मंत्र १ आशी

वदिका मंत्र २

ओं देवी परित्यस्य (मेधातिथिर्ऋ० सामान्यनुष्टुप् छं० आपो दे०) १

ओं देवेष्वित्यस्य (तथा ० आसुरी गायत्री छं० आशीर्दे०) २

पदार्थः— १ हे द्योतमान २ जलो ३ शुद्ध ४ और सब और से पान्नेजनी पात्र में प्रविष्ट तुम इस पशु को ५ देवताओं में ६ प्राप्त करो ७ देवताओं से तर्पित ८ हम ९ देवताओं के परोसने वाले १० होंगे ॥ १३ ॥

अथाध्यात्मम्— १ हे इन्द्रिय सम्बन्धी २ अन्तरिक्षो ३ सांसारिक सुख और शयन का दाता जो भोग है उसके धारण करने वाले ४ और देह में प्रविष्ट तुम भूतात्मा को ५ देवताओं में प्राप्त करो ६ ७ देवताओं से तर्पित ८ हम वाक् आदिकृतिज ९ देवताओं के परोसने वाले १० होंगे ॥ १३ ॥

वाचन्ते शुन्धामि प्राणान्ते शुन्धामि चक्षुस्ते
शुन्धामि श्रोत्रान्ते शुन्धामि । नाभिन्ते शुन्धा
मि मेढ्रान्ते शुन्धामि पायुन्ते शुन्धामि चरित्रां
स्ते शुन्धामि ॥ १४ ॥

१ वाचम् । २ शुन्धामि । ३ ते । ४ प्राणां । ५ शुन्धामि । ६ ते । ७ चक्षुः शुन्धा
मि । ८ ते । ९ श्रोत्रम् । १० शुन्धामि । ११ ते । १२ नाभिम् । १३ शुन्धामि । १४ ते । १५ मेढ्रम्
१६ शुन्धामि । १७ ते । १८ पायुम् । १९ शुन्धामि । २० ते । २१ चरित्रान् । २२ शुन्धामि ॥ १४

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ८ मंत्र हैं : पत्नी पशु को समीप बैठ कर मृत पशु के प्राण आदि को जल से स्पर्श करती है उसके मंत्र १ से ८ तक ओं वाचन्ते शुन्धासीत्यादि मंत्राणां (मेधातिथिर्ऋषिः देवी विष्टुप छं० पशुर्दे०) १ से ७ तक ओं चरित्रा नित्यस्या (तथा ० देवी जगती छं० तथा०) ८

पदार्थः— पत्नी वा बुद्धि कहती है हे पशु वा हे भूतात्मन मैं १ तेरी २ वाक् इन्द्रिय को ३ शुद्ध करती हूँ ४ तेरे ५ प्राण को ६ शुद्ध करती हूँ ७ तेरी ८ च

सु इन्द्री को ९ सुद्ध करती हूँ १० तेरी ११ ओत्र इन्द्री को १२ सुद्ध करती हूँ १३
तेरी १४ नाभि को १५ सुद्ध करती हूँ १६ तेरी १७ लिङ्ग को १८ सुद्ध करती हूँ १९
तेरी २० पायु इन्द्री को २१ सुद्ध करती हूँ २२ तेरी २३ पैरों को २४ सुद्ध करती हूँ २५

मनस्तु आप्यायतां वाक्स्तु आप्यायताम्प्राणस्तु
आप्यायताञ्चक्षुस्तु आप्यायतां श्रोत्रं श्रोत्रं
आप्यायताम्। यत्तैः कुर्यादास्थितन्तस्तु आप्याय
तान्निष्प्रायतान्तैश्चक्षुस्तु शमहोभ्यः। ओ
षधेऽत्रायस्व स्वधिते मैत्रेहि ॥ १५ ॥
ते। मनः। आप्यायतां। ते। वाक्। आप्यायतां। ते। प्राणः। आप्यायतां। ते। चक्षुः। आप्यायतां। ते। श्रोत्रं। आप्यायतां। ते। यत्। कुर्यात्। यत्। आस्थितम्। ते। तत्। आप्यायतां। निष्प्रायताम्। ते। तत्। शमहोभ्यः। शो। ओषधे। त्रायस्व। स्वधिते। एने। मा। हि ॥ १५ ॥

अथाधिदैवम्— इस कड़िका में नौ मंत्र हैं उनको कहते हैं यजमान और अध्वर्यु पान्ने जन शेष से पशु के शिर आदि अंगों को सींचते हैं उसका मंत्र १ शेष अंगों को सींचते हैं उसका मंत्र २ से ६ तक पीछे पशु को सींचते हैं उसका मंत्र ७ पशु को ऊंचा करके नाभि के आगे ४ अंगुल त्याग कर पूर्व दिशा की ओर खड़ा है उसका मंत्र ८ तण के ऊपर खड़ा चारा को रख कर चुपचाप सहित उदर की खचा को काटता है उसका मंत्र ९

ओं वाक् इत्यस्य (मेधातिथिर्ऋ० दैवी विष्णु पृष्ठं पशुर्दे०) २
ओं मनस्तु इत्यादि चतुः (तथा ० दैवी जगती छं० तथा ०) ४, ५
ओं क्षमन्त्राणां (तथा ० साम्नी विष्णु पृष्ठं तथा ०) ६
ओं शमित्यस्य (तथा ० दैवी वृहती छं० लिङ्गोक्त दे०) ७

ओं षोष इत्यस्य (मेधातिथि ऋ० याजुषी गायत्री छं० तृणं दैवतं) ८

ओं स्वधित इत्यस्य (तथा ० दैवी जगती छं० असिर्दे०) ९

पदार्थः - हे पशु सा लोको मोक्ष प्राप्ति के लिये १ तेरा २ मन ३ वृद्धि पाओ ४ तेरी ५ वाणी ६ वृद्धि पाओ ७ तेरा ८ प्राण ९ वृद्धि पाओ १० तेरी ११ चक्षु इन्द्रि १२ वृद्धि पाओ १३ तेरी १४ ओं व इन्द्रि १५ वृद्धि पाओ हे पशु १६ तेरा १७ जो १८ ब्रह्मा विष्णु महेश और ब्रह्माग्नि चार रूप वाला आत्मा है १९ जो २० आत्म प्रति विंव है २१ तेरा २२ वह २३ वृद्धि पाओ २४ एकी भाव को प्राप्त करे तथा ब्रह्म भाव प्राप्ति के अर्थ २५ तेरा २६ वह सब २७ शुद्ध हो २८ देवयान सम्बन्धी काल विशेषों के अर्थ २९ कल्याण हो ३० हे ओषधि ३१ रक्षा करे ३२ हे वज्र ३३ इस पशु को ३४, ३५ मत मारो ॥ १५ ॥

अथाध्यात्मम् - हे भूतात्मन् १ तेरा २ मन ३ मोक्ष के अर्थ समष्टि मन के भाव को प्राप्त करे ४ तेरी ५ वाक् इन्द्रि ६ समष्टि भाव को प्राप्त करे ७ तेरा ८ प्राण ९ समष्टि भाव को प्राप्त करे १० तेरी ११ चक्षु इन्द्रि १२ समष्टि भाव को प्राप्त करे १३ तेरी १४ ओं व इन्द्रि १५ समष्टि भाव को प्राप्त करे १६ तेरा १७ जो १८ ब्रह्मा विष्णु महेश और ब्रह्माग्नि रूप आत्मा है और १९ जो २० आत्म प्रति विंव है २१, २२ वह तेरा २३ समष्टि भाव को प्राप्त करे २४ एकी भाव को प्राप्त करे और ब्रह्म भाव प्राप्ति के अर्थ २५, २६ तेरा वह सब २७ शुद्ध हो २८ देवयान सम्बन्धी काल विशेषों के अर्थ २९ कल्याण हो ३० हे इन्द्रिय शक्ति समूह ३१ संसार से रक्षा करे ३२ हे मन ३३ इस भूतात्मा को ३४, ३५ संसार बन्धन से मत नाश करे ॥ १५ ॥

रक्ष साम्ना गोसि निरस्तुं रक्ष इदमहं रक्षो
मितिष्ठा मीदमहं रक्षो ववाध इदमहं रक्षो
धमन्त मोनयामि। द्युतेन द्यावा पृथिवी प्रोर्णवा

यां वायो वेस्तो कानां मग्निराज्यस्य वेतु स्वाहा
 स्वाहा कृते ऊर्ध्वं नृभसम्मारुतङ्गच्छतम् १६
 रक्षसां भागः १ अग्निः १ रक्षः १ निरस्तु १ अहम् १ इदम् १ रक्षः १
 अभितिष्ठामि १ अहम् १ इदम् १ रक्षः १ अववाधे १ अहम् १ इदम् १
 रक्षः १ अधमे १ तमे १ नयामि १ द्यावा पृथिवी १ घृतेन १ प्रोणुवीथम् १ वा
 यो १ स्तो कानां १ वे १ अग्निः १ राज्यस्य १ वेतु १ स्वाहा १ स्वाहा कृते १
 ऊर्ध्वं नृभसम् १ मारुतः १ गच्छतम् ॥ १६ ॥

अथाधिदेवम् - इस कंडिका में ७ मंत्र हैं उन को कहते हैं जो
 तृणनाभिके अग्र में स्थापन किया उस छिन्न तृण को वाम हस्त में रख
 कर दाहिने हाथ में जड़ को रख कर और उसको दुहरा कर अग्र और मूल
 को पशु छेदन निष्पन्न रुधिर से लिस करता है उसका मंत्र १ उस रुधिर
 लित तृण मूल को उत्कर में फेंकता है उसका मंत्र २ उत्कर में फेंके हुए
 तृण को यजमान पैर से दाव कर खड़ा होता है उसका मंत्र ३ पशु के उद
 र से वपा को निकाल कर उससे वपा अपणी को आच्छादन करते हैं उसका
 मंत्र ४ वाम हस्त में रखे हुए तृणाग्र को आह वनीय अग्नि में डालता है उ
 सका मंत्र ५ अर्घ्य वपा को होमता है उसका मंत्र ६ वपा को होम कर उ
 तर में बैठ कर दोनो वपा अपणी को आह वनीय अग्नि में डालता है उस
 का मंत्र ७ ॥

ओं रक्षसामित्यस्य (मेधातिथिर्ह्रस्वः याजुषी गायत्री छन्दः लिङ्गोक्तदे) १
 ओं निरस्तमित्यस्य (तथा • दैवी पक्तिश्छन्दः • रक्षो हणदै) २
 ओं इदमित्यस्य (तथा • निचुदार्घ्यनुष्टुप् छन्दः • तथा •) ३
 ओं घृतेनेत्यस्य (तथा • याजुषी जगती छन्दः • द्यावा पृथिवीदे) ४
 ओं वायो वेरित्यस्य (तथा • याजुषी गायत्री छन्दः • वायुर्दे) ५

ॐ अग्नि रित्यस्य (सेधातिथि ऋषिः याजुषी बृहती छ० अग्निर्दे०) ६
 ॐ स्वाहा कृत इत्यस्य (तथा ० आसुरी गायत्री छ० वपा अत्राप्यौदे०)
 पदार्थः — हे रुधिर लित तृणा तुम १ राक्षसों के २ भाग ३ हो ४ यन्न वि-
 श्र करने वाला राक्षस ५ त्याग किया गया ६ में ७ इस ८ राक्षस को ९ पांव से
 दबा कर स्थिति होता हूं १० में ११ इस १२ राक्षस को १३ नाश करता हूं और १४
 मैं १५ इस १६ राक्षस को १७ अत्यंत निकृष्ट १८ नरक में १९ प्राप्त करता हूं
 २० हे पृथिवी स्वर्गी तुम दोनों २१ जल और घृत से अपने आत्मा को २२ परस्प-
 र आच्छादन करौ अर्थात् आ इति से स्वर्गी और जल से पृथिवी युक्त हो २३
 हे वायु तुम २४ वपा सम्वन्धी विन्दुओं को २५ जानौ २६ आहवनीय अग्नि २७
 घृत का २८ पान करौ २९ ओष्ठ होम हो ३० स्वाहा कार से आ इति भाव प्रा-
 स होने पर तुम दोनों ३१ आकाश में वर्त्तमान ३२ वायु को ३३ प्राप्त करौ को
 कि वायु ही यज्ञ की प्रतिष्ठा है ॥ १६ ॥

आया ध्यात्मम् — हे क्रोध आदि के समूह तुम १ काम आदि के २ भाग
 ३ हो ४ यन्न का विघ्न करने वाला अज्ञान ५ त्याग किया गया ६ में ७ इस ८
 अज्ञान को ९ पांव से दबा कर स्थित होता हूं १० में ११ इस १२ अज्ञान को
 १३ नाश करता हूं १४ में १५ इस १६ अज्ञान को १७ अत्यंत निकृष्ट १८
 उसके उत्पत्ति स्थान तमो गुण में १९ प्राप्त करता हूं २० हे हृदय मन तुम दो-
 नों २१ इन्द्रिय शक्ति समूह से २२ अपने आत्मा को आच्छादन करौ २३
 हे प्राण २४ गगन च्युत अमृतरस विन्दुओं का २५ ज्ञान प्राप्त करौ और
 ज्ञान कर प्राप्त करौ २६ आत्माग्नि २७ इन्द्रिय शक्ति समूह का २८ पा-
 न करौ २९ ब्रह्म ज्ञान के उपदेश से ३० महा वाक् का उच्चारण होने प-
 र तुम दोनों व्यष्टि समष्टि प्रति विंव ३१ आकाश में वर्त्तमान ३२ समष्टि
 वायु को ३३ प्राप्त करौ ॥ १६ ॥

दुदमापः प्रवहतावद्यच्चमलञ्चयत। यच्चाभिदुद्रो
हानृतं यच्च शेषे अभिरुणाम। आपो मातस्मादेनसः

पवमानश्चमुच्चतु १७

आपः। दुदमाप्रवहते। चायते। अवद्यम। च। मलमा। च। यतु। अन्ते
तां अभिदुद्रोह। च। यते। अभिरुणाम। शेषे। आपः। च। पवमानः
तस्मात्। एनसः। मा। मुच्चतु॥ १७॥

अथाधिदैवम् - तिसके पीछे सपत्नीक और यजमान सहित सब ऋत्वि
ज चात्वा लोके समीप जलो से आत्म शोधन करते हैं उस कामंत्र १
उद्दमित्यस्य (दीर्घतमा नरः व्यवसाना महा पंक्तिश्च आपो दे) १

पदार्थः - १ हे जलो २ दुस पशु संज्ञापन के पाप को ३ दूर करौ ४ और ५ जो दस
कथनीय अभि शाप आदि ७ और रुद्र देह मल है उसको दूर करौ ८ और १० जो ११ अपरा
धी पुरुष को १२ मार्ग १३ और १४ जो अनपराधी को १६ दुर्वाक्य कहा १७ जल १८ और
१९ वायु २० उस २१ पाप से २२ मुक्त को २३ मुक्त करौ॥ १७॥

अथाध्यात्मम् - १ हे ज्योतीर स अमृतरूप जलो २ काम के दाता अज्ञान
को ३ दूर करौ ४ और ५ जो निंद्य विषय भोग ७ और ८ ज्ञान का आवरण मल है उसे
दूर करौ ८ और १० जिस ११ अहंकार ममत्व विशिष्ट मोहात्मा को १२ मार्ग १३ और १४
जो १५ अद्वैत आत्मा को १६ ब्रह्म से पृथक् जाना १७ पूर्वी जल १८ और १९ समष्टि
वायु २० उस २१ पाप से २२ मुक्त को २३ छुड़ाओ॥ १७॥

सन्ते मनो मनसा सम्प्राणाः प्राणेन गच्छताम्। रे
डस्यग्निष्वा श्रीणात्वापस्त्वासमरिणान्वातस्य
त्वाध्राज्यै पूषो रथं ह्याकुष्माणो व्यधिष्वयु

तन्द्वा १७॥ तन्द्वा १७॥ तन्द्वा १७॥ तन्द्वा १७॥
तौ मनो मनसा सद्गच्छताम्। प्राणा प्राणेन। समरेदस्य

अग्निः^{११} । त्वा^{१२} । श्रीणा^{१३}तु^{१४} । आपः^{१५} । त्वा^{१६} । समरिणान्^{१७} । वारतस्य^{१८} । ध्रौज्ये^{१९} ।
 पूषा^{२०} । रथ^{२१}स्ये^{२२} । त्वा^{२३} । ऊष्मेणा^{२४} । व्यधिषेत^{२५} । द्वेषः^{२६} । प्रयुतं^{२७} ॥ १८ ॥

अथाधिदैवम् - इसकंडिका में तीन मंत्र हैं उनको कहते हैं प्रश्नोत्तर के पीछे अध्वर्यु जुहू में रक्वेहु ए एष दाज्य से पशु के हृदय को प्रथम अभिधारन कर चुपके से सब पशु को अभिधारन करता है उसका मंत्र १ वसा होम हवमि पात्र में वसा को लेकर और दो बार अभिधारन कर उसमें स्वरु वा करारी से घृत को मिलाता है उसके मंत्र २, ३

ओं सन्त इत्यस्य (दीर्घतमा ऋ० प्राजापत्या अनुष्टुप् छं० हृदयं देवतं) १
 ओरेड सीत्यस्य (तथा ०० आधी पंक्ति छं० ०० वसा देवतं) २
 ओ प्रयुतमित्यस्य (तथा ०० दैवी पंक्ति छं० ०० लिङ्गोक्त देव) ३

पदार्थः - हे पशु के हृदय १ तेरा २ मन ३ देवताओं के मन से ४ संयोग को प्राणोपतेरा प्राण ५ देवताओं के प्राण से ६ संयोग को पांशो हे वसा तू चक्षुष्य होने से हिंसित सी ६ है १० अग्नि ११ तुम्हें १२ परिपक्व करे १३ जल १४ तुम्हको १५ भले प्रकार प्राप्ति करे क्योंकि जल से ही रस उत्पन्न होता है १६ वायु की १७ अन्त रिक्त में गति होने के लिये १८ १९ स्वर्ग में सूर्य के गमनार्थ २० तुम्हें को ग्रहण करता हूं उस कारण २१ वैश्वानर अग्नि की २२ सुधा रूप व्यथा प्रकट हो २३ देवताओं का द्वेषी राक्षस २४ दूर हुआ ॥ १८ ॥

अथाध्यात्मम् - हे भूतात्मा के हृदय १ तेरा २ मन ३ समष्टि मन से ४ संयोग को प्राणोपतेरा प्राण ५ समष्टि प्राण से ६ संयोग पांशो हे मानस सूर्य ७ तुम्हें चक्षुष्य होने से हिंसित से ८ है १० ब्रह्माग्नि ११ तुम्हें १२ स्वीकार करे १३ ज्योती रस अमृत १४ तुम्हें १५ भले प्रकार प्राप्त हो १६ १७ हार्दन्त रिक्त में प्राण की प्राप्तिके प्रयत्न १८ १९ और भृकुटि में मन के गमनार्थ २० तुम्हें ग्रहण करता हूं इस कारण २१ ब्रह्माग्नि की २२ सुधा रूप व्यथा प्रकट हो २३ काम रूप राक्षस २४ प्रधक

हज्या ॥ १८ ॥

घृतं घृत पावानः पिवत वसां वसा पावानः पिवता
न्तरिक्षस्य हवि रसि स्वाहा ॥ दिशः प्रदिश आदि
शो विदिशो उदिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥ १९ ॥
घृत पावानः १ घृतम् १ पिवत १ वसा पावानः १ वसां १ पिवत १ अन्तरिक्षस्य १ हविः १ रसि १ स्वाहा १ दिशः १ विदिशः १ प्रदिशः १ आदिशः १ उदिशः १ दिग्भ्यः १ स्वाहा ॥ १९ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में सात मंत्र हैं उनको कहते हैं आह वनीय के उत्तर और वैर कर वाम हाथ में श्रुतों को लेकर दाहिने हाथ से वसा के एक देश को होमता है उसका मंत्र शेष वसा से दिशाओं को व्यापारित करता है उसके मंत्र २ से ७ तक ॥

ॐ घृतमित्यस्य (दीर्घतमा ऋ०) आर्षी पक्ति ऋ० विष्णे देवादे १
ॐ दिश इत्यस्य (१) तथा (१) देवी उष्णिक् कृ० दिग्देव १
ॐ दिग्भ्य इत्यस्य (१) तथा (१) तथा (१) तथा (१)
ॐ प्रदिश इत्यस्य (१) तथा (१) देव्यनुष्टुप छ० तथा (१)
ॐ आदिश इत्यस्य (१) तथा (१) तथा (१) तथा (१)
ॐ विदिश इत्यस्य (१) तथा (१) तथा (१) तथा (१)
ॐ उदिश इत्यस्य (१) तथा (१) तथा (१) तथा (१)

पदार्थः - १ हे घृत के पान करने वाले देवता ओ तुम २ घृत को ३ पान करो ४ हे वसा के पान करने वाले देवता ओ तुम ५ वसा को ६ पान करो ७ हे वसा तुम ८ अन्तरिक्ष की ९ हवि १० है ११ ओष्ठ होम हो १२ जो पूर्व आदि दिशा १३ और ईशान आदि विदिशा है वे तीन प्रकार की हैं १४ पृथिवी और उसके अधिष्ठाता अग्नि से सब प्रसूत वनीली सब दिशा १५ अग्नि विदुषो वसा के अधिष्ठाता वायु से मृगवत

नेवाली सबदिशा १५ सूर्यऔर स्वर्ग से सम्बंध रखने वाली सबदिशा १६उनदिशा
श्रीकेअर्थ १७अष्ट होम हो, कर्ममें मंत्रों के यह स्वरूप हैं, दिग्भ्यः स्वाहा, १ प्रदि-
ग्भ्यः स्वाहा २ आदिग्भ्यः स्वाहा ३ विदिग्भ्यः स्वाहा ४ उद्दिग्भ्यः स्वाहा ५ सर्वाभ्यः
दिग्भ्यः स्वाहा ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम् — १ हे इन्द्रिय शक्ति समूह के पान करने वाले समष्टि
मनबुद्धि प्राणो २ इन्द्रिय शक्ति समूह को ३ पान करौ ४ हे मानस सूर्य के पान कर
ने वाले ब्रह्म परा नारायण नाम देवता ओ ५ मानस सूर्य को ६ पान करौ हे मानस
सूर्य तुम ७ हार्दन्तरिक्ष के ८ हविर् हो ९ ओष्ठ होम हो जिस कारण जो ११
शास्त्र का उपदेष्टा १२ ब्रह्म परा का उपदेष्टा है वह तीन प्रकार का है १३ सावित्री
देवी का उपदेष्टा १४ निर्गुण और सगुण ब्रह्म का उपदेष्टा १५ उक्तष्ट योग सा
र्ग का उपदेष्टा १६ उन ब्रह्मा विष्णु महेश रूप गुरुओं से १७ उपदेश किया गया

ऐन्द्रः प्राणोऽग्नेः निदीध्यदैन्द्र उदानोऽग्नेः
 अग्नेः निधीतः। देवत्वष्ट्रभूरिते सथ्समेतु सल
 क्ष्माय द्विषुरूपम्भवाति। देवत्रायन्तमवसेस
 स्वायोनृत्वा मातापितरोऽनुदन्तु ॥२०॥
 ऐन्द्रः प्राणोऽग्नेः निदीध्यत। ऐन्द्रोऽदानोऽग्नेः
 अग्नेः निधीतः। देवत्वष्ट्रभूरिते सथ्समेतु सल
 रूपम्भवाति। सलक्ष्मासमेतु। देवत्रायन्तमवसेस
 मातापितरोऽनुदन्तु ॥२०॥

[illegible]

५ धरित इन्द्रा ६ ईश्वर सम्बन्धी पञ्च वा भूतात्मा का ७ उदान ८ ईश्वर के अंगों में १० धा-
रित इन्द्रा ११ हे ज्योति स्वरूप १२ ईश्वर १३ तेरा १४ विष्णु रूप १५ परि पूर्ण है १६ हे
सर्व व्यापी १७ जिस कारण १८ निवृत्तात्मा १९ वाण रूप २० होता है उस कारण
२१ अंगुष्ठ स्वरूप आत्मा २२ विष्णु को २३ प्राप्त करौ २४ हे सायुज्य के योग्य आत्मा
२५ संसार से रक्षा के अर्थ २६ विष्णु रूप अग्नि में २७ जाने वाले २८ तुम्हें को २९
प्राणादि ३० प्रकृति ३१ और देवता ३२ आन्ता दो ॥ २० ॥

समुद्रं गच्छ स्वाहा न्तरिक्षं गच्छ स्वाहा देवत्वं स
वितारं गच्छ स्वाहा मित्रावरुणो गच्छ स्वाहा होर
गच्छ स्वाहा रुन्दां गच्छ स्वाहा द्यावा पृथि-
वी गच्छ स्वाहा यन्त्रं गच्छ स्वाहा सोमं गच्छ स्वाहा
दिव्यं नभो गच्छ स्वाहाग्निं वैश्वानरं गच्छ स्वाहा
मनो मेहादियं गच्छ दिवं ते धूमो गच्छ त्वुज्योतिः
पृथिवीं मस्मना पृण स्वाहा ॥ २१ ॥
समुद्रं गच्छ स्वाहा न्तरिक्षं गच्छ स्वाहा देवत्वं स
वितारं गच्छ स्वाहा मित्रावरुणो गच्छ स्वाहा अहो
गच्छ स्वाहा रुन्दां गच्छ स्वाहा द्यावा पृथि-
वी गच्छ स्वाहा यन्त्रं गच्छ स्वाहा सोमं गच्छ स्वाहा
दिव्यं नभो गच्छ स्वाहा वैश्वानरं गच्छ स्वाहा
मनो मेहादियं गच्छ दिवं ते धूमो गच्छ त्वुज्योतिः
पृथिवीं मस्मना पृण स्वाहा ॥ २१ ॥
अथ अधिदैवम् - इस कंडिका में १२ मंत्र हैं उन को कहते हैं अनुयाजों
के हृदय मान होने पर प्रतिप्रस्थाता गुद तृतीय के प्रच्छेद को होमता है उसका मन्त्र
प्रतिप्रस्थाता प्रतिवषट्कार प्रत्येक गुद कांड को होम कर सब के अंत में मुरब का-

स्पर्शकरता है उसके मंत्र २ से ११ तक अनुयाज के अंत में स्वरु को होमता है उसका मंत्र १२॥

ओं समुद्रमित्यस्य	(दीर्घतमा चर० याजुष्युष्णिक छं० लिङ्गोक्तदे०) १
ओं अन्तरिक्षमित्यस्य	(तथा ० प्राजापत्या गायत्री छं० तथा ०) २
ओं देवमित्यस्य	(तथा ० याजुषीपन्क्ति ऋ० तथा ०) ३
ओं मित्रावरुण इत्यस्य	(तथा ० याजुषी वृहती छं० तथा ०) ४
ओं अहो रवि इत्यस्य	(तथा ० याजुष्यनुष्टुप् छं० तथा ०) ५
ओं छन्दासीत्यस्य	(तथा ० याजुष्युष्णिक छं० तथा ०) ६
ओं धावा पृथिवी इत्यस्य	(तथा ० याजुषी वृहती छं० तथा ०) ७
ओं यक्षमित्यस्य	(तथा ० याजुषी गायत्री छं० तथा ०) ८
ओं सोम इत्यस्य	(तथा ० तथा ० तथा ०) ९
ओं दिव्यमित्यस्य	(तथा ० याजुष्यनुष्टुप् छं० तथा ०) १०
ओं अग्निमित्यस्य	(तथा ० याजुषी पन्क्ति ऋ० तथा ०) ११
ओं मन इत्यस्य	(तथा ० याजुष्युष्णिक छं० तथा ०) १२

पदार्थः— हे हविर्गुदावयवरूपतुम् १ समुद्र को २ तर्पण के लिये प्राप्त करौ ३ अष्ट होम हो ४ अन्तरिक्ष को ५ प्राप्त करौ ६ अष्ट होम हो ७ सविता देवता को ८ प्राप्त करौ ९ अष्ट होम हो १० मित्रावरुण देवताओं को ११ प्राप्त करौ १३ अष्ट होम हो १४ अहो रवि को १५ प्राप्त करौ १६ अष्ट होम हो १७ छन्दों को १८ प्राप्त करौ १९ अष्ट होम हो २० पृथिवी स्वर्ग को २१ प्राप्त करौ २२ अष्ट होम हो २३ यक्ष को २४ प्राप्त करौ २५ अष्ट होम हो २६ सोम को २७ प्राप्त करौ २८ अष्ट होम हो २९ दिव्य ३० आकाश को ३१ प्राप्त करौ ३२ अष्ट होम हो ३३ वैश्वानर ३४ अग्नि को ३५ प्राप्त करौ ३६ अष्ट होम हो ३७ हे समुद्रादि देव समूह ३८ मेरे ३९ हृदय सम्बन्धी ४० मन का ४१ निरोध करो हे स्वरु ४२ तेरा ४३ धूम्र ४४

स्वर्गलोक को ४४ ऋषि के अर्घ्यजाओ ४५ तेरी ज्वाला ४६ सूर्य वा अन्तरिक्ष को प्राप्त
करौ ४७ भस्म से ४८ पृथिवी को ४९ पूर्ण कर ५० ओष्ठ होम हो ॥ २१ ॥

अथाध्यात्मम् - देह के अवयवों में प्रत्येक अवयव को उपदेश करता है
हे भूतात्मा में विद्यमान जल तुम १ समुद्र को २ प्राप्त करौ ३ ओष्ठ होम हो हे भूता
त्मा में विद्यमान वायु ४ अन्तरिक्ष को ५ प्राप्त करौ ६ ओष्ठ होम हो हे आत्मप्रति
विम्ब ७ ८ सूर्य देवता को ९ प्राप्त करौ १० ओष्ठ होम हो हे जीवात्मा तुम ११ नर-
नारायण को १२ प्राप्त करौ १३ ओष्ठ होम हो हे जन्म मरण काल तुम १४ अद्भु-
त रात्रि को १५ प्राप्त करौ १६ ओष्ठ होम हो हे देह के अङ्गों तुम १७ समष्टि देह के अ-
ङ्गों को १८ प्राप्त करौ १९ ओष्ठ होम हो हे मन हृदय आदि के कमल समूह तुम
२० पृथिवी स्वर्ग को २१ प्राप्त करौ २२ ओष्ठ होम हो हे यज्ञ क्रियाओं तुम २३ यज्ञ
पुरुष विष्णु को २४ प्राप्त करौ २५ ओष्ठ होम हो हे अन्न पान भोग समूह तुम २६
सौमदेवता को २७ प्राप्त करौ २८ ओष्ठ होम हो हे भूतात्मगत आकाश तुम २९
दिव्य ३० आकाश को ३१ प्राप्त करौ ३२ ओष्ठ होम हो हे जात सग्नितुम ३३ जैश्वान-
र ३४ आग्निदेवता को ३५ प्राप्त करौ ३६ ओष्ठ होम हो हे योग शक्ति ३७ मेरे ३८
हृदय सम्वन्धी ३९ मन को ४० निरुद्ध करौ हे भूतात्मन ४१ शरीर ४२ धृष्ट ४३ स्व-
र्ग को ४४ जाओ ४५ आत्म ज्योति ४६ सूर्य को प्राप्त करौ ४७ भस्म से ४८ पृ-
थिवी को ४९ पूर्ण करौ ५० ओष्ठ होम हो ॥ २१ ॥

मापो मौर्वधीर्द्विंसीदुर्मिधाम्नो धाम्नो राजंस्त
तौ वरुण नो मुञ्च । यदा ह्यरध्या इति वरुणे
तिशपोमहेतौ वरुण नो मुञ्च । सुमित्रियान्
आपोषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु
योस्मान्द्वेषि यञ्च वयुन्दिभ्यः ॥ २१ ॥
आपो । मा । द्विंसी । औषधी । मा । राजन् । वरुणा । तौ ।

धाम्नः^{१०}। धाम्नः^{११}। नैः^{१२}। मुञ्च^{१३}। अथा^{१४}। इति^{१५}। यत्^{१६}। आहुः^{१७}। वरुणा^{१८}।
 इति^{१९}। शृणु^{२०} महे^{२१}। वरुणा^{२२}। ततः^{२३}। नैः^{२४}। मुञ्च^{२५}। आपो^{२६}। औषधेयः^{२७}। नैः^{२८}।
 सुमित्रियाः^{२९}। सन्तु^{३०}। यः^{३१}। अस्मान्^{३२}। द्वेष्टि^{३३}। चो वयं^{३४}। यम^{३५}। द्विष्मः^{३६}।
 तस्मै^{३७}। दुर्मित्रियाः^{३८}। सन्तु^{३९}॥ २२॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उनको कहते हैं अध्वर्यु जल में प्रवेश करके शुष्क आर्द्र संधि पर भूमि के मध्य हृदय शूल को अधोमुख वल से प्रवेश करता है उसके मंत्र १, २ यजमान सहित सब ऋत्विज तड़ागादि स्थजल को स्पर्श करते हैं उसका मंत्र ३

ओं मापद्वत्यस्य (दीर्घतमा ऋ० दैवी जगती छ० हृदय शूल दैवत) १

ओं धाम्नद्वत्यस्य (तथा ० सामान्य षष्ठी छ० वरुणो देवता) २

ओं सुमित्रियानद्वत्यस्य (तथा ० निर्वृत्त राजा पत्यागा आपो देवता) ३

पदार्थः— हे हृदय शूल तू मुझे जलों को १, ३ मत नाश करे ४ औषधियों को ५ मत नाश करे ६, ७ हे राजा वरुण ८, ९ अपने पाश युक्त प्रत्येक स्थान से हमको १० मुक्त करे ११ पशु अवध्य हैं १२ इस प्रकार १५ जो १६ वेद स्मृति ने कहा है १७ हे वरुण हम तो १८ इस विधि से १९ हिंसा करते हैं २० हे वरुण २१ उस अवध्य वध पाप से २२ हमको २३ मुक्त करे २४ जल २५ और औषधि २६ हमारे २७ ओष्ठ मित्र २८ हो वे २९ जो शत्रु ३० हमसे ३१ द्वेष करता है ३२ और ३३ हम ३४ जिस शत्रु से ३५ द्वेष करते हैं ३६ उस दोनों प्रकार के शत्रु के लिये ३७ जल और औषधि शत्रु रूप ३८ हो ॥ २२॥

अथाध्यात्मम्— वाणी से भूतात्मा को होम करके अन्न आरब्ध समाहित कर फिर प्रार्थना करता है हे मन तू मुझे इन्द्रियों के अन्तःस्थितियों को २, ३ नष्ट मत करे ४ इन्द्रियों की शक्ति को ५ नष्ट मत करे ६, ७ हे राजा मत ८, ९ अपने पाश रूप प्रत्येक इन्द्रियों से १० हमको ११ मुक्त करे १२ ईश्वर को पूजक

देहावयव अवध्य है १४ इस प्रकार १५ जो १६ वेदादिक कहते हैं १७ हे मन ह
म तो १८ इस योग विधि से १९ हिंसते हैं २० हे मन २१ उस पाप से २२ हम को
२३ मुक्त को २४ इन्द्रिया के अन्तरिक्ष २५ और इन्द्रिया २६ हमारे २७ ओष्ठ
मित्र २८ हों २९ जो काम ३० हम से ३१ द्वेष करता है ३२ और ३३ हम योगी
जन ३४ जिस काम से ३५ द्वेष करते हैं ३६ उस काम के लिये इन्द्रियान्त-
रिक्ष और इन्द्रिया ३७ शत्रु रूप ३८ हो ॥ २२ ॥

अब सोमाभिषव के उपयोगी वस्ती वरी नाम जलो के ग्रहण को कहते हैं

हविष्मती रिमा आपो हविष्मा २ थं आविवा-
सति। हविष्मान्देवी अद्भरो हविष्मा २ थं अ-
स्तु सूर्य ॥ २३ ॥

हविष्मान्। इसा। हविष्मती। आपो। आविवासति। देवः।
अद्भरः। हविष्मान्। अस्तु। सूर्यो। हविष्मान् ॥ २३ ॥

अथाधिदेवम् - सूर्य अस्त से पूर्व नदी आदि में बहते वस्ती वरी नाम ज-
ल को ग्रहण करता है यदि सूर्य अस्त हो जाय और यजमान ने पहिले यज्ञ किया
हो तो यजमान के घर के मटके से जल को लेवे यदि यजमान पूर्व याजीन हो तो किसी
पूर्व याजी पड़ोसी के मटके से जल को लेवे यदि पड़ोसी भी पूर्व याजीन हो तो जल के समी-
प उल्का वा सुवर्ण को रखकर वहा से वस्ती वरी नाम जल को लेवे उसका मंत्र
उहविष्मतीरित्यस्य (दीर्घतमाञ्च निच दापी विष्टुपक्षं लिङ्गाक्तदे) १

पदार्थः - १ हवि से संयुक्त यजमान २ इन ३ हवि से संयुक्त ४ वस्ती व-
री नाम जलो को ५ परिचयो करता है ६ प्रकाश मान ७ योग भी ८ हवि से
युक्त ९ हो इन जलो से १० सूर्य भी ११ हविष्मान् हो। क्योंकि श्रुति में लिखा
है, कि जल को सूर्य और सब देवताओं के लिये ग्रहण करता है, सब देव-
ता इस विराडात्मा सूर्य की किरणें हैं ॥ २३ ॥

अथाध्यात्मम्— १ आत्म प्रति विवनाम हवि से युक्त आत्मा रूप यजमान
 न २ इन्द्र ३ हवि युक्त ४ इन्द्रियान्तरिक्षों की ५ परिचर्या करता है ६ प्रकाश
 मान ७ योग यज्ञ ८ हवि से युक्त ९ हो १० समष्टि प्रति विव ईश भी ११ हवि
 से युक्त हो ॥ ३३ ॥

**अपुनर्गृहस्य सदसि सादयामीन्द्रा
 ग्न्या भगि धेयी स्थ मित्रावरुणयो भगि धेयी
 स्थ विश्वेषान्देवानां भगि धेयी स्थ अमृत्या
 उपसूर्ययामि वो सूर्यः सह तानो दिन्वन्त
 दारम ॥ ३४ ॥**

वे। अपुनर्गृहस्य। अग्नेः। सदसि। सादयामि। इन्द्रा ग्न्या।
 भाग धेयी। स्थ। मित्रावरुणयोः। भगि धेयी। स्थ। विश्वेषां
 देवानां। भगि धेयी। स्थ। अमृत्या। उपसूर्य। वा। सूर्य।
 यामि। सह। ताः। नो। अध्वरम। दिन्वन्त ॥ ३४ ॥

अथाधिदेवम्— इस कुंडिका में ५ मंत्र हैं उनको कहते हैं १ व
 स्ती वरी नाम जल को नतन गाई सत्य के पश्चिम भाग में रखता है उस
 का मंत्र १ शाला द्वार से समीपस्थ वस्ती वरी नाम जल को लेकर शाला के द
 क्षिण द्वार से चल कर उत्तर वेदी के दक्षिण ओर परावृत्ता है उसका मंत्र
 २ पूर्व वत उत्तर वेदी के उत्तर ओर पर पूर्वोक्त जल को रखता है उसका म
 न्त्र ३ उत्तर वेदी के ओर से पूर्वोक्त जल को लेकर अपनी धीय के पीछे
 रखता है उसके मंत्र ४ ५

ॐ आनर्व इत्यस्य (मेधा विधिरः आसुरी गायत्री चः आपो देवः)
 ॐ इन्द्रा ग्न्योरित्यस्य (तथाः प्राजापत्या गायत्री चः तथा)
 ॐ मित्रावरुणोरित्यस्य (तथाः यजुषी विष्णु चः तथा)

ॐ विश्वेषामित्यस्य (मेधातिथिः० याजुषीविष्टपुच्छं आपो २०) ॥
अथमयी इत्यस्य (॥ १ ॥ तथा, अर्च्युष्णिक् ६० तथा १५)

पदाथः - हेवस्तीवरीजलो १ तुम को २ अविनाशी एह वाले ३ शालो दा
य अग्नि के ४ निकट स्थान में ५ स्थापन करता हू तुम ६ इन्द्र अग्नि देवता

ओके ७ भाग रूप ८ हो तुम ९ मित्र वरुण नाम देवता ओ के १० भाग रूप ११
होतथा १२ सब १३ देवता ओ के १४ भाग रूप १५ हो १६ वधन रहित प्रजा

हयुक्त जल १७ सूर्य के समीप स्थित हो १८ और १९ सूर्य २० जिन जलो के २१
साथ प्रतिविव रूप से है २२ वज्र २३ हमारे २४ यज्ञ को २५ तम करो ॥ २४ ॥

अथाध्यात्मम् - हे कमलो के अन्तरिक्षो १ तुम को २ अक्षय लोक वा
ल ३ ब्रह्माग्नि के ४ निकट स्थान में ५ स्थापन करता हू जो कि तुम धृजिविष्टर को

भाग रूप ८ हो तथा ९ प्राण उदान के १० भाग रूप ११ हो तथा १२ १३ सर्वदन्त
यो के १४ भाग रूप १५ हो तथा १६ ब्रह्मा विष्णो सहस्र और ब्रह्माग्नि के सन्ध्या

तुम २७ आत्म प्रतिविव मे और उसके समीप स्थित हो १८ और १९ आत्म प्र
तिविव भी २० जिन प्राण के २१ साथ है २२ वे अन्तरिक्ष २३ हमारे २४ योग यज्ञ

को २५ प्राप्त करो ॥ २५ ॥ अथाध्यात्मम् ॥ २५ ॥

हृदेत्वा मनसेत्वा दिवत्वा सूर्यायत्वा ॥ ऊर्ध्व
मिर्ममध्वरन्ति विद्वेषु होत्री यच्छ ॥ २५ ॥

मनसेत्वा ॥ हृदेत्वा ॥ दिवत्वा ॥ सूर्यायत्वा ॥ होत्री ॥ मिर्म
मध्वरन्ति ॥ ऊर्ध्वम ॥ दिवि ॥ देवेषु ॥ यच्छ ॥ २५ ॥

अथाधिदेवम् - घृत स्थापन पर्यन्त कम करके सोम को लेकर हो
धनि में जा कर सोम को खाल उसके आध को दाक्षिण शकट के ईशान्त एल से
सन्मुख अभिषेक के पोषाणा पर रखता है उसका मन १
अहदत्वेत्यस्य (मेधातिथिः० विराडनुष्टुप् ६० सोमो २०)

पदार्थः हे सोम १ संकल्प विकल्पात्मक मन के लिये २ तुम्हें उपाहरण करता हूँ ३
 निश्चयान्मिका बुद्धि के लिये ४ तुम्हें उपाहरण करता हूँ ५ स्वर्ग लोक के लिये
 ६ तुम्हें उपाहरण करता हूँ ७ विश्वात्मा सूर्य के अर्थ ८ तुम्हें उपाहरण कर
 ता हूँ ९ होता से इस प्रकार उपाहृत और अभिषुत तुम १० इस ११ यज्ञ को
 १२ उच्चा १३ स्वर्ग में १४ देवताओं के मध्य १५ धारण करौ ॥ २५ ॥

अथाध्यात्मम् — हे आत्म प्रतिविम्ब १ मानस कमल के लिये २ तुम्हें
 उपाहरण करता हूँ ३ हृदय कमल के अर्थ ४ तुम्हें उपाहरण करता हूँ ५ भृ-
 कटिकमल के अर्थ ६ तुम्हें उपाहरण करता हूँ ७ विश्वात्मा सूर्य के लिये ८
 तुम्हें उपाहरण करता हूँ इस प्रकार ९ महावाक से उपाहृत और अभिषुत
 तुम १० इस ११ यज्ञमान रूप अपने आत्मा को १२ उपर १३ गगन मंडल में
 १४ ब्रह्म परा नारायण के मध्य १५ धारण कर ॥ २५ ॥

**सोमं राजन्विश्वास्त्वम्यजा उपावरोह विश्वा-
 स्त्वाम्यजा उपावरोहन्तु । शृणोत्वग्निः स-
 मिधा हवस्मै शृणयन्त्वापो धिषणांश्च देवीः
 श्रोता ग्रावणां विदुषो न यज्ञश्च शृणोतु देवः
 सविता हवस्मै स्वाहा ॥ २६ ॥**
 राजेन । सोमे । विश्वाः । प्रजाः । उपावरोह । विश्वाः । प्रजाः । त्वाम् ।
 उपावरोहन्तु । समिधा । अग्निः । मे । हवमे । शृणोतु । आपः ।
 चो धिषणा । देवीः । शृणवन्तु । ग्रावणाः । श्रोश्रोतु । देवः । स-
 विता । मे । हव । न । विदुषः । यज्ञश्च । शृणोतु । स्वाहा ॥ २६ ॥

अथाधिदेवम् — इस कड़िका में तीन मंत्र हैं उनका कहते हैं अथ
 यज्ञि परे ऊपर वृक्ष का सोम से अलग कर सोम का उपस्थान करता है
 उसके मंत्र १, २ होता से मंत्रोच्चारण करने पर अर्घ्य आज्य स्थाली से श्वा

रलियेद्वाघृतको सुवा सेलेकर अतिप्रणीता में हो मता है उसका मन्त्र
 ओं सोम राजनित्यस्य (मेधातिथिः सांन्युषाकं सोमो दे०)
 ओ विष्वात्वामित्यस्य (तथा याज्ञपी विष्टुपछं तथा
 ओं श्रणो त्व ग्निरित्यस्य (तथा विष्टुपछं निद्रोक्त दे०)

पदार्थः १२ हे राजा सोम ३ सब ४ प्रजाओं के ५ आधिपत्य को करौ ६ सब ७
 प्रजा ८ तुम्ह को ९ प्रत्युत्थान अभिवादन आदि के साथ प्राप्त हो १० समिध-
 सहित ११ अग्नि १२ मेरे १३ आवाहन को १४ सुनो १५ जल १६ और १७ १८
 वाक देवियां १९ मेरे आवाहन को सुनो २० हे अभिषव पाषाणामिमान्नी देव
 ताओ तुम २१ मेरे आवाहन को सुनो २२ २३ सविता देवता २४ मेरे २५ आवा-
 न को २६ और २७ यज्ञमाल के २८ यज्ञ को २९ सुनो ३० ओह है म हो ॥ २६ ॥

अथाध्यात्मम् — १२ हे आत्मप्रतिवित् ३ सब ४ प्राणों के ५ आधि-
 पत्य को करौ ६ सब ७ प्राण ८ तेरे ९ संस्कार प्राप्त हो १० प्राण सहित ११
 आत्माग्नि १२ मेरे १३ आवाहन को १४ सुनो १५ इन्द्रियों के अन्तर्निष्ठ १६
 और १७ १८ ब्रह्म रूप महावाक १९ मेरे आवाहन को सुनो २० हे प्राणों
 तुम २१ मेरे आवाहन को सुनो २२ जोति स्वरूप २३ हेरा २४ मेरे २५ आ-
 वाहन को २६ और २७ ज्ञानी योगी के २८ योग यज्ञ को २९ सुनो ३० जिसे
 वेदवाणी कहती है ॥ २६ ॥

देवी रापो अपान्न पाद्यो वसुर्मिह विष्य इन्द्र
 यावान्सदिन्तम । तन्नेवेभ्यो देवत्रा दत्त शुक्र
 पेभ्यो येषां भागस्य स्वाहा ॥ २७ ॥
 देवी आपो व । अपान्न । नपात । य । इविष्य । इन्द्रियवान्
 मदिन्तम । कुर्मि । देवत्रा । तमे । शुक्रपेभ्यः । देवेभ्यः । दत्त
 येषां भागः । स्य । स्वाहा ॥ २७ ॥

अथाधिदैवम् - इस कडिका में दो मंत्र हैं उनकी कहते हैं जिस प
वार लिये छपा घृत को साथ लिया उस को जल के समीप जा कर होमता है
उसके मंत्र १३

ओं देवी राप इत्यस्य (मेधातिथिः भुरिगावी पक्तिः आपो दे०) १
ओं स्वाहेत्यस्य (तथा दैव्याणां क्वं तथा)

पदार्थः - १ हे प्रकाशमान जलो ३ तुम ४ जलो को ५ सतान रूप
६ जो ७ हवि योग्य ८ इन्द्रिय शक्ति दाता ९ अत्यंत हृषीकरक अथवा
अतितृप्त करने वाली १० जल संधादिक लोल है ११ हे यजमान के रस को
तुम १२ उस कलोल को १३ भुक्त आदि सोम ग्रह पान करने वाले १४ देव
ताओं के अर्थ १५ दीजिये १६ जिन देवताओं के रस भोग रूप १७ हैं १८ वृ
ह घृत तुम्हारे अर्थ होम हो ॥ ३३ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे ज्योति स्वरूप २ ब्रह्म ज्योति रस अमृत रूप जल
३ ४ तुम जलो को ५ पौत्र अथवा प्रवृत्ता भुक्ता पुत्र नारायण उस को पुत्र
आत्म प्रति विव ६ जो ७ हवि योग्य ८ इन्द्रिय शक्ति से युक्त ९ अत्यंत तृप्त
करने वाली १० कलोल है ११ हे योगनिष्ठ के रस को तुम १२ उस आत्म प्र
ति विव को १३ मानस सूर्य के पान करने वाले १४ ब्रह्म परा नारायण के अर्थ
१५ दीजिये तुम १६ जिन ब्रह्म परा नारायण के १७ अर्थात् आत्म के अवयव
रूप १८ हैं १९ महातार्क के प्रमाण सिद्ध २० आत्मा २१ ॥ ३४ ॥

कापिरसिसमुद्रस्य त्वाक्षित्या उन्नयामि
समापो अद्रि रमन्त समोषधीभिरेषधीः
कापीः असि हितो । समुद्रस्य । असित्यो । उन्नयामि । एषधीः ।
अद्रिः । समरमता । ओषधीः । ओषधीभिः । समे । एषधीः ।
अथाधिदैवम् - इस कडिका में दो मंत्र हैं उनकी कहते हैं

जो द्वार लिया हुआ घृत जल में हो मा उसको मैत्रावरुण चमस से दू कर
 ता है उसका मंत्र १ फिर चमस उस मैत्रावरुण चमस द्वारा तडागादि में सि
 त जलों को लेता है उसका मंत्र २ जलाशय से आकर चत्वारि ल के रूप में
 मैत्रावरुण चमस और वस्तीवरी नाम जल को मिला कर खता है उस
 का मंत्र ३
 ओं कर्षि रसीत्यस्य (मेधातिथिर्कः देवी वहनी हं आज्यं देवता)
 ओ समुद्रस्येत्यस्य (तथा याज्ञीनिष्ठपठः आपो दे०)
 ओ सम्राट्स्येत्यस्य (तथा सामान्यनष्टपठः तथा)
 प्रोक्तः ॥ हे समुद्रादयः तुम १ देवता से भक्षित अथवा अंतर्गत मूल
 के दूर करने वाले २ हो दे जल ३ तुम को ४ वस्तीवरी नाम जल की ५ अ
 क्षीणता के लिये ६ ग्रहण करता हं ७ मैत्रावरुण चमस में स्थित जल ८
 वस्तीवरी नाम जल के साथ ९ संगम को पाओ १० सह समुद्र आदि जो
 अधि ११ चत्वारि यत् आदि के साथ १२ संगम को पाओ ॥ ३८ ॥
 अथाध्यात्मम् ॥ इन्द्रिय शक्ति समुद्र तुम १ आकृष्ट अर्थात्
 देवता से भक्षित २ हो हे आत्म प्रति विव ३ तुम ४ ब्रह्म ज्योतिः समु
 द्र रूप समुद्र को ५ अक्षीणता के लिये ६ रूप प्राप्त करता हं उपाण उ
 दान में स्थित इन्द्रिय प्रति विव रूप जल ७ कमलान्त रिक्षो के साथ ८
 संगम को पाओ १० इन्द्रियों की शक्तियां ११ परा नरं तारायुण की श
 क्तिया के साथ १२ संगम को पाओ ॥ ३९ ॥
 यमो नृपु मर्त्य मवा वाजेषु यज्जना ॥ स
 यन्ता शश्वती रिषः स्वाहा ॥ ४० ॥
 अग्ने ॥ पूतो ॥ यमे ॥ मर्त्यम् ॥ अवा ॥ वाजेषु ॥ यमं चतुर्वा
 शश्वती ॥ वा ॥ यतो ॥ स्वाहा ॥ ४१ ॥

अथाधिदेवम् - अग्नि होमनाम यज्ञ के आरम्भ होने पर शेष घृत की होमपरीप्ति के अभाव में अचरण पात्र में लिये ४ वार लिये हुए घृत शेष की होमता है उसका मंत्र १

ॐ यममन इत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ० भुरि गोपी गायत्री छ० अग्नि दे०) १

पदार्थः - १ हे अग्नितुम २ संग्रामों में ३ जिस ४ मनुष्य को परक्षा कर ते हो ५ और यज्ञों में हवि ग्रहण केलिये ७ जिस पुरुष के पास ८ जाते हो ९ वह पुरुष आप के अनुग्रह से १० निरंतर ११ अन्नोको १२ प्राप्त करता है १३ ओष्ठ होम हो ॥ २६ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे ब्रह्माग्नितुम २ काम आदि के संग्रामों में ३ जिस ४ आत्म प्रतिविम्ब को परक्षा करते हो ५ और योग यज्ञों में ७ जिस प्रतिविम्ब को ८ प्राप्त होते हो ९ वह योगी १० आत्मभूत ११ इन्द्रियों को १२ निरुद्ध करने वाला है १३ महावाक् के प्रभाव से ॥ २६ ॥

देवस्य त्वा सवितु प्रसेवे श्विना वा इ भ्याम् पूषा

हस्ताभ्याम् । आददे रावा सि गभीर मि म मध्य

र दुधीन्द्राय सुपूतमम् उत्तमेन पविनो ज्जिस्व

न्त म्मधुमन्तस्य यस्वन्त नि ग्राम्या स्थ देव शु

तस्तु र्पयतमा ३०

सवितुः । दिवस्यो । प्रसेवे । अश्विनोः । वाह भ्याम् । पूषा । हस्ता

भ्याम् । त्वा । आददे । रावा । असि । इमम् । अध्वरम् । गभीरम् ।

कोधि । उत्तमेन । पविनो । इन्द्राय । सुपूतमम् । ऊर्जस्वन्तम् ।

मधुमन्तम् । यस्वन्तम् । निग्राम्या । स्था । देवश्रुतम् । मा ।

तुर्पयत ॥ ३० ॥

अथाधिदेवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं उन को कहते हैं अ

मधु उपांशु सवन नाम सोमामि पर्व के पाषाण को लेकर हिंकारि सपूर्व

मोन होता है उसका मन्त्र यज्ञमान से सोमाभिषव में सेवनीय निग्राभ्य नाम
जल के ग्रहण और स्पर्श करने पर अर्घ्य यज्ञमान को कहलाता है वह मन्त्र
ओं देवस्य त्वेयस्य (मधुच्छदा करः ब्राह्मी पक्तिच्छ्वः अदि दे०) १
ओं निग्राभ्य इत्यस्य (तथा १५ पृथ्वा सुयं नृष्ट पक्षः आपो दे०) २

पदार्थः— हे अभिषव साधन पाषाण १ सविता २ देवता की ३ आन्ता
में वर्तमान में ४ अभिनी कुमार के ५ वाह भाव को प्राप्त अपनी भुजाओं से ६
पूषा देवता के ७ हस्त भाव को प्राप्त अपने हाथों से ८ तुम्हें ९ ग्रहण करता है
तुम १० आइतियों और दक्षिणाओं के दाता ११ हो १२ इस १३ यज्ञ को १४ गं
भीर अर्थात् महान् १५ करों में तुम्हें १६ उत्कृष्ट १७ वज्र रूप से १८ ईश्वर के
अर्थ १९ अभिषुत तम सोम को २० रसवान २१ मधु स्वाद वाले रस से युक्त
तथा २२ दुग्ध स्वाद वाले रस से युक्त करता है हे जलो तुम २३ सोमाभिषव
के लिये हम से निरंतर ग्रहण योग्य २४ हो २५ हे देवताओं में विख्यात व
र्तमान से युक्त तुम २६ तुम्हें २७ तुम करों ॥ ३० ॥

अथाध्यात्मम्— हे प्राण १ ५ गुरु देव की ३ आन्ता में वर्तमान में ४
हृदय मन की ५ ग्रहण शक्तियों ६ तथा मानस सुयी की ७ ग्रहण शक्तियों
से ८ तुम्हें ९ ग्रहण करता है तुम १० योग के दाता ११ हो १२ इस १३ योग
यज्ञ को १४ ब्रह्मज्ञान ब्रह्मनाशयण और निस्सी का देने वाला १५ करों
१६ में तुम्हें उत्कृष्ट १७ वज्र रूप से १८ ब्रह्मनाशयण के अर्थ १९ अभिषुत तम
प्रति विवस्व आत्मा को २० योग बल वाला २१ ब्रह्मज्ञान से सम्पन्न २२
प्राण वात करता है हे ब्रह्मसु रूप जलो तुम २३ प्रति विवाभिषव के लि
ये निरंतर ग्रहण योग्य २४ हो २५ विद्वानों में विख्यात तुम २६ तुम्हें यज्ञ
मान को २७ तुम्हें करों ॥ ३० ॥

३१ मनों से तर्पयत वाचस्मे तर्पयत प्राणस्मे

तर्पयत चक्षुर्मैतर्पयत ओजं म्मैतर्पयतात्मा
 नम्मैतर्पयत प्रजाम्मैतर्पयत पशून्मैतर्पयत
 गुणान्मैतर्पयत गुणा मेमा विदुषन् ॥ ३१ ॥
 मै। मने। तर्पयत। मै। वाचे। तर्पयत। मै। प्राणम्। तर्पयत
 मै। चक्षुः। तर्पयत। मै। ओजम्। तर्पयत। मै। आत्मानम्।
 तर्पयत। मै। प्रजाम्। तर्पयत। मै। पशून्। तर्पयत। मै।
 गुणान्। तर्पयत। मै। गणान्। मै। विदुषन् ॥ ३१ ॥ प्रार्थनामन्त्र
 ओम् नमो इत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ० वाङ्वाह्नीजगती हं० आपो दे०) १

पदार्थः - संक्षेप कहकर विस्तार पूर्वक कहते हैं - हे पूर्वीक्तजलो १
 मेरे २ मन को ३ तृप्त करौ ४ मेरी ५ वाणी को ६ तृप्त करौ ७ मेरे ८ प्राण को
 ९ तृप्त करौ १० मेरी ११ चक्षु इन्द्री को १२ तृप्त करौ १३ मेरी १४ ओतेन्द्रि-
 को १५ तृप्त करौ १६ मेरी १७ आत्मा को १८ तृप्त करौ १९ मेरी २० पुत्र आदि
 शमदम आदि सम्पत्ति को २१ तृप्त करौ २२ मेरी २३ गो आदि पशु वा इन्द्रि-
 यो को २४ तृप्त करौ २५ मेरी २६ मनुष्य समूहों वा मन की वृत्तियों को २७
 तृप्त करौ २८ मनुष्य समूह वा मन की वृत्तियाँ २९ ३१ विशेष तृप्ति तत्त्व हो

इन्द्राय त्वा वसुमते रुद्र वत इन्द्राय त्वा दित्य
 वत इन्द्राय त्वा भिमातिघ्ने। श्येनाय त्वा सोम
 भृतेऽग्नये त्वा राय स्योषदे ॥ ३२ ॥
 वसुमते। रुद्र वते। इन्द्राय त्वा। आदित्य वते। इन्द्राय त्वा।
 भिमातिघ्ने। इन्द्राय त्वा। सोम भृते। श्येनाय त्वा।
 राय स्योषदे। अग्नये त्वा ॥ ३२ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ५ मंत्र हैं उनको कहते हैं पूर्वी
 क्त उपांशु सवन नाम पाषाण को अभिषवणाचर्म पर रख कर उसके

ऊपर ५ बार अभिषेक योग्य सोम मुष्टि को डालता है उसके मंत्र १ से ५ तक
 ओं इन्द्रा यत्वेत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ० साम्नी गायत्री छं० सोमो दे०) १
 ओं इन्द्रा यत्वेत्यस्य (तथा १०० प्राजापत्या गायत्री छं० तथा १) २
 ओं श्येना यत्वेत्यस्य (तथा १०० तथा १०० तथा १) ३
 ओं अग्नेत्वेत्यस्य (तथा १०० याजुषी वृहती छं० तथा १) ४

पदार्थः— हे सोम १ वसुनाम प्रातः सवन के देवता से युक्त २ रुद्रना
 म माध्यन्दिन सवन के देवता से युक्त ३ इन्द्र के लिये ४ तुम्हें परिमित करता
 हूँ ५ तीर्थ सवन के देवता आदित्य से युक्त ६ इन्द्र के लिये ७ तुम्हें को परि
 मित करता हूँ ८ शत्रु हंता ९ इन्द्र के लिये तुम्हें १० परिमित करता हूँ ११
 स्वर्ग से सोम लाने वाले १२ श्येन रूप धारी गायत्री के अधिष्ठाता देवता के
 लिये १३ तुम्हें परिमित करता हूँ १४ धन पुष्टि दाता १५ अग्नि के लिये १६
 तुम्हें परिमित करता हूँ ॥ ३२ ॥

अथाध्यात्मम्— हे प्रतिविम्ब १ अपरा के विकार से युक्त २ प्राण से
 युक्त ३ आत्मा रूप यजमान के लिये ४ तुम्हें परिमित करता हूँ ५ इन्द्रियों
 से युक्त ६ आत्मा के लिये ७ तुम्हें परिमित करता हूँ ८ काम शत्रु के नाशक
 ९ आत्मा के लिये १० तुम्हें परिमित करता हूँ ११ मानस कमल से प्रतिवि
 व लाने वाले १२ ईश्वर के लिये १३ तुम्हें परिमित करता हूँ १४ योगेश्वर्य
 ष्ठि के दाता १५ ब्रह्माग्नि के लिये १६ तुम्हें परिमित करता हूँ ॥ ३३ ॥

यत्तं सोम दिवि ज्योतिर्यत्पृथिव्यां यदुरावन्त
 रिक्षे। तेनास्मै यजमाना यो सराये कृष्याधि
 दावे वोचः ३३
 सोम। दिवि। तौ यत। ज्योतिः। पृथिव्याम्। यत। उरो। अ
 न्तरिक्षे। यत। तेन। अस्मै। यजमानाय। राये। उरु। कृषि।

दोत्रे। अधि। वोच ॥ ३३ ॥

अथाधिदैवम् - मंत्र के अन्त में उपांशु सवन पर ५ बार डाले हुए सोम का स्पर्श करता है उसका मंत्र १७ ॥ ३३ ॥
 औपत्त इत्यस्य (मधुश्चंदाकृ० भुरि गाधी वृहती छं० सोमो दे०) १७ ॥
 पदार्थः - १ हे सोम २ स्वर्ग लोक में ३ तेरी ४ जो ५ ज्योति है ६ पृथिवी में
 ७ जो ज्योति है ८ विस्तीर्ण ९ अन्तरिक्ष में १० जो ज्योति है ११ उस देह रूप
 ज्योति से १२ इस १३ यजमान के लिये १४ धन लाभार्थ १५ अपने शरीर
 को विस्तीर्ण १६ करौ १७ और दाता यजमान से १८ १९ अधिक कहौ अर्था
 त यह कहौ कि मैं पूर्ण रूप से विद्यमान हूँ ॥ ३३ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे आत्म प्रति विंव २ स्वर्ग लोक वा भृकुदि में
 ३ तेरी ४ जो ५ ज्योति सूर्य रूप वा शिव रूप है ६ पृथिवी वा मानस कमल
 में ७ जो ज्योति अग्नि रूप वा मानस सूर्य रूप है ८ विस्तीर्ण ९ अन्तरिक्ष
 वा हृदय में १० जो ज्योति वायु रूप वा प्राण रूप है ११ उस ज्योति से १२ इस
 १३ आत्मा रूप यजमान के लिये १४ योगैश्वर्य प्राप्ति के अर्थ १५ अपने शरी
 र को विस्तीर्ण १६ करौ और १७ दाता आत्म रूप यजमान के लिये १८ १९ अधिक
 कहौ कि मैं समष्टि रूप से विद्यमान हूँ ॥ ३३ ॥

श्वाचास्थवृत्रतुरो राधो गूत्ताश्मृतस्य पत्नीः।

ता देवी देवने मयन्तन यतो पृहताः सोमस्य पि

वतो ॥ ३४ ॥

श्वाचा। वृत्रतुर। राधो गूत्ता। श्मृतस्य। पत्नीः। देवना।

स्थ। देवीः। ताः। इमम्। यन्म। जयन्तु। उपहृताः। सोमस्य

पिवन्ते ॥ ३४ ॥

अथाधिदैवम् - अर्थात् सोम के रूप में होकर चमस से तिथास्य नाम

अथाध्यात्मम्— हे प्रति विंवतम् १२ भय मत करो ३४ कपितम्
त होओ ५ योग वल को ६ धारणा करौ ७ हे मन भृकुटितम् दोनों ८ धृ
ढ होते १० अपने आत्मा को दृढ करो ११ प्रति विंव के रस आत्मा को १२
धारणा करौ १३ पाप अर्थात् प्रति विंव शरीर १४ नष्ट हुआ १५ न कि १६
आत्म ज्योति ॥ ३५ ॥

**पाग पारुदगधराक सर्वतस्त्वा दिश आधा
वन्तु। अम्ब निष्पर सुमरी विदाम् ॥ ३६ ॥**
प्राके। अपाके। उदूके। अधराक। दिशः। सर्वतः। त्वा। आ
धावन्तु। अम्ब। निष्पर। अरी। सविदाम् ॥ ३६ ॥

अथाधिदैवम्— प्रतिप्रहार वर्ग में होत्र चमस के बीच सोम के
अंशुओं को रख कर निग्राम्य नाम दो ऋचा यजमान से कह लाता है
उं प्रग पागित्यस्य (मधुच्छदा ऋ० आर्युष्णिक ऊ० सोमो दे०) १

पदार्थः— हे सोम १ पूर्व २ पश्चिम ३ उत्तर ४ दक्षिण नाम ५ सब दि
शा ६ अपने प्रदेश से ७ तेरे ८ सन्मुख आओ ९ हे दिगाभिमानि
देव ता १० अपने भागों से सोम को पूर्ण वा पालन कर ११ प्रजा १२
सोम के समागम को जानो ॥ ३६ ॥

अथाध्यात्मम्— हे आत्म प्रति विंव १ पूर्वा विज्ञान लक्षणा २
पश्चिमा व्यवहार लक्षणा ३ श्रेष्ठा भक्ति लक्षणा ४ अधमास काम क
र्म लक्षणा ५ उपदेश कारक बुद्धि वृत्तियां ६ सवशोर से ७ तेरे ८ सन्मुख
आओ ९ हे बुद्धितम् १० ब्रह्मज्ञानी योगियों के ११ ब्रह्मब्रह्मणि
पर रूप प्रति विंव को १२ अपने भागों से पूर्ण करो ॥ ३६ ॥

**त्वमङ्ग प्रशं० सिषो देवः शविष्ठमर्त्यम्
नत्व दन्यो मघव चीस्ते मङ्गितेन्द्र वीमि**

तेवच ॥ ३७ ॥

शविष्ठः। मघवेनः। अङ्गः। इन्द्रः। देवः। त्वः। मर्त्यम्। प्रशं
सिषः। त्वतः। अन्यः। मडिता। नः। अस्ति। ते। वचः। ववी
मि॥ ३७ ॥ महा विष्णु की प्रार्थना का मंत्र १

ओ त्वमित्यस्य (गौतम ऋ० पथ्या रहती यद्वा भुरिगां ध्यनु० छं० इन्द्रो दे०
पदार्थः १ हे अतिशय पलवान २ ब्रह्मा विष्णु महेश रूप धारण शील
ब्रह्म में प्रादुर्भूत ४ महा विष्णो ५ ज्योति स्वरूप ६ तुम ७ प्रति विवरूप
जमान को ८ भक्ति ज्ञान के दान से प्रशंसा योग्य करते हो ९ भूतम से १०
सरा ११ यजमान का सुख दाता १२ नहीं १३ है १४ तेरे १५ वेद मंत्र रूप क
न को १६ कहता हू ॥ ३७ ॥

इति श्री भृगु वंशावतंस श्री नाथूराम सूनु ज्वाला प्रसाद श
र्म कृते शुक्ल यजुर्वेदीय ब्रह्म भाष्ये अभ्यादानाद्वाचनात्
स्तथा आत्म प्रति विवाभिषवोद्योगवर्णिनं नाम षष्ठोऽध्यायः
छठी अध्याय में यूप संस्कार से सोमाभिषव तक मंत्र कहे अवा सतवी
अध्याय में ग्रह ग्रहण के मंत्र कहे जाते हैं ॥

हरिः ओं वाचस्पतये पवस्व वृषां अथ सुभ्या
ङ्ग भस्ति पूतः। देवो देवेभ्यः पवस्व येषां म्ना

वृषाः। अथ सुभ्याम्। गभस्ति पूतः। वाचस्पतये। पवस्व
देवः। देवेभ्यः। पवस्व। येषां। भागः। असि॥ १॥

अथाधिदैवम् - उपासु ग्रह को ग्रहण करता है उसके मंत्र
ओं वाचस्पतये इत्यस्य (गौतम ऋ० साम्नी रहती छं० प्राणो दे०)
ओं देव इत्यस्य (तथा १० आसुर्यनुपपन्नं तथा)

पदार्थः— हे सोम शतभवषी करने वाले की २ अंशुओं (किरण) ३ तथा अध्वर्यु के हाथों से पवित्र तुम ४ प्राण के लिये ५ जाओ। दूसरा मंत्र हे सोम तुम देवता होते ७ देवताओं के लिये ८ प्रवृत्ति करी ९ जिन देवताओं के तुम १० भाग ११ हौ ॥ १॥

अथाध्यात्मम्— प्राण आदि आत्म प्रति विंव के अवयव हैं उनको उनके समष्टि रूपों में होमता है हे प्राण १ आत्मा की २ किरणों तथा ३ इन्द्रिय शक्ति की प्राप्ति से पवित्र तुम ४ समष्टि प्राण के लिये ५ चलो ६ देवता होते ७ ब्रह्म परानारायण नाम देवताओं के लिये ८ चलो ९ जिन देवताओं के १० भाग ११ हौ ॥ १॥

मधुमतीर्नृद्विष्ठाधियत्ते सोमादाभ्यन्नामजा
गृवितस्मैते सोम सोमाय स्वाहा स्वाहोर्वन्तरिक्ष
मून्वेमि ॥ ३॥

नृद्विष्ठा मधुमतीः। कृधि। सोमै। ते। यत। अदाभ्यम्। जागृ
वि। नामै। सोमै। तस्मै। ते। सोमाय। स्वाहा। स्वाहो। उरु।
अन्तरिक्षम्। अन्वेमि ॥ २॥

अथाधिदेवम्— इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उनको कहते हैं, तीस रेयह को ग्रहण करता है उसका मंत्र १ स्वीकृत अंशुओं के सोम में स्थापन करता है उसका मंत्र २ अध्वर्यु हविर्धान से निष्क्रमण करता है उसका मंत्र ३ ॥

ॐ मधुमती रित्वस्य (जो तमः ऋषि याजुषी बृहती छन्दोऽङ्गोक्तदे) १ ॥
२ जो देवता नहीं वह देवताओं के तम करने को समर्थ नहीं जैसे शक्ति कहती है, जो अन्न आत्मा के समान है वह रक्षा करता है पीड़ा नहीं देता जो अन्न आत्मा के समान नहीं है वह रक्षा नहीं करता किंतु पीड़ा देता है ॥ ३ ॥

ओं यत्तदित्यस्य (गोतमः १० आच्युषि कृच्छं लिङ्गोक्तं दे०) १

ओं स्वाहा इत्यस्य (तथा १० आसुरीजगती कृच्छं तथा ०) ३

पदार्थः देसोमनुम १ हमारे २ अन्तों को ३ मधुरस से युक्त ४ करो ५ हे सोम ६ तेरा ७ जो ८ हिंसा रहित ९ जागरण शील १० नाम है ११ हे सोम १२ उस नाम वाले १३ तुम्ह १४ सोम के लिये १५, १६ मंत्रोच्चारण पूर्वक ओ-

ष्ठ होम हो १७ विस्तीर्ण १८ अन्तरिक्ष को १९ जाता हूँ ॥ २॥
अथा ध्यात्मम् - हे समष्टि प्राण १ हमारी २ इन्द्रियों को ३ ब्रह्मत्ता न से युक्त ४ करो ५ हे समष्टि प्राण ६ तेरा ७ जो ८ हिंसा रहित ९ जागर ण शील १० नाम है ११ हे समष्टि प्राण १२ उस १३ तुम्ह १४ समष्टि प्राण के लिये १५, १६ मंत्रोच्चारण पूर्वक होम हो १७ विस्तीर्ण १८ हार्दन्त- रिक्ष को १९ जाता हूँ ॥ ३॥

स्वाङ्गतोसि विभ्वेभ्य इन्द्रियेभ्यो दिव्येभ्यः

पार्थिवेभ्यो मनस्त्वापु स्वाहा त्वा सुभवं सु

ययि देवेभ्य स्त्वा मरीचिपेभ्यो देवांश्शोय

स्मै त्वेडे तत्सत्यमुपरि पुतो भुङ्गेन हतो सौ फ

ह प्रणायत्वा व्यानायत्वा ॥ ३॥

विभ्वेभ्यः पार्थिवेभ्यः दिव्येभ्यः इन्द्रियेभ्यः स्वाङ्गतः
असि मनः त्वा अपु सुभवं सूर्याय त्वा स्वाहा मरी
चिपेभ्यः देवेभ्यः त्वा देवैः अशो यस्मै त्वा इडो तते
सत्यम् उपरि पुतो भुङ्गेन असौ हतो फट् प्राणाय
त्वा व्यानाय त्वा ॥ ३॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ५ मंत्र हैं उन को कहते हैं, उपांश ग्रह को होम कर प्राण का मार्जन करता है उस का मंत्र १ अध्वर्युय

को होम कर पात्र का मार्जन करके उस जल से सोम लिप्त हाथ को पश्चिम-
स्थ परिधि में धोता है उसका मंत्र २ सोमाभिषव करते पाषाण के अभिघात
से उड़कर जो सोमांशु वस्त्र हृदय भुजा में लगा उस को ले कर आह वनी-
य अग्नि में होमता है उसका मंत्र ३ उपांशु ग्रह के पात्र को उसके स्थान
पर स्थापन करता है उसका मंत्र ४ फिर अध्वर्यु सोमाभिषव के उपांशु
सवन नाम पाषाण को हाथ से धो कर उसमें लगी हुई ऋजीष आदि
को मार्जन से नीचे गिरा कर फिर उसको उत्तर मुख उपांशु पात्र के नि-
कट स्थापन करता है उसका मंत्र ५

ओं स्वाङ्गुतो सीत्यस्य (गोतम ऋ० भुरिग्राजा पत्या जगती छं० उपांशुदे०) १
ओं देवेभ्य स्त्वेत्यस्य (तथा • याजुषी वहती छं० • देवादे०) २
ओं देवांश इत्यस्य (तथा • साम्नी त्रिष्टुप् छं० • लिङ्गोक्ते) ३
ओं प्राणायत्वेत्यस्य (तथा • दैवी वहती छंदः • ग्रहोदे०) ४
ओं व्यानायत्वेत्यस्य (तथा • तथा • उपांशुसकदे०) ५

पदार्थः - हे प्राणारूप उपांशु ग्रहतम १ सव २ पृथिवी पर उत्पन्न द्वि-
पद चतुष्पद केलिये ३ तथा स्वर्गवासी देवताओं के लिये ४ तथा कर्म-
ज्ञान नाम इन्द्रियों के लिये ५ स्वयं उत्पन्न ६ हौ ७ मन प्रजापति चतुर्भे-
द व्याप्त करो १० हे उत्तम जन्म वाले ग्रह ११ सूर्य देवता के लिये १२ तु-
म्हें को १३ स्वाहा कार पूर्वक होमता हूं हे लेप १४ सूर्य किरण पान कर-
ने वाले १५ देवताओं के लिये १६ तुम्हें परिधि पर मार्जन करता हूं १७
हे दीप्यमान १८ सोमांशु १९ जिसके वधार्थ २० तुम्हें से २१ प्रार्थना कर-
ता हूं २२ वह २३ सत्य हो २४ ऊपर २५ प्राप्त २६ मर्दन से २७ यह अंशु
क संज्ञा वाला शत्रु २८ मरा हुआ २९ विशीर्ण हो ३० हे उपांशु पात्र ३१ प्रा-
ण देवता के संतोषार्थ ३२ तुम्हें आसादन करता हूं हे उपांशु सवन ३३

व्यान देवता की प्रीति के अर्थ ३३ तुम्हें आसादन करता हूँ ॥ ३॥

अथाध्यात्मम् — हे प्राण १ सव २ कर्म संज्ञक ३ ज्ञान संज्ञक ४ इन्द्रियों सहित तुम ५ ब्रह्मा विष्णु महेश रूप सूर्य के अर्थ साधित ६ हो ७ मन ८ तुमको ९ व्यास करो १० हे ओष्ठ जन्म वाले प्राण ११ सूर्य के अर्थ १२ तुमको १३ स्वाहा कार पूर्वक होमता हूँ हे प्राण लेप १४ सूर्य किरण रूप १५ देवताओं के अर्थ १६ तुमको भले प्रकार मार्जन करता हूँ १७ हे दीप्यमान १८ जीवात्मा १९ जिसके लिये २० तुम्हें २१ चाहता हूँ २२ वह २३ सत्य ब्रह्म है २४ ऊपर २५ प्राप्त २६ मर्दन से २७ यह काम २८ मरा हुआ २९ विशीर्ण हो हे प्राण ३० समष्टि प्राण देवता के सन्तोषार्थ ३१ तुम्हें आसादन करता हूँ हे व्यान ३२ समष्टि व्यान की प्रीति के अर्थ ३३ तुम्हें आसादन करता हूँ ॥ ३॥

उपयाम गृहीतोऽस्यन्त र्यिच्छ मघवन् पाहि

सोमम् । उरुष्य राय एषो यजस्व ॥ ४ ॥

उपयाम गृहीतुः । असिः । मघवन् । अन्तः । यच्छ । सोमं । पाहि । रायः । उरुष्यः । इषः । आयजस्व ॥ ४ ॥

अथाधिदैवम् — सूर्योदय पर अर्घ्य अंतर्यमि पात्र में अंतर्यमि नाम ग्रह को ग्रहण करता है उसका भेज १ ओं उपयामेत्यस्य (गोतम ऋषि प्राजापत्या त्रिष्टुप् छंदो दे) १

पदार्थः — हे सोमरस तुम १२ उपयाम ग्रह से ग्रहण किये ऊपर १३ हे विदेव रूप धारण करने वाले परमेश्वर तुम उसे सोमरस को १४ ग्रह पात्र के मध्य १५ ग्रहण करो १६ सोम को १७ रक्षा करो १८ धन वा पशुओं को १९ रक्षा करो २० अन्नों को २१ वारों ओर से दो अथवा प्रजा को यत्र कर्म में तत्पर करो ॥ ४ ॥

अथाध्यात्मम् - हे उदानात्मा तुम १ परा शक्ति से गृहीत २ हो ३ हे विदेव रूप धारण करने वाले महानारायण तुम उस उदानात्मा को ४ अपनी किरणों के मध्य ५ ग्रहण करो ६ और प्रति विवरस आत्मा को ७ संसारबंधन से रक्षा करो ८ इन्द्रियों को रक्षा करो ९ विषयों को १० उसके कारण में स्थापन करो ॥ ४ ॥

अन्तस्ते द्वावा एधि वी दधाम्यन्तर्दधाम्युर्वी
न्तरिक्षम् । सजूर्देवेभिरवरैः परैश्चान्तर्ध्या

मे मधवन्मादयस्त्व ५

द्वावा एधि वी । ते । अन्तः । दधामि । उर्वी । अन्तरिक्षम् । अन्तः ।
दधामि । मधवन् । अवरैः । परैः । देवेभिः । सजूर् । अन्तर्ध्यामे ।
मादयस्त्व ॥ ५ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में विष्णु की प्रार्थना का मंत्र है ॥
ॐ अन्तस्त इत्यस्य (गोतम ऋ० आर्षी तंक्ति ऋ० मधवा दे०) ॥

पदार्थः - हे अन्तर्यामि ग्रह १ एधि वी स्वर्ग को २ तेरे ३ मध्य ४ स्थापन करता हूं ५ विस्तीर्ण ६ अन्तरिक्ष को ७ तेरे मध्य ८ स्थापन करता हूं अर्थात् वैश्व देव रूप करता हूं ९ हे विदेव रूप धारी परमेश्वर १० अपरा विकार रूप ११ पराभूत १२ देवताओं के साथ १३ समान जीति वाले तुम १४ अन्तर्यामि ग्रह में १५ वृत्ति को पाओ ॥ ५ ॥

अथाध्यात्मम् - हे उदानात्मा मन और मृकुटि को २ तेरे ३ मध्य ४ स्थापन करता हूं ५ विस्तीर्ण ६ अन्तरिक्ष को ७ तेरे मध्य ८ स्थापन करता हूं अर्थात् वैश्व देव रूप करता हूं ९ हे विदेव रूप धारी महानारायण १० साकार इन्द्रादि ११ ज्योतिरूप नारायण आदि १२ देवताओं के १३ साथ तुम १४ उदान में १५ वृत्ति को पाओ ॥ ५ ॥

स्वाङ्कतोसि विष्वेभ्य इन्द्रियेभ्यो दिव्येभ्यः पार्थि
वेभ्यो मनस्त्वाष्ट्र स्वाहा । त्वा सुभवं सूर्याय देवे
भ्यस्त्वा मरीचि पेभ्य उदानाय त्वा ॥ ६ ॥
विष्वेभ्यः । पार्थिवेभ्यः । दिव्येभ्यः । इन्द्रियेभ्यः । स्वाङ्कतः । अ
सि । मनः । त्वा । अष्ट्र । सुभवं । सूर्याय । त्वा । स्वाहा । मरीचि
पेभ्यः । देवेभ्यः । त्वा । उदानाय । त्वा ॥ ६ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ३ मंत्र हैं उन को कहते हैं, व-
रवराण और इत शेष का आज्य स्थाली में आसेवन इन सब को छो
ड़ सब विधि उपांशु ग्रह वत होती है उसका मंत्र १ अंतर्यामी ग्रह में ग्र-
ह को होम कर पश्चि माभि मुख होकर अधो मुख हाथ से प्रथम परि-
धिको मार्जन करता है उसका मंत्र २ उपांशु सवन से संलग्न अन्तर्यामी
म पात्र को आसादन करता है उसका मंत्र ३
ओं स्वाङ्कतोसीत्यस्य (गोतमः ३० भुरिग्राजा पत्याजगती छं अन्तर्यामीदे)
ओं देवेभ्य इत्यस्य (तथा ०० यानुषी वृहती छं देवो दे) २
ओं उदानाय त्वेत्यस्य (तथा ०० देवी पक्ति म्ब ०० ग्रहो दे) ३

पदार्थः— हे उदान रूप अन्तर्यामी ग्रह तुम १ सव २ पृथिवी पर उत्त-
म द्विपदत्तुष्पदों ३ देवताओं ४ कर्मज्ञान सन्न क इन्द्रियों के अर्थ ५
स्वयं उत्पन्न ६ हो ७ मन प्रजापति ८ तुम्हें ९ व्याप्त करौ १० हे उत्तम जन्म
वाले ग्रह ११ सूर्य देवता के अर्थ १२ तुम्हें को १३ स्वाहा कार पूर्वक हो
मता हूँ हे लेप १४ सूर्य किरण पान करने वाले १५ देवताओं के अर्थ
१६ तुम्हें परिधि पर मार्जन करता हूँ हे अन्तर्यामी पात्र १७ उदान देव-
ता की प्रीति के अर्थ १८ तुम्हें सादन करता हूँ ॥ ६ ॥

अथाध्यात्मम्— हे उदानात्मन् १ सव २ कर्म सन्न क ३ ज्ञान-

संज्ञक ४ इन्द्रियों से ५ त्रिदेव रूप धारी सूर्य के अर्घ साधित ६ हो ७ मन ८ तुम को धी व्याप्त करौ १० हे ऋष्ट जन्म वाले उदान ११ सूर्य के अर्घ १२ तुम को १३ स्वाहा कार पूर्वक होमता हूँ हे उदान ले १४ १५ सूर्य किरणों के अर्घ १६ तुमके मार्जन करता हूँ हे उदान १७ समष्टि उदान की प्रीति के अर्घ १८ तुमके सादन करता हूँ ॥ ६ ॥

आवायो भूष भुचि पा उपनः सहस्रन्ते नियु
तो विश्व वार। उपो ते अन्धो मध्व मयामिय
स्य देव दाधिषे पूर्व पेयं वायवे त्वा ॥ ७ ॥

भुचि पा। वायो। नः। उप। भूष। विश्व वार। त। सहस्र
मु। नियुतः। मध्वम। अन्धः। त। उप। अयामि। देव। यस्य
पूर्व पेयं। दाधिषे। वायवे। त्वा ॥ ७ ॥

अथाधिदैवम्- सूर्योदय पर अंतर्यमि ग्रहण आदि और उस-
पात्र का आसादन करके अध्वर्यु तमी ऐन्द्र वायव पात्र में ऐन्द्र वायवना
म दो देवता वाले पहिले ग्रह को ग्रहण करता है उसका मंत्र १
ओं आवायो भूषेत्यस्य (वशिष्ठ ऋ० निच दाषी जगती छं० वायुर्दे०) १

पदार्थः १ वषट् कृत दूसरे देवताओं से अप्राप्त पवित्र सोम के प्रा-
न करने वाले २ हे वायु देवता तुम ३ हमारे ४ समीप ५ चारों ओर से
शोभित हूजिये ६ हे सर्व व्यापी वा हे सब के प्रार्थनीय जिस कारण ७
आपके ८ असंख्य धीवाहन रूप मृग हैं उस कारण ९ तृप्ति करने वा-
ले ११ सोम लक्षण अन्न को १२ आप के १३ आगे १४ समर्पण करता
हूँ १५ हे दीप्यमान वायु १६ जिस सोम के १७ प्रथम वषट् कार लक्ष-
ण वाले पूर्व पान को तुम १८ धारण करते हो हे सोम रस १९ वायु दे-
वता के लिये २० तुमके ग्रहण करता हूँ ॥ ७ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे पवित्र वाणी के पान करने वाले २ वायुदेव
ता ३ हम योगियों के ४ समीप ५ चारों ओर से शोभित हूँ जियै ६ हे सर्व-
व्यापी ७ आपकी ८ असंख्य ९ आपसे योजित वाक् रूप तरङ्ग हैं १० तुम
करने वाले ११ वाक् रूप अन्न को १२ आपके १३ आगे १४ समर्पण कर-
ता हूँ १५ हे वायु १६ जिस वाणी के १७ पूर्व पान को १८ तुम धारण कर-
ते हो हे वाक् १९ वायुदेवता के अर्थ २० तुम्हें ग्रहण करता हूँ ॥ ७ ॥ क्यों-
कि वाणी के प्रादुर्भाव का आदि आत्मा और अंत वायु है, जैसे स्मृति में
कहा है, आत्मा बुद्धि से अर्थों को विचार कर कहने की इच्छा से मन को
नियुक्त करता है, और मन जाठ राग्नि को और जाठ राग्नि वायु को प्रेरित क-
रता है वह ऊर्ध्व गामी वायु मस्तक पर आता ऊँचा मुख को पाकर वर्णों को
उत्पन्न करता है उन वर्णों के विभाग पाँच प्रकार के माने हैं ॥

इन्द्र वायू इमे सुता उपप्रयोमि रागतम् ।

इन्द्र वोवा मुशन्ति हि । उपयाम गृहीतोसि

वायव इन्द्र वायुभ्यान्त्वैषते योनिः सजोषो

भ्यान्त्वा ॥ ८ ॥

इन्द्र वायू । इमे । सुताः । प्रयोमिः । उपे । आगतम् । हि । इन्द्र
वः । वोवा । मुशन्ति । उपयाम गृहीतः । असि । वायवः । इन्द्र
वायुभ्याम् । त्वा । एषते । योनिः । सजोषाभ्याम् । त्वा ॥ ८ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं, एक बार आधे को
लेकर फिर ऐन्द्र वायव ग्रह को ग्रहण करता है उसका मंत्र १ दश
पवित्र से ग्रहण किये हुए ग्रह को मार्जन करके उसका सादन कर-
ता है उसका मंत्र २

ओ इन्द्र वायू इत्यस्य (मधुच्छं ० ऋ० आर्षी गायत्री छं० इन्द्र वायू दे०)

उपयामेत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ० सुराडाषी गायत्री छ० इन्द्रोदे) २
 पदार्थः - १ हे इन्द्र वायु देवताओं तुम्हारे लिये २ यह सोम ३ अभिषवणा किये ४ इन सोम रस रूप अन्नों के निमित्त ५ समीप ६ आइये ७ जिस कारण ८ सोम ९ तुम दोनों को १० चाहते हैं हे सोम रस तुम ११ उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए १२ हौ १३ वायु देवता के लिये १४ तथा इन्द्र वायु देवता के अर्थ १५ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे उपयाम पात्र १६ यह १७ तेरा १८ स्थान है १९ समान प्रीति वाले इन्द्र वायु देवता के लिये २० तुम्हें सादन करता हूं ॥ ८ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे समष्टि आत्मा प्राण २ यह वाणी रूप सोम ३ अभिषवणा किये गये ४ वाणी रूप अन्नों के निमित्त ५ समीप ६ आइये ७ जिस कारण ८ वाणी रूप सोम ९ तुम दोनों को १० चाहते हैं हे वाक्तु म ११ ब्रह्मशक्ति से ग्रहण किये हुए १२ हौ १३ वायु देवता के लिये १४ तथा इन्द्र वायु देवता के अर्थ १५ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे उपयाम पात्र १६ यह पुरा नाम तेरा आत्मा ही १७ तेरा १८ स्थान है १९ समान प्रीति वाले इन्द्र वायु देवता के लिये २० तुम्हें सादन करता हूं ॥ ८ ॥

अयं वा मित्रावरुणा सुतः सोम ऋता वृधा ।

ममेदिह श्रुतं हवम् । उपयाम गृहीतोसि

मित्रावरुणा भ्यान्त्वा

ऋता वृधा । मित्रावरुणा । वाम । अयम् । सोम । सुतः । इह । ममेत । हवम् । श्रुतं २ । उपयाम गृहीतः । असि । मित्रावरुणाभ्याम् । त्वा ॥ ९ ॥

अथाधिदैवम् - मित्रावरुण ग्रह को ग्रहण करता है उसके मंत्र १, २

ओं अयं वामित्यस्य (गृत्समद ऋ० आषी गायत्री छं० मित्रावरुणो दे०) १

ओं उपयामित्यस्य (तथा ० आसुरी गायत्री छं० तथा ०) २

पदार्थः— १ चारों ओर से यज्ञ की वृद्धि करने वाले २ हे मित्रवरुण देवताओं
३ तुम दोनों के लिये ४ यह ५ सोम ६ अभिषवण हुआ ७ इस यज्ञ में ८ मेरे ही
आवाहन को ९ सुनो हे सोम रस तुम ११ मैत्रावरुण पात्र से ग्रहण किये
हुए १२ हो १३ मित्रवरुण देवताओं के लिये १४ तुम ग्रहण करता हूँ ॥ ६॥

अथाध्यात्मम्— योग यज्ञ की वृद्धि करने वाले २ हे समष्टि मन और
रमन की शक्ति ३ तुम दोनों के लिये ४ यह ५ आत्म प्रति विवद अभिषवण
किया ७ इस योग यज्ञ में ८ मेरे ही २ आवाहन को ९ सुनो हे काम्य संकल्प
और उसकी समष्टि तुम ११ परा शक्ति से ग्रहण किये हुए १२ हो १३ समष्टि म
न और मन की शक्ति के लिये १४ तुम ग्रहण करता हूँ ॥ ६॥

रायावयं स सवां सोम देम हव्येन देवा
यवसेन गावः । तान्धेनुमित्रावरुणा युवन्ने
विश्वाहा धत्तमन पस्फुरन्ती मेष ते योनि ऋ

ता युभ्यान्त्वा १०

स सवां सः वयं राया । म देम । देवा । हव्येन । गावः । यवसे
न । मित्रावरुणा । युवन्ने । तान् । धेनुम । पस्फुरन्तीम । मेष । ते । योनिः ।
विश्वाहा । धत्तम । एष । ते । योनिः । ऋता युभ्याम् ॥ त्वा ॥ १० ॥

अथाधिदैवम्— ग्रहण के अनन्तर इस मैत्रावरुण ग्रह को दो कु
शा से युक्त कर लौकिक दुग्ध से पकाता है और पात्र का सादन करता
है उसके मंत्र १२

ओं रायावयमित्यस्य (त्रिसदस्य ऋ० आषी विष्टु प छं० मित्रावरुणो दे०) १

ओं एषत इत्यस्य (तथा ० याजुषी पक्ति छं० ग्रहो दे०) २

पदार्थः— १ धन से सम्पन्न २ हम ३ धन से ४ दृष्ट होवे ५ देवता ६ हव्य से ७ गौ ८ घास आदि से तृप्त हों ९ हे मित्रवरुण देवताओं १० तुम दोनों ११ उस १२ अनन्य गामिनी १३ धेनु को १४ हमारे अर्थ १५ सदा १६ दीजिये हे ग्रह १७ यह १८ तेरा १९ स्थान है २० मित्रवरुण देवताओं के लिये २१ तुम्हें सादन करता हूँ ॥ १०॥

अथाध्यात्मम्— १ विराट् भाव को प्राप्त २ हम आत्मा रूप योगी ३ योग लक्ष्मी से ४ दृष्ट होवे ५ देवता नारायण आदि ६ आत्म प्रति विंव से ७ और प्रारब्ध समासित क इन्द्रियां ८ त्याग निवृत्ति सर्व व्यापी निवृत्तात्मा और सोहं मन्त्र से दृष्ट हों ९ हे समष्टि मन और मन की शक्ति १० तुम दोनों ११ उस १२ अनन्य गामिनी १३ सोहं वाणी को १४ हमारे लिये १५ सदा १६ दीजिये हे काम्य-संकल्प और हे काम समृद्धि १७ यह पराशक्ति १८ तेरा १९ स्थान है २० समष्टि-मन और मन की शक्ति के लिये अथवा ब्रह्म परा के अर्थ २१ तुम्हें सादन करता हूँ ॥ १०॥

यावाङ् शामधु मृत्यु शिवना सूनृतावतीत
यायज्ञमिमिक्षतम्। उपयाम गृहीतोस्य
शिवभ्यान्वैषते योनिर्मिष्टीभ्यान्त्वा। ११।
अश्विना। वामे। या। कशा। मधुमती। सूनृतावती। तथा। यज्ञ
म्। मिमिक्षितम्। उपयाम गृहीतः। असि। एषे। तौ योनिः। मा
ध्वीभ्याम्। त्वा॥ ११॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मन्त्र हैं, वहिष्णवमान की स्तुति के अनन्तर अध्वर्युहविर्धान में प्रवेश करके दो ण कलश से अश्विन नाम ग्रह को ग्रहण करता है उसका मन्त्र १ पात्र का सादन करता है उसका मन्त्र २

जो यावामित्यस्य (मेघातिथिर्ऋ० भुरिगायी गायत्री छं० अश्विनौ दे०) १
जो उपयामेत्यस्य (तथा ० याजुषी विष्टुप छं० ग्रहो दे०) २

पदार्थः - १ हे अश्विनी कुमारो २ तुम दोनों की ३ जो ४ वाणी ५ ब्रह्मज्ञान
नवती ६ सत्य प्रिय वचन से युक्त है ७ उस वाणी से ८ हमारे यज्ञ को ९
सींचने की इच्छा कीजिये हे ग्रहतुम १० उपयाम पात्र में ग्रहण किये द्रु
ते ११ हौ हे ग्रह १२ यह १३ तेरा १४ स्थान है १५ मधुब्राह्मण का पाठ कर
ने वाले अश्विनी कुमारों के अर्थ १६ तुम्हें सादन करता हूँ ॥ ११ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे पृथिवी स्वर्गी भिमानी देवताओ २ तुम दोनों
की ३ जो ४ वाणी ५ ब्रह्मज्ञान नवती ६ सत्य प्रिय वचन से युक्त है ७ उस वा
णी से ८ यजमान को ९ सींचना चाहो हे ओत्र नाम ग्रहतुम १० परा शक्ति
से ग्रहण किये द्रु ११ हौ १२ यह परा शक्ति १३ तेरा १४ स्थान है १५ पृथि
वी स्वर्ग के अग भूत दिशाओं के लिये १६ तुम्हें सादन करता हूँ ॥ ११ ॥

तस्य न्नथा पूर्वथा विश्वथेमथा जेष्टतातिस्वर्हि
षदं स्वर्विदम् । प्रतीचीनं वृजनेदोह से धुनि
माशुज्जयन्त मनुयासुर्विदम् । उपयाम गृहितो
सि शाण्डो यत्त्वैष ते यो निर्वीरता म्याह्यप मृष्टः
शाण्डो देवास्त्वाशु कृपाः प्रणयन्त्वनाघृष्टासि १२
यासु अनुर्विदम् । तुम । ज्येष्ठतातिम् । वर्हिषदम् । स्वर्विदम्
प्रतीचीनम् । धुनिम् । आशुम् । जयन्तम् । वृजनेम् । दोहसे ।

* श्रुति में लिखा है कि ये दशा सब प्राणियों के मधु हैं और सब प्रा
णी इन दिशाओं के मधु हैं इन दिशाओं में जो यह तेजो मय अमृत मय
पुरुष है और ओत्र में जो यह तेजो मय अमृत मय पुरुष है वह वही है
जो यह आत्मा है, यह अविनाशी है यह ब्रह्म है यह सब है ॥

प्रत्नया। पूर्वया। विश्वया। दुर्मया। उपयाम् गृहीतः। असि।
 शण्डाय। त्वा। एष। ते। योनिः। वीरताम्। पाहि। शण्डः। अ
 पमृष्टः। शुक्रपाः। देवाः। त्वा। पणयन्तु। अनाद्यष्टा। अ
 सि॥ १२॥

अथाधिदेवम् — इस कंडिका में पांच मंत्र हैं उन को कहते हैं, वि
 ल पात्र अथवा वैकडू त पात्र के द्वारा शुक्र नाम ग्रह को ग्रहण करता है उ
 सके मंत्र १२ चमसोन्नयन के पीछे अध्वर्यु और प्रतिप्रस्थाता शुक्र और
 मन्थी ग्रहों के साथ यथाक्रम चलते हैं प्रोक्षित दो यूप शकल के साथ अ
 प्रोक्षित दो यूप शकल को लेकर प्रोक्षितों से उन दोनों ग्रह को क्रम पूर्वक
 आच्छादन करके अप्रोक्षितों से दोनों ग्रह को मार्जित करते हैं वहां प्रोक्षि
 त शकल से ग्रह को ढक कर अप्रोक्षित शकल से अध्वर्यु शुक्र ग्रह को मा
 र्जित करता है उसका मंत्र ३ अध्वर्यु शुक्र लिङ्ग द्वारा और प्रतिप्रस्थाता मन्थि
 लिङ्ग द्वारा हविर्धान के मध्य से निकलते हैं उसका मंत्र ४ अध्वर्यु और प्र
 तिप्रस्थाता वेदी के पिछले भाग में अरुन्नी का संयोजन कर ग्रहों का त्याग
 न करते उत्तर वेदी की ओर में ग्रहों का सादन करते हैं तहां अध्वर्यु दक्षि
 ण ओर में शुक्र ग्रह को और प्रतिप्रस्थाता उत्तर वेदी की ओर में मंथि
 ग्रह को सादन करता है उसका मंत्र ५

ओंतमित्यस्य (वस्तारः काश्यपः० निच दाषीजगती० विश्वे देवादे)१
 ओंउपयामेत्यस्य (तथा ० आर्युषिकछं० ० ग्रहोदे)२
 ओअपमृष्टेत्यस्य (तथा ० याजुषी गायत्री० ० आभिचारिक)३
 ओदेवास्त्वेत्यस्य (तथा ० याजुषी पंक्तिश्च० ० शुक्रपादे)४
 ओअनाद्यष्टासीत्यस्य (तथा ० देवी पंक्तिश्च० ० वेदि ओणीदे)५

पदार्थः — हे यजमान तुम १ जिन यज्ञ किया ओं में २ यज्ञ के फल से

वृद्धि पाते ह्येन किं याओं में ३ उस ४ उत्कृष्ट विस्तारवान ५ लोक में स्थित ६ विराडात्मा सूर्य के ज्ञाता ७ ब्रह्म के सन्मुख ८ शत्रुओं के कंपित करने वाले ९ १० ब्रह्मा विष्णु महेश रूप धारी महा विष्णु के प्राप्त करने वाले ११ भक्ति वल वा योग वल को १२ प्राप्त करते ह्ये १३ जैसे भृगु आदि ऋषियों ने प्राप्त किया १४ तथा सनकादि ऋषियों ने प्राप्त किया १५ तथा जैसे ऋषि पुत्रों ने प्राप्त किया १६ तथा जैसे वर्त्तमान काल के महात्मा प्राप्त करते हैं हे ऋक्ष ग्रह तुम १७ उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए १८ ह्ये १९ असुर प्रोहित के लिये २० तुम्हें ग्रहण करता हूँ हे ग्रह २१ यह खर प्रदेश २२ तेरा २३ स्थान है २४ वीरता को २५ रक्षा करौ २६ असुरों का पुरोहित २७ शुद्ध किया हे सु क ग्रह २८ सु क ग्रह स्थ सोम के पान करने वाले २९ देवता ३० तुम्हें को ३१ यजति स्थान में प्राप्त करो हे उत्तर वेदी की ओणि तुम ३२ अनुपहिसित ३३ ह्ये ॥ १२ ॥

अथाध्यात्मम् हे योगी तुम १ जिन योग कियाओं में २ समष्टि भाव को प्राप्त करते ह्ये उत किं याओं में ३ उस ४ बड़े विस्तारवान ५ लोक में स्थित ६ ईश के ज्ञाता ७ ब्रह्म के सन्मुख ८ काम आदि के कंपित करने वाले ९ १० महानारायण को प्राप्त करने वाले ११ परोक्ष ज्ञान वल को १२ प्राप्त करते ह्ये १३ जैसे भृगु आदि महर्षियों ने प्राप्त किया १४ तथा जैसे सनकादि ऋषियों ने प्राप्त किया १५ तथा जैसे ऋषि पुत्रों ने प्राप्त किया १६ तथा जैसे वर्त्तमान काल के महात्मा प्राप्त करते हैं हे चक्षु तुम १७ पराशक्ति से ग्रहण किये हुए १८ ह्ये १९ प्रजापति भर्गु नारायण शङ्कर का रूप धारण करने वाले सूर्य के अर्थ २० तुम्हें ग्रहण करता हूँ हे चक्षु २१ यह पराशक्ति २२ तेरा २३ स्थान है २४ संसार जय में प्रस्ता को २५ रक्षा करौ २६ काम २७ मले प्रकार शोधन किया गया हे मानस सूर्य २८ सूर्य का पान करने वाले २९ ब्रह्म परानारायण

देवता ३० तुभको ३१ ब्रह्म में प्राप्त करौ हे हादीन्नरिस्त की ओर पितृम ३२ का मन्त्रादि से उपहंसित ३३ नहीं हो ॥ १२ ॥

सुवीरो वीरान् प्रजनयन्परीक्ष्य मि रायस्योषे

ए यजमानम् । सज्जमानो दिवा पृथिव्या

शुक्रः शुक्रशोचिषानिरस्तः शण्डः शुक्र

स्याधिष्ठानमसि १३

सुवीरः । वीरान् । प्रजनयन् । रायः । पोषेण । यजमानम् । अ
भि । परीहि । शुक्रः । शुक्रशोचिषा । पृथिव्या । दिवा । सज्ज
मानः । शण्डः । निरस्तः । शुक्रस्य । अधिष्ठानम् । असि । १३

अथाधिदैवम् — इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उनको कहते हैं, अध्वर्युदक्षिण यूप देश को और प्रतिप्रस्थाता उत्तरयूप देश को जाता है उसका मंत्र १ अध्वर्यु और प्रतिप्रस्थाता यूप के पश्चिम भाग में उस २ ग्रहवाचक पदलिङ्ग को अतिक्रमन करके अरुत्नी का संयोजन करते हैं उसका मंत्र ३ अध्वर्यु अप्रोक्षित यूप शकल को फेंकता है उसका मंत्र ४ अध्वर्यु आहवनीय में प्रोक्षित यूप शकल को डालता है उसका मंत्र ४

ॐ सुवीर इत्यस्य (वत्सार काश्यप ऋक् सांन्नीविष्टपृच्छ शुक्रदेव) १

ॐ सज्जमान इत्यस्य (तथा सांन्नीविष्टपृच्छ तथा) २

ॐ निरस्त इत्यस्य (तथा दैवी पंक्ति ऋक् अग्निचारिक) ३

ॐ शुक्रस्येत्यस्य (तथा आज्ञा पत्या गायत्री छंदः शकल देव) ४

पदार्थः — हे शुक्र ग्रहतुम् १ ऋष्ट पराक्रम से युक्त होते २ यजमान के शूर भृत्य आदि को ३ उत्पन्न करते ४ ५ धन पुष्टि से ६ यजमान को देखकर ७ चारों ओर से प्राप्त करौ ८ शुक्र ग्रहतुम् ९ शुद्ध दीप्ति के साथ ११ भूलोक १२ और स्वर्गलोक को १३ तृप्ति के साथ प्राप्त होने वाले

हो १४ असुरो कापुरेहित १५ यन्त सेवाहरनिकाला हेयूपशकलतुम १६
यूपग्रहके १७ आधार १८ हो ॥ १३ ॥

अथाध्यात्मम् - हे आत्म प्रति विंव १ अष्ट योग बल से युक्त तुम
२ शमदम आदि को ३ उत्पन्न करते ४, ५ योग लक्ष्मी की पुष्टि द्वारा ६ आ-
त्मा को ७ सब ओर से प्राप्त करो ८ सूर्य रूप तुम ९ शुद्ध दीप्ति के साथ १०
मानस कमल ११ और हार्द काश में १२ भले प्रकार प्राप्त हो १३ काम १४
योग यन्त सेवाहरनिकाला हे सूक्ष्म शरीर तुम १६ मानस सूर्य के १७
आधार १८ हो न कि काम के ॥ १३ ॥

अच्छिन्नस्य ते देव सोम सुवीर्यस्य रायस्यो
पस्यदितारः स्याम । सा प्रथमा संस्कृतिर्वि
श्ववारास प्रथमो वरुणो मित्रो अग्निः ॥ १४ ॥
देवो सोमो अच्छिन्नस्य । सुवीर्यस्य । तो रायः । पोषस्य । द-
दितारः । स्याम । सा । विश्ववारा । संस्कृतिः । प्रथमो । सा प्र-
थमः । वरुणः । मित्रः । अग्निः ॥ १४ ॥

अथाधिदैवम् - इस कडिका में दो मंत्र हैं उनको कहते हैं, यज-
मान जप करता है उसका मंत्र १ अश्वर्यु और प्रतिपस्थाता यूप के दो-
नों पार्श्व में पश्चिम मुख स्थित हो कर होम करते हैं तहा अश्वर्यु आ-
दि में शुक्र ग्रह को और प्रतिपस्थाता पीछे मन्थि ग्रह को होमता है
उसका मंत्र २

ओं अच्छिन्नस्येत्यस्य (वत्सारः काश्यप ऋः आज्ञा पत्यापक्ति ऋः सोमो दे १
ओं सा प्रथमा इत्यारभ्य (तथा ० विराडापीनिष्टपंछं इन्द्रो दे २
स्वाहान्तस्य

पदार्थः - १ आत्मा रूप यजमान जप करता है १ हे दीप्यमान २

सोम ३ अखंडित ४ कल्याण प्रभाव वाले ५ आपके अनुग्रह से हम ६ ७ ध-
नपुष्टि के ८ दाता ९ होवें १० वह ११ सब चतुर्वर्जों से वरणीय १२ सोम का
संस्कार १३ मुख्य है १४ और वह १५ परमेश्वर १६ वरुण रूप १७ सूर्य-
रूप १८ और अग्नि रूप है ॥ १४ ॥

अथाध्यात्मम्— १ हे ज्योति स्वरूप २ आत्म प्रतिविंब ३ सम-
ष्टि भाव को प्राप्त करने वाले ४ योग बल वाले ५ आपकी ६ ७ अष्ट सिद्धि-
आदि की पुष्टि के ८ दाता ९ हम होवें १० वह ११ सबसे वरणीय १२ संस्का-
र १३ मुख्य है १४ और वह १५ महानारायण १६ ज्योतिरस अमृत रूप
१७ सूर्यान्तरगत भर्ग रूप १८ और ब्रह्माग्नि रूप है ॥ १४ ॥

सप्रथमो बृहस्पतिश्चिक्त्वांस्तस्मा इन्द्रो
यसुतमाजुहोत स्वाहा । तृम्यन्तु होत्रा मध्वो
याः स्विष्टायाः सुपीताः सुद्धता यत्स्वाहा या
हुग्नीत १५

सः १ चिक्त्वा २ न ३ बृहस्पतिः ४ प्रथमः ५ तस्मै ६ इन्द्रो ७ य ८ सुत-
मा ९ स्वाहा १० आजुहोत ११ होत्राः १२ तृम्यन्तु १३ होत्राः १४ मध्वो १५ स्वि-
ष्टा १६ याः १७ सुपीताः १८ यत १९ स्वाहा २० सुद्धताः २१ अग्निः २२ इतो
अयादे ॥ १५ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में दो मंत्र हैं उनको कहते हैं
प्रथम प्रशास्तु चमस को होम कर अध्वर्यु जप करता है उसका मंत्र १
फिर अध्वर्यु होता के समीप पश्चिम मुख बैठता है उसका मंत्र २
उत्तम्यन्त्वित्यस्य (विस्तारः काश्यप ऋ० प्राजापत्या बृहती छ० होत्रा दे०) १
उत्तम्यन्त्वित्यस्य (तथा ० देवी बृहती छ० १ तथा) २

पदार्थः— १ वह २ ज्ञान स्वरूप ३ वेद का स्वामी ४ सब का प्राप्य है

५उत्स६परमेश्वरकेलिये७अभिषुत सोम को ८ स्वाहाकार पूर्वक ९ होम करे १०
छन्दोभिमानि देवता ११ तम हो १२ वह १३ मधुर स्वादु वाले सोम के १४ भले प्रिय
हैं १५ और जो १६ अच्छे प्रसन्न हैं १७ उस कारण १८ स्वाहाकार पूर्वक १९ सोम के
लिये नियुक्त हुए २०, २१ अग्नि ने ही २२ होम किया न कि दूसरे ने ॥ १५ ॥ ९

अथाध्यात्मम् - १ वह २ ज्ञान स्वरूप ३ असंख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी म
हानारायण ४ आद्य है ५ उत्स६ मायानाशक महानारायण के अर्थ ७ अभिषु
त प्रति विवरस आत्मा को ८ महावाक् पूर्वक ९ होमो १० ब्रह्म भाव को प्राप्त वा
क् आदि ११ ब्रह्म भाव से तम हो १२ जो वाक् आदि १३ ब्रह्म ज्ञानी आत्म प्रति वि
व के १४ अत्यंत प्रिय हैं १५ और जो वाक् आदि १६ ब्रह्म नंद से युक्त हैं १७ जि
स कारण १८ महा वाक् पूर्वक १९ होम के लिये नियुक्त हुए २०, २१ ब्रह्म अग्नि
ने ही २२ होम किया उसे भिन्न चैतन्य के न होने से ॥ १५ ॥

अयं वेन श्रौत यत्प्रश्नि गर्भाज्योतिर्जरायु रज
सो विमाने । इममपाथं सङ्गमे सूर्यस्य शिशुन
विप्रमतिभीरिहन्ति । उपयाम गृहीतो सिमकी

युत्वा ॥ १६ ॥

अयो ज्योतिर्जरायुः । वेने । रजसः । विमाने । प्रश्नि गर्भाः । अचो
दयत । विप्रः । सूर्यस्य । अपाथं । सङ्गमे । इममे । शिशुने ।
मतिभिः । रिहन्ति । उपयाम गृहीतः । असि । मकीयं । त्वां ॥ १६ ॥

अथाधिदैवम् - मन्थि पात्र में मन्थि ग्रह को ग्रहण करता है उस
के मंत्र १, २
ओ अय वेन इत्यस्य (वत्सारः काश्यपः ऋः निच दाषी निष्ठु पृच्छः सोमो देव) १
ओ उपयामेत्यस्य (तथा ॥ १६ ॥ साम्नी गायत्री छः तथा) २
९ जैसा भगवाने कहा है कि शुवा आदि, हवि, अग्नि और यजमान सब ब्रह्म हैं ॥

पदार्थः— १ यह २ विजली की समान मंडल से युक्त ३ शोभा मान चंद्रमा ४ परसात्मक विमान में ६ स्वर्गस्थ वा सूर्यस्थ जलों को ७ प्रेरणा करता वा वर्षा ता है ८ वेद के ज्ञाता ब्राह्मण ९ सूर्य १० और जलों के ११ सङ्गम में वर्षा होने के अर्थ १२ इस चंद्रमा को १३, १४ बालक की समान १५ बुद्धि पूर्वक बचनों से १६ स्तुत करते हैं हे मन्यि ग्रह तुम १७ उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए १८ हो १९ असुर प्रेहित के लिये २० तुम्हें ग्रहण करता हूं ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम्— १ यह २ ज्योतिर्मय कमल से वेष्टित ३ समष्टि भाव को प्राप्त मन ४, ५ ज्योतिर्मय विमान गगन मंडल में ६ गगनामृत रूप जलों को ७ वर्षाता है ८ मेधावी योगीजन ९ मानस सूर्य १० और कमलान्तरिक्षों का ११ सङ्गम होने पर १२ इस मन को १३, १४ बालक की समान १५ ज्ञान स्वरूप बचनों से १६ स्तुत करते हैं हे समष्टि मन तुम १७ पराशक्ति से ग्रहण किये हुए १८ हो १९ चंद्रमा के पूज्य महानारायण के अर्थ २० तुम्हें ग्रहण करता हूं ॥ १६ ॥

मनोनयेषु हवनेषु तिग्मं विपः शच्या वनु योद्वेन्ता ।
आयः शय्या भिस्तु विनृमो अस्या श्रीणीता दिशङ्ग भस्ता वेषते योनिः प्रजाः पाह्यपमृष्टो मर्क देवास्त्वा मन्यि पाः प्रणयन्त्वना

धृष्टासि ॥ १७ ॥

द्रवन्ताः । विपः । शच्या । मनोनयेषु । हवनेषु । तिग्मं । वनुययः । तुविनृमाः । अस्य । गभस्तौ । शय्याभिः । आदिशम् । अश्रीणीत । तौ । एषौ । योनिः । प्रजाः । पाहि । मर्कः । अपमृष्टः । मन्यिपाः । देवाः । त्वा । प्रणयन्तु । अनाधृष्टा । असि ॥ १७ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उनको कहते हैं इस मंत्र ग्रह

कोयवपिष्टि से युक्त करता है उसका मंत्र १ प्रति प्रस्थाता प्रोक्षित धूप शकल से मन्थि ग्रह को ढक कर अप्रोक्षित से मार्जन करता है उसका मंत्र २ प्रति प्रस्थाता हविर्धान से निकलता है उसका मंत्र ३ प्रति प्रस्थाता मन्थि ग्रह को सादन करता है उसका मंत्र ४

ओं मनो नये धित्यस्य (वत्सारः काश्यपः ० आर्षी पंक्तिश्च ० सोमो देः) १

ओं षष्ठत इत्यस्य (तथा ० याजुषी बृहती च ० ग्रहो देः) २

ओं देवास्तेत्यस्य (तथा ० याजुषी पंक्तिश्च ० मन्थिदैवतं) ३

ओं अनाधृष्टासीत्यस्य (तथा ० याजुषी गायत्री च ० अभिचारिकं) ४

पदार्थः १ हे गतिमान २ मेधावी ऋत्विजो तुम ३ वैदिक मंत्र द्वारा ४ मनजिनका नेता है ऐसे ५ सोम होमों में ६ तीक्ष्ण मन्थि ग्रह को ७ प्राप्त हो ८ जो वृद्ध धनवाला मन्थि ग्रह १० इस अध्वर्यु के ११ हाथ में १२ अंगुलियों से १३ सर्व ओर १४ यवपिष्टि से मिश्रित हुआ है मन्थि ग्रह १५ तेरा १६ यह १७ स्थान है तुम १८ यजमान सम्बन्धी प्रजा को १९ पालन करो २० असुर पुरोहित २१ भुक्त किया है मन्थि ग्रह २२ मन्थि पान करने वाले २३ देवता २४ तुम्हें २५ यजति स्थान में प्राप्त करौं हे उत्तरवेदी की ओणी तुम २६ अनुप हिंसित २७ हो ॥ १७ ॥

अथाध्यात्मम् — १ हे गतिमान २ मेधावी वाक् आदि ऋत्विजो तुम ३ योग क्रिया के साथ ४ मनजिनका नेता है ऐसे ५ प्रतिविम्ब रसात्मा के होमों में ६ तीक्ष्ण मन को ७ प्राप्त करो ८ जो धं वड़े ऐश्वर्यवाला मन १० इस योगी की ११ आत्मज्योति में १२ वाणरूप इन्द्रियों के साथ १३ सर्व ओर से १४ मिश्रित हुआ है मन १५ तेरा १६ यह पराशक्ति १७ स्थान है तुम १८ इन्द्रियों को १९ रक्षा करो २० मनरूप चन्द्रमा २१ संस्कारी हुआ है मन २२ मन के रक्षक २३ ब्रह्म परानारायण नाम देवता २४ तुम्हें २५ अपने आत्मा

में प्राप्त करो हे गगन भूमितुम २६ अनुपहसित २७ हो ॥ १७ ॥

सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन्परीह्यभिरायस्पोषेण
यजमानम् । सज्जगमानो दिवा पृथिव्या मन्थी
मन्थि शोचिषा निरस्तो मर्क मन्थिनो अधिष्ठान
मसि ॥ १८ ॥

सुप्रजाः १ प्रजाः २ प्रजन ३ यन ४ रायः ५ पोषेण ६ यजमान ७ अभि ८
परीह ९ मन्थी १० मन्थि शोचिषा ११ दिवा १२ पृथिव्या १३ सज्ज १४
गमानः १५ मर्कः १६ निरस्तः १७ मन्थिनः १८ अधिष्ठानं १९ असि २०
अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उनको कहते हैं, प्रतिप्रस्था
ता उत्तर यूप देश को जाता है उसका मंत्र १ अस्त्री का संधान करता है उ
सका मंत्र २ प्रतिप्रस्थाता ओक्षित यूप शकल को निकालता है उस
का मंत्र ३ प्रतिप्रस्थाता ओक्षित यूप शकल को आहवनीय में डालता
है उसका मंत्र ४ -

ओं प्रजा इत्यस्य (वत्सारकाश्यप ऋ० साम्नीनिष्ठपृष्ठ० मधिदैवतं) १
ओं सज्जगमान इत्यस्य (तथा ० साम्न्यनुष्ठपृष्ठ० तथा ०) २
ओं निरस्त इत्यस्य (तथा ० देवीपंक्तिं ऋ० अभिचारिकं) ३
ओं मन्थिन इत्यस्य (तथा ० आज्ञापत्यागायनीं ऋ० शकलं दे०) ४

पदार्थः - हे मन्थि ग्रह १ ओष्ठ प्रजा वाले तुम २ यजमान सम्बन्धी प्रजा को
३ उत्पन्न करते ४, ५ धन पुष्टि के साथ ६ यजमान के ७ सन्मुख ८ आओ ९
मन्थी नाम ग्रह तुम १० अपनी दीप्ति के साथ ११, १२ पृथिवी और स्वर्ग
लोक से १३ युक्त हो १४ असुर पुरोहित १५ यज्ञ से निकाला गया हे य
ूप शकल तुम १६ मन्थी के १७ आधार १८ हो ॥ १८ ॥

अथाध्यात्मम् - हे मन १ इन्द्रियों को वश करने वाले तुम २ शम

दमआदिकौ३उत्पन्न करते ४५ योगैश्वर्यकी पुष्टिके साथ६आत्माके७सन्मुख
ख८आओ ९चंद्रमारूपतुम१०अपनीदीप्तिके साथ१११२समाधिमेंभृकुटि
और हार्दिकाशसे१३युक्त हो १४मनसे पूजित काम१५योग यज्ञ सेबाहरनि
कालागयाहेभृकुटिकमलतुम१६मनके१७आधार१८हो॥१८॥

येदेवासोदिव्येकादशस्थपृथिव्यामध्येकादश

स्थ। अप्सुक्षितोमहिर्नैकादशस्थतेदेवासोयज्ञ

मिमृजुषद्धम्॥१९॥

देवासः१। यो२महिर्ना३। दिवि४। एकादश५। स्थ६। पृथिव्या७। अधि८
एकादश९। स्थ१०। अप्सुक्षितः११। एकादश१२। स्थो१३। ते१४। देवासः१५। इमं१६
यज्ञं१७। जुषध्वम्१८॥१९॥

अथाधिदैवम्- दोनों धारा के झरते हुए आग्रयणग्रह को स्थालीसे
ग्रहण करता है उसका मंत्र १ आत्मा २ तप ३ सत्य ४ धर्म ५ श्रद्धा ६ धैर्य ७ शान्ति ८ अहिंसा ९ दया १० क्षमा ११
उंयेदेवासवत्यस्य (परुषेपञ्च० भुरिगाधीपंक्तिञ्च० विभ्वेदेवादे०) १

पदार्थः- १हे देवताओ २ जो तुम ३ अपनी महिमा से ४ स्वर्गमें ५ एका
दश रुद्र रूपसे एकादश हो ६ पृथिवी के ७ ऊपर ८ आत्मा सहित दशमा
ण रूपसे एकादश हो ९ समवायु रूपसे अन्नरिक्खनिवासी १० एकादश
११ हो वे १२ देवता तुम १३ इस १४ यज्ञनयोप्य आग्रयण को अथवा आत्म
को १५ सेवन करो ॥१९॥

उपयामगृहीतोस्याग्रयणोसिस्वाग्रयणः

पाहियज्ञस्याहियज्ञपतिविष्णुस्त्वामिन्द्र

येणपातुविष्णुन्त्वस्याह्यमि सर्वानि पाहि २०

उपयामगृहीतः१। असि२। आग्रयणः३। स्वाग्रयणः४। असि५। यज्ञं६।

पाहि७। यज्ञपतिमा८। पाहि९। विष्णुः१०। इन्द्रियेण११। त्वाम्१२। पातु१३। त्वम्१४।

विष्णोम। पौहि। सर्वानानि। अमि। पौहि॥ २०॥

अथाधिदेवम्- आग्रयणग्रहकेग्रहणकामंत्र
ॐ उपयामेत्यस्य (परुषेपञ्च० निचुदार्षीजगती छं० आग्रयणोदे०) १०

पदार्थः- हे आग्रयणग्रहतुम १ उपयामपात्र से स्वीकृत २ हौ ३ ब्रह्माविष्णु
महेश को प्राप्त करने वाले ४ और त्रिदेवरूपधारी महा विष्णु की प्राप्ति करने
वाले ५ हौ वै से तुम ६ द्रव्य यज्ञ को ७ रक्षा करो ८ यजमान को ९ रक्षा करो १० यज्ञ
का अधिष्ठाता विष्णु ११ अपनी सामर्थ्य से १२ तुम्हें १३ रक्षा करो १४ तुम १५ भ-
क्तियज्ञ को १६ रक्षा करो १७ तीनों सवन को १८ सव और से १९ रक्षा करो ॥ २० ॥

अथाध्यात्मम्- हे जीवात्मा तुम १ पर शक्ति से स्वीकृत २ हौ ३ आयुज्य
मोक्ष में ब्रह्माविष्णु महेश के भोजन ४ और कै कल्य मोक्ष में महानारायण के भो-
जन ५ हौ तै से तुम ६ ज्ञान यज्ञ को ७ रक्षा करो ८ अपने आत्मा को ९ रक्षा करो
१० यज्ञ का अधिष्ठाता विष्णु ११ अपनी सामर्थ्य से १२ तुम्हें १३ रक्षा करो १४
तुम १५ योग यज्ञ को १६ रक्षा करो १७ तीनों सवनों को १८ सव और से १९ रक्षा
करो ॥ २० ॥

सोमः पवते सोमः पवते स्मै ब्रह्मणे स्मै क्षत्राया
स्मै सुन्वते यजमानाय पवत इष उर्जे पवते क्ष
ओषधीभ्यः पवते द्यावा एधि वीभ्याम् पवते सुभू
ताय पवते विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः एषते योनिर्वि
श्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः २१
सोमः। अस्मै। ब्रह्मणे। पवते। सोमः। अस्मै। क्षत्राया। पवते। अ
स्मै। सुन्वते। यजमानाय। पवते। इषे। उर्जे। पवते। अक्षे। ओ
षधीभ्यः। पवते। द्यावा एधि वीभ्याम्। पवते। सुभूताया। पवते।
त्वा। विश्वेभ्यः। देवेभ्यः। एषते। योनिर्वि। विश्वेभ्यः। देवेभ्यः। त्वे

॥२१॥ **अथाधिदैवम्** - दशापवित्रसे आग्रयण को ग्रहण करती नवार हिङ्गा
 १ करके (सोमः पवते) इसको तीन बार उच्चारण कर शेष को एक बार जप कर
 ता है उसका मंत्र १ ग्रह के ग्रहण का मंत्र २ ग्रह के सादन का मंत्र ३
 ओं सोम इत्यस्य (परछेप ऋ० भुरिग्राह्मी पंक्तिश्च० विष्वेदेवादे०) १
 ओं विष्वेभ्य इत्यस्य (तथा ० दैवी जगती छ० ग्रहो देवता) २
 ओं एषत इत्यस्य (तथा ० याजुषी जगती छ० तथा) ३

पदार्थः १ सोम ३ इस ३ ब्राह्मण जाति की प्रीति के अर्थ ४ ग्रह पात्रों में जा
 ता है ५ सोम ६ इस ७ सत्रिय जाति की प्रीति के अर्थ ८ ग्रह पात्रों में जाता है ९
 इस १० सोमाभिषव करने वाले ११ यजमान की कामसिद्धि के अर्थ १२ जाता है
 १३ वृष्टि के अर्थ १४ तथा वृष्टि रस के लाभार्थ १५ जाता है १६ रस की उत्पत्ति के
 अर्थ १७ तथा जो चावल आदि की सिद्धि के अर्थ १८ जाता है १९ पृथिवी स्वर्ग
 नाम दोनों लोक की तृप्ति के अर्थ २० जाता है २१ सब के कल्याणार्थ २२ जाता
 है हे आग्रयण ग्रह तै से २३ तुम्हें २४ सब २५ देवताओं की प्रीति के अर्थ ग्रह
 ण करता हूँ हे ग्रह २६ यह २७ तेरा २८ स्थान है २९ सब ३० देवताओं के अर्थ
 ३१ तुम्हें सादन करता हूँ ॥२१॥

अथाध्यात्मम् - १ आत्म प्रति विव ३ इस ३ मन के अर्थ ४ परा रूप पात्र
 में जाता है ५ आत्म प्रति विव ६ इस ७ प्राण के अर्थ ८ परा रूप पात्र में जाता है ९
 इस १० अभिषव करने वाले ११ आत्मा के अर्थ १२ परा रूप पात्र में जाता है १३
 गगना मृत वृष्टि के अर्थ १४ तथा ब्रह्मानन्द रस के लाभार्थ १५ परा रूप पात्र में
 जाता है १६ इन्द्रियों का जो अन्तरिक्ष है उसकी लय के अर्थ १७ तथा इन्द्रि
 यशक्ति की प्राप्ति के अर्थ १८ परा रूप पात्र में जाता है १९ मन और हृदय का जो
 अन्तरिक्ष है उसके लय के अर्थ २० परा रूप पात्र में जाता है २१ ब्रह्म भाव के
 अर्थ २२ परा रूप पात्र में जाता है हे आत्म प्रति विव ३३ तुम्हें ३४ सब ३५ देवता

अर्थात् ब्रह्म परानारायण के अर्थ ग्रहण करता हूँ २६ यह पराशक्ति २७ तेरा २८ स्थान है २९ सब ३० देवता अर्थात् ब्रह्म परानारायण के अर्थ ३१ तुझे सादन करता हूँ ॥ २१ ॥

उपयाम गृहीतो सीन्द्राय त्वा वृहद्वते वयस्वत
उक्था व्यङ्गमामि यत्त इन्द्र वृहद्वयस्तस्मै त्वा
विषावे त्वेष ते योनि रुक्थेभ्यस्त्वा देवेभ्यस्त्वा
देवा व्यङ्गमामि यज्ञस्यायुषे गृह्णामि ॥ २२ ॥

उपयाम गृहीतः। अस्मि। उक्था व्यम। त्वा। वृहद्वते। वयस्वते
इन्द्राय। गृह्णामि। इन्द्र। युता तै। वृहते। वयः। तस्मै। त्वा।
विषावे। त्वा। एष। तै। योनिः। रुक्थेभ्यः। त्वा। देवेभ्यः। देवा
व्यम। त्वा। यज्ञस्या। आयुषे। गृह्णामि ॥ २२ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उनको कहते हैं उक्थ्य
स्थाली से उक्थ्य नाम ग्रह को ग्रहण करता है उसका मंत्र १ उक्थ्य स्थाली
में स्थित सोम को तीन विभाग करके उक्थ्य पात्र में ग्रहण करता है उसके
मंत्र २, ३

ॐ उपयामेत्यस्य (परुच्छेपञ्च० आषीपक्तिञ्च० लिङ्गोक्तदे०) १

ॐ एषतइत्यस्य (तथा ० देवीजगतीञ्च० तथा ०) २

ॐ देवेभ्यइत्यस्य (तथा ० आचीगायत्रीञ्च० तथा ०) ३

पदार्थः हे उक्थ्य ग्रह तुम १ उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए ३ हो ३ मित्र
वरुण ब्राह्मण च्छसि, अच्छा वाक सम्बन्धी शस्त्रों के रक्षा करने वाले ४ तुम
को ५ वृहत् साम को प्रियमाने वाले ६ सोम रूप अन्न से युक्त ७ परमेश्वर के
अर्घ्य ८ ग्रहण करता हूँ ९ हे षट् एश्वर्य से सम्पन्न विष्णु १० जिस कारण ११
आपका १२ महान् १३ सोम रूप अन्न है १४ उसके पानार्थ १५ आपसे प्रार्थना

करता हूं हे सोम १६ विष्णु के अर्थ १७ तुझे ग्रहण करता हूं हे ग्रह १८ यह १९ तेरा २० स्थान है २१ उक्तों के अर्थ २२ तुझे सादन करता हूं हे सोम २३ देवताओं के लिये २४ देव तर्पक २५ तुझ को २६ २७ फल पर्यन्त स्थिति के अर्थ २८ ग्रहण करता हूं ॥ २२ ॥

अथाध्यात्मम्— हे अनिरुक्त आत्मा तुम पराशक्ति से ग्रहण किये हुए २ हो ३ प्राणरक्षक ४ तुझ को ५ वह तू सामरूप ६ ब्रह्मांड रूप अन्न के स्वामी ७ महानारायण के अर्थ ८ ग्रहण करता हूं ९ हे महानारायण १० जिस कारण ११ आपका १२ ब्रह्म भाव से सम्पन्न १३ अन्न है १४ उस कारण उसके पानार्थ १५ आपसे प्रार्थना करता हूं हे अनिरुक्त आत्मा १६ महा विष्णु के अर्थ १७ तुझे ग्रहण करता हूं हे ग्रह १८ यह पराशक्ति १९ तेरा २० स्थान है २१ प्राण लय के अर्थ २२ तुझे सादन करता हूं २३ ब्रह्म परानारायण नाम देवताओं के अर्थ २४ उन देवताओं के तर्पक २५ तुझ को २६ योग यज्ञ की २७ मोक्ष पर्यन्त स्थिति के अर्थ २८ ग्रहण करता हूं ॥ २२ ॥

मित्रावरुणाभ्यान्त्वा देवा व्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णा
मीन्द्रा यत्वा देवा व्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णा
मीन्द्राग्निभ्यान्त्वा देवा व्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णा
मीन्द्रावरुणाभ्यान्त्वा देवा व्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णा
मीन्द्रा वहस्पतिभ्यान्त्वा देवा व्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णा
मीन्द्रा विष्णुभ्यान्त्वा देवा व्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णामि २३

अ। देवा व्यं म। त्वा। यज्ञस्य। आयुषे। मित्रावरुणाभ्याम्।
॥ भगवानने गीता में कहा है। साम मंत्रों में वह तू साम में ही हूँ ॥

^७ गृह्णामि। ^८ अ० ^९ देवाव्यम्। ^{१०} त्वा० ^{११} यज्ञस्य। ^{१२} आयुषे। ^{१३} इन्द्राय। ^{१४} गृह्णामि।
^{१५} अ० ^{१६} देवाव्यम्। ^{१७} त्वा० ^{१८} यज्ञस्य। ^{१९} आयुषे। ^{२०} इन्द्राग्निभ्याम्। ^{२१} गृह्णामि।
^{२२} अ० ^{२३} देवाव्यम्। ^{२४} त्वा० ^{२५} यज्ञस्य। ^{२६} आयुषे। ^{२७} इन्द्रवरुणाभ्याम्। ^{२८} गृह्णामि।
^{२९} अ० ^{३०} देवाव्यम्। ^{३१} त्वा० ^{३२} यज्ञस्य। ^{३३} आयुषे। ^{३४} इन्द्रवृहस्पतिभ्याम्। ^{३५} गृह्णामि।
^{३६} अ० ^{३७} देवाव्यम्। ^{३८} त्वा० ^{३९} यज्ञस्य। ^{४०} आयुषे। ^{४१} इन्द्रविष्णुभ्याम्। ^{४२} गृह्णामि॥ २३॥

अथाधिदैवम् — इस कंडिका में ६ मंत्र हैं उनको कहते हैं, मैत्रावरुण कर्तृक शस्त्र की समान ग्रह याग के लिये उक्त स्थाली को उत्पादन करके उसमें रक्वे हुए सोम के तीसरे भाग को उक्त पात्र में ग्रहण करता है उसका मंत्र १ इसी प्रकार प्रतिप्रस्थाता उत्तर ग्रहों से चेष्टा करता है उसका मंत्र २ उक्त आदि सोम संस्थों में मैत्रावरुण आदि के तीसरे सवन के मध्य उक्त ग्रह का ग्रहण करता है उसके मंत्र ३, ४, ५, ६

ओमित्रावरुणाभ्यामित्यस्य (फरुछेपञ्च० आर्ची गायत्री छं० लिङ्गोक्त दे०) १

ओं इन्द्राय त्वेत्यस्य (तथा ० आसुरी गायत्री ० तथा ०) २

ओं इन्द्राग्निभ्यामित्यस्य (तथा ० प्राजापत्यानुष्टुप ० तथा ०) ३

ओं इन्द्रावरुणाभ्यामित्यस्य (तथा ० आर्ची गायत्री ० तथा ०) ४

ओं इन्द्रावृहस्पतिभ्यामित्यस्य (तथा ० निचदप्राजापत्यावृ० तथा ०) ५

ओं इन्द्राविष्णुभ्यामित्यस्य (तथा ० भुरिगसामनुष्टुप ० तथा ०) ६

पदार्थः— १ हे उक्त ग्रह २ देवता त्वम करने वाले ३ तुम को ४ यज्ञ की ५ फल पर्यन्त स्थितिके अर्थ ६ मित्रावरुण देवताओं के लिये ७ ग्रहण करता हूँ ८ हे ग्रह ई देव तर्पक ९ तुम को १० यज्ञ की ११ फल पर्यन्त स्थितिके अर्थ १२ इन्द्र के लिये १३ ग्रहण करता हूँ १४ हे ग्रह ई देव तर्पक १५ तुम को १६

यज्ञ की १६ फल पर्यन्त स्थिति के अर्थ २० इन्द्र अग्नि देवताओं के लिये २१ ग्रहण करता है २२ हे ग्रह २३ देवताओं की तृप्ति करने वाले २४ तुम्ह को २५ यज्ञ की २६ फल पर्यन्त स्थिति के अर्थ २७ इन्द्र वरुण देवताओं के लिये २८ ग्रहण करता है २९ हे ग्रह ३० देवताओं की तृप्ति करने वाले ३१ तुम्ह को ३२ यज्ञ की ३३ फल पर्यन्त स्थिति के अर्थ ३४ इन्द्र वहस्पति नाम देवताओं के लिये ३५ ग्रहण करता है ३६ हे ग्रह ३७ देवताओं की तृप्ति करने वाले ३८ तुम्ह को ३९ यज्ञ की ४० फल पर्यन्त स्थिति के अर्थ ४१ इन्द्र विष्णु नाम देवताओं के लिये ४२ ग्रहण करता है ॥ २३ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे आत्म प्रतिविव २ ब्रह्मा विष्णु महेश राम कृष्ण आदिरूपों से जीड़ा शील महानारायण की तृप्ति करने वाले ३ तुम्ह को ४ योग यज्ञ की ५ मोक्ष पर्यन्त स्थिति के अर्थ ६ आपा उदान के अर्थ ७ ग्रहण करता है ८ हे आत्म प्रतिविव ९ महानारायण की तृप्ति करने वाले १० तुम्ह को ११ योग यज्ञ की १२ मोक्ष पर्यन्त स्थिति के अर्थ १३ आनस कमल के लिये १४ ग्रहण करता है १५ हे आत्म प्रतिविव १६ महानारायण की तृप्ति करने वाले १७ तुम्ह को १८ यज्ञ की १९ मोक्ष पर्यन्त स्थिति के अर्थ २० आत्मा और मन के लिये २१ ग्रहण करता है २२ हे आत्म प्रतिविव २३ महानारायण की तृप्ति करने वाले २४ तुम्ह को २५ यज्ञ की २६ मोक्ष पर्यन्त स्थिति के अर्थ २७ हृदय और ब्रह्म के लिये २८ ग्रहण करता है २९ हे आत्म प्रतिविव ३० महानारायण की तृप्ति करने वाले ३१ तुम्ह को ३२ यज्ञ की ३३ मोक्ष पर्यन्त स्थिति के अर्थ ३४ मृकुटि और शिव के लिये ३५ ग्रहण करता है ३६ हे आत्म प्रतिविव ३७ महानारायण की तृप्ति करने वाले ३८ तुम्ह को ३९ यज्ञ की ४० मोक्ष पर्यन्त स्थिति के अर्थ ४१ गङ्गा मण्डल और विष्णु के लिये ४२ ग्रहण करता है ४३

६ प्रश्न - बड़े आदिमन्त्रों के मध्य अक्षर के पुक्त करने में क्या कारण है/उत्तर

मूर्ध्नि नन्दिवो अरतिमृधिव्या वैश्वानरमृतञ्चा
 जातमग्निम्। कविं सस्राजमतिथिञ्जनाना
 मासन्ना पात्रञ्जनयन्त देवाः ॥ २४ ॥

देवाः। दिवः। मूर्ध्नि नमः। एधिव्याः। अरतिम्। वैश्वानरम्। अरते
 आजातम्। कविं सस्राजम्। जनानाम्। अतिथिम्। आस-
 न्नपात्रम्। अग्निम्। अजनयन्त ॥ २४ ॥

अथाधिदैवम्—वैश्वानर की स्तुति का मंत्र
 ॐ मूर्ध्नि नमित्यस्य (भरद्वाज ऋ० आषी त्रिष्टुप् छ० वैश्वानरो दे०) १

पदार्थः—१ विद्वान् पुरुषों ने २ स्वर्ग लोक के ३ प्रकाशक सूर्य ४ एधि-
 वी के ५ ब्रह्माविष्णु महेश और शक्ति रूप ६ जादू राग्नि रूप से सब के हि-
 तकारी ७ यज्ञ में ८ दो अरणी से प्रादुर्भूत ९ जात दर्शी १० भले प्रकार दीप्य-
 मान ११ यजमानों के १२ अतिथि अर्थात् हवि से सत्कार योग्य १३ निकटस्थ
 हवि आदि के निवेश स्थान १४ अग्नि को १५ प्रकट किया ॥ २४ ॥

बंध मोक्ष अवस्था में एक ही आत्मा अचल और अविनाशी है, जैसा भग-
 वान ने कहा है, यह आत्मा कभी न जन्म लेता है न मरता है और होकर
 फिर होगा ऐसा भी नहीं है यह अजन्मा, नित्य, निरंतर रहने वाला और
 पुरातन है, शरीर के नष्ट होने पर नष्ट नहीं होता इस को शस्त्र नहीं छेद
 ते हैं, इस को अग्नि नहीं जलाता है, इस को जल गीला नहीं करते, वा-
 यु नहीं सुखाता है यह नित्य सर्वगत स्थाणु, अचल और सनातन है यह
 अव्यक्त है यह अचिन्त्य है, यह विकार मून्य कहाता है वह आत्मा बंध
 न अवस्था में भी अखंड, अचल और अविनाशी है, उसके दर्शन के लिये
 अकार को पदों में युक्त किया यह सर्वत्र अनुभव करना चाहिये ॥ २३ ॥

अथाध्यात्मम्— १ प्राणों ने २ गगन मंडल के ३ सूर्य ४ मन हृदय भृ-
कुटि रूप भूमि के ५ शक्ति सहित त्रिदेव रूप ६ जाठ रग्नि रूप से हित का
री ७ योग यज्ञ में ८ संस्कृत ९ ब्रह्म रूप १० भले प्रकार दी प्र्य मान ११ वाक्
आदि के १२ आतिथ्य योग्य १३ उपासक वाक् आदि के प्रवेश स्थान १४
आत्माग्नि को १५ प्रकट किया ॥ ३४ ॥

उपयाम गृहीतोसि ध्रुवोसि ध्रुवसिति ध्रुवाणाम्
अच्युतानाम् अच्युतसित्तम एष ते योनि
वैश्वानरो यत्त्वा । ध्रुवन्ध्रुवेण मनसा वाचा सोम
मव नयामि । अथान् इन्द्र इद्विशो सपत्नाः सम
न सुस्करत ३५

उपयाम गृहीतः । असि । ध्रुवसिति । ध्रुवाणाम् । ध्रुवतमः ।
अच्युतानाम् । अच्युतसित्तमः । ध्रुवः । असि । एष । ते । योनिः ।
वैश्वानरो यत्त्वा । ध्रुवेण । मनसा । वाचा । ध्रुवम् । सोमम् ।
अवनयामि । अथ । अ । इन्द्रः । इतः । नः । विशः । असपत्नाः ।
समनसा । करतः ॥ ३५ ॥

अथाधिदैवम्— इस के डिका में ४ मंत्र हैं उनको कहते हैं कर-
ण भूत ध्रुव स्थाली से ध्रुव नाम ग्रह को ग्रहण करता है उसका मंत्र १ ग्र-
ह सादन का मंत्र २ ध्रुव पात्र स्थ सब सोम को होत्र चमस में सींचता है उ-
सका मंत्र ३ इन्द्र की प्रार्थना का मंत्र ४

ॐ उपयास्येत्यस्य (भरद्वाज ऋक् निचदार्पणं पुषं ध्रुवो दे) १
ॐ एषत इत्यस्य (तथा यागुषी त्रिष्टुपं तथा) २
ॐ ध्रुवमित्यस्य (तथा निचदसानी रहती छं तथा) ३

ओं अथान इत्यस्य (भरद्वाज ऋ० निचृदा-वीगायत्री छ० इन्द्रो दे०) ४

पदार्थः - हे सोम तुम १ उपयाम पात्र मे ग्रहणा किये हुए २ हो ३ स्थिर निवास वाले ४ आदित्य स्थाली आदि के मध्य ५ अति शय स्थिर ६ च्युति हीन के मध्य ७ च्युति रहित पात्र में अति शय निवास करने वाले ८ ध्रुव नाम ९ हो हे ग्रह १० यह ११ तेरा १२ स्थान है १३ समष्टि अग्नि के अर्थ १४ तुम्हें सादन करता हूँ १५ एकाग्र १६ मन १७ और मंत्रोच्चारण में प्रवीण-वाणी के साथ १८ ध्रुव नाम १९ सोम को २० हो च चमस में सींचता हूँ २१ तदनंतर २२ सर्व व्यापी २३ परमेश्वर २४ ही २५ हमारी २६ प्रजा को २७ शत्रु रहित २८ स्थिर मन वाली वाधी रज से युक्त २९ करै ॥ २५ ॥

अथाध्यात्मम् - हे समष्टि भाव को प्राप्त जीवात्मा तुम १ परा शक्ति से ग्रहणा किये हुए २ हो ३ तुम ब्रह्म में स्थित ४ अचल पदार्थों में ५ अति शय अचल ६ जीवन मुक्तों के मध्य ७ अति शय ब्रह्मस्य ८ ब्रह्मरूप ९ हो हे सोमष्टि-भाव में प्राप्त जीवात्मा १० यह परा शक्ति ११ तेरा १२ स्थान है १३ सर्व मनुष्यों के हित कारक विष्णु के लिये १४ तुम्हें सादन करता हूँ १५ ब्रह्मरूप १६ मन १७ और वाणी से ८ ब्रह्म भाव को प्राप्त १९ जीवरूप असृत को २० परा पात्र में स्थापन करता हूँ २१ तिसके पीछे २२, २३, २४ सर्व व्यापी विष्णु ही हम योगियों के २५ २६ प्राणों को २७ काम आदि शत्रु से शून्य २८ और स्थिर मन वाले २९ करै प्रारब्ध समाप्तिक ॥ २५ ॥

यस्तद्रप्सस्कन्दति यस्ते अथ मुर्ग्यविच्युतोधि
षण्यारुपस्थातु अद्वय्या विपरिवायः पवित्रा
नन्ते जुहोमि मनसा वर्षे दत्तं स्वाहा देवानां
मुक्त्रमणमसि २६

^१तै। ^२यै। ^३द्रप्सः। ^४स्कन्दति। ^५तै। ^६यै। ^७अध्व० ^८श्रुः। ^९ग्रावच्युत। ^{१०}धि
^{११}षणा योः। ^{१२}उपस्थात्। ^{१३}वा। ^{१४}अध्व० ^{१५}य्योः। ^{१६}वा। ^{१७}युः। ^{१८}पवित्रात्। ^{१९}पौ
^{२०}तै। ^{२१}तम। ^{२२}मनसा। ^{२३}वषट्कृतम्। ^{२४}स्वाहा। ^{२५}जुहोमि। ^{२६}देवानाम।
^{२७}उत्क्रमणम्। ^{२८}असि॥ २६॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उनको कहते हैं, सब
 अध्वर्यु आदि सोम विन्दुओं को होमते हैं उसका मंत्र १ वेदी के मध्य से जो
 दो तृण ग्रहण किये उनमें से एक तृण को अध्वर्यु चात्वाल में डालता है
 उसके मंत्र २, ३

ॐ यस्तवत्यस्य (देव आवा ऋ० भुरिगार्षी त्रिष्टुप् छं० सोमो दे०) १
 ॐ स्वाहावत्यस्य (तथा ० दैवी उष्णिक् छं० अग्निर्दे०) २
 ॐ देवानामित्यस्य (तथा ० आसुरी जगती छं० चात्वालो दे०) ३

पदार्थः - हे सोम १ तेरा २ जो ३ रस का एक देश ४ भूमि पर वा अन्यत्र पड़ा
 ता है ५ तेरा ६ जो ७ अश्रु ८ पाषाण से गिरा ९ वा अधिष वण फलकों के १० उत्सग
 से ११ अथवा १२ अध्वर्यु के सकाश से गिरा १३ अथवा १४ जो १५ पवित्रा से १६ गिरा १७ तेरे १८ उस अश्रु को १९ जो कि मन से २० सकल्पित
 है २१ स्वाहा पूर्वक २२ होमता है हे चात्वाल तम २३ देवताओं के २४, २५
 वह स्थान हो जिस स्थान से स्वर्ग को जाते हैं ॥ २६ ॥

अथाध्यात्मम् - हे आत्म प्रति त्रिव १ तेरा २ जो ३ रस का एक देश ४
 भूतात्मा में गिरता है ५ तेरा ६ जो ७ अश्रु ८ प्राण से गिरा ९ वाणी और नि
 ब्धा के १० उत्सग से गिरा ११ अथवा १२ चक्षु से गिरा १३ अथवा १४ जो १५
 प्राण उदान, व्यान रूप पवित्र से १६ गिरा १७ तेरे १८ उस १९ मन से २० स
 कल्पित रस को २१ महा वाक्प से २२ ब्रह्माग्नि में होमता है हे मन तम २३

विद्वान योगियों की २४ ऊर्द्ध गति के कारण २५ होनकि अधोगति के कारण यह अभि प्राय है ॥ २६ ॥

प्राणायामे वर्चोदा वर्चसे पवस्व व्यानायामे वर्चोदा
वर्चसे पवस्वोदानायामे वर्चोदा वर्चसे पवस्व वाचे
मे वर्चोदा वर्चसे पवस्व कतूदक्षाभ्याम्मे वर्चोदा
वर्चसे पवस्व ओत्रायामे वर्चोदा वर्चसे पवस्व चक्षु
भ्याम्मे वर्चोदसौ वर्चसे पवेथाम् ॥ २७ ॥

मे। प्राणाय। वर्चोदा। वर्चसे। पवस्व। मे। व्यानाय। वर्चोदा
वर्चसे। पवस्व। मे। उदानाय। वर्चोदा। वर्चसे। पवस्व। मे।
वाचे। वर्चोदा। वर्चसे। पवस्व। मे। कतूदक्षाभ्याम्। वर्चोदा।
वर्चसे। पवस्व। मे। ओत्राय। वर्चोदा। वर्चसे। पवस्व। मे। च
क्षुभ्याम्। वर्चोदसौ। वर्चसे। पवेथाम् ॥ २७ ॥

अथाधिदैवम् - इसकडिका में ७ मंत्र हैं उनको कहते हैं अवेका
श नाम मंत्रों को उच्चारण करते हुए ग्रहों को ग्रहण कम से देखता है उ-
सके मंत्र १ से ७ तक ॥

ॐ प्राणाय + व्यानाय + ओत्राय (देव अवा ऋ० आसुर्येनुष्टुप् छ० लिङ्गोक्तदे०) १२
ॐ उदानाय + चक्षुभ्या (तथा आसुर्युष्णिग छ० तथा) १७
ॐ वाचेम इत्यस्य (तथा साम्नीगायत्री छ० तथा) २४
ॐ कतूदक्षाभ्यामित्यस्य (तथा आसुरीगायत्री छ० तथा) ७५

पदार्थः - हे उपांशु १ मेरे २ प्राण के लिये तेज के दाता तुम ४ हृदयस्थ
वायु के तेज के लिये ५ प्रवृत्त हो हे उपांशु सवन ६ मेरे ७ सब शरीर में विद्य-
मान वायु के लिये ८ तेज के दाता तुम ९ तेज के लिये १० प्रवृत्त हो हे अंतर्धाम

ग्रह ११ मेरे १२ कंठस्थ उदान वायु के लिये १३ तेज के दाता तुम १४ तेज के लिये १५ अवृत्त हो हे ऐन्द्र वायु १६ मेरे १७ वाक् इन्द्रिय के लिये १८ तेज के दाता तुम १९ तेज के लिये २० अवृत्त हो हे मैत्रावरुण ग्रह २१ मेरे २२ काम और काम समृद्धि के लिये २३ तेज २४ दानार्थ २५ प्रवृत्त हो हे आप्सि न ग्रह २६ मेरे २७ ओत्रेन्द्रिय के लिये २८ तेज के दाता तुम २९ तेज दानार्थ ३० प्रवृत्त हो हे शुक्र मन्थि नाम दोनों ग्रह ३१ मेरे ३२ नेत्रों के लिये ३३ तेज के दाता तुम ३४ तेज दानार्थ ३५ प्रवृत्त हूजिये ॥ २७ ॥

अथाध्यात्मम् - हे समष्टि प्राण १ मेरे २ प्राण के लिये ३ तेज के दाता तुम ४ ब्रह्म तेज के लिये ५ प्रवृत्त हो हे समष्टि व्यान ६ मेरे ७ व्यान के लिये ८ तेज के दाता तुम ९ ब्रह्म तेज के लिये १० प्रवृत्त हो, हे समष्टि उदान ११ मेरे १२ उदान के लिये १३ तेज के दाता तुम १४ ब्रह्म तेज के लिये १५ प्रवृत्त हो हे समष्टि वाक् १६ मेरे १७ वाक् के लिये १८ तेज के दाता तुम १९ ब्रह्म तेज के लिये २० प्रवृत्त हो हे समष्टि मन और हे मन की शक्ति २१ मेरे २२ काम और काम समृद्धि के लिये २३ तेज के दाता तुम २४ ब्रह्म तेज के लिये २५ प्रवृत्त हूजिये हे दिगाभिमानी देवता २६ मेरे २७ ओत्रेन्द्रिय के लिये २८ तेज के दाता तुम २९ ब्रह्म तेज के लिये ३० प्रवृत्त हो हे सूर्य चन्द्रमा ३१ मेरे ३२ नेत्रों के लिये ३३ तेज के दाता तुम दोनों ३४ ब्रह्म तेज के लिये ३५ प्रवृत्त हूजिये ॥ २७ ॥

आत्मनै मे वर्चो दा कर्च से पवस्वौ ज से मे वर्चो
दा कर्च से पवस्वा युषे मे वर्चो दा कर्च से पवस्व
विष्वाभ्यो मे प्रजाभ्यो वर्चो दसौ कर्च से पवे
याम् ॥ २८ ॥

मै। आत्मेने। वर्चो^३दो। वर्च^४से। पवस्व। मै। ओज^५से। वर्चो^६दा।
 वर्च^७से। पवस्व। मै। आयुषे। वर्चो^८दा। वर्च^९से। पवस्व। मै। वि-
 श्वाभ्याम्। प्रजाभ्यः। वर्चो^{१०}दिसौ। वर्च^{११}से। पवेथोम ॥ २८ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ग्रह देखने के ४ मंत्र हैं

ओं आत्मेने + ओजसे + आयुषे (देव अवाऋ० आसुर्यनुष्टुपछं० लिङ्गोक्तदे) १२३

ओं विश्वाभ्यः इत्यस्य (तथा ० भुरिग्साभ्युषिक्छं० तथा) ४

पदार्थः - हे आग्रयण १ मेरे २ आत्मा के लिये ३ तेज के दाता तुम ४ तेज
 दानार्थ ५ प्रवृत्त हो हे उक्थ्य ६ मेरी ७ इन्द्रियों की पुष्टि वा शरीरबल के लि-
 ये ८ तेज के दाता तुम ९ तेज दानार्थ १० प्रवृत्त हो हे ध्रुव ११ मेरी १२ आयु के
 लिये १३ तेज के दाता तुम १४ तेज दानार्थ १५ प्रवृत्त हो हे पूत भृदा धवनीय १६
 मेरे १७ स्व १८ प्रजाओं के लिये १९ तेज के दाता तुम दोनों २० तेज दानार्थ २१
 प्रवृत्त हजियै ॥ २८ ॥

अथाध्यात्मम् - हे समष्टि आत्मा १ मेरे २ आत्मा के लिये ३ तेज के
 दाता तुम ४ ब्रह्म तेज के लिये ५ प्रवृत्त हजियै हे समष्टि प्राणा ६ मेरे ७ इन्द्रि-
 यों के वलार्थ ८ तेज के दाता तुम ९ ब्रह्म तेज के लिये १० प्रवृत्त हजियै हे स-
 मष्टि आत्मा ११ मेरी १२ आयु के लिये १३ तेज के दाता तुम १४ ब्रह्म तेज के
 लिये १५ प्रवृत्त हजियै हे विराट् के आत्मा और मन १६ मेरे १७ स्व १८ प्रा-
 णों के अर्थ १९ तेज के दाता तुम २० ब्रह्म तेज के लिये २१ प्रवृत्त हजियै ॥ २८ ॥

कौसिकतमोसिकस्यासिकोनामासि। यस्य

तेनामामन्महियन्त्वा सोमेनातीतृपाम।

भूर्भुवः स्वः सुप्रजाः प्रजाभिः स्याथ सुवीरै

वीरैः सुपोषः पोषैः २९

१ कः। २ असि। ३ कतमः। ४ असि। ५ कस्य। ६ असि। ७ कः। ८ नाम। ९ असि। १० यस्य
 ११ तौ। १२ नाम। १३ अमन्महि। १४ यम्। १५ त्वा। १६ सोमेनु। १७ अतीतृपाम। १८ भूः। १९ भुवः
 २० स्वः। २१ प्रजाभिः। २२ सुप्रजाः। २३ वीरैः। २४ सुवीरः। २५ पोषैः। २६ सुपोषैः। २७ स्थो
 २८ ॥२८॥

अथाधिदैवम् - इसकंडिका में दो मंत्र हैं उनको कहते हैं अध्वर्यु
 मंत्र यजमान को कहलाता द्रोण कलश को देखता है उसका मंत्र १ यज
 मानजप करता है उसका मंत्र २

ओं कोसीत्यस्य (देवश्रुवाक्त्रं आर्चीपंक्तिश्चं प्रजापतिर्देव) १
 ओं भूर्भुवः स्वरित्यस्य (तथा भूरिसाम्नीपंक्तिश्चं तथा) २

पदार्थः - हे द्रोण कलश तुम् १ प्रजापति २ हो ३ अतिशय प्रजापति ४
 हो ५ प्रजापति के ६ हो ७, ८ प्रजापति नाम ९ हो हम १० जिस ११ तुम् के
 १२ नाम को १३ जानते हैं १४ और जिस १५ तुम् को १६ सोमसे १७ दत्त क
 रते हैं तुम् १८, १९, २० विराटरूप हो मे २१, २२ ओष्ठ सन्तान से युक्त होऊ २३
 और पुत्रद्वारा २४ ओष्ठ वीरवाला होऊ २५ धन आदि की पुष्टि से २६ ओष्ठ
 पुष्टिवाला २७ होऊ ॥२८॥

अथाध्यात्मम् - हे देह में स्थिति अंतर्यामी तुम् १ सगुण २ हो ३ नि
 गुण हो ४ ईश के अंश जीव ५ हो ६, ७ ब्रह्मा विष्णु महेश रूप धारी महा
 विष्णु ८ हो ९ जिस ११ तुम् के १२ नाम को १३ हम जानते हैं १४ और जि
 स १५ तुम् को १६ जीवात्मद्वारा १७ दत्त करते हैं तुम् १८, १९, २० विराटरू
 प हो योगी मे २१ इन्द्रियो से २२ ओष्ठ इन्द्रीवाला होऊ २३ प्राणो से २४ ओ
 ष्ट प्राणवाला होऊ २५ योगेश्वर्य की पुष्टि २६ ओष्ठ पुष्टिवाला २७ होऊ
 ॥२८॥

उपयामगृहीतोसिमध्वेतोपयामगृहीतोसि
 माधवायत्वोपयामगृहीतोसिभुक्तायत्वोपया
 मगृहीतोसिभुचयेत्वोपयामगृहीतोसिनभसे
 त्वोपयामगृहीतोसिनभस्यायत्वोपयामगृही
 तोसीषेतोपयामगृहीतोस्युर्जेत्वोपयामगृहीतो
 सिसहसेत्वोपयामगृहीतोसिसहस्यायत्वोप
 यामगृहीतोसितपसेत्वोपयामगृहीतोसितप
 स्यायत्वोपयामगृहीतोस्यथंहसस्पतयेत्वा३०

उपयामगृहीतः। असि। मध्वे। त्वा। उपयामगृहीतः। असि।
 माधवाय। त्वा। उपयामगृहीतः। असि। भुक्ताय। त्वा। उपयाम
 गृहीतः। असि। भुचये। त्वा। उपयामगृहीतः। असि। नभसे
 त्वा। उपयामगृहीतः। असि। नभस्याय। त्वा। उपयामगृही
 तः। असि। सीषे। त्वा। उपयामगृहीतः। असि। युर्जे। त्वा। उप
 यामगृहीतः। असि। सहसे। त्वा। उपयामगृहीतः। असि।
 सहस्याय। त्वा। उपयामगृहीतः। असि। तपसे। त्वा। उपया
 मगृहीतः। असि। तपस्याय। त्वा। उपयामगृहीतः। असि।
 अहसः। पतये। त्वा॥ ३०॥

अथाधिदैवम्— इस कडिका में १३ मंत्र हैं उनको कहते हैं, द्रोणक
 लश से ऋतु ग्रहों को ग्रहण करते हैं वहां मंत्रों को षट्जोड़ों में पहला २ मंत्र
 अश्वर्यु का और पिछला २ प्रतिप्रस्थाता का है और अश्वर्यु इच्छा करता है
 रहवे ग्रह को ग्रहण करता है उनके मंत्र १ से १३ तक ॥
 ओं १३, ३, ४, ५, ६, ११ मंत्राणां (देवश्रवा ऋ० साम्नीगायत्री छं० ऋतवो दे०) ॥

ओं ६१०, १३ मंत्राणां (देवश्रवा ऋ० आसुर्यनुष्टुप छं० ऋतवोदे०)

ओं ७, ८ मंत्रयोः (तथा ० याज्ञुपीपन्ति छं० तथा)

ओं १३ मंत्रस्य (तथा ० आसुर्युष्णिक छं० तथा)

पदार्थः हे ऋतुग्रहतुम उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए २ हो ३ प्रजापति के अंग भूत चैत्र मास के लिये ४ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे ऋतुग्रहतुम उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए ६ हो ७ प्रजापति के अंग भूत वैशाख मास के लिये ८ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे ऋतुग्रहतुम उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए १० हो ११ प्रजापति के अंग भूत ज्येष्ठ मास के लिये १२ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे ऋतुग्रहतुम उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए १४ हो १५ आषाढ मासाभिमानी देवता के लिये १६ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे ऋतुग्रहतुम उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए १८ हो १९ श्रावण मासाभिमानी देवता के लिये २० तुम्हें ग्रहण करता हूं हे ऋतुग्रहतुम उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए २२ हो २३ भाद्रपद मासाभिमानी देवता के लिये २४ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे ऋतुग्रहतुम उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए २६ हो २७ आश्विन मासाभिमानी देवता के लिये २८ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे ऋतुग्रहतुम उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए ३० हो ३१ कार्तिक मासाभिमानी देवता के लिये ३२ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे ऋतुग्रहतुम उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए ३४ हो ३५ मार्गशीर्ष मासाभिमानी देवता के लिये ३६ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे ऋतुग्रहतुम उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए ३८ हो ३९ पुष्य मासाभिमानी देवता के लिये ४० तुम्हें ग्रहण करता हूं हे ऋतुग्रहतुम उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए ४२ हो ४३

माघ मासा भिमानी देवता के लिये ४१ तुम्हें ग्रहण करता हूँ हे ऋतु ग्रह तुम ४५ उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए ४६ हौ ४७ फाल्गुण मासा भिमानी देवता के लिये ४८ तुम्हें ग्रहण करता हूँ हे ऋतु ग्रह तुम ४९ उपयाम पात्र से ग्रहण किये हुए ५० हौ ५१, ५२ अधिक मासा भिमानी देवता के लिये ५३ तुम्हें ग्रहण करता हूँ ॥ ३० ॥ ९

अथाध्यात्मम्— समष्टि भाव को प्राप्त हुआ होम करता है, हे वृद्धि ग्रह तुम १ परा शक्ति से गृहीत २ हौ ३ ब्रह्म ज्ञान के लिये ४ तुम्हें ग्रहण करता हूँ हे आत्म प्रति विंव तुम ५ परा शक्ति से गृहीत ६ हौ ७ नारायण के अर्थ ८ तुम्हें ग्रहण करता हूँ हे चक्षु तुम ९ परा शक्ति से गृहीत १० हौ ११ सूर्य के अर्थ १२ तुम्हें ग्रहण करता हूँ हे वाक् तुम १३ परा शक्ति से गृहीत १४ हौ १५ अग्नि के अर्थ १६ तुम्हें ग्रहण करता हूँ हे श्रोत्रेन्द्रिय तुम १७ परा शक्ति से गृहीत १८ हौ १९ आकाश के लिये २० तुम्हें ग्रहण कर

९ श्रुति में लिखा है कि वसन्त ऋतु के चैत्र और वैशाख मास में औषधि उत्पन्न होती हैं, वनस्पति पकती हैं इस कारण उनके नाम मधु और माधव हैं ग्रीष्म ऋतु के ज्येष्ठ और आषाढ़ मास में सूर्य अधिक तपता है इस कारण उनके नाम शुक्र और सुचि हैं। वर्षा ऋतु के आवण और भाद्रपद मास में आकाश से वर्षा होती है इस कारण उनका नाम नभ और नभस्य है। शरद ऋतु के आश्विन और कार्तिक मास में रस वान औषधियाँ पकती हैं इस कारण उनका नाम इष और ऊर्ज है हेमन्त ऋतु के मार्ग शिर और पौष मास में यह प्रजा शीत के वश में हो जाती है इस कारण उनका नाम सह और सहस्य है शिशिर ऋतु के माघ और फाल्गुण मास में सूर्य का तेज अधिक होता है इस कारण उनका नाम तप और तपस्य है ३०

ता हं हेत्वक् इन्द्रिय तुम २१ परा शक्ति से गृहीत २२ हौ २३ वायु के लिये २४
 तुम्हें ग्रहण करता हूं हे घ्राण इन्द्रिय तुम २५ परा शक्ति से गृहीत २६
 हौ २७ पृथिवी के लिये २८ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे रसेन्द्रिय तुम २९
 परा शक्ति से गृहीत ३० हौ ३१ जल देवता के लिये ३२ तुम्हें ग्रहण कर
 ता हूं हे पादेन्द्रिय तुम ३३ परा शक्ति से गृहीत ३४ हौ ३५ उपेन्द्र देवता
 के लिये ३६ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे पाणेन्द्रिय तुम ३७ परा शक्ति से गृ
 हीत ३८ हौ ३९ महेन्द्र देवता के लिये ४० तुम्हें ग्रहण करता हूं हे शयु
 न्द्रिय तुम ४१ परा शक्ति से गृहीत ४२ हौ ४३ मित्र देवता के लिये ४४
 तुम्हें ग्रहण करता हूं हे उपस्थ तुम ४५ परा शक्ति से गृहीत ४६ हौ ४७ प्र
 जापति के लिये ४८ तुम्हें ग्रहण करता हूं हे मन तुम ४९ परा शक्ति से गृ
 हीत ५० हौ ५१ ५२ चंद्र देवता के लिये ५३ तुम्हें ग्रहण करता हूं ५४
 ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

इन्द्राग्नी आगतं सुतङ्गी भिर्न भोवरेण्यम्

अस्य पातन्धि येषिता उपयाम गृहीतो सीन्द्रा

गि भ्यान्त्वे षते योनि रिन्द्राग्नि भ्यान्त्वा ३१

१ श्रुति में लिखा है कि जो वाक् है वह अग्नि ही है, जो चक्षु है वह सूर्य
 है, जो मन है वह चंद्रमा है, जो ओज है वह दिशा है इस बात को जानने
 वाला जो पुरुष देह त्याग करता है वह वाक् से अग्नि को, चक्षु से सूर्य
 को, मन से चंद्रमा को, और ओज से दिशा को प्राप्त करता है, पञ्च-स
 म्वत्सर और पुरुष की समता में क्या प्रमाण है १ उत्तर श्रुति से पुरुष ही
 सम्वत्सर है, सम्वत्सर में षट् ऋतु हैं और पुरुष में ६ प्राण हैं इस लिये स
 न ऋणा सम्वत्सर के १२ मास हैं और पुरुष में १२ प्राण हैं इस लिये स
 न ऋणा सम्वत्सर के १२ मास हैं और पुरुष में १२ प्राण हैं उनमें तेरह वीं नाभि है

इन्द्राग्नी१। सुत२म्। गीर्भिः३। नभः४। वरेण्यम्५। आगतं६ धिया७
 इषिता१। अस्य१४। पात२म्। उपयाम्१५ गृहीतः१६। असि१३। इन्द्राग्नि-
 भ्याम्१४। त्वा१। एष१। तो१। योनिः१६। इन्द्राग्निभ्याम्१४। त्वा१॥ ३१॥

अथाधिदैवम् - प्रतिप्रस्थाता उस ग्रह को जिसका देवता इन्द्रा-
 ग्नि है ग्रहण करता है उसके मंत्र १, २

ओं इन्द्राग्नीत्यस्य (विष्वा मित्र ऋ० निच दाषी गायत्री छं० इन्द्राग्नी दे०) १

ओं उपयामेत्यस्य (तथा ० आर्क्ष्युष्णिक् छं० ग्रहो दे०) २

पदार्थः - १ हे इन्द्र अग्नि देवताओं तुम २ अभिषवण किये हुए ३ वेदों
 के वचनों से ४ आदित्य स्वरूप ५ इसीलिये देवताओं से प्रार्थनीय सोम को
 ६ प्राप्त कीजिये ७ और यजमान की बुद्धि से ८ प्रार्थना किये हुए तुम दोनों
 ९ इस सोम का १० पान कीजिये हे सोम तुम ११ उपयाम पात्र से गृहीत १२
 हो १३ इन्द्र अग्नि देवताओं के लिये १४ तुम्हें ग्रहण करता हूं १५ यह १६
 तेरा १७ स्थान है १८ इन्द्र अग्नि देवताओं के लिये १९ तुम्हें सादन करता
 हूं ॥ ३१॥

अथाध्यात्मम् - ऊर्ध्व गति प्राप्ति के लिये प्राण उदान से प्रार्थना कर
 ता है १ हे प्राण उदान तुम दोनों २ अभिषवण किये हुए ३ महा वा को से ४
 आदित्य स्वरूप ५ ब्रह्म परा महानारायण से इषित शुद्धात्मा को ६ प्राप्त
 कीजिये ७ योग बुद्धि से ८ प्रार्थित तुम दोनों ९ इस शुद्ध आत्मा की १० रक्षा की
 जिये हे आत्मा तुम ११ परा शक्ति से गृहीत १२ हो १३ प्राण उदान के लिये
 १४ तुम्हें ग्रहण करता हूं १५ यह परा शक्ति १६ तेरा १७ स्थान है १८ प्राण
 उदान के लिये १९ तुम्हें सादन करता हूं ॥ ३१॥

इस लिये समान हुआ ॥ ३०॥

आघ्राये अग्निमिन्धते स्तृणान्ति वह्निं रानुषक्
 येषां मिन्द्रो युवा सरवा । उपयाम गृहीतोस्य ग्नी
 न्द्राभ्यान्त्वे षते योनि रग्नीन्द्राभ्यान्त्वा ॥ ३२ ॥
 यैः अग्निम् । आ । इन्धते । अनुषक् । वह्निः । स्तृणान्ति । येषा
 म । युवा । इन्द्रः । सरवा । अघ्रा । उपयाम गृहीतः । अग्निः । अग्नी
 न्द्राभ्याम् । त्वा । एष । ते । योनिः । अग्नीन्द्राभ्याम् । त्वा ॥ ३२ ॥

अथाधिदैवम् - अग्नीन्द्र ग्रह का ग्रहण करता है उसके मन्त्र १३
 जो आघ्राय इत्यस्य (विशोक ऋ० आषी गायत्री छ० अग्नीन्द्रो देवतो)
 जो उपयामेत्यस्य (तथा • आच्युषिणक् छ० ग्रहो देवः) ॥ ३२

पदार्थः - १ जो यजमान २ अग्निको ३ ४ इष्टि, पशु, सोम, चातुर्मस्य
 नाम अज्ञों में प्रज्वलित करते हैं ५ और कम पूर्वक ६ कुशाओं को ७ विछाते
 हैं ८ और जिन भक्तों का ९ जरा मृत्यु से रहित १० नारायण ११ सरवा है वे १२
 निष्पाप हैं हे सोम उन्हीं के यज्ञ में तुम १३ उपयाम पात्र से गृहीत १४ हो १५
 अग्नि इन्द्र देवताओं के लिये १६ तुम्हें ग्रहण करता हू हे सोम १७ यह १८ तेरा
 १९ स्थान है २० अग्नि इन्द्र देवताओं के लिये २१ तुम्हें सादन करता हू ॥ ३२

अथाध्यात्मम् - योग यज्ञ के ऋत्विज जो वाक् आदि २ आत्मा
 को ३ ४ प्राण समिध से प्रज्वलित करते हैं ५ और कम पूर्वक ६ इन्द्रियों
 को ७ योग भूमि में स्थापन करते हैं ८ और जिन्हों का ९ सब उपाधि से
 मृत्यु होने के कारण जरा मृत्यु से रहित १० आत्मा ११ सरवा है वे १२ नि
 ष्पाप हैं अर्थात् आत्मा स्वरूप हैं हे मुदात्म प्रति विव तुम १३ परा शक्ति
 से स्वीकृत १४ हो १५ मन हृदय रूप पृथिवी त्वर्ग के लिये १६ तुम्हें ग्रहण
 करता हू १७ यह परा शक्ति १८ तेरा १९ स्थान है २० मन और हृदय के लि

ये ११ तु मे सादन करता हूँ ॥ ३३ ॥

ओमासश्चर्षणी घृतो विश्वे देवास आगतः । दा
श्वः सोमा शुषः सुतम् । उपयाम गृहीतो सि
विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य एषते योनिर्विश्वेभ्यस्त्वा
देवेभ्यः ॥ ३३ ॥

विश्वे देवासः । ओमासः । चर्षणी घृतः । सुतम् । दाश्वः ।
दाश्वः । आगतः । उपयाम गृहीतः । असि । विश्वेभ्यः । दे
भ्यः । त्वा । एष । ते । योनिः । विश्वेभ्यः । देवेभ्यः । त्वा ॥ ३३ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं उनको कहते हैं अ
ध्वर्यु यजमान से स्पर्श करनेवा न करने पर दोण कलश से शुक पात्र में
वैश्व देव ग्रह को ग्रहण करता है उसके मंत्र १२

ओं ओमास इत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ० आषी गायत्री छंद० विश्वे देवा दे०) १
ओं उपयामेत्यस्य (तथा ० आर्ची बृहती छंद० ग्रहो दे०) २

पदार्थः - १ हे विश्वे देवा २ रक्षा और तृप्ति करने वाले अथवा तर्पनी
य ३ मनुष्यों के पोषक ४ अभिषवण किये हुए सोम के ५ दाता यजमा
न को ६ फल देने वाले अथवा कामनाओं के पूर्ण करने वाले आप ७ आ
इयै हे सोम तुम ८ उपयाम पात्र से गृहीत ९ हो १० ११ विश्वे देवाओं के
लिये १२ तु मे ग्रहण करता हूँ १३ यह १४ तेरा १५ स्थान है १६ १७ वि
श्वे देवाओं के लिये १८ तु मे सादन करता हूँ ॥ ३३ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे मानस सूर्य की किरणों २ उत्पत्ति पालन संघा
र शक्ति से युक्त ३ योगियों से धारित तथा ४ अभिषवण किये हुए ५ ब्रह्मा
ग्नि के लिये हवि देने वाले आत्मा रूप यजमान को ६ अपना आत्मा देने

वाले तुम १ आदयै हे शमादि समूह तुम ८ मानस सूर्य रूप पात्र से स्वीकृत हो १०, ११ इन्द्रियों की शक्ति के लिये १२ तुम्हें ग्रहण करता हूँ १३ यह मानस सूर्य १४ तेरा १५ स्थान है १६, १७ इन्द्रियों की शक्ति के लिये १८ तुम्हें सादन करता हूँ ॥ ३३ ॥

विश्वे देवास आगतः ऋणुता म इमं हवम् ।
एदम्वर्हि निषीदत । उपयाम गृहीतो सि वि
श्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य एषते योनिर्विश्वेभ्यस्त्वा
देवेभ्यः ॥ ३४ ॥

विश्वे देवास १ आगत २ मे ३ इमं ४ हवम् ५ आ ऋणुता ६ इदम
वर्हि ७ निषीदत ८ शेषं पूर्ववत् ॥ ३४ ॥

अथाधिदैवम् - वैश्व देव ग्रह के ग्रहण में मंत्र विकल्प १२
ओं विश्वे देवास इत्यस्य (गृत्तसमदत्तः आर्ची गायत्री छं० विश्वे देवा दे०) १
ओं उपयामेत्यस्य (तथा आर्ची वहती छं० ग्रहो देवता) २

पदार्थः - १ हे विश्वे देवा आप २ आदयै ३ मेरे ४ इस ५ आवाहन को
६ सुनिये ७ इस ८ कुशासन पर ९ वैदिये शेष अर्थ पूर्व मंत्र की समान ३४
अथाध्यात्मम् - १ हे इन्द्रिय शक्तियो २ आओ ३ मुझ ज्ञान चक्र के
४ इस ५ आवाहन को ६ सुनो ७ इस ८ मानस कमल पर ९ वैदो शेष पूर्व
मंत्र की समान है ॥ ३४ ॥

प्रातः सवन के ग्रह समाप्त हुए, अब माध्यन्दिन सवन के ग्रहों को कहते हैं
इन्द्र मरुत्व इह पाहि सोमं यथा शार्याते अपि व
सुतस्य । तव प्रणीती तव शूर शर्मन्ना विवास
नि कवयः सुयज्ञाः । उपयाम गृहीतो सीन्द्रा

यत्वा मरुत्वुत एषुते योनि रिन्द्रा यत्वा मरुत्वुते ३५
 मरुत्वः । इन्द्र । यथा । शायते । सुतस्य । अपिबः । इह । सोम ।
 पाहि । शूर । तव । प्रणीती + आ । सुयज्ञाः । कवयः । शर्मन्
 तव । विवासन्ति । उपयाम गृहीतः । असि । मरुत्वते । इन्द्रो
 य । त्वी । एष । ते । योनिः । मरुद्वते । इन्द्राय । त्वी ॥ ३५ ॥

अथाधिदैवम् — आग्रयण ग्रह के ग्रहण से पीछे और उक्त ग्रह
 ण के पहले ऋतु पात्र में मरुत्व तीय नाम ग्रह को ग्रहण करता है उस
 के मंत्र १२

ओं विश्वे देवा इत्यस्य (विष्वा मित्र ऋ० आषी निष्टु प० विश्वे देवा दे०)
 ओं उपयामेत्यस्य (तथा ० आर्युषि क० छं० ग्रहो देवता) ३

पदार्थः — १ हे विराट् रूप अन्न वाले अथवा मरुत गणों से युक्त २ पर
 मे श्वर या देवेन्द्र ३ जिस प्रकार ४ सोम यज्ञों में ५ अभिषुत सोम का ६ पा
 न किया उसी प्रकार ७ इस संसार में ८ मानस सूर्य को ९ बंधन से रक्षा क
 रे १० नाना प्रकार के अवतारों से असुरों की जीतने वाले हे महा विष्णु वा
 हे देवेन्द्र ११ आपकी १२ अनुज्ञा से १३ कल्याण यज्ञ वाले १४ जान्ना द
 शी भक्त जन १५ सुख की कारण यज्ञ गृह में १६ आपकी १७ परिचर्या क
 रते हैं हे सोम तुम १८ उपयाम पात्र से गृहीत १९ हैं २० विराट् रूप अन्न
 वाले या मरुद्व से युक्त २१ महा विष्णु वा देवेन्द्र के लिये २२ तुम्हें ग्रहण क
 रता हूँ २३ यह २४ तेरा २५ स्थान है २६ विराट् रूप अन्न वाले वा मरुत ग
 णों से युक्त २७ महा विष्णु वा देवेन्द्र के लिये २८ तुम्हें सादन करता हूँ २९
 अथाध्यात्मम् — वाकादि ऋत्विज कहते हैं १ हे वाक आदि ऋत्वि
 ज वाले २ आत्मा रूप योगी ३ जिस प्रकार ४ मानस सूर्य सम्बन्धी यज्ञ में

५ अग्निषुत आत्म प्रति विंव का ६ पान किया उसी प्रकार ७ इस मूल चक्र प
 ८ प्राणा को ९ संसार बंधन से रक्षा करो १० हे कामादि को जीतने वाले योगी
 ११ तेरी १२ अतुल्यता से १३ श्रेष्ठ यज्ञ वाली १४ कान्त दर्शिनी मन की वृत्ति या
 १५ यज्ञ ग्रह हादी काश में १६ तेरी १७ परिचर्या करत हैं हे मूल चक्र गत
 प्राण तुम १८ प्राणा याम से गृहीत १९ हौ २० वाकादि ऋत्विज वाले २१ आ
 त्मा के लिये २२ तुम्हे ग्रहण करता हूं २३ यह आत्मा २४ तेरा २५ स्थान है
 २६ वाकादि ऋत्विज वाले २७ आत्मा के लिये २८ तुम्हे सादन करता हूं ३५

मरुत्वन्तं वृषभं वा वृधानं मरुत्वारिन्द्रियं
 शासमिन्द्रम्। विश्वासाहमवसेनूतनायो ग्रहं
 सहोदामिहतं इवेम। उपयाम गृहीतो सीन्द्रा
 यत्वा मरुत्त्वत एषते योनिरिन्द्रा यत्वा मरुत्त्वते।
 उपयाम गृहीतोसि मरुता न्तवौ जसे ॥ ३६ ॥
 इह। तमे। मरुत्वन्तं। वृषभं। वृवृधानं। अकवारिं। दिव्यं।
 शासं। विश्व साहं। सहोदां। उग्रं। इन्द्रम्। नूतनाय। अवसे।
 आहवेम। उपयाम गृहीतः। असि। मरुत्त्वते। इन्द्राय। त्वा। एष
 ते। योनिः। मरुत्त्वते। इन्द्राय। त्वा। उपयाम गृहीतः। असि।
 मरुताम्। ओजसे। त्वौ ॥ ३६ ॥

अथाधिदैवम् - अध्वर्यु रित् ऋतुपात्र द्वारा भुक्त वा पूत भृत से मरु
 त्वतीय ग्रह का ग्रहण करता है उसका मंत्र १ प्रतिप्रस्थाता हविर्धान में प्रवे
 श हो कर दूसरे ऋतुपात्र के द्वारा द्रोण कलश वा पूत भृत से मरुत्वतीय ग्रह
 का ग्रहण करता है उसके मंत्र २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २१, २२, २३, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, ३२, ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५०, ५१, ५२, ५३, ५४, ५५, ५६, ५७, ५८, ५९, ६०, ६१, ६२, ६३, ६४, ६५, ६६, ६७, ६८, ६९, ७०, ७१, ७२, ७३, ७४, ७५, ७६, ७७, ७८, ७९, ८०, ८१, ८२, ८३, ८४, ८५, ८६, ८७, ८८, ८९, ९०, ९१, ९२, ९३, ९४, ९५, ९६, ९७, ९८, ९९, १००, १०१, १०२, १०३, १०४, १०५, १०६, १०७, १०८, १०९, ११०, १११, ११२, ११३, ११४, ११५, ११६, ११७, ११८, ११९, १२०, १२१, १२२, १२३, १२४, १२५, १२६, १२७, १२८, १२९, १३०, १३१, १३२, १३३, १३४, १३५, १३६, १३७, १३८, १३९, १४०, १४१, १४२, १४३, १४४, १४५, १४६, १४७, १४८, १४९, १५०, १५१, १५२, १५३, १५४, १५५, १५६, १५७, १५८, १५९, १६०, १६१, १६२, १६३, १६४, १६५, १६६, १६७, १६८, १६९, १७०, १७१, १७२, १७३, १७४, १७५, १७६, १७७, १७८, १७९, १८०, १८१, १८२, १८३, १८४, १८५, १८६, १८७, १८८, १८९, १९०, १९१, १९२, १९३, १९४, १९५, १९६, १९७, १९८, १९९, २००, २०१, २०२, २०३, २०४, २०५, २०६, २०७, २०८, २०९, २१०, २११, २१२, २१३, २१४, २१५, २१६, २१७, २१८, २१९, २२०, २२१, २२२, २२३, २२४, २२५, २२६, २२७, २२८, २२९, २३०, २३१, २३२, २३३, २३४, २३५, २३६, २३७, २३८, २३९, २४०, २४१, २४२, २४३, २४४, २४५, २४६, २४७, २४८, २४९, २५०, २५१, २५२, २५३, २५४, २५५, २५६, २५७, २५८, २५९, २६०, २६१, २६२, २६३, २६४, २६५, २६६, २६७, २६८, २६९, २७०, २७१, २७२, २७३, २७४, २७५, २७६, २७७, २७८, २७९, २८०, २८१, २८२, २८३, २८४, २८५, २८६, २८७, २८८, २८९, २९०, २९१, २९२, २९३, २९४, २९५, २९६, २९७, २९८, २९९, ३००, ३०१, ३०२, ३०३, ३०४, ३०५, ३०६, ३०७, ३०८, ३०९, ३१०, ३११, ३१२, ३१३, ३१४, ३१५, ३१६, ३१७, ३१८, ३१९, ३२०, ३२१, ३२२, ३२३, ३२४, ३२५, ३२६, ३२७, ३२८, ३२९, ३३०, ३३१, ३३२, ३३३, ३३४, ३३५, ३३६, ३३७, ३३८, ३३९, ३४०, ३४१, ३४२, ३४३, ३४४, ३४५, ३४६, ३४७, ३४८, ३४९, ३५०, ३५१, ३५२, ३५३, ३५४, ३५५, ३५६, ३५७, ३५८, ३५९, ३६०, ३६१, ३६२, ३६३, ३६४, ३६५, ३६६, ३६७, ३६८, ३६९, ३७०, ३७१, ३७२, ३७३, ३७४, ३७५, ३७६, ३७७, ३७८, ३७९, ३८०, ३८१, ३८२, ३८३, ३८४, ३८५, ३८६, ३८७, ३८८, ३८९, ३९०, ३९१, ३९२, ३९३, ३९४, ३९५, ३९६, ३९७, ३९८, ३९९, ४००, ४०१, ४०२, ४०३, ४०४, ४०५, ४०६, ४०७, ४०८, ४०९, ४१०, ४११, ४१२, ४१३, ४१४, ४१५, ४१६, ४१७, ४१८, ४१९, ४२०, ४२१, ४२२, ४२३, ४२४, ४२५, ४२६, ४२७, ४२८, ४२९, ४३०, ४३१, ४३२, ४३३, ४३४, ४३५, ४३६, ४३७, ४३८, ४३९, ४४०, ४४१, ४४२, ४४३, ४४४, ४४५, ४४६, ४४७, ४४८, ४४९, ४५०, ४५१, ४५२, ४५३, ४५४, ४५५, ४५६, ४५७, ४५८, ४५९, ४६०, ४६१, ४६२, ४६३, ४६४, ४६५, ४६६, ४६७, ४६८, ४६९, ४७०, ४७१, ४७२, ४७३, ४७४, ४७५, ४७६, ४७७, ४७८, ४७९, ४८०, ४८१, ४८२, ४८३, ४८४, ४८५, ४८६, ४८७, ४८८, ४८९, ४९०, ४९१, ४९२, ४९३, ४९४, ४९५, ४९६, ४९७, ४९८, ४९९, ५००, ५०१, ५०२, ५०३, ५०४, ५०५, ५०६, ५०७, ५०८, ५०९, ५१०, ५११, ५१२, ५१३, ५१४, ५१५, ५१६, ५१७, ५१८, ५१९, ५२०, ५२१, ५२२, ५२३, ५२४, ५२५, ५२६, ५२७, ५२८, ५२९, ५३०, ५३१, ५३२, ५३३, ५३४, ५३५, ५३६, ५३७, ५३८, ५३९, ५४०, ५४१, ५४२, ५४३, ५४४, ५४५, ५४६, ५४७, ५४८, ५४९, ५५०, ५५१, ५५२, ५५३, ५५४, ५५५, ५५६, ५५७, ५५८, ५५९, ५६०, ५६१, ५६२, ५६३, ५६४, ५६५, ५६६, ५६७, ५६८, ५६९, ५७०, ५७१, ५७२, ५७३, ५७४, ५७५, ५७६, ५७७, ५७८, ५७९, ५८०, ५८१, ५८२, ५८३, ५८४, ५८५, ५८६, ५८७, ५८८, ५८९, ५९०, ५९१, ५९२, ५९३, ५९४, ५९५, ५९६, ५९७, ५९८, ५९९, ६००, ६०१, ६०२, ६०३, ६०४, ६०५, ६०६, ६०७, ६०८, ६०९, ६१०, ६११, ६१२, ६१३, ६१४, ६१५, ६१६, ६१७, ६१८, ६१९, ६२०, ६२१, ६२२, ६२३, ६२४, ६२५, ६२६, ६२७, ६२८, ६२९, ६३०, ६३१, ६३२, ६३३, ६३४, ६३५, ६३६, ६३७, ६३८, ६३९, ६४०, ६४१, ६४२, ६४३, ६४४, ६४५, ६४६, ६४७, ६४८, ६४९, ६५०, ६५१, ६५२, ६५३, ६५४, ६५५, ६५६, ६५७, ६५८, ६५९, ६६०, ६६१, ६६२, ६६३, ६६४, ६६५, ६६६, ६६७, ६६८, ६६९, ६७०, ६७१, ६७२, ६७३, ६७४, ६७५, ६७६, ६७७, ६७८, ६७९, ६८०, ६८१, ६८२, ६८३, ६८४, ६८५, ६८६, ६८७, ६८८, ६८९, ६९०, ६९१, ६९२, ६९३, ६९४, ६९५, ६९६, ६९७, ६९८, ६९९, ७००, ७०१, ७०२, ७०३, ७०४, ७०५, ७०६, ७०७, ७०८, ७०९, ७१०, ७११, ७१२, ७१३, ७१४, ७१५, ७१६, ७१७, ७१८, ७१९, ७२०, ७२१, ७२२, ७२३, ७२४, ७२५, ७२६, ७२७, ७२८, ७२९, ७३०, ७३१, ७३२, ७३३, ७३४, ७३५, ७३६, ७३७, ७३८, ७३९, ७४०, ७४१, ७४२, ७४३, ७४४, ७४५, ७४६, ७४७, ७४८, ७४९, ७५०, ७५१, ७५२, ७५३, ७५४, ७५५, ७५६, ७५७, ७५८, ७५९, ७६०, ७६१, ७६२, ७६३, ७६४, ७६५, ७६६, ७६७, ७६८, ७६९, ७७०, ७७१, ७७२, ७७३, ७७४, ७७५, ७७६, ७७७, ७७८, ७७९, ७८०, ७८१, ७८२, ७८३, ७८४, ७८५, ७८६, ७८७, ७८८, ७८९, ७९०, ७९१, ७९२, ७९३, ७९४, ७९५, ७९६, ७९७, ७९८, ७९९, ८००, ८०१, ८०२, ८०३, ८०४, ८०५, ८०६, ८०७, ८०८, ८०९, ८१०, ८११, ८१२, ८१३, ८१४, ८१५, ८१६, ८१७, ८१८, ८१९, ८२०, ८२१, ८२२, ८२३, ८२४, ८२५, ८२६, ८२७, ८२८, ८२९, ८३०, ८३१, ८३२, ८३३, ८३४, ८३५, ८३६, ८३७, ८३८, ८३९, ८४०, ८४१, ८४२, ८४३, ८४४, ८४५, ८४६, ८४७, ८४८, ८४९, ८५०, ८५१, ८५२, ८५३, ८५४, ८५५, ८५६, ८५७, ८५८, ८५९, ८६०, ८६१, ८६२, ८६३, ८६४, ८६५, ८६६, ८६७, ८६८, ८६९, ८७०, ८७१, ८७२, ८७३, ८७४, ८७५, ८७६, ८७७, ८७८, ८७९, ८८०, ८८१, ८८२, ८८३, ८८४, ८८५, ८८६, ८८७, ८८८, ८८९, ८९०, ८९१, ८९२, ८९३, ८९४, ८९५, ८९६, ८९७, ८९८, ८९९, ९००, ९०१, ९०२, ९०३, ९०४, ९०५, ९०६, ९०७, ९०८, ९०९, ९१०, ९११, ९१२, ९१३, ९१४, ९१५, ९१६, ९१७, ९१८, ९१९, ९२०, ९२१, ९२२, ९२३, ९२४, ९२५, ९२६, ९२७, ९२८, ९२९, ९३०, ९३१, ९३२, ९३३, ९३४, ९३५, ९३६, ९३७, ९३८, ९३९, ९४०, ९४१, ९४२, ९४३, ९४४, ९४५, ९४६, ९४७, ९४८, ९४९, ९५०, ९५१, ९५२, ९५३, ९५४, ९५५, ९५६, ९५७, ९५८, ९५९, ९६०, ९६१, ९६२, ९६३, ९६४, ९६५, ९६६, ९६७, ९६८, ९६९, ९७०, ९७१, ९७२, ९७३, ९७४, ९७५, ९७६, ९७७, ९७८, ९७९, ९८०, ९८१, ९८२, ९८३, ९८४, ९८५, ९८६, ९८७, ९८८, ९८९, ९९०, ९९१, ९९२, ९९३, ९९४, ९९५, ९९६, ९९७, ९९८, ९९९, १०००

१ यत्वा मरुत्वृत एषुते योनि रिन्द्रा यत्वा मरुत्वृत ३५
 मरुत्वः । इन्द्रो यथा । शायति । सुतस्य । अपिक् । इह । सोम ।
 पाहि । शूर । तव । प्रणीती । आ । सुयज्ञाः । कवयः । शम्भेन
 तव । विवासन्ति । उपयाम गृहीतः । असि । मरुत्वते । इन्द्रो
 या त्वा । एषो तो योनिः । मरुद्वते । इन्द्राया । त्वा ॥ ३५ ॥

अथाधिदैवम् — आग्रयण ग्रह के ग्रहण से पीछे और उक्त ग्रह
 ए के पहले ऋतु पात्र में मरुत्व तीय नाम ग्रह को ग्रहण करता है उस
 के मंत्र १२

ओं विश्वे देवा इत्यस्य (विश्वामित्र ऋ० आर्षि त्रिष्टुप् छ० विश्वे देवा दे०) १
 ओं उग्रामेवस्य (गथा ० आर्षि णिक छ० उग्रो देवता) २

पदार्थः— १ हे विराट् रूप अन्न वाले अथवा मरुत गणों से युक्त २ पर
 मे ३ वादेन्द्र ३ जिस प्रकार ४ सोम यज्ञों में ५ अभिषुत सोम का ६ पा
 न किया उसी प्रकार ७ इस संसार में ८ मानस सूर्य को ९ बंधन से रक्षा क
 रे १० गन्ता प्रकार के अवतारों से असुरों को जीतने वाले हे महा विष्णु वा
 हे देवेन्द्र ११ आपकी १२ अनुज्ञा से १३ कल्याण यज्ञ वाले १४ कान्त द
 श्री भक्त जन १५ सुख के कारण यज्ञ गृह में १६ आपकी १७ परिचर्या क
 रते हैं हे सोम तुम १८ उपयाम पात्र से गृहीत १९ हौ २० विराट् रूप अन्न
 वाले या मरुद्व से युक्त २१ महा विष्णु वादेन्द्र के लिये २२ तुम्हें ग्रहण क
 रता हूँ २३ यह २४ तेरा २५ स्थान है २६ विराट् रूप अन्न वाले वा मरुत ग
 णों से युक्त २७ महा विष्णु वादेन्द्र के लिये २८ तुम्हें सादन करता हूँ ३०
 अथाध्यात्मम् — वाकादि ऋत्विज कहते हैं १ हे वाक् आदि ऋत्वि
 ज वाले २ आत्मा रूप योगी ३ जिस प्रकार ४ मानस सूर्य सत्त्वधी यज्ञ में

५ अग्निषुत आत्म प्रति विंव का ६ पान किया उसी प्रकार ७ इस मूल चक्र प
 ८ प्राण को ९ संसार बंधन से रक्षा करो १० हे कामादि को जीतने वाले योगी
 ११ तेरी १२ अस्तुत्ता से १३ अष्ट यन्त्र वाली १४ कान्त दर्शिनी मन की वृत्तियां
 १५ यन्त्र ग्रह हार्दी काश में १६ तेरी १७ परिचर्या करते हैं हे मूल चक्र गत
 प्राण तुम १८ प्राणा याम से गृहीत १९ हौ २० वाकादि ऋत्विज वाले २१ आ
 त्मा के लिये २२ तुम्हे ग्रहण करता हूं २३ यह आत्मा २४ तेरा २५ स्थान है
 २६ वाकादि ऋत्विज वाले २७ आत्मा के लिये २८ तुम्हे सादन करता हूं ३५

मरुत्वन्तं वृषभं वा वृधान मकं वारिन्द्रियं
 शासमिन्द्रम् । विश्वा साहमवसे नूतना यो ग्रं
 सहोदामि हतं इवेम । उपयाम गृहीतो सीन्द्रा
 यत्वा मरुत्वत एषते यो निरिन्द्रा यत्वा मरुत्वते ।
 उपयाम गृहीतो सि मरुता न्तवौ जसे ॥ ३६ ॥
 इह तमे मरुत्वन्तं । वृषभं । वृवृधानं । अकवारिं । दिव्यं ।
 शासं । विश्व साहं । सहोदां । उग्रं । इन्द्रम् । नूतनाय । अवसे ।
 आहवेम । उपयाम गृहीतः । असि । मरुत्वते । इन्द्राय । त्वा । एष
 ते । योनिः । मरुत्वते । इन्द्राय । त्वा । उपयाम गृहीतः । असि ।
 मरुताम । ओजसे । त्वौ ॥ ३६ ॥

अथाधिदैवम् - अध्वर्यु रिक्त ऋतु पात्र द्वारा शुक्ल वा पूत भृत से मरु
 त्वतीय ग्रह का ग्रहण करता है उसका मंत्र १ अतिप्रस्थाता हविर्धान मे प्रवे
 श हो कर दूसरे ऋतु पात्र के द्वारा द्रोण कलश वा पूत भृत से मरुत्वतीय ग्रह
 का ग्रहण करता है उसके मंत्र २, ३
 ओमरुत्वन्तमित्यस्य (विश्वा) मित्रं ऋ० विराडाषीनिष्टुपृच्छ० इन्द्रो दे० १

उपयामेत्यस्य (विश्वामित्रः० आप्याषाक् ० ग्रहो दे०) २

तथा (तथा ० साम्युषाक् ० ग्रहो दे०) ३

पदार्थः - १ इस यज्ञ में २ उष ३ विराट् रूप अन्न वाले ४ ऋष ५ कामनाओं के पूर्ण करने वाले ६ उत्कृष्ट ऐश्वर्य वाले ७ स्वर्ग में सूर्य रूप से प्रादुर्भूत नाना प्रकार के अवतारों से दुष्टों को दंड देने वाले अथवा ब्रह्मा विष्णु महेश रूपधारी ८ विश्व पालन में समर्थ ९ बल दाता १० विराट् रूप धारी ११ परमेश्वर को १२ नवीन १३ पालन केलिये १४ हम आवाहन करते हैं हे सोम तुम १५ उपयाम पात्र से गृहीत १६ हो १७ विराट् रूप अन्न वाले १८ परमेश्वर केलिये १९ तुम्हें ग्रहण करता हूँ २० यह २१ तेरा २२ स्थान है २३ विराट् रूप अन्न वाले २४ परमेश्वर केलिये २५ तुम्हें सादन करता हूँ हे सोम तुम २६ उपयाम पात्र से गृहीत २७ हो २८ मरुत्नाम देवताओं के २९ वलार्थ ३० तुम्हें ग्रहण करता हूँ ॥ ३६ ॥

अथाध्यात्मम् - १ इस योग यज्ञ में २ उष ३ वाक् आदि ऋत्विज वाले ४ ऋष ५ वृद्धि सम्पन्न ६ योगैश्वर्यमान ७ हृदय में स्थित ८ विदेव रूप ९ सर्वद्वन्द्व सहनशील १० आपों के बल दाता ११ काम आदि को मय देने वाले १२ योग यज्ञ के यजमान को १३ नवीन १४ प्राण रक्षा के लिये १५ आवाहन करते हैं हे नामि कमल गत प्राण तुम १६ प्राणायाम से गृहीत १७ हो १८ वाक् आदि ऋत्विज वाले १९ आत्मा केलिये २० तुम्हें ग्रहण करता हूँ २१ यह आत्मा २२ तेरा २३ स्थान है २४ वाक् आदि ऋत्विज वाले २५ आत्मा केलिये २६ तुम्हें सादन करता हूँ हे मनो गत प्राण तुम २७ प्राणायाम से गृहीत २८ हो २९ वाक् आदि ऋत्विजों के ३० योग वलार्थ ३१ तुम्हें ग्रहण करता हूँ ॥ ३६ ॥

सजोषा इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमम्पिव वृत्रहा
 शूरविद्वान् । जहि शत्रून् धरप मृधो नुद स्वाया
 भयङ्कणहि विश्वतो नः । उपयाम गृहीतो सीन्द्रा
 यत्वा मरुत्त्वृत एषुते योनि रिन्द्रा यत्वा मरुत्त्वृत ३७
 शूर इन्द्र । सजोषः । सगणः । वृत्रहा । विद्वान् । मरुद्भिः ।
 सोमम् । पिव । शत्रून् । जहि । मृधः । अपनुद स्वाया नः ।
 विश्वते । अभयम् । कणहि । उपयाम गृहीतः । असि । मरुत्त्व
 ते । इन्द्राय । त्वा । एषा ते । योनिः । मरुत्त्वते । इन्द्राय । त्वा । ३७

अथाधिदैवम् — वाचस्तोम में जो कि चार हैं मरुत्व तीय ग्रह को ग्र
 हण करता है उसके मंत्र १२०
 ओं सजोषेत्यस्य (विश्वामित्र ऋ० निष्ठुदार्षी त्रिष्टुप छं० इन्द्रो दे० १
 ओं उपयामेत्यस्य (तथा ० प्राजापत्या त्रिष्टुप छं० ग्रहो दे० २

पदार्थः — १ हे असुर नाशक २ परमेश्वर ३ सन्तुष्ट ४ अपने अंश रूप
 देवताओं से सहित ५ पापनाशक ६ और सर्वज्ञ तुम ७ अन्नों के साथ
 सोम को पी पान करो १० हमारे शत्रुओं को ११ मारो १२ संग्रामों को अय
 वा मरने से शेष शत्रुओं को संग्राम से १३ हटाओ वा बंद करो १४ इसके
 पीछे १५ हम को १६ सब ओर से १७ अभय १८ करो हे सोम तुम १९ उप
 याम पान से गृहीत २० हो २१ विराट् रूप अन्न वाले २२ परमेश्वर के लि
 २३ तुम्हें ग्रहण करता हूँ २४ यह २५ तेरा २६ स्थान है ३७ विराट् रूप अ
 न्न वाले २८ परमेश्वर के लिये २९ तुम्हें सादन करता हूँ ॥ ३७ ॥

अथाध्यात्मम् — १ हे कामनाशक २ योग यज्ञ के यज्ञ मान ३ सन्तु
 ष्ट ४ वाक् आदि ऋत्विजों संयुक्त ५ पापनाशक ६ और ज्ञानी तुम ७ प्रा

ण रूप अन्न सहित ८ अपने आत्म प्रति विंव को दीपान करो १० काम आ
दि शत्रुओं को ११ मारो १२ संग्राम से १३ भागने के लिये प्रेरणा करो १४
इसके पीछे १५ हम वाक् आदि की १६ सब ओर से १७ मुक्ति १८ करो हे
हृदय गत प्राण तुम १९ प्राणायाम से गृहीत २० हौ २१ वाक् आदि ऋत्वि
ज वाले २२ आत्मा के लिये २३ तुम्हें ग्रहण करता हूँ २४ यह आत्मा २५
तेरा २६ स्थान है २७ वागादि ऋत्विज वाले २८ आत्मा के लिये २९ तु
म्हें सादन करता हूँ ॥ ३७ ॥

मरुत्वा^१ इन्द्र^२ वृषभो^३ रणा^४ यपिवा^५ सोम^६ मनुष्य^७
धम्मदाय^८ । आसिञ्च^९ स्वजठरे^{१०} मध्व^{११} ऊर्मिन्त्व^{१२}
राजा^{१३} सिप्रति^{१४} पत्सुतानाम्^{१५} । उपयाम^{१६} गृहीतो^{१७} सी
न्द्रा^{१८} यत्वा^{१९} मरुत्त्व^{२०} एषते^{२१} योनि^{२२} रिन्द्रा^{२३} यत्वा^{२४} मरुत्त्व^{२५} ते^{२६}
इन्द्र^{२७} । मरुत्वान्^{२८} । वृषभुः^{२९} । अनुष्वधम्^{३०} । सोमम्^{३१} । मदाय^{३२} ।
रणाय^{३३} । आपिवा^{३४} । मध्वः^{३५} । ऊर्मिम्^{३६} । जठरे^{३७} । आसिञ्च^{३८} । त्व^{३९}
प्रतिपत्सुतानाम्^{४०} । राजा^{४१} । असि^{४२} । उपयाम^{४३} गृहीतः^{४४} । असि^{४५} ।
मरुत्त्वते^{४६} । इन्द्राय^{४७} । त्वा^{४८} । एषते^{४९} । योनिः^{५०} । मरुत्त्वते^{५१} । इन्द्रा^{५२}
यात्वा^{५३} ॥ ३८ ॥

अथ अधिदेवम् = मरुत्व तीर्थ ग्रह को ग्रहण करता है उसके
में १०२ इन्द्र १०३ वृषभ १०४ रणा १०५ यपिवा १०६ सोम १०७ मनुष्य
ओं मरुत्वा नित्यस्य (विष्वा मित्र ऊर्ध्व निहदाषी त्रिष्टुप्छं इन्द्रो देवः १
ओं उपयामे त्वस्य (विष्वा मित्र ऊर्ध्व निहदाषी त्रिष्टुप्छं गृही देवः २
पदार्थः १ श्वेत्परमेष्ठि २ विराट् रूप अन्न वाले ३ और अष्ट तुम
४ स्वर्ण धनीक सुरेंद्राणां मान्द्यं दधि पंचलक्षणे वाले ५ सोम को

तृप्तिके अर्थ ७ और असुरों से संग्राम के लिये ८ पान करो ९ और ब्रह्मज्ञान की १० कल्लोल को ११ मेरे मानस उदर में १२ सींचो जिस कारण १३ तुम १४ ज्ञान के लिये अभिषुत सोमों के १५ स्वामी १६ हो हे सोम तुम १७ उपयाम पात्र से गृहीत १८ हो १९ विराटरूप अन्नवाले २० परमेश्वर के लिये २१ तुम्हें ग्रहण करता हूँ यह २२ तेरा २३ स्थान है २४ विराटरूप अन्नवाले २५ परमेश्वर के लिये २७ तुम्हें सादन करता हूँ ॥३८॥

दूसरा अर्थ—हे देवेश्वर इन्द्र २ मरुतगण से संयुक्त ३ जलवर्षी करने वाले तुम ४ स्वधापूर्वक ५ सोम को ६ तृप्तिके लिये ७ तथा संग्राम के अर्थ ८ पान करो ९ और मधुर स्वादवाली १० कल्लोल को ११ उदर में १२ सींचो १३ तुम १४ प्रतिपदा आदि में अभिषुत सोमों के १५ स्वामी १६ हो हे सोम तुम १७ उपयाम पात्र से गृहीत १८ हो १९ मरुतगण युक्त २० इन्द्र के लिये २१ तुम्हें ग्रहण करता हूँ यह २२ तेरा २३ स्थान है २४ मरुतगण युक्त २५ इन्द्र के लिये २७ तुम्हें सादन करता हूँ ॥३८॥

अथाध्यात्मम्—हे योगी २ वागादि ऋत्विज वाले ३ और ऋषि तुम ४ मनोवृत्ति शक्ति के अनुगामी ५ अपने आत्म प्रति विव को ६ मैं ब्रह्म हूँ और यह सब ब्रह्म है इस ब्रह्मानन्द के लिये ७ तथा संसार से संग्राम करने के अर्थ ८ पान करो ९ अपरोक्ष ज्ञान की १० कल्लोल को ११ मानस उदर में १३ सींचो तुम १४ ज्ञान के लिये अभिषुत प्राणा आदि के १५ स्वामी १६ हो हे कठगत प्राण तुम १७ प्राणायाम से गृहीत १८ हो १९ वाक् आदि ऋत्विज वाले २० आत्मा के लिये २१ तुम्हें ग्रहण करता हूँ २२ यह आत्मा २३ तेरा २४ स्थान है २५ वाक् आदि ऋत्विज वाले २६ आत्मा के लिये २७ तुम्हें सादन करता हूँ ॥३८॥

महा ७ इन्द्रो नृवदा चर्पणं प्राउत द्विवर्ही अभिनः

सहोभिः । अस्मद्व्यवावधेवीर्यायोरुः पृथुः सुकृतः
कूर्तभिर्मृत । उपयामगृहीतोसिमहेन्द्रायत्वैषते

योनिर्महेन्द्रायत्वा ३६॥

आचर्षीणां प्राः । द्विवर्हाः । सहोभिः । अमिनः । उत । अस्मद्व्यक् ।
महा० । इन्द्रः । वीर्याय । नृवत । ववधे । उरुः । पृथुः । कूर्तभिः ।
सुकृतः । अभूत । उपयामगृहीतः । असि । महेन्द्राय । त्वा । एष
ते । योनिः । महेन्द्राय । त्वा ॥ ३६॥

अथाधिदैवम् - माहेन्द्रग्रह को वैश्वदेव की समान शुक्र पात्र द्वारा
ग्रहण करता है उसके मंत्र १२

ॐ महानित्यस्य (भरद्वाज ऋ० भुरिगर्षी पंक्तिश्चंदो माहेन्द्रो दे०) १

ॐ उपयामेत्यस्य (तथा ० साम्नी त्रिष्टुप् च० ग्रहो देवता) २

पदार्थः - १ चारों ओर से भक्तों को अभीष्ट कामना देने वाला २ मध्यम और
उत्तम स्थान में प्रभु ३ वलों से ४ उपमारहित ५ और ६ हमारे अभिमुख ७, ८ म
हेश्वर वा महेन्द्र ९ वीर कर्म अर्थात् हमारे संसार बंधन के नाशार्थ १० पुरुष रू
प से ११ प्रकट होता है जिस कारण १२ यश से महान् १३ वल में बड़ा वह परम
श्वर १४ यजमानों से १५ पूजित १६ हुआ है ग्रहतम १७ उपयाम पात्र से ग्र
हीत १८ हो १९ महेन्द्र के लिये २० तुम्हें ग्रहण करता हूँ २१ यह २२ तेरा २३ स्था
न है २४ महेन्द्र के लिये २५ तुम्हें सादन करता हूँ ॥ ३६॥

अथाध्यात्मम् - १ चारों ओर से प्राणों के प्रक २ भक्तियुक्त और ज्ञान
युक्त से वृद्धि युक्त ३ योगा वलों से ४ उपमारहित ५ और द्विम वाक् आदि ऋ
त्विजों के सम्मुख ७, ८ योगा रूढ़ आत्मा ९ वीर कर्म अर्थात् संसार जय के
लिये १० पुरुष की समान ११ वृद्धि प्राप्त है जिस कारण १२ यश से बड़ा १३

योगवल से महान वह आत्म १४ ह भवा क आदि से १५ संस्कृत १६ हुआ है
श्रु कुटि गत प्राण तुम १७ प्राणा याम से गृहीत १८ हो १९ योगा रूढ आत्मा
के लिये २० तुम्हें ग्रहण करता है २१ यह आत्मा २२ तेरा २३ स्थान है २४
आत्मा के लिये २५ तुम्हें सादन करता है ॥ ३८ ॥

महा ७ इन्द्रो य भोज सा पर्जन्यो वृष्टि मा थ
इव। स्तोमैर्वत्सस्य वा वृधे। उपयाम गृहीतो
सि महेंद्राय त्वेष ते योनिर्महेंद्राय त्वा ॥ ४० ॥
यः। महा ७ इन्द्रः। भोज सा। वृष्टि मा थ। पर्जन्यः। इव। वत्सः
स्य। स्तोमैः। आव वृधे। उपयाम गृहीतः। असि। महेंद्राय। त्वा।
एष। ते। योनिः। महेंद्राय त्वा ॥ ४० ॥

अथाधिदेवम् - माहेंद्र ग्रह को ग्रहण करता है उस क मंत्र १
ओं महानित्यस्य (वत्स ऋषि गायत्री छं० महेंद्रा देवता) १
ओं उपयामेत्यस्य (तथा • विराडा ऋषि गायत्री छं० ग्रहो दे०) २

पदार्थः - १ जो २३ महा विष्णु ४ तेज से ५, ६७ मेघ की समान भक्तों के ऊपर
चतुर्वर्ग की वर्षा करने वाला है वह ८ मन के ९ स्तोत्रों से १० प्रकट होता है हे
सोम तुम ११ उपयाम पात्र से गृहीत १२ हो १३ महा विष्णु के लिये १४ तुम्हें
ग्रहण करता है १५ यह १६ तेरा १७ स्थान है १८ महा विष्णु के लिये १९
तुम्हें सादन करता है ॥ ४० ॥

अथाध्यात्मम् - १ जो २३ योगा रूढ आत्मा ४ ब्रह्म तेज से ५, ६७ मेघ
की समान गगना भूत की वृष्टि करने वाला है वह ८ मन के ९ स्तोत्रों से १० वृ
द्धि पाता है हे गगन गत आत्म शक्ति तुम ११ प्राणा याम से गृहीत १२ हो १३
महा विष्णु के लिये १४ तुम्हें ग्रहण करता है १५ यह गगन सूर्य १६ तेरा १७

स्थान है ॥ महाविष्णु के लिये १६ तुम्हें सादन करता हूँ ॥ ४० ॥

उदुत्यज्जातवेद सन्देवं वहन्ति केतवः । दृशे

विश्वाय सूर्यं स्वाहा ॥ ४१ ॥

केतवः । तम् । जातवेदसं । देवम् । सूर्यम् । यी । उ । विश्वाय । दृशे
उद्वहन्ति । स्वाहा ॥ ४१ ॥

अथाधिदैवम् — वस्त्र में बंधे हुए सुवर्ण को जुहू में रख कर ४ बार लि
ये हुए घृत को शाला द्वार्य नाम अग्नि में समिदा धान पूर्वक होमता है उस
का मंत्र १

उ० उदुत्यमित्यस्य (प्रस्कपवज्र० भुरिगार्षी गायत्री छ० सूर्यो दे०) १

पदार्थः — १ सूर्य की किरणों २ उस ३ ज्ञान वाहन के उत्पत्ति स्थान ४ प्रकाश
मान ५ सूर्य रूप ६ सोम को ७ ही ८, ९ सर्वदर्शन लाभ के लिये १० स्वर्ग लोक
में पहुँचाती हैं उस सूर्य के अर्थ ११ ओष्ठ होम हो ॥ ४१ ॥

अथाध्यात्मम् — १ ब्रह्म की किरणों २ उस ३ ब्रह्म ज्ञानी ४ स्योति स्वरू
प ५ सूर्य रूप ६ योगा रूढ़ आत्मा को ७ ही ८, ९ सर्वदर्शन ज्ञान के लिये १०
आकर्षण करती हैं उस ब्रह्माग्नि के लिये ११ ओष्ठ होम हो ॥ ४१ ॥

चित्रन्देवानां मुदेगादनीकञ्चक्षुर्मित्रस्य वरु

णास्याग्नेः आप्राद्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्यं

आत्मा जगत्स्तु सूर्यं स्वाहा ॥ ४२ ॥

देवानाम् । अनीकम् । मित्रस्य । वरुणस्य । अग्नेः । चक्षुः । ज
गतः । च । तस्थुषः । आत्मा । सूर्यः । चित्र । उदगातः । स्वाहा ।
द्यावा । पृथिवी । अन्तरिक्षं । आप्रा । ॥ ४२ ॥

अथाधिदैवम् — चार बार लिये हुए घृत से शाला द्वार्य नाम अग्नि

मंदूसरी आहुति को होमता है उसका मंत्र १
 ओं चित्रमित्यस्य (कुत्स ऋ० भुरि गापी त्रिष्टुप् छं० सूर्यो दे०) १
पदार्थः— १ देवताओं के २ जीवन साधन ३ ४, ५ ब्रह्मा विष्णु महेश रूप
 धारक परमेश्वर के ६ चक्षु और ७ चर ८ और ९ अक्षर के १० आत्मा ११ सूर्य
 ने १२ आश्चर्यवत् १३ उदय किया १४ उसके अर्थ ओष्ठ होम हो हे सूर्य १५
 पृथिवी स्वर्ग १६ और अन्तरिक्ष को १७ जगत् की उपकारक किरणों से पू
 र्ण कर ॥ ४२ ॥

अथाध्यात्मम्— १ इन्द्रियों के २ जीवन साधन ३ आण ४ अपान ५ जा
 हरग्नि अथवा वाणी के ६ तेज ७ चर ८ और ९ अक्षर के १० आत्मा ११ मानस
 सूर्य ने १२ आश्चर्यवत् १३ गगन मंडल को प्राप्त किया १४ वेद वाक्य वाग
 रु के उपदेश से उत्थान को वर्णन करते हैं हे मानस सूर्य तम आरक्ष समा
 प्तित क १५ भृकुटिमन १६ और हार्दन्ति रिक्ष को १७ अपनी किरणों से पू
 र्ण करो ॥ ४२ ॥

अग्नेन य सुपथा राये अस्मान्नि प्रवानि देव वयुना
नि विद्वान् । युयोध्य स्मज्जु हराण मेनो भूर्यि शा
न्तेन म उक्तिं विधेम स्वाहा ४३

आग्नी प्रीय अग्नि में एक बार लिये हुए घृत को होता है उसका मंत्र १
 पंचवी अध्याय की ३६ कडिका में इस मंत्र की व्याख्या हो चुकी है ॥ ४३ ॥

अयन्नो अग्निर्वरिवस्कृणोत्व यन्मधः पुर एतु
प्रभिन्दन् । अयं वाजाञ्ज यतु वाज साता वयथ
शत्रूञ्ज यतु ज हृषाणा स्वाहा ४४

दूसरी आहुति को आग्नी प्रनाम अग्नि में होमता है उसका मंत्र १ पंचवी

अध्याय की ३७ कंडिका में इस मंत्र की व्याख्या हो चुकी है ॥ ४४ ॥

रूपेणोवरूपमभ्यागान्तुथोवोविश्ववेदाविभजतु

ऋतस्यपथाप्रेतचन्द्रदक्षिणाविस्वःपश्यव्यन्त

रिक्षंव्यतस्वसदस्यैः ४५ ॥

रूपेण^१। के। रूपे^२म। अभ्या^३गाम। चन्द्र^४दक्षिणा। ऋत^५स्य। प^६था। प्रेत^७। विश्व^८वेदा^९। तुथ^{१०}। वो^{११}। विभज^{१२}तु। स्व^{१३}। विपश्य^{१४}। व्यन्त^{१५}रिक्षम^{१६}। वि^{१७}। सदस्यै^{१८}। यतस्व^{१९} ॥ ४५ ॥

अथाधितैवम् — इस कंडिका में ३ मंत्र हैं उनको कहते हैं, आग्नीध्रीय होम के पीछे उसी स्वर्ण युक्त यज्ञ मान शाला के पूर्व में खड़ा होकर वेदी से बाहर दक्षिण दिशा में स्थित दक्षिणा की गौओं को अभिमंत्रण करता है उसका मंत्र १ यज्ञ मान आग्नीध्र देश से सदानाम स्थान में जाता है उसका मंत्र २ यज्ञ मान सद के समीप स्थित होकर सदस्यों को देखता है उसका मंत्र ३

ओं रूपेणोत्यस्य (आङ्गिरसऋ० प्रजापत्याजगतीं दक्षिणादे०) १

ओं विश्व इत्यस्य (॥ तथा ॥ यानुष्यनुष्टुप् ॥ तथा ॥) २

ओं यतस्वेत्यस्य (॥ तथा ॥ देवी त्रिष्टुप् ॥ तथा ॥) ३

पदार्थः हे दक्षिणारूप गौओं १ यज्ञमान रूप से २ तुम्हारे ३ दर्शनीय रूप के ४ सम्मुख प्राप्त हुआ हूँ ५ सुवर्ण नाम दूसरी दक्षिणा से युक्त है ६ गौओं ६ यज्ञ के ७ मार्ग में प्राप्त होओ ८ सर्वज्ञ ९ ब्रह्मा जो कि दक्षिणा के योग्य और अयोग्य को जानता है १० तुम्हें ११ विभाग करो हे ब्रह्मा दक्षिणारूप प्रथम यो १२ सद रूप स्वर्ग को १३ देख १४ देव विमान के स्थिति स्थान खन्ने रिक्ष की १५ देख हे दक्षिणा तुम १६ ऋत्विजों के साथ १७ म

तत् फल प्राप्ति के लिये यत्न करो ॥ ४५ ॥ ४

अथाध्यात्मम् - हे इन्द्रियों की शक्तियो १ में देही रूप से २ तुम्हारे ३ इन्द्रिय रूप के ४ सन्मुख प्राप्त हुआ हूँ ५ हे मन रूप दूसरी दक्षिणा रखने वाली इन्द्रियो ६ ७ ब्रह्म मार्ग अर्थात् सुषुम्ना मार्ग द्वारा ८ लौट आओ ९ सर्व ज्ञ १० हृदय रूप ब्रह्मा ११ तुम्हें १२ विभाग करो अर्थात् वाक् आदि ऋत्विजों के अर्पण करो हे प्रथम दक्षिणा रूप इन्द्रिय शक्ति तुम १३ भृकुटि को १४ देखो १५ हार्दान्त रिक्त को १६ देखो १७ वाक् आदि ऋत्विजों के साथ १८ यज्ञ फल रूप मोक्ष की प्राप्ति के लिये यत्न करो इस प्रकार सब दक्षिणाओं के दान में कहना चाहिये ॥ ४५ ॥

४ ब्रह्मवैवर्त पुराण के प्रकृति खंड में लिखा है, यज्ञ दक्षिणा और फल रूप पुत्र के साथ है वह दक्षिणा यज्ञ कर्त्तियों के फल को देने वाली है इस प्रकार वेद ज्ञाताओं ने जाना है कर्म करके शीघ्र उसकी दक्षिणा दे देवे उस कर्म के फल को पाता है यह वेदों ने कहा है २ कर्म पूर्ण होने पर जो कर्म कर्त्ता देव अथवा भ्रजान से उसी क्षण ब्राह्मणों को दक्षिणा नहीं देवे ३ तब वह दक्षिणा एक मुहूर्त्त व्यतीत होने पर द्विगुणी होवे, एक रात्रि व्यतीति होने पर शत गुणी होवे ४ तीन रात्रि व्यतीति होने पर उससे दश गुणी होवे ७ दिन में उससे भी द्विगुणी होवे महीने में लक्ष गुणी होवे ५ और एक वर्ष व्यतीत होने पर तीन कोट गुणी होवे और यज्ञ मातों का वह सब कर्म निष्फल होवे ६ वह ब्राह्मण के धन का हर्त्ता पात की अपवित्र मनुष्य कर्म के योग्य नहीं है और उस पाप से दारिद्र्य और व्याधि युक्त होता है ७ लक्ष्मी दारुण शाप को देकर उसके घर से चली जाती है और पितर उसके दिये हुए आहु और तर्पण को ग्रहण नहीं करते ८ इसी प्रकार देवता भी उसकी पूजा को और अग्नि उसकी दी हुई

ब्राह्मणमद्य विदेयाम्पितृमन्तमैतृमृत्यमृषिमार्षे
यथं सुधातुदक्षिणम् । अस्मद्राता देवचा गच्छत

प्रदातारमा विशत ४६

अद्य^१। पितृमन्तमु^२। पैतृमृत्यमु^३। ऋषिमु^४। आर्षेयमु^५। सुधा^६
तुदक्षिणम् । ब्राह्मणम् । विदेयम् । अस्मद्राताः । देवचा ।
गच्छत । दातारं । प्राविशेत ॥ ४६ ॥

अथाधिदैवम् — इस कंडिका में दो मंत्र हैं, यजमान आग्नीध्र नाम
ऋत्विज के पास जाता है उसका मंत्र १ यजमान बैठ कर उस ऋत्विज को
सुवर्ण देता है उसका मंत्र २

ॐ ब्राह्मणमित्यस्य (आङ्गि रस ऋ० आची वृहती छ० लिङ्गोक्त देवता) १

ॐ अस्मदित्यस्य (तथा १ आची गायत्री छ० दक्षिणा देवता) २

पदार्थः — १ इस समय २ आहुतर्पण किया में तत्पर ३ आर्षबुद्धि के अ-
नुगामी अथवा कुलीन ४ मंत्रों के व्याख्याकर्त्ता ५ जाति प्रवर और ज्ञान से अ-
च्छे जाने हुए ६ सुवर्ण दक्षिणा के योग्य ७ ब्राह्मण को ८ प्राप्त करूँ हे दक्षि-
णाओं ९ हमसे दी हुई तुम १० देवताओं के पास ११ जाओ उन की दक्षि क-
रके १२ दाता के पास १३ प्रवेश करो ॥ ४६ ॥

आहुति को ग्रहण नहीं करते दाता देने योग्य दक्षिणा को नहीं देता है और
ब्राह्मण उसको नहीं मांगता है वेदों ने नरक में जाते हैं जैसे कटी रस्सी वाला
घट ६ जो यजमान मांगने वाले ब्राह्मणों को दक्षिणा नहीं देवे वह ब्राह्मण
के धन का हर्त्ता होवे और निश्चय कुभी पाक नरक को जावे १० वहां यम
दूत से नाडित हुआ लक्ष वर्ष वास करे फिर वह व्याधि युक्त और दरिद्री
चौडाल होवे ७ पिछले और ७ अगले पुरुषों को स्वर्ग से गिरावे ॥ ११ ॥

अथाध्यात्मम् - १ इस उत्थान अवस्था में मन से युक्त ३ आर्षिज्ञान से सम्पन्न ४ मंत्रों के व्याख्याता ५ मंत्र दृष्टा ६ आत्म ज्योति रूप दक्षिणा वाले ७ हृदय को प्राप्त कर रहे इन्द्रियों की शक्तियों में हमसे दी हुई तुम १० इन्द्रिय गोल कों को ११ जाओ और प्रारब्ध समाप्ति पर १२ मुझ दाता में १३ प्रवेश करो ॥ ४६॥

अग्नयेत्वा मह्यं वरुणो ददातु सोमृतत्वं मशीया
युद्वाच एधिमयो मह्यम् प्रति गृहीचे । रुद्रायत्वा
मह्यं वरुणो ददातु सोमृतत्वं मशीय प्राणो द्युव
आधिवयो मह्यम् प्रति गृहीचे । बृहस्पतयेत्वा म
ह्यं वरुणो ददातु सोमृतत्वं मशीय त्वग्दाच एधि
मयो मह्यम् प्रति गृहीचे । यमायत्वा मह्यं वरुणो
ददातु सोमृतत्वं मशीय हयो दाच एधिवयो मह्य
म् प्रति गृहीचे ४७

वरुणः । मह्यं । अग्नयेत्वा । ददातु । सः । अमृतत्वं । अशी
य । दाच । आयुः । एधि । प्रति गृहीचे । मह्यं । मयो । वरुणः ।
मह्यं । रुद्रायत्वा । ददातु । सः । अमृतत्वं । अशीय । दाच ।
प्राणः । एधि । मह्यं । प्रति गृहीचे । वयो । वरुणः । त्वा । मह्यं । बृ
हस्पतयेत्वा । ददातु । सः । अमृतत्वं । अशीय । दाच । त्वका । ए
धि । प्रति गृहीचे । मयो । वरुणः । मह्यं । यमायत्वा । ददातु
सः । अमृतत्वं । अशीय । दाच । हयो । एधि । मह्यं । प्रति गृही
चे । वयो । ४८

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उनको कहते हैं अध्वर्यु

और प्रति प्रस्थाता सुवर्णी को लेते हैं उसका मंत्र १ तथा गौ को लेते हैं उसका
मंत्र २ तथा वस्त्र को लेते हैं उसका मंत्र ३ तथा घोड़े को लेते हैं उसका मंत्र ४
ओं अग्नि य इत्यस्य (आग्नि रस ऋ० आर्ची विष्टु पृ० हिरण्यं देवतं) १
ओं रुद्रा येत्यस्य (तथा ० भुरिगाची विष्टु पृ० गौर्दे०) २
ओं बृहस्पतय इत्यस्य (तथा ० निचु दार्षी जगती छं० वस्त्रं देवतं) ३
ओं यमा येत्यस्य (तथा ० भुरिगाची विष्टु पृ० अश्वो दे०) ४

पदार्थः :- हे सुवर्ण १ यजमान २ मुम ३ अग्नि रूप अग्नीध्र के लिये ४
तुम ५ दान करो ६ इस विधि से लेता हुआ ६ वह में ७ आरोग्य को ८ प्राप्त
करूँ हे सुवर्ण तुम ९ दाता के लिये १० जीवन ११ हो १२ १३ और मुम लेने वा
ले के लिये १४ सुख रूप हो अर्थात् दाता आयुष्मान हो और मैं सुखी होऊँ
हे गौ १५ यजमान १६ १७ मुम रुद्र रूप होता के अर्थ १८ तुम १९ दान करो
२० वह में २१ आरोग्य को २२ प्राप्त करूँ हे गौ तुम २३ यजमान के लिये २४
प्राण रूप २५ हो २६ मुम २७ दान लेने वाले के अर्थ २८ अन्न और पशु रूप
हो अर्थात् दुग्ध दधि आदि रूप से अन्न और सन्तान द्वारा पशु रूप हो हे व
स्त्र २९ यजमान ३० तुम ३१ मुम ३२ बृहस्पति रूप उद्गाता के लिये ३३ दान
करो ३४ वह में ३५ आरोग्य को ३६ प्राप्त करूँ तुम ३७ दाता के लिये ३८ त्व
क् इन्द्रिय रूप सुख कारी ३९ हो और ४० मुम ४१ दान लेने वाले के अर्थ ४२
सुख रूप हो हे अश्व ४३ यजमान ४४ मुम ४५ यम रूप ब्रह्मा के लिये ४६ तुम
४७ दान करो ४८ वह यम रूप में ४९ आरोग्य को ५० प्राप्त करूँ हे अश्व तुम ५१
दाता के लिये ५२ अश्व ५३ हो ५४ मुम ५५ दान लेने वाले के लिये ५६ अन्न का दाता
६ पहलै वरुण ने कनक आदि पदार्थ अग्नि आदि देवताओं को दिये इस का
रण उस स्वरूप से लेता हुआ ब्राह्मण हानि को नही पाता है ॥

और से नन्ति द्वारा पशुओं का दाता हो ॥ ४७ ॥

अथाध्यात्मम् - हे आत्मज्योति १ योगा रूढ आत्माने २ मुक्त ३ मन के लिये ४ तुम्हें ५ दान किया ६ वह मैं ७ मोक्ष को ८ प्राप्त करूँ हे आत्म ज्योति तुम ९ योगा रूढ आत्मा के लिये १० जीवन ११ हूँ जियै १२ मुक्त १३ दान लेने वाले मन के लिये १४ मोक्ष सुख वा ब्रह्मानन्द हूँ जियै हे प्राण १५ योगा रूढ आत्माने १६ मुक्त १७ आत्मज्योति के लिये १८ तुम्हें १९ दान किया २० वह आत्मज्योति में २१ मोक्ष को २२ प्राप्त करूँ हे प्राण तुम २३ योगा रूढ आत्मा के लिये २४ प्राण २५ हो २६ और मुक्त २७ दान लेने वाले आत्मज्योति के लिये २८ अन्न हो हे त्वगास्पद भूतात्मा २९ योगा रूढ आत्माने ३० तुम को ३१ मुक्त ३२ प्राण के लिये ३३ दान किया ३४ वह प्राण मैं ३५ मोक्ष को ३६ प्राप्त करूँ तुम ३७ योगा रूढ आत्मा के लिये ३८ त्वचा ३९ हूँ जियै ४० और मुक्त ४१ दान लेने वाले प्राण के अर्थ ४२ ब्रह्मानन्द मय हूँ जियै हे ज्ञान वज्र ४३ योगा रूढ आत्माने ४४ मुक्त ४५ यम रूप भूतात्मा के लिये ४६ तुम्हें ४७ दान किया ४८ वह भूतात्मा मैं ४९ मोक्ष को ५० प्राप्त करूँ हे ज्ञान वज्र तुम ५१ योगा रूढ आत्मा के लिये ५२ ज्ञान वज्र ५३ हूँ जियै ५४ और मुक्त ५५ दान लेने वाले भूतात्मा के लिये ५६ अन्न हूँ जियै ॥ ४७ ॥

कोदात्कस्मा अदात्कामो दात्कामो या दातु । कामो

दातु । कामः प्रतिगृहीता कामैर्तते ॥ ४८ ॥

कः । अदातु । कस्मै । अदातु । कामः । अदातु । कामाय । अदातु । कामः । दातु । कामः । प्रतिगृहीता । कामैः । एतत । तौ ॥ ४८ ॥

अथाधिदैवम् - दूसरी वस्तु मन्थोदन तिल आदिको ग्रहण करते हैं उसका मंत्र १

ओं कोदादित्यस्य (आङ्गिरसः ऋषिः प्रजापत्या विष्णवे १० कामो देवः) १

पदार्थः दाता को दानाभिमान और दान लेने वाले को प्रति ग्रह सम्बन्धी दोष न होने के लिये देह और इन्द्रियों के समूह में काम को सम्बन्ध देते हैं १ किसने २ दिया ३ किसके अर्थ ४ दिया यह दो प्रश्न हुए उनका उत्तर ५ कामने ६ दिया ७ काम के अर्थ ८ दिया ९ काम १० दाता है ११ काम १२ लेने वाला है १३ हे काम १४ यह द्रव्य अथवा शरीर और ब्रह्मांड १५ तेरा ही है ॥ ४८ ॥ ६३ ॥ इति श्री भृगुवंशावतंस श्री नाथूराम सूनु ज्वाला प्रसाद शास्त्री कृते यजुर्वेदीय ब्रह्म भाष्ये उपांश्वदिप्रदानान्तः सप्तमोऽध्यायः ७ सातवीं अध्याय में उपांशु ग्रह आदि सम्बन्धी दूसरे संवन के मंत्र दक्षिणादान तक कहे अब आठवीं अध्याय में तीसरे संवन के आदित्य ग्रह आदि सम्बन्धी मंत्र कहे जाते हैं ॥

उपयाम गृहीतो स्यादित्येभ्यस्त्वा । विषाणु उरुगाय ।
 येष ते सोमस्तथै रक्षस्व मात्वा दुर्भन ॥ १ ॥
 उपयाम गृहीतः । असि । आदित्येभ्यः । त्वा । उरुगाय । विषाणु । ए
 ष । सोमः । ते । तथै । रक्षस्व । त्वा । मा । दुर्भन ॥ १ ॥
 अथाधिदैवम् - इस कुंडिका में तीन मंत्र हैं उनको कहते हैं अध्वर्यु
 से अर्जुन वाचन करने पर प्रति प्रस्थाता आदित्य पात्र द्वारा द्रोण कलश वा पू
 त भृत से देवता निर्देश शून्य मंत्र द्वारा सोम को ग्रहण करके अग्नि के उत्तर
 ६ गीता में श्री भगवान का वचन है हे अर्जुन ज्ञानी के नित्य वैरी दुष्पूराग्नि स्व
 रूप काम से ज्ञान ढका हुआ है १ इन्द्रिया मन और बुद्धि इस काम का स्थान
 कहाती हैं यह काम इन्हों के साथ ज्ञान को ढक कर जीवात्मा को मोहित क
 रता है २ हे अर्जुन इस कारण तुम आदि में इन्द्रियों को वश में करके इस ज्ञा
 न विज्ञान के नाशक पापी काम को मारो ॥ ३ ॥

हृदं द्विदेवत्य होम के पीछे होमता है उसका मंत्र १ प्रति प्रस्थाता शेष हवि को
आदित्य स्थाली में डालता है उसका मंत्र २ प्रति प्रस्थाता तीसरी बार आदित्य
स्थाली में डाल कर उसी आदित्य पात्र से आदित्य स्थाली को ढकता है उसका
मंत्र ३

ओं उपयामेत्यस्य (आङ्गिरस ऋ० याजुष्यनुष्टुप छं० सोमो देवता) १
ओं आदित्येभ्य इत्यस्य (तथा ० देवी पंक्ति ऋ० द० तथा ०) २
ओं विष्णवेभ्य इत्यस्य (तथा ० साम्नी बृहती छं० विष्णवे ०) ३

पदार्थः—हे सोम तुम १ उपयाम पात्र से गृहीत २ हो ३ आदित्य नाम देव
ताओं के लिये ४ तुम्हें सींचता हूँ ५ बृद्धत महात्माओं से स्तुत किये हुए ६ हे
यज्ञ पुरुष ७ यह ८ सोम ९ तेरे अर्पण किया १० उस सोम को ११ रक्षा करो सो
म रक्षा में प्रवृत्त १२ तुम को रक्षस १३ १४ पीड़ा न दे ॥ १॥

अथ योगिनां सायं सन्ध्या

अथाध्यात्मम्—हे आत्म प्रतिविकृतम् १ परा शक्ति से गृहीत २ हो ३ परा
नाम ब्रह्म ज्योति के पुत्र ब्रह्मा विष्णु महेश के लिये ४ तुम्हें सींचता हूँ ५ वह
तमक्तों से स्तुत किये हुए ६ हे त्रिदेव रूप धारी विष्णु ७ यह ८ आत्म प्रतिवि
वर्ध आपका ही है १० उसको ११ रक्षा करो १२ तुम को काम आदि १३ १४
मन पीड़ा दो ॥ १॥

कदाचन स्तरी रसिनेन्द्र सञ्च सिदाशुषे उपोपे

न्नु मधवन भूङ्क्नु ते दानन्दे वस्य पृच्यत आदि

त्येभ्यस्त्वा २

मधवन। इन्द्र। कदाचन। स्तरी। न। असि। दाशुषे। इन्द्र। उप

सञ्चसि। इन्द्र। भूयः। देवस्य। दानमे। ते। उप पृच्यते आदित्येभ्यः

१७
त्वा ॥ २ ॥

इसके डिका में दो मंत्र हैं उन को कहते हैं वन्द की स्तुति का मंत्र १ हविर्धान
को द्वार वन्द करने पर अर्घ्य आदित्य पांच को हाथ में लेकर और संस्त्रवों
को आदित्य स्थाली में लेकर उन संस्त्रवों के सकाश से आदित्य पांच द्वारा
आदित्य ग्रह को ग्रहण करता है उसका मंत्र २

ओं कदाचन इत्यस्य (आङ्गिरस ऋ० आषी वृहती छ० आदित्यो दे०) १
ओं आदित्येभ्य इत्यस्य (तथा देवी पंक्ति ऋ० ग्रहो दे०) २

पदार्थः - १ हे त्रिदेव रूप धारी २ महा विष्णु तुम ३ कभी ४ हिंसक ५ नहीं
६ हो ७ हविर् अर्पण करने वाले ८ यजमान के लिये ८ ब्रह्मा विष्णु महेश और
सूर्य रूप को धारण करते हो १० हे ब्रह्मा विष्णु महेश सूर्य रूप धारी महा
विष्णु ११ फिर १२ भक्त वा योगी का १३ हविदान वा आत्मदान १४ तुम से
ही १५ सम्बन्ध पाता है हे ग्रह वा हे आत्म प्रतिविम्ब १६ ब्रह्मा विष्णु महेश देव
ताओं के लिये १७ तुम को ग्रहण करता हूँ ॥ २ ॥

कदाचन प्रयुच्छस्युभे निपासि जन्मनी। तुरीया

दित्य सर्वनन्त इन्द्रिय मातृ स्थाव मृतं न्द्रिव्यादि

त्येभ्यस्त्वा ३

१ तुरीया २ दित्य ३ कदाच ४ न ५ प्रयुच्छसि ६ उभे ७ जन्मनी ८ निपासि
९ तौ १० अमृतम् ११ सर्वनम् १२ इन्द्रियम् १३ दिवि १४ आतस्थौ १५ आदित्ये
१६ भ्यः १७ त्वा ॥ ३ ॥

धारा से तोड़ कर पूत मृत में से अपने समीप लाकर उसी प्रकार फिर आ
दित्य ग्रह को ग्रहण करता है उसके मंत्र १ २

ओं कदाचनेत्यस्य (आङ्गिरस ऋ० निच दाषी वृहती छ० आदित्यो दे०) १

ओं आदित्येभ्य इत्यस्य (आङ्गिरसः ऋषिः देवी पत्तिः छंदः ग्रहो देवः) २
 पदार्थः— १ है महा विष्णो तुम २ कभी ३, ४ भक्तों को नही भूलते हो ५ दो
 नों ६ जन्म जिनमें एक माता पिता से दूसरा ग्रह से होता है ७ निरंतर रक्षा
 करते हो ८ आप का ९ अविनाशी १० जगत प्रवर्तक ११ सूर्य रूप बल १२
 स्वर्ग लोक में १३ स्थित हुआ है ग्रह वा हे आत्म प्रति विं १४ विष्णु आदि
 देवताओं के लिये १५ तुम्हें ग्रहण करता हूँ ॥ ३ ॥

यज्ञो देवानां मृत्येति सुमन्मादित्या सो भवता
 मृडयन्तः । आवोर्वीची सुमतिर्ववृत्याद अहो
 श्रिद्याव रिवो वित्तरा सदादित्येभ्यस्त्वा ॥ ४ ॥
 यज्ञः । देवानाम् । सुमन् । प्रज्येति । आदित्यासु । आमृडयन्तः ।
 भवतः । वः । सुमतिः । पूर्वाची । अववृत्यात् । अहो । चित्ते । यो
 वरिवो वित्तरा । प्रसते । आदित्येभ्यः । त्वा ॥ ४ ॥

इस कंडिका में दो मंत्र हैं उनको कहते हैं— इस आदित्य ग्रह को ग्रह के म
 श्रिम भाग वा मध्य में दधि से मिश्रित करता है उसके मंत्र १२
 ओं यज्ञ इत्यस्य (कुत्सः ऋषिः विराडापी विष्णु पदः आदित्यो देवः) १
 ओं आदित्येभ्य इत्यस्य (तथा देवी पत्ति छंदः) २ ग्रहो देवः) ३
 पदार्थः— १ यज्ञ वा यजमान २ ब्रह्मा विष्णु महेश नाम देवताओं के ३
 सुख को ४ प्राप्त करता है ५ हे ब्रह्मा विष्णु महेश नाम देवताओं आप ६
 सब ओर से सुख करने वाले ७ हजिये ८ आप की ९ भक्तों के अतु ग्रह में
 तत्पर ओ ८ बुद्धि १० हमारे सन्मुख ११ प्राप्त हो १२ पापियों को १३ भी १४
 १ अपने अंश रूप आत्मा को ग्रहण करता है वह आदित्य कहाता है आ
 दित्य नाम ब्रह्मा विष्णु महेश हैं उनका चौथा महा विष्णु है ॥

जो बुद्धि १५ मदान धन वा योगे लक्ष्मी प्राप्ति कराने वाली १६ होवे हे सोम वा हे आत्म प्रति विंव १७ ब्रह्मा विष्णु महेश नाम देवताओं के लिये १८ तुम्हें दधि वा निरुद्ध इन्द्रिय समूह से मिश्रित करता हूँ ॥ ४ ॥

विवस्वन्नादित्यै षते सोम पीथस्तस्मिन्मत्स्व ।

अदस्मै नरोवर्चसे दधात नयदा शीर्द्वा दम्पती

वाममश्नुतः । पुमान् पुत्रो जायते विन्दते वस्व

धा विश्वा हरिपुण्धते गृहे

विवस्वन् । आदित्य । एषा ते । सोम पीथः । तस्मिन् । मत्स्व ।

नरः । आशीर्दा । अस्मै । वर्चसे । अदधातन । यत । दम्पती ।

वामम् । अश्नुतः । पुमान् । पुत्रः । जायते । वसु । विन्दते । अ

धा विश्वा हा । अरपः । गृहे । आ । एधते ॥ २७ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं उनको कहते हैं अध्वर्यु उपांशु सवन नाम पाषाण से आदित्य ग्रह को मिलाता है अर्थात् सोम और दधि को परस्पर मिश्रित करता है उसका मंत्र १ पत्नी इस पूत भृत्य को देवती है उसका मंत्र २

ओं विवस्वानित्यस्य (कुत्स ऋषि प्राजापत्यानुष्टुप् छंदः आदित्यो देव) १

ओं आदित्यस्य (तथा ऋषि निचदाषीजगती छंदः आशीर्देव) २

पदार्थः - हे तमन्ताशक वा विशिष्ट धन काले ३ आदित्य ग्रह पात्रस्थ ४ तैरा ५ पान योग्य सोम है ६ उस सोम में तुम ७ तृप्ति पाओ पत्नी कहती है ८ हे यजमान सहित ऋत्विजों ९ आशीर्वादों को दाता आप १० इस ११ आशीर्वाद के लिये १२ अद्वा करो कि १३ जो १४ पत्नी यजमान १५ सभ जनीय यज्ञ फल को १६ प्राप्त करे तथा १७ पौरुष धर्म से सम्पन्न १८

पुत्र १६ उत्पन्न होवे वह पुत्र २० धन को २१ प्राप्त करे २२ तिसके पीछे २३ सदा २४ पाप रहित होता २५ अपने गृह में २६ २७ सब ओर से वृद्धि पावे ॥ ५॥

अथाध्यात्मम्— १ हे अज्ञान तम नाशक अथवा योगैश्वर्यवान् मन ३ यह इन्द्रिय शक्ति समूह ४ तेरा ५ पान योग्य अमृत है ६ उसमें ७ तम हो बुद्धि कहती है ८ हे वाक् आदि कृत्विजो ९ आशीर्वदि देने वाले प्राण १० इस ११ आशीर्वचन पर १२ अद्धा करो १३ जो १४ बुद्धि और आत्मा १५ योगयज्ञ के फल को १६ प्राप्त करें तथा १७ प्राण १८ योग पुरुषार्थ से युक्त १९ होवे वह प्राण २० योग लक्ष्मी को २१ प्राप्त करे २२ इसके पीछे २३ सदा २४ निष्पाप होता २५ ब्रह्म पुर शरीर में २६ २७ समष्टि भाव को प्राप्त करे ॥ ५॥

वाममुद्यसवितर्वाममुश्वोदिवेदिवेवाममुस्म

भ्यः १० सावीः । वामस्य हि सूर्यस्य देवभूरग्या

धिया वामभाजः स्याम ६

सवितः । अद्य । अस्मभ्यम् । वामम् । सावीः । श्वः । उ । वामम् । दिवे । दिवे । वामम् । वामस्य । भूरः । क्षयस्य । हि । देवः । अया । धिया । वामभाजः । स्याम ॥ ६ ॥

अथाधिदैवम्— इडा को भक्षण करके उपाश्रु अंतर्गमि पात्र से अन्तर पात्र द्वारा सवितृ ग्रह को ग्रहण करना है उसके मंत्र १२ ओं वाममित्यस्य (भ्रू द्वाज ऊ० निचू दापी त्रिष्टुप छ० सविता दे०) १ ओं उपयामेत्यस्य (तथा ० विगड ब्राह्म्य नृष्टुप छ० तथा) २

पदार्थः— १ हे सबके प्रेरक देवता २ अब सायं सवन में ३ हमारे लिये ४ सभ जनीय यज्ञ फल को ५ दीजिये ६ ७ अगले दिन भी ८ यज्ञ फल को दीजिये ९ १० प्रत्येक दिवस ११ यज्ञ फल को दीजिये १२ सभजनीय १३ विस्तीर्ण

१४ ब्रह्मांड के १५ ही १६ प्रकाशक हे सूर्यदेवता हम १७ इस १८ अद्वा युक्त बुद्धि द्वारा १९ यज्ञ का अनुष्ठान करने वाले २० होवें ॥ ६ ॥

अथाध्यात्मम् - वाक् आदि ऋत्विज कहते हैं १ हे मन वा हे प्राण २ अवसायं सवन में ३ हमारे लिये ४ ब्रह्मा विष्णु महेश रूप धारी महा विष्णु को ५ प्राप्त करा द्यै ६ ७ अगले दिन भी ८ महा विष्णु को अनुभव करा द्यै ९ १० अत्येक दिवस ११ महा विष्णु को प्राप्त करा द्यै १२ महा विष्णु का १३ विस्तीर्ण १४ व्यष्टि समष्टि शरीर रूप जो गृह है उसके १५ ही १६ प्रकाशक हे मन हम १७ विष्णु में योजित १८ अपरोक्ष ज्ञान के द्वारा १९ महा विष्णु के उपासक २० होवें ॥ ६ ॥

**उपयाम गृहीतोसि सावित्रोसि चनोधाऽन्नो
धाऽसि चनो मयि धेहि । जिन्व यज्ञं जिन्व यज्ञं
पतिम्भगाय देवाय त्वा स वित्रे ॥ ७ ॥**

उपयाम गृहीतः । असि । सावित्रः । असि । चनोधाः । चनोधाः ।
असि । चनः । मयि । धेहि । यज्ञं मे । जिन्व । यज्ञं पतिम् । जिन्व
भगाय । सवित्रे । देवाय । त्वा ॥ ७ ॥

अथाधिदेवम् - हे सोम तुम १ उपयाम पाव से गृहीत २ हो ३ तुम सविता को देवता रखने वाले ४ हो ५ ६ अत्यन्त अन्न के धारक अथवा भौम दिव्य अन्न के धारण करने वाले ७ हो इस कारण ८ अन्न को ९ मुझ में १० स्थापन करो और ११ यज्ञ को १२ तृप्त करो १३ यज्ञ मान को १४ तृप्त करो १५ ब्रह्मा विष्णु महेश स्वरूप १६ सूर्य १७ देवता के लिये १८ तुम गृहण करता है ॥ ७ ॥

अथाध्यात्मम् - हे मन तुम १ योग किया से निगृहीत २ हो ३ मानस

सूर्य को देवता रखने वाले ४ हौ ५ प्राण के धारक ६ और आत्म प्रति विंव के धारक ७
हौ इस कारण ८ प्राण वा आत्म प्रति विंव को ९ सुक्त आत्मा में १० लय करो ११
योग यन्त्र के अभि मानी देवता को १२ तृप्त करो १३ सुक्त आत्मा को १४ तृप्त
करो १५ विदेव रूप धारी १६ सब के प्रेरक १७ अवतारों से जीडण शील म
हा विष्णु के लिये १८ तुम्हे ग्रहण करता हूं ॥ ७ ॥

उपयाम गृहीतोसि सुशर्म्मासि सुप्रतिष्ठानो

वृहदुक्साय नमः । विष्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य एषते

योनि विष्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः ८

उपयाम गृहीतः । अस्मि । सुशर्म्मा । सुप्रतिष्ठानः । वृहदुक्साय ।
नमः । अस्मि । विष्वेभ्यः । देवेभ्यः । त्वा । एष । ते । योनिः । विष्वे
भ्यः । देवेभ्यः । त्वा ॥ ८ ॥

अथाधिदेवम् - अमक्षित सावित्र ग्रह पात्र द्वारा पूत भूत से म
हा वैश्व देव ग्रह को अध्यर्घ्य ग्रहण करता है उनके मंत्र १२

ॐ उपयामेत्यस्य (भरद्वाज ऋ० निचट् प्राजा पत्या जगती छं० विष्वे देवा दे०) १

ॐ एषत इत्यस्य (तथा ० याजुषी जगती छं० ग्रहो दे०) २

पदार्थः - हे वैश्व देव ग्रह तम १ उपयाम पात्र से गृहीत २ हौ ३ ओ ४ सुख
वा आश्रय वाले ५ पात्र में भले प्रकार स्थित ५ प्रजापति के लिये ६ अन्न स्वरू
प ७ हौ ८ ९ सब देवताओं के लिये १० तुम्हे ग्रहण करता हूं ११ यह १२ तेरा
१३ स्थान है १४ १५ सब देवताओं के लिये १६ तुम्हे सादन करता हूं ॥ ८ ॥

अथाध्यात्मम् - हे प्राण तम १ प्राणायाम से गृहीत २ हौ ३ ब्रह्मानंद
मय ४ ओ ५ पात्र में स्थित ५ ब्रह्म के लिये ६ अन्न स्वरूप ७ हौ ८ ९ ब्रह्म परा
महानारायण नाम देवताओं के लिये १० तुम्हे ग्रहण करता हूं ११ यह परा

शक्ति १२ तैरा १३ स्थान है १४, १५ ब्रह्म पर नहानारायण नाम देवताओं के लिये १६ तुम्हें सादन करता हूँ ॥ ८ ॥

उपयाम गृहीतोसि बृहस्पति सुतस्य देव सोम
तदन्दो रिन्द्रियावतः पत्नीवतो ग्रहा थं अष्टधा
सम। अहम्परस्तादहमवस्ताद्यदन्तरिक्षन्त
दुमेपिता भूत। अहं थं सूर्य्यमुभयतो ददर्शाह
न्देवानाम्परमदुःहायुत ॥ ८ ॥

देव। सोम। उपयाम गृहीतः। आसीतो। बृहस्पति सुतस्य। इन्द्रो
इन्द्रियावतः। पत्नीवतः। ग्रहान। आष्टधा सम। अहम्। पर
स्तात्। अहम्। अवस्तात्। यत। अन्तरिक्षम्। तत। उ। मे।
पिता। अभूत्। अहम्। उभयतः। सूर्य्यम्। ददर्श। यत। अह
म्। देवानाम्। परमम्। गुहा ॥ ८ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ३ मंत्र हैं उनको कहते हैं प्रतिप्र
स्थाता हविर्धानि में प्रवेश होकर उपासु पांच अथवा अतयाम पांच द्वारा
आग्रयण से पत्नीवत नाम ग्रह को ग्रहण करता है उसका मंत्र १ अध्वर्यु
प्रचण्णि शेष घृत से पत्नीवत ग्रह को मिश्रित करता है उसके मंत्र २, ३
ओं उपयामेत्यस्य (भरद्वाज ऋ० ब्राह्मी गायत्री छ० सोमो देवता) १

ओं आहमित्यस्य (तथा ३० आच्युषिणिक छ० प्रजापतिरूपात्मदे) २, ३

पदार्थः - १ हे दीप्यमान २ सोम तुम ३ उपयाम पांच से गृहीत ४ हौ इसका
रण ५, ६ मुक्त ब्राह्मणों के हाथ से अभिषुत ७ इस रूप में वीर्यवान् ८ शक्ति
से युक्त के १० उपासु आदि ग्रहों को ११ पूर्ण करता है १२ आत्मा रूप प्रजा
पति मैं १३ ऊपर स्वर्ग लोक आदि में हूँ १४ मैं १५ नीचे भूलोक आदि में हूँ

१६ जो १७ अन्न रिक्ष है १८ वह १९ भी २० मेरे रूपों का २१ स्थान रूप से पालन करने वाला २२ हुआ २३ मैंने २४ दोनों ओर अथान ऊपर नीचे से २५ अपने आत्म प्रति विव सूर्य को २६ देखा २७ जिस कारण २८ मैं २९ इन्द्रादि देवताओं अथवा इन्द्रियों का ३० उत्कृष्ट ३१ आश्रय स्थान हूँ ॥ ६॥

अथाध्यात्मम् - आत्मा कहता है १ हे दीप्य मान २ आत्म प्रति विवतुम् ३ पराशक्ति से गृहीत ४ हौ इस कारण ५ तुम्ह ६ प्राण से अभिषुत ७ ज्योति रस रूप ८ योग बल से सम्पन्न ९ बुद्धि से संयुक्त के १० प्राण आदि ग्रहों को मैंने ११ पूर्ण किया शेष अधि देव अर्थ की समान है ॥ ६॥

अग्ना ३ इ पत्नी वनत्स जू हे वे न त्वष्टा सोमस्य
वस्वाहा । प्रजापति वृषो सिरे तो धारतो मयि धे
हि प्रजापते स्ते वृषो रे तो धूसो रे तो धाम शीय १०
पत्नीवत् । अग्ना ३ इ । त्वष्टा । देवेन । सजू । सोमम् । पिव । स्वा
हा । प्रजापति । वृषो । रे तो धो । असि । रे तो । मया धे हि । वृषा
रे तो धस । तो । प्रजापते । रे तो धा । अशीय ॥ १० ॥

अथाधिदेवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं उनको कहते हैं अध्वर्यु पत्नी वत नाम यह को अग्नि के उत्तर भाग में हो मता है उसका मंत्र १ मे जा हुआ ने धाना अध्वर्यु पत्नी को दूसरे द्वार से सद में प्रवेश करा के उद्गाता के उत्तर में स्थिति पत्नी से कहता है कि उद्गाता को देख और वह पत्नी उद्गाता को देखती है उसका मंत्र २

ॐ अग्ने इत्यस्य (भिरद्वाज ऋभुरिगाची गायत्री छं० अग्नि दे०) १।
 ॐ प्रजापतिरित्यस्य (नेया । आर्ची चिष्टुप् छं० प्रजापति दे०) २।

पदार्थः - १ हे पत्नी से युक्त २ अग्ने ३ वृष्टा ४ देवता से ५ समान प्रति

वाले तुम ६ सोम को ७ पान करो ८ ओष्ठ हांम हो हे उद्गाता ९ प्रजा पालक
तुम १० सींचने वाले ११ और वीर्य के धारण करने वाले १२ हौ १३ वीर्य को
१४ मुझ में १५ स्थापन करो १६ वीर्य के सींचने वाले १७ वीर्य के धारण
करने वाले १८ तुम १९ प्रजापति के २० वीर्य धारक अर्थात् सन्तान उत्प
न्न करने में समर्थ पुत्र को २१ प्राप्त करूँ ॥ १० ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे बुद्धि से सम्पन्न २ आत्माग्नि ३, ४ ईश्वर के
साथ ५ सेवा युक्त तुम ६ आत्म प्रति विंव को ७ पान करो ८ महा वाक् वा
गुरु के उपदेश से हे महा वाक् ९ योगियों का पालन करने वाले तुम १०
ज्ञान रस से सींचने वाले ११ और योग वल के धारण करने वाले १२ हौ
१३ योग वल को १४ मुझ में १५ धारण करो १६ ज्ञान रस से सींचने वा
ले १७ योग वल के धारण करने वाले १८ तुम १९ महा वाक् के २० योग
वल धारक ज्ञान को २१ प्राप्त करूँ ॥ १० ॥

उपयाम गृहीतोसि हरिरसि हारि योजनो ह
रिभ्यान्त्वा । हूर्योऽध्यानास्थ सह सोमा इन्द्राय ११
उपयाम गृहीतः । असि । हारि योजनः । हरिः । असि । त्वा । हरि
भ्याम् । सह सोमाः । इन्द्राय । हूर्योः । धानाः । स्थ ॥ ११

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं, अध्वर्यु हारि योजन
नाम ग्रह का ग्रहण करता है उसका मंत्र १ धानाओ को बोता है उस
का मंत्र २

ॐ उपयामेत्यस्य (भरद्वाज ऋ० आर्चुषिण कृ० ऋक् सामे देवते) १
वेहूर्येत्यस्य (तथा ० याजुषी जगती छ० धाना देवता) २

पदार्थः - हे ग्रह तुम १ उपयाम पात्र से गृहीत २ हौ ३ प्रसांशु रूप जीव

ईश्वर को युक्त करने वाला जो महा विष्णु है उससे सम्बंध रखने वाले ४ साम ५
हौ ६ तुम ७ ऋक् सामनाम मंत्रों के लिये ग्रहण करता हूं ८ हे सोम सहित
भृष्ट यवो तुम ९ महा विष्णु की प्राप्ति के अर्थ १० ऋक् सामनाम मंत्रों की ११
तृप्ति करने वाले १२ हौ ॥ ११ ॥

अथाध्यात्मम् - हे आत्म प्रति विंव तुम १ परा शक्ति से गृहीत २ हौ ३
महा विष्णु से सम्बंध रखने वाली ४ किरण ५ हौ ६ तुम को ७ भक्ति ज्ञान
सम्बंधी मंत्रों के लिये ग्रहण करता हूं ८ हे आत्म प्रति विंव सहित आपो तु
म ९ महा विष्णु की प्राप्ति के लिये १० भक्ति ज्ञान सम्बंधी महा वाक् के ११
पोषक १२ हौ ॥ ११ ॥

यस्ते अश्वसनि भिक्षो योगो सनिस्तस्य तद्दृष्ट
यजुषस्तु तस्तोमस्य शस्तो कथस्योपहृतस्यो

पह भक्षयामि ॥ १२ ॥

ते। दृष्ट यजुषः। तुतस्तोमस्य। शस्तोकथस्य। उपहृतस्य। यः
भक्षः। अश्वसनि। यः। गोसनि। तस्य। ते। उपहृतः। भक्ष
यामि ॥ ११ ॥

अथाधिदेवम् - प्राण भक्ष्य को भक्षण करके उत्तर वेदी में डाल
ते हैं उसका मंत्र १

उयस्त इत्यस्य (भरद्वाज ऋ० आषी पंक्ति ऋ० भक्ष्यद्रव्यं देवतं) १

पदार्थः - हे धाना सहित सोम हे भक्ष्यद्रव्य १ तुम २ पूजित यजु मंत्र
वाले ३ उद्धाताओं से स्तुत स्तोत्र वाले ४ होताओं से स्तुत शस्त्र वाले ५
अनुज्ञात का ६ जो भक्ष्य ८ घोड़ों का दाता है ९ जो १० गौओं का दा
ता है ११ उस १२ तुम के वैसे भक्ष्य को १३ अनुज्ञात में १४ भक्षण

ओं उच्चाह मित्यस्य (भरद्वाज ऋ० आर्ची बृहती छ० अग्निर्दे०) ६

पदार्थः— हे शकल तुम १ देवताओं के साथ किये हुए ७ पाप के ३ नाशक ४ हैं ५ मनुष्यों के साथ किये हुए ६ द्रोह निंदा आदि पाप के ७ नाशक ८ हैं ९ पित्रों के साथ किये हुए १० आह्न आदि न करने पाप के ११ नाशक १२ हैं १३ आत्मा के साथ किये हुए १४ आत्म निन्दा आदि पाप के १५ नाशक १६ हैं १७, १८ जितने पाप हैं उन सब के १९ नाशक २० हैं २१ और २२ ज्ञान पूर्वक २३ जो २४ पाप २५ मैंने २६ किया २७ और २८ अज्ञान पूर्वक २९ जो पाप किया ३० उस ३१ सब ३२ पाप के ३३ नाशक ३४ हैं ॥ १३ ॥

अथाध्यात्मम्— हे हविरूप देह के अवयवो तुम १ वाणी कृत २ पाप के ३ नाशक ४ हैं ५ प्राण कृत ६ पाप के ७ नाशक ८ हैं ९ मन कृत १० पाप का ११ नाश करने वाले १२ हैं १३ आत्म प्रति विव कृत १४ पाप के १५ नाशक १६ हैं १७, १८ सब पापों के १९ नाशक २० हैं २१ और २२ ज्ञान अवस्था में २३ जो २४ पाप २५ मैंने २६ किया २७ और २८ अज्ञान अवस्था में २९ जो पाप किया ३० उस ३१ सब ३२ पाप का ३३ नाश करने वाले ३४ हैं ॥ १३ ॥

सर्वस्य पर्यसा सन्त नूभिर्गन्महि मनसा
सथं शिवेन । त्वष्टा सुदत्रो विदधातु गयो नू
माष्टु तन्वो यद्विलिष्टम् ॥ १४ ॥
वर्चसा । समगन्महि । पर्यसा । सं । तनूभिः । सं । शिवेन । मन-
सा । सथं । सुदत्रः । त्वष्टा । गयः । विदधातु । तन्वः । यतो विलि-
ष्टम् । अनु माष्टु ॥ १४ ॥

अथाधिदैवम्— चात्वाल से अन्य स्थान में निकट ही होता आदि

के कम से उदक संस्थ और प्रागग्रचमसस्थापन किये जाते हैं उन चमसों को ऋत्विज और यजमान जल पूर्ण करके उनपर हरी कुशार रव कर चमस के मध्य नीचे से स्पर्श करते हैं उसका मंत्र १

ओं संवर्च सेत्यस्य (भरद्वाज ऋ० विरा डाषी त्रिष्टुप् छं० गृष्टा दे०) १

पदार्थः - १ हम ब्रह्म तेज से २ संयुक्त हुए ३ क्षीर आदिरस से ४ संयुक्त हुए ५ अनुष्ठान में समर्थ देह के अंगों से ६ संयुक्त हुए ७ कर्म श्रद्धा युक्त ८ मन से ९ संयुक्त हुए १० शुभ दान वाला ११ त्वष्टा देवता १२ धनों को १३ हमें दो १४ हमारे शरीर का १५ जो अंग १६ विशेष न्यून है १७ उस न्यूनता के दूर करने से उसको पूर्ण करके शुद्ध करो ॥ १४ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हम ब्रह्म तेज से २ संयुक्त हुए ३ प्राण से ४ संयुक्त हुए ५ इन्द्रियों से ६ संयुक्त हुए ७ आनंद स्वरूप ८ मन से ९ संयुक्त हुए १० ब्रह्मा विष्णु महेश और मानस सूर्य कारक्षक ११ माया रहित करने से सूक्ष्म करने वाला महा विष्णु १२ योग धनों को १३ हम योगियों में धारण करो १४ भूतात्मा का १५ जो अंश १६ समाधि के बीच ब्रह्म में लय हुआ उसे १७ शोधन करो ॥ १४ ॥

समिन्द्रो मनसानेषि गोभिः स थं सुरिभिः
मध्वनत्स थं स्वस्त्या । सम्रहणा देव कृतं
यदस्ति सन्देवानां थं समतो यज्ञियानां थं

स्वाहा ॥ १५ ॥

१ मध्वन ३ इन्द्र ३ नः ११ मनसा १२ सन्नेषि १३ गोभिः १४ समू १५ सुरिभिः
स थं १६ स्वस्त्या १७ ब्रह्मणा १८ सम १९ यज्ञियानां थं २० देवानां थं २१ सम
तो २२ देव कृतं २३ यत २४ अस्ति २५ सम २६ स्वाहा ॥ १५ ॥

नौ समिष्ट यज्ञ को हो मता है उनके मंत्र, उनमें पहिले मंत्र को कहते हैं १

ओं समिन्द्रमित्यस्य (अत्रिर्ऋ० भुरिगाधी त्रिष्टुपं० विष्णवे देवा दे०) १

अथ मंत्रार्थः - १ ब्रह्मा विष्णु महेश रूप धारी वाधनवान् २ हे महा विष्णु वा महा इन्द्र तुम ३ हम को ४ भक्ति ज्ञान युक्त मनसे ५ संयुक्त कर ते हो ६ भक्ति ज्ञान सम्पन्न इन्द्रियों वा पशुओं से ७ संयुक्त करते हो ८ पंडित सत्पुरुष महात्माओं से ९ संयुक्त करते हो १० क्षेम ११ और वेद से १२ संयुक्त करते हो १३ यज्ञ सम्बंधी १४ देवताओं के १५ ज्ञान में १६ विद्वानों का कर्म १७ जो १८ हैं उस से १९ संयुक्त करते हो २० वेद वाक् से अथवा उस तुम्ह के लिये श्रेष्ठ होम हो ॥ १५ ॥

संवर्चसा पर्यसा सन्तनू भिरगन्महि मनसा

संथं शिवेन । त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायो नु

मार्धुतन्वो यद्विलिष्टम् १६

दूसरा मंत्र

ओं संवर्चसेत्यस्य (प्रजापतिर्ऋ० विराडाधी त्रिष्टुपं० त्वष्टा दे०) १

इसकी व्याख्या चौदहवें मंत्र में हो चुकी है ॥ १६ ॥

धाता एतिः सविते दक्षं षन्ताम्प्रजापतिर्निधि

पा देवो अग्निः । त्वष्टा विष्णुः प्रजया संथं रा

णा यज्ञ मानाय द्रविणन्द धात स्वाहा ॥ १७ ॥

एतिः । धाता । सविते । निधिपा । प्रजापतिः । देवः । अग्निः ।

त्वष्टा । विष्णुः । इदम् । षन्ताम् । प्रजया । संररणाः । यज्ञ

मानाय । द्रविणम् । दधाते । स्वाहा ॥ १७ ॥

अथाधिदैवम् - समिष्ट यज्ञ के होम का तीसरा मंत्र

ओं धाता रातिरित्यस्य (अत्रिर्ऋ० स्वराडापीत्रिष्टुपछं० धातुः सवितुः प्रजापत्याग्निः
त्वष्ट्रविष्णुदेवा देवताः) १

पदार्थः - १ दान शील २ धाता देवता ३ और सवितो ४ और महा पद्म, शरव
आदि निधियों के रक्षक ५ प्रजा पति ६ और दीप्य मान ७ अग्नि ८ और तुष्टा
९ और विष्णु ये छै देवता १० इस हमारे हवि समष्टि यजु नाम को ११ सेवन
करो और १२ भक्तों के साथ १३ भले प्रकार रम माण तुम १४ यजमान के
लिये १५ धन १६ दीजिये १७ आप के अर्थ अष्ट होम हो ॥ १७ ॥

अथाध्यात्मम् - १ दान शील २ आत्मा ३ और सूर्य ४ और ओज
आदि निधियों का रक्षक ५ मन ६ और दीप्य मान ७ महा वाक् ८ और ई
श्वर ९ और ब्रह्म १० इस प्रति विंव को ११ सेवन करो हे देवता ओ १२ आपों
के साथ १३ भले प्रकार रम माण तुम १४ यजमान के लिये १५ योग सम्प
त्ति १६ दीजिये १७ महा वाक् द्वारा ॥ १७ ॥

**सुगावो देवाः स दना अकर्म य आजग्मेद थं स
वनञ्जुषाणाः । भरमाणा वहमाना हवी थं प्य
स्मे धत्तव सवो वसूनि स्वाहा ॥ १८ ॥**
देवाः । यो । इदम । सुवनम् । जुषाणाः । आजग्मे । वः । स दना ।
सुगा । अकर्म । वसवे । हवीषि । भरमाणाः । वहमानाः । अस्मे
वसूनि । धत्त । स्वाहा ॥ १८ ॥

अथाधिदैवम् - समष्टि यजु के होम का चौथा मंत्र १
ओं सुगाव इत्यस्य (अत्रिर्ऋ० आशीत्रिष्टुपछं० देवा देवताः) १
पदार्थः - १ हे देवता ओ २ जो तुम ३ इस ४ यज्ञ को ५ सेवन करते हुए
६ आये ७ उन आप के ८ स्थान ९ ईश्वर से प्राप्ति योग्य १० किये ११ हे सव
के वास स्थान अग्नि पृथिवी वायु अन्तरिक्ष सूर्य चन्द्रमा और नक्षत्र नाम

देवताओं १२ इवियों को १३ धारण करते १४ और लेजाते तुम १५ हम यज्ञ
मानों में १६ धनों को १७ स्थापन कीजिये १८ उन आप के लिये श्रेष्ठ हो
महो ॥ १८ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे इन्द्रिय शक्तिओ २ जो तुम ३ इस ४ योग्य
ज्ञ को ५ सेवन करते ६ प्राप्त हुए ७ उन आप के ८ इन्द्रिय गोलकों को ९
सुख से प्राप्त योग्य १० किया ११ हे इन्द्रिय गोल को १२ इन्द्रिय शक्ति
पधनों को १३ धारण करते १४ और प्राप्त करते तुम १५ हम योगियों में १६
यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि रूप
धनों को १७ स्थापन कीजिये १८ गुरु के उपदेश से ॥ १८ ॥

यांश्च आवह उशतो देव देवांस्तान्प्रेरयस्व
अग्ने सुधस्थे । जस्रि वांश्च सः पपि वांश्च स
अविश्वे सुदुर्म्मुंश्च स्वर्गतिष्ठतानु स्वाहा १९
देव । अग्ने । यान् । उशतुः । देवान् । आवह । तान् । देवान् ।
स्व । सुधस्थे । प्रेरय । विश्वे । जस्रि वांश्च । च । पपि वांश्च । अ
सु । चर्मश्च । स्व । अन्वतिष्ठत । स्वाहा ॥ १९ ॥

अथाधिदैवम् - समष्टि यज्ञ के होम का पांचवां मंत्र १
ओं यानित्यस्य (अविर्चर्त्तुः भुरिगापी त्रिष्टुपं च । अग्नि देवता) १
पदार्थः - १ हे दीप्यमान २ अग्नि देवता तुमने ३ जिन ४ इविन्वाहने
वाले ५ देवताओं को ६ आवाहन किया है ७ उन ८ देवताओं को ९ उनके
१० निज लोको में ११ भेजो हे देवताओ १२ तुम सबने १३ सबन के पुरोडा
य आदि को भक्षण किया १४ और १५ सोम का पान किया अब १६ द्वि
एवर्गुर्मे के प्राण रूप वायु मंडल को १७ तथा सूर्य मंडल को १८ वा स्वा

लोक को १६ प्राप्त करो अथति जहां जिसके लोक हैं वहां जाओ २० तुम्हारे लिये ऋषि होम हो ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे इन्द्रियों के प्रकाशक २ आत्माग्नि तुमने ४ जिन ४ आपके चाहने वाले ५ इन्द्रियों को ६ आवाहन किया है ७ उन ८ इन्द्रियों को ९ उनके १० निज वास स्थान में ११ भेजो हे वाक् आदि देवताओ १२ तुम सवने १३ भोग किया १४ और १५ भोगों से तृप्त और निवृत्त हुए अब १६ आपों को १७ आत्मप्रति विंव को १८ और मन रूप स्वर्ग को १९ जाओ २० गुरु के उपदेश से ॥ १६ ॥

वयं हि त्वा प्रयति यज्ञे अस्मिन्नग्ने हो
तारम वृणीमहीह । ऋधं गुया ऋधं गुता
शमिष्टाः प्रजानन्यज्ञमुपयाहि विद्वान्

त्वाहा ॥ २० ॥

अग्ने । हि । इह । अस्मिन् । यज्ञे । प्रयति । होतारं । त्वा । वयम्
अवृणीमहि । ऋधं गु । अयोः । उत । ऋधं गु । अशमिष्टाः ।
विद्वान् । यज्ञं । प्रजानिन् । उपयाहि । स्वाहा ॥ २० ॥

अथाधिदैवम् - समष्टि यज्ञ के होम का छठा मंत्र १

पदार्थः - अब अग्नि का विसर्जन करते हैं १ हे अग्नि देवता २ जिस कारण ३ इस दिन वा स्थान में ४ इस ५ यज्ञ के ६ वर्त्तमान होने पर ७ देवताओं का आवाहन करने वाले वा होम के निष्पादक ८ तुम को ९ हे अग्ने १० वरण किया तिस कारण ११ समृद्धि पूर्वक अथवा यज्ञ को वृद्धि देते हुए तुमने १२ यज्ञ कराया १३ और १४ यज्ञ को वृद्धि देते हुए

१५ यज्ञ प्रायश्चित्त को शांत किया अथवा विघ्नों की शान्ति की १६ वह जानी तुम १७ यज्ञ को १८ समाप्त जान्ते १९ अपने लोक को जाओ २० आपके लिये श्रेष्ठ होम हो ॥ २० ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे वाक् २ जिस कारण ३ इस आश्रम में ४ इस ५ योग यज्ञ के ६ प्रवृत्त होने पर ७ इन्द्रियों का आह्वान करने वाले वा होम सिद्धि करने वाले ८ तुम्ह को ९ हमने १० वरण किया ११ यज्ञ को वृद्धि देते तुम्हने १२ यज्ञ कराया १३ और १४ यज्ञ को वृद्धि देते हुए १५ विघ्नों की शान्ति की १६ वह विद्वान् तुम १७ आत्मा रूप यज्ञ मान को १८ अपना आश्रय जान्ते १९ समीप जाओ २० वेद वचन के द्वारा ॥ २० ॥

देवा गातु विदो गातुं वित्वा गातु मित । मन
सस्पत इमुन्देवु यज्ञं स्वाहा वाते धा ॥ २० ॥
गातु विदः । देवाः । गातुं । वित्वा । गातुम् । इतो मन सस्पते
देवा इमम् । यज्ञं । स्वाहा । वाते । धा ॥ २१ ॥

अथाधिदैवम् - समष्टि यज्ञ के होम का सातवां मंत्र १
ओं देवा इत्यस्य (अत्रि ऋक् स्वराडार्घ्युणि क छं वनस्पतिर्देव) १
पदार्थ - १ नाना प्रकार के वैदिक शब्दों से जो सिद्धि किया जाता है उस यज्ञ के जानने वाले हे २ देवताओं ३ यज्ञ को ४ लब्ध करके ५ मार्ग को ६ प्राप्त करो ७ हे प्रजापति ८ देवता ९ इस १० यज्ञ को ११ आपके हाथ में धारण करता हूं और तुम १२ वायु रूप देवता में १३ स्थापन करो ॥ २१ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे यज्ञ पुरुष महा विष्णु के नाता २ वाक् या

दिदेवताओं ३ यज्ञ पुरुष को ४ प्राप्त करके ५ सुषुम्ना मार्ग को ६ जाओ
७ हे प्रजापति ८ ज्योति स्वरूप तम ९ इस १० आत्म रूप यजमान को
११ वेदविधि से १२ प्राण में १३ स्थापन करो ॥ २१ ॥

यज्ञं यज्ञं द्रुच्छ यज्ञं पतिं द्रुच्छ स्वां योनिं द्रु-
च्छ स्वाहा । एषते यज्ञो यज्ञं पते सह सूक्तं
वाक्स्सर्ववीरस्तज्जुषस्व स्वाहा ॥ २२ ॥

यज्ञं यज्ञम् । गच्छ । यज्ञं पतिम् । गच्छ । स्वां योनिम् ।
गच्छ । स्वाहा । यज्ञं पते । एष । सह सूक्तं वाक् । सर्ववीरः
यज्ञः । ते । तम । जुषस्व । स्वाहा ॥ २२ ॥

अथाधिदैवम् — समष्टि यजु के होम का आठवां मंत्र १०
ॐ यज्ञं यज्ञमित्यस्य (अविर्जः) मुरिगं साम्युष्णिगच्छ० यज्ञो दे० १

पदार्थः — १ हे यज्ञ तम २ यज्ञ पुरुष विष्णु को ३ अपनी प्रतिष्ठा के
लिये प्राप्त करो ४ यजमान को ५ फलदान से प्राप्त करो ६ अपनी ७
कारण भूत वायु की क्रिया शक्ति को ८ वर्षासिद्धि के लिये प्राप्त करो ९
श्रेष्ठ होम हो १० समष्टि यजु के होम का नवां मंत्र ११ हे यजमान १२ यह
अनुष्ठीय मान १३ स्तोत्रों से युक्त १४ सोम पशु सवनीय चरु, पुरोडा-
श नाम वीरों से संयुक्त १५ यज्ञ १६ तेरा ही है १७ उस यज्ञ को १८ फ-
लभोग से सेवन कर १९ श्रेष्ठ होम हो ॥ २२ ॥

अथाध्यात्मम् — फिर समाधि को कहते हैं १ हे आत्म प्रति वि-
व २ आत्मा को ३ प्राप्त कर ४ ईश्वर को ५ प्राप्त कर ६ अपने ७ उत्पत्ति
कारण ब्रह्म को ८ प्राप्त कर ९ महा वाक् द्वारा १० हे आत्म रूप यजमा-
न ११ यह १२ महा वाक्यों से युक्त १३ प्राणों से संयुक्त १४ योग यज्ञ १५

तेराही है १६ उस योग यज्ञ को १७ सेवन कर १८ गुरु के उपदेश से ॥ २२ ॥

माहि भूर्मा एदाकुः । उरु थं हि राजा वरुणा
अकार सूर्यायि पुन्या मन्वेत वाउ । अपदे पा
दा प्रति धातवे करुता पवत्ता हृदया विध
श्रित । नमो वरुणा या भिष्टि तो वरुणा स्य

पाशः २३

अहिः १। मा २। भू ३। एदाकुः ४। मा ५। हि ६। हृदया विधः ७। अपवत्ता
चित् ८। उत ९। के १०। राजा ११। वरुणा १२। अपदे १३। पादा १४। प्रति धात
वे १५। सूर्यायि १६। मन्वेत वाउ १७। उरु थं १८। पुन्याम् १९। चकारा वरु
णाया नमः २०। वरुणा स्य २१। पाशः २२। अभिष्टितः २३ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उनको कहते हैं, अध्वर्यु
यजमान सम्बन्धी मृग ऋद्ध और मध्य में बन्धी हुई मेखला को चात्वाल
में डालता है उसका मंत्र १ मेखला डालने के पीछे चात्वाल के समीप वे
दी के मध्य पूर्व मुख बैठे हुए यजमान को अध्वर्यु कहलाता है उसका
मंत्र २ जल के समीप जाकर साम गान करने पर भुजा से पकड़े हुए यज
मान को जल के मध्य प्रवेश करता हुआ कहलाता है उसका मंत्र ३
ओं माहि भूर्मित्यस्य (अत्रिर्ऋ० देवी जगती छं० रज्जुर्दे) १
ओं उरुमित्यस्य (अनः शेषऋ० निरुदायी त्रिष्टुप् छं० वरुणो दे) २
ओं नम इत्यस्य (तथा आसुरी गायत्री छं० तथा) ३

पदार्थः - हे रज्जु तम १ सर्पिकार २ मत हो ३ अजगरा कार ४
मत हो ५ जिस कारण ६ हृदय के पीड़ा देने वाले को ७ तिरस्कार कर
ने वाले ८ चैतन्य ९ और १० मजाओं के स्वामी १२ अचित्य ऐश्वर्यमान

१३ ईश्वर ने १४ अन्तरिक्ष के मध्य १५, १६ पांवरवने १७ और सूर्य की १८ प्राप्ति के लिये १९ विस्तीर्णी २० मार्ग २१ रत्ना २२ वरुणा के अर्थ २३ नमस्कार २४ वरुणा का २५ पाश २६ वशीभूत हुआ उस कारण बंधन करने में समर्थ नहीं ॥ २३ ॥

अथाध्यात्मम् - हे सुषुम्ना तुम १ सर्प की समान कुटिल २, ३ मत हो ४ विच्छू की सामान काटने वाली ५ मत हो ६ जिस कारण ७ हृदय पीड़क काम के ८ तिरस्कार करने वाले ९ देहाभिमान से रहित १० और ११ ईश भाव को प्राप्त १२ योगी श्वर्य से सम्पन्न १३ आत्मा रूप यजमान ने १४ अन्तरिक्ष में १५, १६ गमन करने और १७ महाविष्णु की १८ प्राप्ति के लिये १९ विस्तीर्णी २० योग मार्ग को २१ शोधन किया २२ योगी के लिये २३ विशद रूप अन्न हो २४ योगी का २५ पाश अर्थात् बंधन हेतु सत्सारा २६ तिरस्कृत हुआ उस कारण बंधन करने में समर्थ नहीं ॥ २३ ॥

अग्ने रनीकमुप आविवेशा पान्न पात्रति
रक्षन्न सूर्यम् । दमे दमे समिधं यक्ष्यन्ने प्र
तिते जिह्वा घृतमुच्चरयत्स्वाहा ॥ २४ ॥
 अग्ने । अग्नेः । अपान्न पातु । अनीक । अपः । आविवेश ।
 दमे । दमे । असूर्यम् । प्रति रक्षन् । समिधं । यक्षि । तौ । जिह्वा । घृतम् । प्रति उच्चरयत् । स्वाहा ॥ २४ ॥

अथाधिदेवम् - जल में प्रवेश के पीछे हाथ में ली हुई स्थाली से चार बार लिये हुए घृत को जुहू में लेकर जल में समिध को डाल कर उस पर होम करता है उसका मंत्र १
 ओषम् इत्यस्य (अविर्ऋः आषी विष्टुप ह्यं अग्नि देवता) १

पदार्थः—१ हे अग्नि २ तुभ्यं अङ्गन शील का ३ अपान्न पात नाम ४ मुख ५ जलो में ६ प्रवेश हुआ वह तुम ७, ८ प्रत्येक यज्ञ गृह में ९ असुरों के किये हुए यज्ञ विष को १० शांत करते हुए ११ घृत को १२ अपने आत्मा में संयुक्त करो १३ तेरी १४ ज्वाला १५ घृत में १६ उद्युक्त हो १७ उस तुभ्यं के लिये श्रेष्ठ हो सहे ॥२४॥

अथाध्यात्मम्—१ हे आत्माग्नि २ तुभ्यं अपने प्रति विंवसे गमन शील का ३ इन्द्रिय नाम ४ समूह ५ मानस आदि कमलों के अंतरिक्ष में ६ प्रवेश हुआ वह तुम ७, ८ मानस कमल आदि अत्येक यज्ञ गृह में ९ का मरचित यज्ञ विष को १० शांत करते ११ आपा को १२ अपने आत्मा में संयुक्त करो १३ तेरा १४ आत्म प्रति विंव १५ इन्द्रिय शक्ति समूह को १६ भक्षण करो १७ यह सब आत्मा है इस श्रुति के प्रभाव से ॥२४॥

समुद्रेते हृदयं मृष्वन्तः सन्त्वा विशन्त्वा
षधी रुतापः । यज्ञस्य त्वा यज्ञ पते सुक्तो
क्तो नमो वाके विधेम यत स्वाहा ॥२५॥
यत । ते । हृदयम् । समुद्रे । अप्सु । अन्तः । ओषधी । रुता । आप
त्वा । संविशन्तु । यज्ञ पते । यज्ञस्य । सुक्तोक्तो । नमो वाके ।
त्वा । विधेम । स्वाहा ॥२५॥

अथाधिदैवम्—अर्धैर्यु सार रहित सोम के कुंभ को जल में डाल
ता है उसका मंत्र १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १०० १०१ १०२ १०३ १०४ १०५ १०६ १०७ १०८ १०९ ११० १११ ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ ११८ ११९ १२० १२१ १२२ १२३ १२४ १२५ १२६ १२७ १२८ १२९ १३० १३१ १३२ १३३ १३४ १३५ १३६ १३७ १३८ १३९ १४० १४१ १४२ १४३ १४४ १४५ १४६ १४७ १४८ १४९ १५० १५१ १५२ १५३ १५४ १५५ १५६ १५७ १५८ १५९ १६० १६१ १६२ १६३ १६४ १६५ १६६ १६७ १६८ १६९ १७० १७१ १७२ १७३ १७४ १७५ १७६ १७७ १७८ १७९ १८० १८१ १८२ १८३ १८४ १८५ १८६ १८७ १८८ १८९ १९० १९१ १९२ १९३ १९४ १९५ १९६ १९७ १९८ १९९ २०० २०१ २०२ २०३ २०४ २०५ २०६ २०७ २०८ २०९ २१० २११ २१२ २१३ २१४ २१५ २१६ २१७ २१८ २१९ २२० २२१ २२२ २२३ २२४ २२५ २२६ २२७ २२८ २२९ २३० २३१ २३२ २३३ २३४ २३५ २३६ २३७ २३८ २३९ २४० २४१ २४२ २४३ २४४ २४५ २४६ २४७ २४८ २४९ २५० २५१ २५२ २५३ २५४ २५५ २५६ २५७ २५८ २५९ २६० २६१ २६२ २६३ २६४ २६५ २६६ २६७ २६८ २६९ २७० २७१ २७२ २७३ २७४ २७५ २७६ २७७ २७८ २७९ २८० २८१ २८२ २८३ २८४ २८५ २८६ २८७ २८८ २८९ २९० २९१ २९२ २९३ २९४ २९५ २९६ २९७ २९८ २९९ ३०० ३०१ ३०२ ३०३ ३०४ ३०५ ३०६ ३०७ ३०८ ३०९ ३१० ३११ ३१२ ३१३ ३१४ ३१५ ३१६ ३१७ ३१८ ३१९ ३२० ३२१ ३२२ ३२३ ३२४ ३२५ ३२६ ३२७ ३२८ ३२९ ३३० ३३१ ३३२ ३३३ ३३४ ३३५ ३३६ ३३७ ३३८ ३३९ ३४० ३४१ ३४२ ३४३ ३४४ ३४५ ३४६ ३४७ ३४८ ३४९ ३५० ३५१ ३५२ ३५३ ३५४ ३५५ ३५६ ३५७ ३५८ ३५९ ३६० ३६१ ३६२ ३६३ ३६४ ३६५ ३६६ ३६७ ३६८ ३६९ ३७० ३७१ ३७२ ३७३ ३७४ ३७५ ३७६ ३७७ ३७८ ३७९ ३८० ३८१ ३८२ ३८३ ३८४ ३८५ ३८६ ३८७ ३८८ ३८९ ३९० ३९१ ३९२ ३९३ ३९४ ३९५ ३९६ ३९७ ३९८ ३९९ ४०० ४०१ ४०२ ४०३ ४०४ ४०५ ४०६ ४०७ ४०८ ४०९ ४१० ४११ ४१२ ४१३ ४१४ ४१५ ४१६ ४१७ ४१८ ४१९ ४२० ४२१ ४२२ ४२३ ४२४ ४२५ ४२६ ४२७ ४२८ ४२९ ४३० ४३१ ४३२ ४३३ ४३४ ४३५ ४३६ ४३७ ४३८ ४३९ ४४० ४४१ ४४२ ४४३ ४४४ ४४५ ४४६ ४४७ ४४८ ४४९ ४५० ४५१ ४५२ ४५३ ४५४ ४५५ ४५६ ४५७ ४५८ ४५९ ४६० ४६१ ४६२ ४६३ ४६४ ४६५ ४६६ ४६७ ४६८ ४६९ ४७० ४७१ ४७२ ४७३ ४७४ ४७५ ४७६ ४७७ ४७८ ४७९ ४८० ४८१ ४८२ ४८३ ४८४ ४८५ ४८६ ४८७ ४८८ ४८९ ४९० ४९१ ४९२ ४९३ ४९४ ४९५ ४९६ ४९७ ४९८ ४९९ ५०० ५०१ ५०२ ५०३ ५०४ ५०५ ५०६ ५०७ ५०८ ५०९ ५१० ५११ ५१२ ५१३ ५१४ ५१५ ५१६ ५१७ ५१८ ५१९ ५२० ५२१ ५२२ ५२३ ५२४ ५२५ ५२६ ५२७ ५२८ ५२९ ५३० ५३१ ५३२ ५३३ ५३४ ५३५ ५३६ ५३७ ५३८ ५३९ ५४० ५४१ ५४२ ५४३ ५४४ ५४५ ५४६ ५४७ ५४८ ५४९ ५५० ५५१ ५५२ ५५३ ५५४ ५५५ ५५६ ५५७ ५५८ ५५९ ५६० ५६१ ५६२ ५६३ ५६४ ५६५ ५६६ ५६७ ५६८ ५६९ ५७० ५७१ ५७२ ५७३ ५७४ ५७५ ५७६ ५७७ ५७८ ५७९ ५८० ५८१ ५८२ ५८३ ५८४ ५८५ ५८६ ५८७ ५८८ ५८९ ५९० ५९१ ५९२ ५९३ ५९४ ५९५ ५९६ ५९७ ५९८ ५९९ ६०० ६०१ ६०२ ६०३ ६०४ ६०५ ६०६ ६०७ ६०८ ६०९ ६१० ६११ ६१२ ६१३ ६१४ ६१५ ६१६ ६१७ ६१८ ६१९ ६२० ६२१ ६२२ ६२३ ६२४ ६२५ ६२६ ६२७ ६२८ ६२९ ६३० ६३१ ६३२ ६३३ ६३४ ६३५ ६३६ ६३७ ६३८ ६३९ ६४० ६४१ ६४२ ६४३ ६४४ ६४५ ६४६ ६४७ ६४८ ६४९ ६५० ६५१ ६५२ ६५३ ६५४ ६५५ ६५६ ६५७ ६५८ ६५९ ६६० ६६१ ६६२ ६६३ ६६४ ६६५ ६६६ ६६७ ६६८ ६६९ ६७० ६७१ ६७२ ६७३ ६७४ ६७५ ६७६ ६७७ ६७८ ६७९ ६८० ६८१ ६८२ ६८३ ६८४ ६८५ ६८६ ६८७ ६८८ ६८९ ६९० ६९१ ६९२ ६९३ ६९४ ६९५ ६९६ ६९७ ६९८ ६९९ ७०० ७०१ ७०२ ७०३ ७०४ ७०५ ७०६ ७०७ ७०८ ७०९ ७१० ७११ ७१२ ७१३ ७१४ ७१५ ७१६ ७१७ ७१८ ७१९ ७२० ७२१ ७२२ ७२३ ७२४ ७२५ ७२६ ७२७ ७२८ ७२९ ७३० ७३१ ७३२ ७३३ ७३४ ७३५ ७३६ ७३७ ७३८ ७३९ ७४० ७४१ ७४२ ७४३ ७४४ ७४५ ७४६ ७४७ ७४८ ७४९ ७५० ७५१ ७५२ ७५३ ७५४ ७५५ ७५६ ७५७ ७५८ ७५९ ७६० ७६१ ७६२ ७६३ ७६४ ७६५ ७६६ ७६७ ७६८ ७६९ ७७० ७७१ ७७२ ७७३ ७७४ ७७५ ७७६ ७७७ ७७८ ७७९ ७८० ७८१ ७८२ ७८३ ७८४ ७८५ ७८६ ७८७ ७८८ ७८९ ७९० ७९१ ७९२ ७९३ ७९४ ७९५ ७९६ ७९७ ७९८ ७९९ ८०० ८०१ ८०२ ८०३ ८०४ ८०५ ८०६ ८०७ ८०८ ८०९ ८१० ८११ ८१२ ८१३ ८१४ ८१५ ८१६ ८१७ ८१८ ८१९ ८२० ८२१ ८२२ ८२३ ८२४ ८२५ ८२६ ८२७ ८२८ ८२९ ८३० ८३१ ८३२ ८३३ ८३४ ८३५ ८३६ ८३७ ८३८ ८३९ ८४० ८४१ ८४२ ८४३ ८४४ ८४५ ८४६ ८४७ ८४८ ८४९ ८५० ८५१ ८५२ ८५३ ८५४ ८५५ ८५६ ८५७ ८५८ ८५९ ८६० ८६१ ८६२ ८६३ ८६४ ८६५ ८६६ ८६७ ८६८ ८६९ ८७० ८७१ ८७२ ८७३ ८७४ ८७५ ८७६ ८७७ ८७८ ८७९ ८८० ८८१ ८८२ ८८३ ८८४ ८८५ ८८६ ८८७ ८८८ ८८९ ८९० ८९१ ८९२ ८९३ ८९४ ८९५ ८९६ ८९७ ८९८ ८९९ ९०० ९०१ ९०२ ९०३ ९०४ ९०५ ९०६ ९०७ ९०८ ९०९ ९१० ९११ ९१२ ९१३ ९१४ ९१५ ९१६ ९१७ ९१८ ९१९ ९२० ९२१ ९२२ ९२३ ९२४ ९२५ ९२६ ९२७ ९२८ ९२९ ९३० ९३१ ९३२ ९३३ ९३४ ९३५ ९३६ ९३७ ९३८ ९३९ ९४० ९४१ ९४२ ९४३ ९४४ ९४५ ९४६ ९४७ ९४८ ९४९ ९५० ९५१ ९५२ ९५३ ९५४ ९५५ ९५६ ९५७ ९५८ ९५९ ९६० ९६१ ९६२ ९६३ ९६४ ९६५ ९६६ ९६७ ९६८ ९६९ ९७० ९७१ ९७२ ९७३ ९७४ ९७५ ९७६ ९७७ ९७८ ९७९ ९८० ९८१ ९८२ ९८३ ९८४ ९८५ ९८६ ९८७ ९८८ ९८९ ९९० ९९१ ९९२ ९९३ ९९४ ९९५ ९९६ ९९७ ९९८ ९९९ १०००

पदार्थः—हे सोम १ जो २ तेरा ३ हृदय है वह ४ समुद्र में ५ जलो के ६ मध्य वर्तमान है वहां तुझे पहुंचाता है वहां पर ७ ओषधियां ८ और ९ जल

१० तुभमे ११ प्रवेश करो १२ हे यज्ञ रक्षक सोम १३, १४ यज्ञ सम्बन्धी शेष वचनों के उच्चारण १५ और नमस्कार वचन में १६ तुभे १७ हम स्थापन करते हैं १८ ओष्ठ होम हो ॥ २५ ॥

अथाध्यात्मम् - हे आत्म प्रति विंव १ जो २ तेरा ३ हृदय है वह ४ हार्दन्नि रिक्ष में ५ ब्रह्मांशु रूप ज्योती रस अमृत के ६ मध्य वर्तमान है ७ इन्द्रियों की शक्तियां ८ और ९ प्राणा का शरीर रूप जल १० तुभमे ११ प्रवेश करो १२ हे आत्म प्रति विंव १३ यज्ञ पुरुष विष्णु के १४ पुरुष सूक्त आदिके उच्चारण १५ और नमस्कार पूर्वक मंत्र के जप में १६ तुभे १७ स्थापन करते हैं १८ गुरु के उपदेशानुसार ॥ २५ ॥

१९ **देवीराप एषो गर्भस्तथं सुप्रीतं सुभृतं**
मिभृतं । देव सोमेष ते लोकस्तस्मिन्

चूवक्ष्व परिचूवक्ष्व २६
देवीः । आपो । वः । एषः । गर्भः । ते । सुप्रीतं । सुभृतं । मिभृतं ।
ता । देवाः । सोमा । ते । एषा । लोकः । च । तस्मिन् । शः । वक्ष्व । च ।
परिवक्ष्व ॥ २६ ॥

अथाधिदैवम् - उस साररहित सोम घट को छोड़ कर उपस्थापन करता है उसके मंत्र १, २

ओं देवीराप इत्यस्य (अत्रिर्ऋ० भुरिगं साम्नी वृहती ऋ० आपो दे०) १
ओं देव इत्यस्य (तथा ० निचूद साम्नी पंक्तिं ऋ० सोमो दे०) २

पदार्थः - १ हे दीप्यमान २ जलो ३ तुम्हारा ४ यह ५ शिशु है ६ उस ७ ओष्ठ प्रीति से युक्त ८ और अच्छे पुष्ट सोम को पीधारण करो ११ हे प्रकाशमान १२ सोम १३ तेरा १४ यह जल रूप १५ स्थान है १६ हे चैत

न्य १६ उसमें स्थित तुम १७ सुख को १८ प्राप्त कराओ १९ और २० हमारी स-
व पीड़ाओं को दूर करो ॥ २६ ॥

अथाध्यात्मम् — १ हे ब्रह्म ज्योति रस रूप २ जलो ३ यह प्रति विंव ४
तुम्हारा ५ बालक है ६ उस ७ भक्ति मान ८ अच्छे पुष्ट को ९ धारण करो
१० हे दीप्य मान ११ आत्म प्रति विंव १२ तेरा १३ यह ब्रह्म ज्योति रूप
जल १४ स्थान है १५ हे चैतन्य १६ उसमें स्थित तुम १७ मोक्ष को १८
प्राप्त कराओ १९ और २० हमसे संसार को पृथक् करो ॥ २६ ॥

अवभृथ निचुम्पुण निचेरु रसि निचुम्पुणः

अवदेवैर्देव कृत मेनो यासि षमव मर्त्यैर्मर्त्य

कृतम्पुरु रावा देव रिष स्पाहि देवानां

समि दसि ॥ २७ ॥

अवभृथ निचुम्पुण निचेरु रसि निचुम्पुणः देवैः

देव कृतम् एनः अवया सिषम् मर्त्यैर्मर्त्य कृतम् अव

देवैः पुरु रावा रिष पाहि देवानाम् समि दसि ॥ २७ ॥

अथाधिदैवम् — उसी सार हीन सोम के कुंभ को जल में डुवाता

है तथा स्नान के पीछे आहवनीय को प्राप्त कर उसमें समिध रखता है

उसके मंत्र १२

ओं अवभृथेत्यस्य (अत्रिर्देव ब्राह्मणपुत्रं यज्ञो देवता) १

ओं अवदेवैरित्यस्य (तथा १ याजुष्युष्णिगकुंभं अग्निर्देव) २

पदार्थः — १ हे अवभृथ नाम यज्ञ विशेष तुम २ मंद गति होयद्यपि

तुम ३ निरंतर गति शील ४ हो तौ भी यहां ५ मंद गति वाला हो जिस

कारण ६ हमारी प्रकाश मान इन्द्रियों से ७ इन्द्र के स्वामी देवताओं के

साथ किया हुआ ८ अपराध ९ जल में डाला है तथा १० हमारे सहायक-
 ऋत्विजों से ११ यज्ञ दर्शना कांक्षी पुरुषों का किया हुआ अवज्ञा रूप-
 पाप १२ जल में डाला है हमसे त्याग किया हुआ यह पाप जिस प्रकार
 तुम को प्राप्त न हो उसी प्रकार हे यज्ञ मंद गति हो यह भाव है १३ हे अ-
 वभृथ नाम यज्ञ १४ वृद्ध विरुद्ध फल दाता १५ वध से १६ रक्षा करो हे अ-
 ग्नि तुम १७ देवताओं के १८ भले प्रकार दीपन कर्ता १९ हो ॥ २७ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे ब्रह्मा श्रु रूप अमृत जल के धारण करने
 वाले २ आत्म समुद्र तुम अचल भी ३ पिंड ब्रह्मांड में जीव रूप किरणों
 से निरंतर गुमन शील ४ समुद्र ५ हो ६ ज्ञानेन्द्रियों के साथ ७ जीवात्मा
 का किया हुआ ८ पाप ९ मैंने दूर त्याग किया तथा १० कर्मेन्द्रियों के
 साथ ११ भूतात्मा का किया हुआ पाप १२ दूर त्याग किया १३ हे ज्योति
 स्वरूप आत्म समुद्र १४ वृद्ध विरुद्ध फल दाता १५ हिंसा से १६ रक्षा
 करो अर्थात् हिंसा भून्य ब्रह्म यज्ञ में निष्ठा दो हे आत्मा अग्नि तुम १७ इ-
 न्द्रियों के १८ भले प्रकार दीपन कर्ता १९ हो आरब्ध समाहित क ॥ २७ ॥
 इससे पीछे अनु वंध्या गर्भिणी में प्रायश्चित्त को कहते हैं तथा संस्कार
 हीन गर्भ अधिकारी और समर्थ नहीं है उस कारण गर्भ संस्कार को क-
 हते हैं ॥ २७ ॥

एजनु दश मास्यो गर्भो जरायुणा सह । यथा
यं वायुरेजति यथा समुद्र एजति । एवा यन्द
दश मास्यो अस्वज्जरायुणा सह २८
दश मास्यो गर्भो जरायुणा सह । एजनु यथा अयं
वायुः एजति । यथा समुद्र एजति । एवा अयम् ॥ २८ ॥

^{१५} दशमास्य ^{१६} जरायुणा ^{१७} सह ^{१८} अस्त्वत ॥ २८ ॥
 अथाधिदेवम् ॥ गर्भं को अभिमन्त्रं करता है उसका मन्त्र ॥
 ओं एजित्वित्यस्य (अविर्जदं च्यवसातो महापुंक्तिं चं गर्भो देव) ॥
 पदार्थः ॥ १ पूरे दशमासं कां नृगर्भं जरायु ४ सहितं गतिमान्
 हो ६ जिस प्रकार ७ यह वायु चलता है १० और ११ समुद्र १२ कंपि
 त होता है १३ इस ही प्रकार १४ यह १५ दशमहीने का अर्थात् पूर्ण
 अंग वाला गर्भ १६ जरायु के १७ साथ १८ उतर से बाहर निकालो २०
 गी २१ यस्यैते यन्त्रियोगर्भो यस्यै योनिर्हिरण्ययी २२
 अङ्गान्यद्भुता यस्य तस्मात्ता समजीगमं थ २३
 स्वाहा ॥ २४ ॥
 ए यस्यागौ गर्भो यन्त्रिय ए यस्या योनिर्हिर
 ण्ययी ॥ माता ॥ तमे यस्य अङ्गानि ॥ अद्भुता ॥ समजी
 गमं ॥ स्वाहा ॥ २४ ॥
 अथाधिदेवम् ॥ गर्भं सत्कारसम्बन्धी मन्त्र ॥
 ओं यस्या इत्यस्य (अविर्जदं भस्त्रिगार्प्यं नृपुंक्षं व्रजा देवता) ॥ २५ ॥
 पदार्थः ॥ १ हे स्त्री रूप शक्ति २ जिस ३ तुम्ह का ४ गर्भ ५ द्रव्य यत्न
 वात्तान यत्न के करने को योग्य है ६ हे शक्ति ७ जिस तुम्ह का ८ कार
 ण ९ ज्योति रूप पराशक्ति है उस १० जीव रूप शक्ति से ११ उस गर्भ
 को १२ जिसके १३ अंग १४ कुदिलता रहित है १५ संयुक्त करता है
 १६ वेद मन्त्र द्वारा ॥ २७ ॥
 पुरुदस्मो विषु रूप इन्दु रत्ना म्म हि मान
 म्म धीर ॥ एक पदीन्द्र पदीन्द्र पदीन्द्र

तुष्पदी मृष्टा पदी भुवनां प्रथुन्तां स्वाहा ३०
 जे। पुरुदस्मः। अन्तेः। विष्णु रूपः। धीरः। इन्दुः। भुवना।
 एक पदीम्। द्विपदीम्। त्रिपदीम्। चतुष्पदीम्। अष्टोप-
 दीम्। महि मोनम्। अनु प्रथुन्तां स्वाहा ॥ ३० ॥

अथाधिदैवम् - स्विष्ट कृत को होमता है उसका मंत्र १
 ओं पुरुदस्म इत्यस्य (अवि ऋषिः आशी जगती छं० गर्भो दे०) १

पदार्थः - १ हे जय शील गर्भ तुम २ वड्ड दान से युक्त ३ शरीर के मध्य ४
 इन्द्रियों की शक्ति दान से वड्ड रूप ५ मेधावी तुम ६ देवताओं का सोम रूप
 प हो ७ चौदह भुवन ८ एक ज्ञान से प्राप्त होने वाली ९ कर्म उपासना से
 प्राप्त होने वाली १० तीनों वेद से प्राप्त होने वाली ११ चारों आश्रम से प्रा-
 प्त होने वाली १२ अष्टाङ्ग योग से प्राप्त होने वाली १३ महिमा को १४ व्या-
 ख्यात करो १५ उसके लाभार्थ अष्ट होम हो ॥ ३० ॥

मरुतो यस्य हिस्रये पाथा दिवो विमहसः।

सुसुगोपातमोजनः ३१
 दिवः। विमहसः। मरुतः। यस्य। क्षये। पाथा। सा। हि। जनः।
 सुगोपातमः ॥ ३१ ॥

अथाधिदैवम् - समष्टि यजु के अन्त में शमिन् अग्नि के मध्य
 होम करता है उसका मंत्र १
 ओं मरुत इत्यस्य (गोतम ऋ० आशी गायत्री छं० मरुतो देवता) १
 पदार्थः - १ हे स्वर्ग २ विशिष्ट तेज से युक्त ३ मरुत गण अथवा ब्रह्मा
 विष्णु महेश परा ब्रह्माग्नि नाम देवता ४ जिस यज्ञ मान के ५ यज्ञ गृह-
 में रक्षक हैं ६ ज वही यज्ञ मान ७ अष्ट रक्षक वाला है ॥ ३१ ॥

अथाध्यात्मम् - १ मन हृदय भृकुटि रूप स्वर्ग के २ विशिष्ट तेज से युक्त ३ प्राणा ४ जिस योगी के ५ देह रूप गृह में ६ रक्षक है ७ ८ वही ९ योगी १० ओष्ठ रक्षक वाला है ॥ ३१ ॥

महीद्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञमिमिस्त
ताम। पिष्टान्नो भूरी सभिः ॥ ३२ ॥
मही। द्यौः। च। पृथिवी। न। इमं। यज्ञं। मिमिस्तम। भूरी सभिः। नः। पिष्टान्नम् ॥ ३१ ॥

अथाधिदैवम् - अंगारों से ढकने का मंत्र १ २ वडा ३ तम ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १०० १०१ १०२ १०३ १०४ १०५ १०६ १०७ १०८ १०९ ११० १११ ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ ११८ ११९ १२० १२१ १२२ १२३ १२४ १२५ १२६ १२७ १२८ १२९ १३० १३१ १३२ १३३ १३४ १३५ १३६ १३७ १३८ १३९ १४० १४१ १४२ १४३ १४४ १४५ १४६ १४७ १४८ १४९ १५० १५१ १५२ १५३ १५४ १५५ १५६ १५७ १५८ १५९ १६० १६१ १६२ १६३ १६४ १६५ १६६ १६७ १६८ १६९ १७० १७१ १७२ १७३ १७४ १७५ १७६ १७७ १७८ १७९ १८० १८१ १८२ १८३ १८४ १८५ १८६ १८७ १८८ १८९ १९० १९१ १९२ १९३ १९४ १९५ १९६ १९७ १९८ १९९ २०० २०१ २०२ २०३ २०४ २०५ २०६ २०७ २०८ २०९ २१० २११ २१२ २१३ २१४ २१५ २१६ २१७ २१८ २१९ २२० २२१ २२२ २२३ २२४ २२५ २२६ २२७ २२८ २२९ २३० २३१ २३२ २३३ २३४ २३५ २३६ २३७ २३८ २३९ २४० २४१ २४२ २४३ २४४ २४५ २४६ २४७ २४८ २४९ २५० २५१ २५२ २५३ २५४ २५५ २५६ २५७ २५८ २५९ २६० २६१ २६२ २६३ २६४ २६५ २६६ २६७ २६८ २६९ २७० २७१ २७२ २७३ २७४ २७५ २७६ २७७ २७८ २७९ २८० २८१ २८२ २८३ २८४ २८५ २८६ २८७ २८८ २८९ २९० २९१ २९२ २९३ २९४ २९५ २९६ २९७ २९८ २९९ ३०० ३०१ ३०२ ३०३ ३०४ ३०५ ३०६ ३०७ ३०८ ३०९ ३१० ३११ ३१२ ३१३ ३१४ ३१५ ३१६ ३१७ ३१८ ३१९ ३२० ३२१ ३२२ ३२३ ३२४ ३२५ ३२६ ३२७ ३२८ ३२९ ३३० ३३१ ३३२ ३३३ ३३४ ३३५ ३३६ ३३७ ३३८ ३३९ ३४० ३४१ ३४२ ३४३ ३४४ ३४५ ३४६ ३४७ ३४८ ३४९ ३५० ३५१ ३५२ ३५३ ३५४ ३५५ ३५६ ३५७ ३५८ ३५९ ३६० ३६१ ३६२ ३६३ ३६४ ३६५ ३६६ ३६७ ३६८ ३६९ ३७० ३७१ ३७२ ३७३ ३७४ ३७५ ३७६ ३७७ ३७८ ३७९ ३८० ३८१ ३८२ ३८३ ३८४ ३८५ ३८६ ३८७ ३८८ ३८९ ३९० ३९१ ३९२ ३९३ ३९४ ३९५ ३९६ ३९७ ३९८ ३९९ ४०० ४०१ ४०२ ४०३ ४०४ ४०५ ४०६ ४०७ ४०८ ४०९ ४१० ४११ ४१२ ४१३ ४१४ ४१५ ४१६ ४१७ ४१८ ४१९ ४२० ४२१ ४२२ ४२३ ४२४ ४२५ ४२६ ४२७ ४२८ ४२९ ४३० ४३१ ४३२ ४३३ ४३४ ४३५ ४३६ ४३७ ४३८ ४३९ ४४० ४४१ ४४२ ४४३ ४४४ ४४५ ४४६ ४४७ ४४८ ४४९ ४५० ४५१ ४५२ ४५३ ४५४ ४५५ ४५६ ४५७ ४५८ ४५९ ४६० ४६१ ४६२ ४६३ ४६४ ४६५ ४६६ ४६७ ४६८ ४६९ ४७० ४७१ ४७२ ४७३ ४७४ ४७५ ४७६ ४७७ ४७८ ४७९ ४८० ४८१ ४८२ ४८३ ४८४ ४८५ ४८६ ४८७ ४८८ ४८९ ४९० ४९१ ४९२ ४९३ ४९४ ४९५ ४९६ ४९७ ४९८ ४९९ ५०० ५०१ ५०२ ५०३ ५०४ ५०५ ५०६ ५०७ ५०८ ५०९ ५१० ५११ ५१२ ५१३ ५१४ ५१५ ५१६ ५१७ ५१८ ५१९ ५२० ५२१ ५२२ ५२३ ५२४ ५२५ ५२६ ५२७ ५२८ ५२९ ५३० ५३१ ५३२ ५३३ ५३४ ५३५ ५३६ ५३७ ५३८ ५३९ ५४० ५४१ ५४२ ५४३ ५४४ ५४५ ५४६ ५४७ ५४८ ५४९ ५५० ५५१ ५५२ ५५३ ५५४ ५५५ ५५६ ५५७ ५५८ ५५९ ५६० ५६१ ५६२ ५६३ ५६४ ५६५ ५६६ ५६७ ५६८ ५६९ ५७० ५७१ ५७२ ५७३ ५७४ ५७५ ५७६ ५७७ ५७८ ५७९ ५८० ५८१ ५८२ ५८३ ५८४ ५८५ ५८६ ५८७ ५८८ ५८९ ५९० ५९१ ५९२ ५९३ ५९४ ५९५ ५९६ ५९७ ५९८ ५९९ ६०० ६०१ ६०२ ६०३ ६०४ ६०५ ६०६ ६०७ ६०८ ६०९ ६१० ६११ ६१२ ६१३ ६१४ ६१५ ६१६ ६१७ ६१८ ६१९ ६२० ६२१ ६२२ ६२३ ६२४ ६२५ ६२६ ६२७ ६२८ ६२९ ६३० ६३१ ६३२ ६३३ ६३४ ६३५ ६३६ ६३७ ६३८ ६३९ ६४० ६४१ ६४२ ६४३ ६४४ ६४५ ६४६ ६४७ ६४८ ६४९ ६५० ६५१ ६५२ ६५३ ६५४ ६५५ ६५६ ६५७ ६५८ ६५९ ६६० ६६१ ६६२ ६६३ ६६४ ६६५ ६६६ ६६७ ६६८ ६६९ ६७० ६७१ ६७२ ६७३ ६७४ ६७५ ६७६ ६७७ ६७८ ६७९ ६८० ६८१ ६८२ ६८३ ६८४ ६८५ ६८६ ६८७ ६८८ ६८९ ६९० ६९१ ६९२ ६९३ ६९४ ६९५ ६९६ ६९७ ६९८ ६९९ ७०० ७०१ ७०२ ७०३ ७०४ ७०५ ७०६ ७०७ ७०८ ७०९ ७१० ७११ ७१२ ७१३ ७१४ ७१५ ७१६ ७१७ ७१८ ७१९ ७२० ७२१ ७२२ ७२३ ७२४ ७२५ ७२६ ७२७ ७२८ ७२९ ७३० ७३१ ७३२ ७३३ ७३४ ७३५ ७३६ ७३७ ७३८ ७३९ ७४० ७४१ ७४२ ७४३ ७४४ ७४५ ७४६ ७४७ ७४८ ७४९ ७५० ७५१ ७५२ ७५३ ७५४ ७५५ ७५६ ७५७ ७५८ ७५९ ७६० ७६१ ७६२ ७६३ ७६४ ७६५ ७६६ ७६७ ७६८ ७६९ ७७० ७७१ ७७२ ७७३ ७७४ ७७५ ७७६ ७७७ ७७८ ७७९ ७८० ७८१ ७८२ ७८३ ७८४ ७८५ ७८६ ७८७ ७८८ ७८९ ७९० ७९१ ७९२ ७९३ ७९४ ७९५ ७९६ ७९७ ७९८ ७९९ ८०० ८०१ ८०२ ८०३ ८०४ ८०५ ८०६ ८०७ ८०८ ८०९ ८१० ८११ ८१२ ८१३ ८१४ ८१५ ८१६ ८१७ ८१८ ८१९ ८२० ८२१ ८२२ ८२३ ८२४ ८२५ ८२६ ८२७ ८२८ ८२९ ८३० ८३१ ८३२ ८३३ ८३४ ८३५ ८३६ ८३७ ८३८ ८३९ ८४० ८४१ ८४२ ८४३ ८४४ ८४५ ८४६ ८४७ ८४८ ८४९ ८५० ८५१ ८५२ ८५३ ८५४ ८५५ ८५६ ८५७ ८५८ ८५९ ८६० ८६१ ८६२ ८६३ ८६४ ८६५ ८६६ ८६७ ८६८ ८६९ ८७० ८७१ ८७२ ८७३ ८७४ ८७५ ८७६ ८७७ ८७८ ८७९ ८८० ८८१ ८८२ ८८३ ८८४ ८८५ ८८६ ८८७ ८८८ ८८९ ८९० ८९१ ८९२ ८९३ ८९४ ८९५ ८९६ ८९७ ८९८ ८९९ ९०० ९०१ ९०२ ९०३ ९०४ ९०५ ९०६ ९०७ ९०८ ९०९ ९१० ९११ ९१२ ९१३ ९१४ ९१५ ९१६ ९१७ ९१८ ९१९ ९२० ९२१ ९२२ ९२३ ९२४ ९२५ ९२६ ९२७ ९२८ ९२९ ९३० ९३१ ९३२ ९३३ ९३४ ९३५ ९३६ ९३७ ९३८ ९३९ ९४० ९४१ ९४२ ९४३ ९४४ ९४५ ९४६ ९४७ ९४८ ९४९ ९५० ९५१ ९५२ ९५३ ९५४ ९५५ ९५६ ९५७ ९५८ ९५९ ९६० ९६१ ९६२ ९६३ ९६४ ९६५ ९६६ ९६७ ९६८ ९६९ ९७० ९७१ ९७२ ९७३ ९७४ ९७५ ९७६ ९७७ ९७८ ९७९ ९८० ९८१ ९८२ ९८३ ९८४ ९८५ ९८६ ९८७ ९८८ ९८९ ९९० ९९१ ९९२ ९९३ ९९४ ९९५ ९९६ ९९७ ९९८ ९९९ १०००

अथाध्यात्मम् - १ २ वडा स्वर्ग अर्थात् गगन मंडल ३ और ४ भृकुटि ५ हम चक्षु आदि ऋत्विजों के ६ ७ ८ ९ आत्मा रूप यज्ञ मान को १० अमृत से सींचना चाहो ११ धर्म अर्थ काम मोक्ष साधन रूप पदार्थों से अथवा ब्रह्मा विष्णु महेश पर ब्रह्माग्नि से १२ हम आत्मांशु रूप चक्षु आदि ऋत्विजों को १३ निकट स्थ करो १४ अग्निं शोभयन्तु के मंत्र समाप्त है ॥ अथ षोडशी

अतिष्ठत्त हन्तं युक्ता ते ब्रह्मणा हरी। अर्वा
चीन्थ सुते मनो ग्रावा कणो तु वग्नुना। उप
याम गृहीतो सीन्द्रा यत्वा षोडशिन एषते यो
निरिन्द्रा यत्वा षोडशिन ३३
वत्त हन्ते। हरी। ब्रह्मणा युक्ता। रथम्। अतिष्ठ। ग्रावा ते। मनः।

वग्नूना । अर्वाचीनं ११ । सुकृणोतु १३ । उपयामं गृहीतः १४ । असि । षोडशि
 ने ॥ इन्द्राय १५ । त्वा १६ । एष १७ । तौ योनिः १८ । षोडशिने १९ । इन्द्राय २० । त्वा २१ । ३३

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में तीन मंत्र हैं उन को कहते हैं मातः सव-
 न में आग्रयण ग्रह के ग्रहण पीछे आग्नेय अतिग्राह्य को लेकर षोडशि
 ग्रह को ग्रहण करता है उसके मंत्र १, २, ३

ओं आतिष्ठेत्यस्य (गोतमऋ० आर्ष्यनुष्टुप छं० इन्द्रो देवता) १

ओं उपयामेत्यस्य (तथा • आसुरी गायत्री छं० सोमो दे०) २

ओं एषत इत्यस्य (तथा • आसुर्यनुष्टुप छं० ग्रहो दे०) ३

पदार्थः - हे इन्द्र वा हे पापनाशक विष्णो २ आपके ३ हरित वर्ण घोड़े
 ४ मंत्र द्वारा ५ रथ में संयुक्त हुए इस कारण तुम ६ रथ पर ७ चढ़ो ८ सोमाभिषव
 का पाषाण धरथा रूढ़ आपके १० मन को ११ सोमाभिषव के शब्द से १२ हमा-
 रे यज्ञ के सन्मुख १३ करो हे सोम तुम १४ उपयाम पात्र से गृहीत १५ हौ १६ षो-
 डश स्तोत्र वाले अथवा षोडश कला से संयुक्त १७ इन्द्र वा विष्णु के लिये-
 १८ तुम्हें ग्रहण करता हूँ हे ग्रह १९ यह २० तेरा २१ स्थान है २२ षोडश स्तोत्र
 वाले अथवा १६ कला से संयुक्त २३ इन्द्र वा विष्णु के लिये २४ तुम्हें सादन
 करता हूँ ॥ ३३ ॥

अथाध्यात्मम् - हे पापनाशक योगिन् २ तेरी ३ जीव ईश्वर आत्म
 दोनें ज्योतिः ४ अहं ब्रह्मास्मि इस मंत्र द्वारा ५ युक्त हुई इस कारण तुम ६
 योग रथ पर ७ चढ़ो ८ प्राण धरे तेरे १० मन को ११ महा वाक द्वारा १२ ब्रह्म के
 सन्मुख १३ करो हे प्रति विंव तुम १४ परा शक्ति से गृहीत १५ हौ १६ षोडश
 कला वतार १७ विष्णु के लिये १८ तुम्हें ग्रहण करता हूँ हे ग्रह १९ यह परा श-
 क्ति २० तेरा २१ स्थान है २२ षोडश कला वतार २३ विष्णु के लिये २४ तुम्हें

भेसादन करता हूँ॥३३॥

युक्त्वा हि केशिना हरी वृषणा कक्ष्य प्रा। अथान
इन्द्र सोमपा गिरा मुप श्रुतिञ्चर। उपयाम गृही
तो सीन्द्रा यत्वा षोड शिने एषते योनि रिन्द्रा यत्वा

षोड शिने ३४

इन्द्र। केशिना। वृषणा। कक्ष्य प्रा। हरी। हि। आयुस्व। अथ। सो
मपाः। नै। गिराम। उपश्रुतिम्। आचर॥ ३४॥

अथाधिदेवम् - दूसरे षोडशि ग्रह को ग्रहण करता है उसके मंत्र १२३
ओं उक्त्वा हीत्यस्य (मधुच्छंदा ऋ० विराडार्घ्यनुष्टुप छं० इन्द्रो दे०) १
ओं उपयामेत्यस्य (तथा ० आसुरी गायत्री छं० सोमो दे०) २
ओं एषते इत्यस्य (तथा ० आसुर्यनुष्टुप छं० ग्रहो दे०) ३

पदार्थः - १ हे इन्द्र वा हे विष्णो २ वद्धत लंवी केशर वाले ३ तरुण ४ स्थूल
अवयव वाले ५ हरित वर्ण घोड़ों को ६ निश्चय ७ रथ में युक्त करो ८ तिसके
पीछे ९ सोम का पान करने ऊपर तुम १० हमारी ११ ऋग्यजु साम लक्षाणां
वाणी को १२ अवाण १३ करो शेष पूर्वमंत्र की समान है॥३४॥

अथाध्यात्मम् - १ हे योगिन २ गृह पति के स्वामी ३ अपनी किरणों
से सींचने वाले ४ पाप जनित वेद को व्याप्त करने वाले ५ जीव ईश्वर को ६
निश्चय पूर्वक ७ युक्त करो ८ इसके पीछे ९ प्रति विंव को पान करने तुम १०
हम वाक् आदि ऋत्विजों की ११ वाणी को १२ अवाण १३ करो शेष पूर्वमं
त्र की समान है॥३४॥

इन्द्र मिद्वरी वहतो प्रति धृष्ट शव समा ऋषी
णञ्च स्तुती रूपं यज्ञञ्च मानं षाणाम। उप

याम गृहीतो सीन्द्रा यत्वा षोडशिन एषते योनि

रिन्द्रा यत्वा षोडशिनैः ३५

हरी। अप्रतिघृष्ट शवसम्। इन्द्रम्। इत। ऋषीणां। स्तुतीः।
उप। वहतः। च। मानुषाणाम्। यज्ञम्। उप। च। शेषं पूर्ववत् ३५
अथाधिदैवम् - तीसरे षोडशि ग्रह को ग्रहण करता है उसके

मंत्र १, २, ३

ओं इन्द्रमित्यस्य (गोतम ऋ० विराडाष्यनुष्टुप् छं० इन्द्रो दे०) १

ओं उपयामेत्यस्य (तथा ० आसुरीगायत्री छं० सोमो दे०) २

ओं एषत इत्यस्य (तथा ० आसुर्यनुष्टुप् छं० ग्रहो दे०) ३

पदार्थः - १ हरित वर्ण घोड़े २ उस पराभव रहित बल वाले ३ इन्द्र वा
विष्णु को ४ ही ५ ऋषियों की ६ स्तुतियों के ७ समीप ८ प्राप्त करते हैं ९
और १० मनुष्यों के ११ यज्ञ के १२ समीप १३ प्राप्त करते हैं शेष पूर्व की
समान है ॥ ३५ ॥

अथाध्यात्मम् - १ भक्तज्ञान रूप बल २ उस पराभव रहित बल
वाले ३ योग यज्ञ के यजमान को ४ ही ५ वैदिक मंत्रों की ६ स्तुतियों
के ७ समीप ८ प्राप्त करते हैं ९ और १० मनुष्यों के ११ यज्ञ के समीप
१३ प्राप्त करते हैं शेष पूर्व की समान ॥ ३५ ॥

यस्मान्न जातः परोऽन्योऽस्ति य आ वि

वेश भुवनानि विश्वा। प्रजापतिः प्रजया

स धरणा स्त्रीणि ज्योतींश्च पिसचते

स षोडशी ॥ ३६ ॥

यस्मात्। अन्यः। परः। जातः। न। अस्ति। यः। विश्वा। भुवना

नि। आवि^{१०}वेश। सः^{११}। षोड^{१२}शी। प्रजा^{१३}पतिः। प्रजया^{१४}। संर^{१५}णः।
जीणि^{१६}। ज्योती^{१७}षि। संच^{१८}ते॥३६॥

षोडश ग्रह के उपस्थान का मंत्र १

ॐ यस्मान्नित्यस्य (विवस्वान् ऋ० भुरि गार्गी त्रिष्टुप् छं० इन्द्रो देवता) १

पदार्थः - १ जिस महा पुरुष से २ दूसरा ३ ओष्ठ ४ प्रगट हुआ ५ नहीं
६ है ७ जो ८ सब ९ चतुर्दश भुवन और प्राणियों में १० अंतर्गामी रूप से
प्रवेश हुआ ११ वह १२ षोडश कलावतार १३ महा पुरुष १४ पिंड ब्रह्मा
इस रूप प्रजा के साथ १५ भले प्रकार रमण करता १६ तीन १७ ज्योति पर जीव
इशरूपों की १८ सेवन करता है ॥३६॥

इन्द्रश्च सम्राट् पुरुषश्च राजा तौ ते भक्षश्च
कतुरग्र एतम्। तयो र्ह मनु भक्षम्भक्षया
मिवाग्देवी जुषाणा सोमस्य तृप्यतु सह प्रा

णो न स्वाहा ३७
सम्राट्। इन्द्रः। च। राजा। वरुणः। तौ। चा। तौ। एतम्। अग्रे। भक्षम्
चकतुः। तयोः। भक्षम्। अनु। ग्रहम्। भक्षयामि। जुषाणा। वा
कै। देवीः। प्राणान्। सह। सोमस्य। तृप्यतु॥३७॥

अथाधिदैवम् - इन्द्र के लिये गृहीत ग्रह को भक्षण करता है उस
के मंत्र १२

ॐ इन्द्र श्रेत्यस्य (विवस्वान् ऋषिः० साम्नी त्रिष्टुप् छं० इन्द्र वरुणो देवता) १
ॐ तयो रित्यस्य (तथा० विराडाची त्रिष्टुप् छं० यजमानो देव) २

पदार्थः - हे षोडश ग्रह १ अचिंत्य ऐश्वर्य से युक्त २ महा विष्णु ३
और ४ ऐश्वर्यमान ५ ईश जो है ६ उन दोनों ने ७ भी ८ तेरे ९ इस

सोम को १० प्रथम ११ भक्षण १२ किया १३ उन दोनों से सम्बंध रखने-
वाले १४ सोम भक्ष को १५ पीछे १६ में १७ पान करता हूँ १८ मेरे भक्ष से-
प्रीति मान १९, २० सरस्वती देवी २१, २२ प्राण सहित २३ सोम से २४
वृत्त हों ॥ ३७ ॥

अथाध्यात्मम्— हे प्रति विंव १ अचिंत्य ऐश्वर्य से युक्त २ महा वि-
ष्णु ३ और ४ ऐश्वर्य मान ५ ईश जो हैं ६ उन दोनों ने ७ भी ८ तेरे ९ इस
स्वरूप को १० प्रथम ११ भक्षण १२ किया १३ उन दोनों के १४ भक्ष्य-
को १५ पीछे १६ में आत्मा १७ भक्षण करता हूँ १८ तुझ से सेवित १९, २० म
हावाक २१, २२ प्राण सहित २३ तुझ प्रति विंव से २४ वृत्त हो ॥ ३७ ॥
षोडशियाग समाप्त हुआ ॥ द्वादशाहयज्ञ के मंत्रों को कहते हैं

अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् ।
दधद्रयिम्म यिपोषम् । उपयाम गृहीतो
स्यग्नयेत्वा वर्चस एषते योनि रग्नयेत्वा
वर्चसे । अग्ने वर्चस्वि न्वर्चस्वांस्त्वन्देवेष्व
सि वर्चस्वानहम्मनुष्येषु भूयासम् ॥ ३८ ॥
अग्ने । स्वपाः । मयि । रयिम् । पोषम् । दधते । अस्मे । सुवीर्यम्
वर्चः । पवस्व । उपयाम गृहीतः । असि । वर्चसे । अग्नये । त्वा ।
एषते । योनिः । वर्चस्विने । अग्नये । त्वा । वर्चस्विने । अग्ने ।
त्वम् । देवेषु । वर्चस्वानि । असि । अहम् । मनुष्येषु । वर्चस्वान
भूयासम् ॥ ३८ ॥

अथाधिदैवम्— इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उनको कहते हैं
कोई एष्य षडह नाम यज्ञ है वह ६ दिन में सिद्ध होता है पहले ३ दिव-

समेकम पूर्वक (अग्ने पवस्व) इत्यादि मंत्रों से अति ग्राह्य ग्रहोंको ग्रहण करता है उसी प्रकार (अग्ने क्वचिस्विन्) इत्यादि मंत्रों से उस २ ग्रह-शेष को भक्षण करता है तहां प्रथम अति ग्राह्य ग्रहण के मंत्र कहे जाते हैं १, २, ३, ४

ॐ अग्नि इत्यस्य (वैरवानस ऋ० विराट विपाद गायत्री छं० अग्निर्दे) १

ॐ उपया मेत्यस्य (तथा ० आसु र्यु षिक् छं० सोमोदे) २

ॐ एषत इत्यस्य (तथा ० याजुपीजगती छं० तथा) ३

ॐ अग्नि इत्यस्य (तथा ० भुरिगार्गी गायत्री छं० अग्निर्दे) ४

पदार्थः - १ हे अग्नि २ अष्ट कर्म वाले तुम ३ मुझ यजमान में ४

धन ५ और पुत्र पशु आदि की पुष्टि वा वृद्धि को ६ स्थापन करते ७ हमारे लिये ८ अष्ट सामर्थ्य से युक्त ९ ब्रह्म तेज को १० प्राप्त करा दिये हे सोम-तुम ११ उपयाम पात्र से गृहीत १२ हौ १३ तेजो मय १४ अग्नि के लिये १५ तुम्हें ग्रहण करता हू हे सोम १६ यह खर प्रदेश १७ तेरा १८ स्थान है १९ तेजस्वी २० अग्नि के लिये २१ तुम्हें सादन करता हूं २२ हे विशिष्ट तेज से युक्त २३ अग्नि देवता २४ तुम २५ देवताओं में २६ अति दीप्तिमान २७ हौ इस कारण आपकी कृपा से २८ मैं २९ मनुष्यों के मध्य ३० ब्रह्म तेज से सम्पन्न ३१ होऊँ ॥ ३८ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे ब्रह्माग्नि २ आत्मा के रक्षक तुम ३ मुझ आ

त्मा में ४ योग लक्ष्मी को ५ तथा शम दम आदि की पुष्टि को ६ स्थापन करते ७ हमारे लिये ८ योग सामर्थ्य से युक्त ९ ब्रह्म तेज को १० प्राप्त कराओ हे आत्म प्रतिविंब तुम ११ परा शक्ति से गृहीत १२ हौ १३ तेजस्वी १४ ब्रह्माग्नि के लिये १५ तुम्हें ग्रहण करता हू हे आत्म प्रतिविंब १६

यह परा शक्ति १७ तेरा १८ स्थान है १९ तेजस्वी २० ब्रह्माग्नि केलिये २१ तुम्हें सादन करता हूं २२ हे महा तेजस्वी २३ ब्रह्माग्नि २४ तुम २५ ब्रह्मा-
विष्णु महेश नाम देवताओं में २६ अति दीप्तिमान २७ हौ इस कारण आ-
पकी कृपा से २८ मैं २९ प्राणों में वर्तमान होता ३० ब्रह्म तेज से सम्पन्न
३१ हो जाऊं ॥ ३८ ॥

उत्तिष्ठन्नोजसा सह पीत्वी शिप्रे अवेपयः ।
सोममिन्द्रचमू सुतम । उपयाम गृहीतो सी
न्द्राय त्वौजस एष ते योनि रिन्द्राय त्वौजसे
इन्द्रो जिष्ठौ जिष्ठस्त्वन्देवेष्वस्यो जिष्ठो हम्स

नुष्येषु भूयासम् ३९

इन्द्र । ओजसा । सह । उत्तिष्ठन् । चमू सुतम् । सोमम् । पीत्वी ।
शिप्रे । अवेपयः । उपयाम गृहीतः । असि । ओजसे । इन्द्राय
त्वौ । एष ते । योनिः । ओजसे । इन्द्राय । त्वौ । ओजिष्ठ । इन्द्रे
त्वौ । देवेषु । ओजिष्ठः । असि । मनुष्येषु । अहम् । ओजिष्ठः ।
भूयासम् ॥ ३९ ॥

इस कंडिका में अति ग्राह्य ग्रहण के ४ मंत्र हैं ॥

ओं उत्तिष्ठन्नित्यस्य (कुरु स्तुति ऋ० आर्षी गायत्री कं० इन्द्रो दे०) १
ओं उपयामेत्यस्य (तथा ० आसुर्यनुष्टुप कं० सोमो दे०) २
ओं एष ते इत्यस्य (तथा ० याजुषीनुष्टुप कं० तथा) ३
ओं इन्द्रेत्यस्य (तथा ० आर्च्युषिण कं० इन्द्रो दे०) ४

पदार्थः - १ हे विष्णो २ ३ प्रादुर्भाव सामर्थ्य से युक्त ४ योग श्रय्या
से उठने डण तुमने ५ पृथिवी स्वर्ग अथवा मन हृदय के मध्य अभिषुत

६ सोमवा आत्म प्रति विव को ७ पान कर के ८ शयन काम पान के दाता स्थूल सूक्ष्म शरीरों को ९ कपित किया हे सोम वा हे आत्म प्रति विव तुम १० उपयाम पात्र वा परा शक्ति से गृहीत ११ हौ १२ वल वान १३ विष्णु के लिये १४ तुम्हे ग्रहण करता हूं १५ यह १६ तेरा १७ स्थान है १८ वल वान १९ विष्णु के लिये २० तुम्हे सादन करता हूं भक्षणा का मंत्र २१ हे अति वली २२ विष्णो २३ तुम २४ देवताओं में २५ अचिंत्य बल से युक्त २६ हौ २७ मनुष्यों अथवा प्राणों के मध्य वर्तमान २८ मैं २९ अति वली वा योग बल से युक्त ३० होऊं ॥ ३६ ॥

अदृश्रमस्य केतवो विरश्म योजना थं अनु
 भ्राजन्तो अग्नये यथा । उपयाम गृहीतो
 सि सूर्या यत्वा भ्राजायै षते योनिः सूर्या
 यत्वा भ्राजाय । सूर्य्य भ्राजिष्ठ भ्राजिष्ठस्त्व
 न्देवेष्वसि भ्राजिष्ठो हूम् मनुष्येषु भूयासुम् ४०
 अस्य केतवः । रश्मेयः । जनान् । अनु । वि । अदृश्रम् । यथा ।
 भ्राजन्तः । अग्नयः । उपयाम गृहीतः । असि । भ्राजाय । सूर्या
 यत्वा । षते । योनिः । भ्राजाय । सूर्याय । त्वा । भ्राजिष्ठ । सूर्य्य
 त्वम् । देवेषु । भ्राजिष्ठः । असि । मनुष्येषु । अहम् । भ्राजि
 ष्ठः । भूयासम् ॥ ४० ॥

इस कडिका में अति ग्राह्य ग्रहण के ४ मंत्र हैं ॥

ॐ अदृश्रमित्यस्य (प्रस्तरावक्रं आर्षी गायत्री छं सूर्यो दे) १
 ॐ उपयामेत्यस्य (तथा ० आसुरी गायत्री छं सोमो दे) २
 ॐ एषते इत्यस्य (तथा ० साम्नी गायत्री छं तथा) ३

ओंसूर्येत्यस्य (प्रस्कराव च० आषी गायत्री छं० ग्रहो देवता) ४

पदार्थः १ मेनेइस विराट् के आत्मा सूर्य की रज्जान स्वस्व ३ जीवात्मा रूप कि
रणों को ४, ५ सव देहों में विद्यमान ६, ७ विशेष कर देखा ८ जैसे ९ प्रज्वलि
त १० अग्नि हों हे ग्रह वा हे आत्म प्रति विव तुम ११ उपयाम पात्र वा परा शक्ति
से गृहीत १२ हों १३ तेजस्वी १४ सूर्य के लिये १५ तुम्हे ग्रहण करता हूं १६
यह स्वर प्रदेश वा परा शक्ति १७ तेरा १८ स्थान है १९ प्रकाश मान २० सूर्य
के अर्थ २१ तुम्हे सादन करता हूं तीसरे अति ग्राह्य के भक्षण का मंत्र २२ हे
अति दीप्त २३ सूर्य २४ तुम २५ इन्द्रादि देवताओं में २६ अत्यंत दीप्त २७ हों
२८ मनुष्यों के मध्य अथवा प्राणों में वर्तमान २९ मैं ३० अति दीप्तिमान ३१ हों उ०
इति द्वादशाहः

उदुत्यज्जातवेदसन्देवं वहन्ति केतवः । दृशे वि

श्रवाय सूर्यम् । उपयाम गृहीतो सि सूर्या यत्वा

भ्राज्यायैष ते योनिः सूर्या यत्वा भ्राजाय ॥ ४१ ॥

केतवः । तौ जातवेदसम् । यां देवम् । सूर्यम् । विश्वाय । दृशे ।

उदु । वहन्ति ॥ ४१ ॥

इस कंडिका में ३ मंत्र हैं उनको कहते हैं गवामियन नाम संस्वत्सर सत्र के
विषुवत नाम मध्यम दिन में सौर्य पशु के उपालभ से पीछे अति ग्राह्य का ग्रह
ण करता है उसके मंत्र १, २, ३

ओं उदुत्यमित्यस्य (प्रस्क् एव च० निचृदाषी गायत्री छं० सूर्या दे०) १

ओं उपयामेत्यस्य (तथा १ आसुरी गायत्री छं० सोमो दे०) २

ओं एषत इत्यस्य (तथा १ साम्नी गायत्री छं० तथा) ३

पदार्थः - १ ब्रह्म की किरणों २ उस ३ प्रजाओं के जोता ४ ब्रह्मा विष्णु म

हेश रूप ५ ज्योतिस्वरूप ६ विराट् के आत्मा सूर्य को ७ विश्व रूप भाव प्राप्ति के
लिये ८ और विश्व रूप की विचित्रता देखने के अर्थ ९ समष्टि प्राण में ही १० प्राप्त करती है

॥४१॥ आजिघ्न कलशं म्मुह्यात्वा विशन्ति चन्दवः पुनः

रूर्जानि वर्त्तन्स्वमानः सहस्वन्धुस्त्वो रुधारा पयस्व

ती पुनर्मा विशता द्रयिः ॥४२॥

महि। कलशम्। आजिघ्ने। इन्दवः। त्वा। आविशन्तु। सा। ऊर्जः।
पुनः। निर्वर्त्तन्स्व। नै। सहस्व। धुस्त्व। पुरुधारा पयस्वती। रयिः।
ताते। पुनः। मा। आविश ॥४२॥

अथाधिदैवम् - हविर्धान और आग्नीध्र के मध्य द्रोण कलश इस
गौ को सुंघाता है उसका मंत्र १

ॐ आजिघ्नेत्यस्य (कुसरु विन्दु ऋ० स्वर ङ् ब्राह्म्युष्णिक् छं० गौर्देवता) १

पदार्थः - १ हे गौ तुम २ द्रोण कलश नाम पात्र को ३ सन्मुख हो कर सुंघो
४ द्रोण कलश में स्थित सोम ५ तुम्हें ६ प्रवेश करो ७ वह तुम ८ अष्टरस दुग्ध
के साथ ९ हमारे पास फिर १० लौ दो ११ हम को १२ सहस्व सरख्या वाला ध
न अथवा गौओं का एक सहस्व जो कि हमने दान किया उसको १३ दीजिये १४
व द्रुतधार वाले दुग्ध से युक्त १५ गोधन रूप तुम १६ यज्ञ स्थान से १७ फिर १८ मा
या विकार रूप मेरे गृह में १९ प्रवेश करो ॥४२॥

अथाध्यात्मम् - १ हे बुद्धि तुम २ मानस कमल को ३ सुंघो ४ इन्द्रियों की श
क्ति ५ तुम्हें ६ प्रवेश करो ७ वह तुम ८ ज्ञान रस सहित ९ फिर १० लौ दो ११
हम वाक् आदि ऋत्विजों को १२ ज्योति दाता आत्मा १३ दीजिये १४ इन्द्रियों
की शक्ति से युक्त १५ योग धन रूप तुम १६ मानस सूर्य के स्थान से १७ फिर १८
माया विकार रूप देह में १९ प्रवेश कीजिये प्रारब्ध समाप्तिका ॥४२॥

इदं रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योते दिते सरस्वति महि वि
श्रुति ॥ एताते अज्ये नामानि देवे यो मा सुकृतं मृतात ४३
इदं। रन्ते। हव्ये। काम्ये। चन्द्रे। ज्योते। अदिते। सरस्वति। महि।

विष्णुति। अ० ११० १११ ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ ११८
 अथ्याधिदैवम् - यजमान पूर्वोक्त गौ के दाहिने कान में जपता है उस-

कामंत्र १

ओं इहेन्त इत्यस्य (कुसुमविदुः ३० आषीपंक्तिः ३० गौर्देवता) १

पदार्थः - १ हे स्तुति योग्य २ रमण कारण ३ यज्ञ के अर्थ हविरूप दुग्ध की देने वाली अथवा सबसे आह्वान योग्य ४ मनुष्यों की कामना धारण करने वाली ५ आह्लाद कारक ६ तेज की दाता ७ अदीना ८ दुग्ध दाता ९ महान् १० नाना प्रकार की स्तुति के योग्य ११ अवध्य हे गौ १२ तेरे १३ इतने विशेषण कथित १४ नाम हैं तुम १५ देवताओं से १६ संस्कार किये हुए १७ मुझ को १८ कहो ॥ ४३ ॥

अथाध्यात्मम् - हे स्तुति योग्य २ ब्रह्म में रमने वाली ३ योग्य यज्ञों में इन्द्रिय शक्ति रूप हवि की दाता ४ कर्म उपासना और योग में चाहने योग्य ५ ब्रह्मानन्द की दाता ६ ज्ञानों की प्रकाशक ७ निश्चयात्मक स्वरूप होने से अखंडित ८ अमृत की वर्षा करने वाली ९ महत्त्व से युक्त १० योग शास्त्रों में विख्यात ११ विषय सेवन सेवध के अयोग्य हे बुद्धि १२ तेरे १३ इतने विशेषण रूप १४ नाम हैं तुम १५ इन्द्रियों से १६ संस्कार किये हुए १७ मुझ को १८ कहो ॥ ४३ ॥

विनेन्द्रमृधौ जहिनी चायच्छ एतन्यतः ।
 यो अस्मां अभिदा सत्यधरं मया तमः ।
 उपयाम गृहीतो सीन्द्रो यत्वा विमृध एष
 ते योनि रिन्द्रो यत्वा विमृध ॥ ४४ ॥
 इन्द्रो नः मृधः विजहि एतन्यतः नीचो यच्छ यो अस्मां

अभिदासति। अधरेम्। तमे। आगु मेया। उपयाम गृहीत। अस्ति
विमृधे। इन्द्राय। त्वा। एषा। तौ। योनिः। विमृधे। इन्द्राय। त्वा। ४४

गवान यन के उपान्त्य महा व्रत के दिन प्राजा पत्य पशु के उपा लम्भ
के पीछे ऐन्द्र ग्रहण के ३ मंत्र हैं उनमें पहिला मंत्र १ उस के गर्भित ३ मंत्र
ओं विन इत्यस्य (भरद्वाजशासत्र० भुरिगनुष्टुप् छं० इन्द्रो दे० १६१)
ओं उपयामेत्यस्य (तथा १० आसुर्युष्णिक् छं० ग्रहो दे० २२)
ओं एषत इत्यस्य (तथा १० याजुषीजगती छं० तथा ३३)

पदार्थः - १ हे परमेश्वर २ हमारे ३ काम आदि शत्रु अथवा उन के स
ग्रामों को ४ विवेश करना श करो ५ संग्राम चाहने वाले और सेना इकट्ठी
करने वाले शत्रुओं को ६ नीचों की समान ७ निग्रह करो अथवा संग्राम से
निवृत्त करो ८ जो शत्रु वा काम ९ हम को १० पीड़ा देता है उसको ११ निह
र १२ अज्ञान में १३ प्राल करो हे ग्रह तुम १४ उपयाम पात्र से गृहीत १५
हौ १६ विशिष्ट संग्राम वाले १७ परमेश्वर के लिये १८ तुम्हें ग्रहण करता
हूँ १९ यह २० तेरा २१ स्थान है २२ विशिष्ट संग्राम वाले २३ परमेश्वर के
लिये २४ तुम्हें ग्रहण करता हूँ ॥ ४४ ॥

वाचस्पतिं विश्व कर्माणा मृतये मनोजुवंवाजे
अद्याह्वेम। सनो विश्वानि हवना निजोषट्ति
श्वशम्भूरवसे साधु कर्मा। उपयाम गृहीतो
सीन्द्रा यत्वा विश्व कर्माणा एषते योनि रिन्द्रा
यत्वा विश्व कर्माणा ४५
अद्या। वाजे। वाचस्पतिं। मनोजुवं। विश्व कर्माणा। ऊर्तयो। आ
ह्वेम। स। विश्वशम्भु। साधु कर्मा। नो। विश्वानि। हवना नि।

अवसे। जोषत। उपयाम गृहीतः। अस्मि। विश्व कर्मणे। इन्द्रा
 यात्वा। एषातो। योनिः। विश्व कर्मणे। इन्द्रायात्वा॥ ४५॥

दूसरा ग्रह ग्रहण का मंत्र जिसके गर्भित ३ मंत्र हैं
 ओंवांचस्पतिमित्यस्य (शासः ऋ० भुरिगाष्ठीविष्टपुं० इन्द्रो दे०) १
 ओंउपयामेत्यस्य (तथा० साम्न्युष्णिगं० ग्रहो दे०) २
 ओंएषत इत्यस्य (तथा० साम्नीगायत्री छं० तथा) ३

पदार्थः— १ आज के दिन २ महाव्रतीयलक्षण वाले अन्न के विषय ३
 वेदों के रक्षक ४ मन की समान गति वाले ५ जगत् स्रष्टा परमेश्वर को ६ अ
 पनी रक्षा के अर्थ ७ हम आह्वान करने हैं ८ वह ९ सब का सुख दाता १० औ
 र शुभ कर्म का कर्त्ता परमेश्वर ११ हमारे १२ सब १३ आह्वानों को १४ अन्न
 और अन्न की वृद्धि अथवा रक्षा करने के लिये १५ अंगीकार करो हे ग्रहतु
 म १६ उपयाम पात्र से गृहीत १७ हौ १८ जगत् स्रष्टा १९ परमेश्वर के लिये
 २० तुम्हें ग्रहण करता हूँ २१ यह २२ तेरा २३ स्थान है २४ जगत् स्रष्टा २५
 परमेश्वर के लिये २६ तुम्हें सादन करता हूँ॥ ४५॥

अधाध्यात्मम्— १ समाधि अवस्था में २ योग यज्ञ के बीच ३ महा वाक्
 के स्वामी ४ मनन शक्ति में ब्रह्मा विष्णु महेश रूप ५ अपनी ज्योति के मध्य
 ब्रह्मांड के स्रष्टा महा विष्णु को ६ संसार से रक्षा होने के लिये ७ हम आह्व
 न करते हैं ८ वह ९ सब भक्तों का सुख दाता १० मोक्ष दान आदि शुभ कर्म
 का कर्त्ता महा विष्णु ११ हम वाक् आदि ऋत्विजों के १२ सब १३ योग यज्ञों
 को १४ संसार से रक्षा करने के लिये १५ सेवन करो हे आत्म प्रति विव तु
 म १६ परा शक्ति से गृहीत १७ हौ १८ विश्व स्रष्टा १९ महा विष्णु के लिये
 २० तुम्हें ग्रहण करता हूँ २१ यह परा शक्ति २२ तेरा २३ स्थान है २४ विश्व

सृष्टा २५ महा विष्णु केलिये २६ तुम्हें सादन करता हूँ ॥ ४५ ॥

विश्व कर्मन्द् हविषा वर्द्धनेन चातारमिन्द्रमकृ
णोरवध्यम् । तस्मै विशः समनमन्त पूवीरयः
सुग्रो विहव्यो यथा सत । उपयाम गृहीतो सी
न्द्रो यत्वा विश्व कर्मण एषते योनिरिन्द्रो यत्वा

विश्व कर्मणो ४६
विश्व कर्मन् । वर्द्धनेन । हविषा । इन्द्रम् । चातारम् । अवध्यम्
अकृणोः । तस्मै । पूवीः । विशः । समनमन्त । यथा । अयम्
उग्रः । विहव्यः । असतः । शेषं पूर्ववत् ॥ ४६ ॥

अथाधिदैवम् - तीसरे मंत्र के तीन गर्भित मंत्र
ओ विश्व कर्मन् नित्यस्य (शासकः ० मुरिगार्षी विष्टु पृच्छं विश्व कर्मन् द्रो ०)
ओ उपया मेत्यस्य (तथा ० साम्न्युष्णिगः छं ग्रहो देवता) २
ओ एषत इत्यस्य (तथा ० साम्नी गायत्री छं तथा) ३

पदार्थः - १ हे महा विष्णो २ वर्द्धियुक्त वा वर्द्धि देने वाले ३ हविके द्वा
रा तुमने ४ ईश्वर को ५ जगत को रक्षक ६ और अवध्य ७ किया ८ उस ई
श्वर के अर्थ ९, १० वशिष्ठ आदि ऋषियों ने ११ भले प्रकार नमस्कार की १२
जिस प्रकार १३ यह ईश्वर १४ शत्रुओं को भय दाता १५ नाना प्रकार के य
त्नों में आह्वान योग्य १६ हव्या शेष पूर्व की समान है ॥ ४६ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे महा विष्णो तुमने २ समष्टि भाव को प्राप्त ३
आत्म प्रतिविक के द्वारा ४ आत्मा रूप यजमान को ५ योग धर्म कार रक्षक
६ कामादि से अवध्य ७ किया ८ उस यजमान के अर्थ ९, १० प्राणों ने ११ भ
ले प्रकार नमस्कार की १२ जिस प्रकार १३ यह आत्मा १४ काम आदि को

भयदेनेवाला १५ और योग यज्ञों में वाक् आदि ऋत्विजों से आवाहन योग्य १६ ऋचा शेष पूर्व की समान है ॥ ४६ ॥

उपयाम गृहीतोऽस्य ग्नयेत्वा गायत्रच्छन्दस
इन्द्रा मीन्द्राय त्वा विष्टुष्छन्दस इन्द्रा मि वि
श्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जगच्छन्दस इन्द्रा म्यनु
ष्टुपतेभिर्गुरः ४७

उपयाम गृहीतः । असि । गायत्रीच्छन्दसं । त्वा । अग्नये । गृह्णामि । विष्टुष्छन्दसं । त्वा । इन्द्राय । गृह्णामि । जगच्छन्दसं । त्वा । विश्वेभ्यः । देवेभ्यः । गृह्णामि । तौ । अनुष्टुप । अभिर्गुरः ॥ ४७ ॥
अथाधिदैवम् - इस कंडिका में ४ मंत्र हैं उनको कहते हैं, जिस ओदुम्बर पात्र में अंश ग्रहण किया उस पात्र में होवचमसस्थ निग्राम्य नाम जल को लेकर उसमें ३ सोमलता डाल कर ३ मंत्रों से क्रम पूर्वक अदाभ्य ग्रह को ग्रहण करता है उसके मंत्र १, २, ३ सोम से कहता है उसका मंत्र ४

ॐ उपयामेत्यस्य (देवा ऋषयः स्वराडाची गायत्री छं० अदाभ्यो दे०) १
ॐ इन्द्रायेत्यस्य (इन्द्रा तथा सांमनी गायत्री छं० तथा) २
ॐ विश्वेभ्य इत्यस्य (विश्वे तथा आसुरी गायत्री छं० तथा) ३
ॐ अनुष्टुपित्यस्य (अनुष्टुप तथा देवी जगती छं० तथा) ४

पदार्थः - हे अदाभ्य तुम १ उपयाम पात्र से गृहीत हो २ गायत्री है छंद जिसका ऐसे प्रातः सवन सम्बन्धी ४ तुम्ह को ५ अग्न की प्रसन्नता के अर्थ ६ ग्रहण करता है तुम उपयाम पात्र से गृहीत हो ७ विष्टुष है छंद जिसका ऐसे माध्यन्दिन सवन सम्बन्धी ८ तुम्ह को ९ इंद्र

के अर्थ ११ ग्रहण करता हूं तुम उपयाम पात्र से गृहीत हो ११ जगती है छन्द
जिसका ऐसे सायं सवन सम्बन्धी १२ तुम्ह को १३ १४ विश्वे देवाओं के लि
ये १५ ग्रहण करता हूं १६ तेरा अंश १७ भक्ति ज्ञान लक्षिणा वाक् १८ स
वनों से उत्कृष्ट है ॥ ४७ ॥

अथाध्यात्मम् - तीनों सवन के कर्म को ब्रह्मार्पण करता है हे प्रातः
सवन सम्बन्धी ब्रह्म यज्ञ तुम्ह १ वाणी से गृहीत २ हो ३ योगियों की प्रातः स
ध्या सम्बन्धी ४ तुम्ह को ५ ब्रह्माग्नि की प्रीति के अर्थ ६ ग्रहण करता हूं हे स
म्यान्ह सवन सम्बन्धी ब्रह्म यज्ञ ७ योगियों के मध्याह्न संध्या सवन ८ तुम्ह को ९
महा विष्णु के लिये १० ग्रहण करता हूं हे सायं सवन सम्बन्धी ब्रह्म यज्ञ
११ योगियों के सायं संध्या सम्बन्धी १२ तुम्ह को १३ १४ ब्रह्मा विष्णु महेश
नाम साकार देवताओं के लिये १५ ग्रहण करता हूं १६ तेरा आत्मा १७ महा
वाक् १८ सवनों से उत्कृष्ट है ॥ ४७ ॥

व्रेशीनान्त्वा पत्मन्ना धू नो मि कु कू न नानान्त्वा
पत्मन्ना धू नो मि भु न्द नानान्त्वा पत्मन्ना धू नो
मि मृ दि न्त्मानान्त्वा पत्मन्ना धू नो मि मृ धु न्त्
मानान्त्वा पत्मन्ना धू नो मि भु क्त्वा भु क्त्वा
धू नो म्य ह्ये रूपे सूर्यस्य रश्मिषु ॥ ४८ ॥
व्रेशीनाम् पत्मनत्वा आधू नो मि कु कू न नानाम् पत्मन्
त्वा आधू नो मि भु न्द मानानाम् पत्मन्त्वा आधू नो मि मृ दि
न्तमानाम् पत्मन्त्वा आधू नो मि मृ धु न्तमानाम् पत्मन्
त्वा आधू नो मि भु क्त्वा त्वा भु क्त्वा आधू नो मि म्य ह्ये
रूपे सूर्यस्य रश्मिषु ॥ ४८ ॥

अथाधिदैवम् - आह वनीय के समीप जाता अदाभ्य ग्रह में स्थित जलों को अमुओं से चलित करता है उसके मंत्र १ से ६ तक ॥
 ओं त्रेषीनामित्यस्य (देवा ऋषया याजुषी पंक्तिं छं सोमो दे०) १
 ओं कुकूनानामित्यस्य (तथा ० याजुषी जगती छं तथा) २
 ओं भन्दनानामित्यस्य (तथा ० याजुषी त्रिष्टुप् छं तथा) ३
 ओं मदिमधुन्नमानामित्यस्य (तथा ० याजुषी जगती छं तथा) ४
 ओं मुक्तन्वेत्यस्य (तथा ० भुरिगसान्नी वृहती छं तथा) ६
पितृयी - यह सोम मेघ के उदर में स्थित जो जल हैं उनकी ३ वर्षा के लिये ३ तुल्य के ४ कपित करता है ५ जो मेघ शब्द करते हुए भुक्त होते हैं उनमें स्थित जो जल हैं उनकी ६ वर्षा के लिये ७ तुल्य के ८ कपित करता है ८ जो सुख के दाता मेघ स्थित हैं उनकी १० वर्षा के लिये ११ तुल्य के १२ कपित करता है १३ अत्यन्त तृप्त करने वाले जो मेघ स्थित हैं उनकी १४ वर्षा के लिये १५ तुल्य के १६ कपित करता है १७ मधुर स्वाद से युक्त जो जल हैं उनकी १८ वर्षा के लिये १९ तुल्य के २० कपित करता है २१ सुद्ध २२ तुल्य को २३ निग्राभ्यनाम सुद्ध जल से २४ कपित करता है २५ दिन के २६ रूप में २७ सूर्य की २८ किरणों के मध्य कपित करता है ॥ ४६ ॥

अथाध्यात्मम् - हे आत्मप्रतिविम्ब ऐगगन मेघस्थ असृत रूप जलों की ३ वर्षा के लिये ३ तुल्य के ४ कपित करता है हे मन प्रज्ञा हृत शब्द से युक्त जो असृत जल हैं उनकी ६ वर्षा के लिये ७ तुल्य के ८ कपित करता है हे प्रज्ञानंद दाता असृत रसों की १० वृष्टि के लिये ११ तुल्य के १२ कपित करता है हे ज्ञान चक्षु १३ जीवन मुक्ति सुख के दाता असृत रसों की १४ वर्षा के लिये १५ तुल्य के १६ कपित करता है हे आत्मप्रतिविम्ब १७ विज्ञान दाता असृत रसों

की १८ वर्षी केलिये १८ तुम्हे २० कपित करता हूँ २१ हे मानस सूर्य २२ तुम्ह को २३ समष्टि सूर्य में २४ कपित करता हूँ २५ अर्चि रादि मार्ग के २६ रूप देव यान में २७ समष्टि सूर्य की २८ किरणों में तुम्हे कपित करता हूँ ॥ ४८ ॥

ककुभं रूपं वृषभस्य रोचते वृहच्छुक्रः शुक्रः
स्य पुरोगाः सोमः सोमस्य पुरोगाः । यत्तै सोमा
दाभ्यन्नाम जागृ वितस्मै त्वा गृह्णामि तस्मै ते सो
मसो माय स्वाहा ॥ ४९ ॥

वृषभस्य । ककुभं रूपं । रोचते । वृहत् । शुक्रः । शुक्रस्य । पुरोगाः
सोमः । सोमस्य । पुरोगाः । तौ । अदाभ्यम् । जाग्रुविः । यत्तौ । नाम । तस्मै
त्वा । गृह्णामि । सोम । तस्मै । तौ । सोमाय । स्वाहा ॥ ४९ ॥

अथाधिदैवम् — इस कंडिका में दो मंत्र हैं उनको कहने हैं सोमग्र
हण कामवः १ अदाभ्य को होमता है उसका मंत्र २
ओं ककुभमित्यस्य (देवाः ऋषयः) निच दाषी जगती छं सोमो देव २
ओं यस्मै तदित्यस्य (तथा १ याजुषी पक्षिच्छदो तथा २)

पदार्थः — हैं सोम १ तुम्हें २ ओं का ३ सूर्य रूप वडा ४ रूप ५ प्रकाश
करता है ५ वह महान् ६ सूर्य ७ तुम्हें शुद्ध सोम को ८ पुरोगामी है जिस कार
ण ९ सोम ही १० सोम का ११ पुरोगामी होना योग्य है हैं सोम १२ तेरा १३
नुपहंसित १४ जागरण शील १५ जो १६ ब्रह्मा विष्णु महेश रूप सूर्य है १७
उस सूर्य के अर्थ १८ तुम्हें १९ ग्रहण करता है २० हे सूर्य २१ उस २२ तुम्हें २३
सूर्य के अर्थ २४ ओं होम हो ॥ ४९ ॥

अथाध्यात्मम् — हे आत्म प्रतिविवे १ तुम्हें २ ओं का ३ मानस कमल प्र
काशक जो आत्मा मय ४ रूप ५ प्रकाश करता है ५ वह महान् ६ सूर्य रूप ईश

७ तुभं मुदृकां पुरोगामी है जिस कारण ८ शक्ति सहित ईश्वर १० आत्म प्रति
 विंव का ११ अग्र गामी होना योग्य है क्योंकि केवल भक्ति ही से मोक्ष मार्ग
 की सिद्धि है हे आत्म प्रति विंव १२ तेरा १३ अनुप हिंसित १४ जागरण शी
 ल १५ जो १६ विदेवरूप धारी महानारायण है १७ उस महानारायण के
 अर्थ १८ तुभे १९ ग्रहण करना है २० हे ब्रह्मा विष्णु महेश रूप धारी महा
 नारायण २१ उस २२ तुभ २३ महानारायण के अर्थ २४ ओष्ठ होम हो। ४४।९

९ प्रश्न : महानारायण कौन है और कहाँ उनका दर्शन होता है (उत्तर) :
 विंल हरिवंश में अर्जुन युधिष्ठिर से कहते हैं : सम्बन्धियों के दर्शन का
 इच्छा मान मैं द्वारिका को गया था वहाँ भोज वृष्णि और अधक नाम यादवों
 से पूजित मैंने वास किया शक्ति कभी धर्म नाम महाबाहु मधु सूदन श्री कृष्ण जी
 शास्त्र विधि पूर्वक एकादश नाम यज्ञ में दीक्षित हुए २ किसी ओष्ठ ब्राह्मण ने
 उन दीक्षित वैदे हुए श्री कृष्ण के सन्मुख होकर कहा कि रक्षा करो और यह ज
 न लाया ३ हे महाबाहु श्री कृष्ण जी जन्म लेते ही मेरा पुत्र हरण होता है तीन
 पुत्र हरण हुए हे निष्ठाप अतः तुम चौथे पुत्र की रक्षा करने को योग्य हो ४ अ
 व ब्राह्मणों का मृत्त काल है वहाँ रक्षा की जिये हे दुष्टों को पीड़ा देने वाले जि
 स प्रकार मेरा पुत्र क्षित हो वैसा कीजिये ५ ऐसे प्रार्थित श्री कृष्ण जी ने मंद
 मुस्कान करके मुझ से कहा कि तुम रक्षा कर सके हो इस प्रकार कहा हुआ
 मैं लज्जित हुआ ६ फिर श्री कृष्ण जी ने मुझ को लज्जित जान कर कहा हे कै
 रव ओष्ठ जो रक्षा करने को समर्थ हो तो जाइये ७ सिवाय महाबाहु बलदेव
 जी और महाबली प्रद्युम्न के महारथी वृष्णि और अधक आप के साथी हो क
 र रक्षा करो ८ फिर वृष्णियों की बड़ी सेना से परिवारित मैं सेना सहित उस ब्रा
 ह्मण को आगे करके चला ९ हम सबने एक मुहूर्त में ही उस ग्राम को आकर

निवास किया १० फिर चारों ओर वृषिायों की बड़ी सेना से परिवारित मैं ग्राम
 के मध्य प्रवेश हुआ ११ वृषिायन्त्रकों के सब महारथी युयुधान आदि र-
 थास्तु और कवच शस्त्र धारी हुए और मैं भी हुआ १२ भय से बिह्वल ब्रा-
 ह्मण ने अर्द्ध रात्रि के समय समीप आकर यह वचन कहा १३ कि मेरी
 ब्राह्मणी के प्रसव का यह समय समीप प्राप्त हुआ आप उस प्रकार स्थित हों
 जिस प्रकार वचन न हो १४ एक मुहूर्त में ही उस ब्राह्मण के भुवन में रुदन पूर्व
 क दीन वचन सुना कि बालक हरण होता है १५ इस के पीछे हिय मान बालक
 का उंह शब्द आकाश में सुना परंतु हनी राक्षस को नही देखा १६ फिर हमने चारों
 ओर बाण वर्षाओं से सब दिशा से क दी वह बालक तो हरण हुआ १७ ब्राह्मण
 ने कहा वृथा शब्द करने वाले अजुन को धिक्कार अपने धनुष की मृत्ता घो करने
 वाले को धिक्कार जो देव से अप स्वष्ट दुर्मति मूर्खता से आया है १८ ब्राह्मण से
 ऐसी निंदा करने पर मैं वैष्णवी विद्या में स्थित होकर यम लोक को गया जहां
 पर वीर षट् ऐश्वर्य से सम्पन्न यम राज हैं १९ वहां ब्राह्मण के बालक को न दे-
 खता इन्द्र पुरी में गया तथा आग्नेय, नैऋत, सौम्य, उत्तर, और पश्चिम दि-
 शा में भी गया २० तथा शस्त्र धारी मैं रसातल ब्रह्म लोक और दूसरे लोकों में
 गया वहां ब्राह्मण के बालक को न पाकर प्रतिज्ञा भंग मैं २१ आग्नि प्रवेश
 का इच्छा मान हुआ तब श्री कृष्ण जी और युधामन्यु ने मुझे रों का श्री कृष्ण जी
 ने उस ब्राह्मण को आश्वासन करके मुझ से यह कहा तुम को ब्राह्मण को
 पुत्र दिखाऊंगा अपने आत्मा की खवन्ता मत कर और दारुक से कहा रथ में
 घोड़े जोड़ो २२ श्री कृष्ण जी ने ब्राह्मण को और दारुक को रथ में बिठला-
 कर मुझ से कहा कि रथ के सारथी हजिये २३ हे युधिष्ठिर फिर २ श्री
 कृष्ण मैं और वह ब्राह्मण रथ में सवार होकर उत्तर दिशा को चले २५

फिर मैंने पहाड़ों के जालों नदियों और वनों को उलंघन कर समुद्र को देखा
 २६ तदनंतर साक्षात् समुद्र ने अर्घ्य को श्री कृष्ण के समीप लाकर और खड़ा
 हो हाथ जोड़ कर कहा कि कौन आन्ता करूँ २७ श्री कृष्ण जीने उस पूजा को
 लेकर समुद्र से कहा है साधु जल को स्तम्भनां करो फिर रथी मैं जाऊंगा २८ समु
 द्र से तथा स्तुत करने पर मणि वर्णी प्रकाश मान स्तम्भित जल मार्ग से हमें चाल
 दिये जैसे पृथिवी पर २९ तदनंतर समुद्र से प्रार हो कर हमने क्षणभेही गंधमा
 दन और उत्तर कुरुओं को भी उलंघन किया ३० तब नाना प्रकार के अद्भुत व
 र्ण रूप धारी सात पर्वत (रूपवान) केशव जी के समीप स्थित हुए जयंत, वै
 जयंत, रजत मय नील पर्वत महा मेरु कैलाश इन्द्र कुट ३१ ३२ तब वे प
 र्वत समीप स्थित हो कर गोविंद जी से बोले हम कौन आन्ता करें श्री कृष्ण जीने
 भी उनका विधि पूर्वक सत्कार किया ३३ प्रणाम करने में भुके हुए और स्थि
 त उनसे बोले अतस्तु भुक्ता ते हुए के छिद्र रथ मार्ग को दीजिये ३४ हे युधिष्ठि
 र उन पर्वतों ने श्री कृष्ण के चक्र को मुनू और घंटी कार कर के इच्छानुसार
 मार्ग दिया ३५ और सब उसी जगह संतर्धन हो गये तब मुक्त को बड़ा आश्च
 र्य हुआ और रथ अगेत जाता था जैसे मेघ जाल में सूर्य ३६ समुद्र सहित सा
 तों दीप और दीपों के समूह पर्वत तथा लोका लोका पर्वत को उलंघन कर बह
 तबड़े अन्धकार में प्रवेश हुए ३७ तब घोड़ों में दुःख से रथ को धारण कि
 या और स्पर्श से वह अन्धकार पड़ूँ रूप दीखता था ३८ फिर पर्वत रूप अंध
 कार को पाया हे महा रजत व घोड़े उसको पाकर प्रयत्न हीन खड़े हुए ३९
 फिर गोविंद जीने सुदर्शन चक्र से उस अन्धकार को दूर कर के आकाश दिखा
 या जो कि रथ का उत्तम मार्ग था ४० तब आकाश दीखने पर उस अन्धकार
 से प्रार हो कर मुक्त की चेत हुआ जीवन की आशा हुई और मेरा भय दूर हुआ

आ४१ फिर मैंने आकाश में पुरुष रूप प्रज्वलित तेज को देखा जो कि सब लोक
 में प्रवेश हो कर स्थित है ४२ तब श्री कृष्ण जी उस तेजो निधि ज्योतिस्वरूप
 में प्रवेश हुए और वह उत्तम ब्राह्मण रथ में ही बैठे रहे ४३ तब प्रभु श्री कृ
 ष्ण जी ब्राह्मण के चारों बालकों को लेकर एक मुहूर्त में ही उस ज्योति से वा
 हर निकले ४४ श्री कृष्ण जी ने सर्व पुत्र ब्राह्मण को दे दिये जो तीन पाहिले
 हरण हुए थे और चौथा जन्म लेते ही हरण होने वाला बालक ४५ हे प्रभु यु
 धिष्ठिर फिर वह ब्राह्मण वहां पुत्री को देख कर अत्यन्त हैरत हुआ और मैं
 भी अति प्रसन्न और आश्चर्य युक्त हुआ ४६ फिर हम सब और वे ब्राह्मण के पुत्र
 जैसे गये थे वैसे ही लौट आये ४७ हे नृप अहं फिर हम दुपहर से पहले ही द्वारि
 का में पहुँचे और वारं वार आश्चर्य करता था ४८ तब वड्डे यशस्वी श्री कृष्ण जी ने पु
 त्र सहित ब्राह्मण को भोजन करा के और वड्डत धन देकर उस के घर को भेज दि
 या ४९ फिर मैंने श्री कृष्ण जी के सन्मुख जा कर कथा के श्रवण में वह वृत्तान्त
 जो मैंने देखा था श्री कृष्ण जी से पूछा ५० श्री कृष्ण जी ने उत्तर दिया उस में
 हात्मा महा पुरुष ने मेरे दर्शन को अर्थ वै बालक हरण किये थे यह समझ
 कर कि कृष्ण ब्राह्मण की अर्थ सिद्धि को लिये अविगादूरे प्रकार नहीं आवे ५१
 हे भरत अहं तुमने जो दिव्य जेजी मय महा पुरुष रूप ब्रह्म देखा है वह मेही है
 वह सनातन तेज मेरी है पर वह मेरी परा प्रकृति है जो कि व्यक्त अव्यक्त और स
 नातन है उत्तम योगी उस में प्रवेश हो कर मुम होते हैं ५२ हे अर्जुन वह परा श
 क्ति ज्ञानी योगी और तपस्वियों की गति है सब जगत् उस प्राप्ति योग्य पर ब्रह्म
 को सेवन करता है ५३ हे भरत वशी मुझ को ही वह धन तेज जान लाभित जल
 वाला समुद्र में ही है और मैं ही जल का लाभित करने वाला हूँ ५४ और
 मैं ही वह नाना प्रकार के सम पर्वत हूँ जो तुमने देखे और वह जो पुरुष रूप ति

मिर देखे ५६ वह घनीभूत तिमिर में ही हूं में ही उसका दूर करने वाला हूं प्राणि-
 यों का काल और सनातन धर्म में ही हूं ५७ चन्द्रमा सूर्य महा शैल नदी सरोवर
 और चारों दिशा यह सब मेरा ही आत्मा है ५८ चारों वर्णा और चारों आश्रम मुझ से
 ही प्रकट हुए मुझ को ही चार प्रकार के धर्म का कर्त्ता जानों ५९ हे अर्जुन वेद ब्रा-
 ह्मण तपः सत्य उग्र और वृहत्तम को मुझ से ही जानो ६० हे अर्जुन मैं तेरा प्रिय हूं
 और तू मेरा प्रिय है इस लिये तू मुझ से कहता हूं अन्यथा कहने को उत्साह न
 ही करता ६१ ऋग यजु साम और अथर्व वेद के मंत्र में ही हूं और ऋषि देव-
 ता यज्ञ सब मेरा ही तेज है ६२ पृथिवी वायु आकाश जल अग्नि चन्द्रमा सूर्य
 दिन रात्रि पक्ष महीना ऋतु ६३ मुहूर्त्त कजा क्षण सम्बत्सर नाना प्र-
 कार के मंत्र और जो कोई शास्त्र है ६४ विद्या और ज्ञान के योग्य यह सब मुझ
 से ही प्रकट होते हैं हे भरत वंशी अर्जुन स्वर्णि और मलय को मन्मथ जानो सत
 असत और जो सत असत से परे है वह मेरा ही आत्मा है ६५ भव अर्जुन युधि-
 धिर से कहते हैं इस प्रकार असन्न श्री कृष्ण जीने मुझ को उपदेश किया और
 उसी प्रकार मेरा मन सदा कृष्ण जी में आसक्त हुआ ६६ मैंने केशव जी का
 यह माहात्म्य देखा और सुना तुम जिस को मुझ से पूछते हो परंतु श्री कृष्ण
 जी की महिमा इस से भी बड़ी है ६७ धर्म आधर्म राज राजा युधिधिर ने इ-
 स माहात्म्य को सुन कर पुरुषोत्तम गोविन्द जी का पूजन किया ६८ राजा यु-
 धिधिर सब भाई और राजाओं के साथ जो वहां आये थे विस्मित हुआ-
 बति श्री महाभारत विलेख हरिवंशे विष्णु पर्वणि वासुदेव माहात्म्ये शतोपरि चतुर्द-
 शोऽध्यायः ११४— यहां पर यह सिद्धांत है कि वह प्रज्वलित तेज ब्रह्म प्रकाश
 रूप से परानाम है पुरुष रूप से महानारायण है माया का वस्त्र धारण करने से
 ब्रह्मा विष्णु महेश रूप और ब्रह्मांड स्वरूप है ॥४६॥

उशित्व न्देव सोमाग्नेः प्रियम्पाथो पीहि वशी
त्वन्देव सोमेन्दुस्य प्रियम्पाथो पीह्यस्मत्सखा
त्वन्देव सोम विश्वेषां देवानाम्प्रियम्पाथो पी

हि ॥ ५० ॥
देव। सोम। उशिक। त्वं। अग्नेः। प्रियम्। पाथुः। अपीहि। देव
सोमं। वशी। त्वं। इन्दुस्य। प्रियं। पाथुः। अपीहि। देव। सो
मं। अस्मत्। सखा। त्वं। विश्वेषां। देवानाम्। प्रियं। पाथुः।
अपीहि ॥ ५० ॥

अथाधित्वम् - अशुशोको सोममे डालता है उसके मन्त्र
ओं उशित्कमित्यस्य (देवा नृषयः आसुर्युष्णिक्छः सोमो देवः)
ओं वशीत्वमित्यस्य (तथा आसुरी गायत्री छः तथा)
ओं अस्मदित्यस्य (तथा आसुर्युष्णिक्छः तथा)

पदार्थः १ हे दीप्यमान २ सोम ३ देच्छा मान ४ तुम ५ अग्निके ६ प्रिय ७
अन्नभाव को प्राप्त करो ८ हे दीप्यमान ९ सोम १० शोभा मान १२ तुम
१३ ईश्वर के १४ प्रिय १५ अन्नभाव को १६ प्राप्त करो १७ हे दीप्यमान
सोम १८ हमारे १९ मित्र २० तुम २१ सखा २२ देवताओं के २३ प्रिय २४ अन्न
भाव को २५ प्राप्त करो ॥ ५० ॥
अथाध्यात्मम् - आत्मा कहता है १ हे दीप्यमान २ आत्मप्रतिविव
३ भक्त ४ तुम ५ ब्रह्माग्नि के ६ प्रिय ७ अन्नभाव को प्राप्त करो ८ हे दी
प्यमान ९ आत्मप्रतिविव १० जितेन्द्रिय १२ तुम १३ महा नारायण के १४
प्रिय १५ अन्नभाव को १६ प्राप्त करो १७ हे दीप्यमान १८ आत्मप्रतिवि
व १९ हमारे २० सखा २१ तुम २२ विश्व संवन्धी २३ देवता अर्थात् ब्रह्मा
विष्णु महेश के २४ प्रिय २५ अन्नभाव को २६ प्राप्त करो ॥ ५० ॥

इहरति रिहर मद्ध मिह धति रिह स्व धतिः
 स्वाहा । उपसृजन् धरुणाम्मात्रे धरुणो मात
 रन्धयन् । रायस्पोषमस्मा सुदीधरत्स्वाहा ५१
 रतिः । इह । इह । रमध्वम् । इह । धतिः । स्वधतिः । इह । स्वा
 हा । धरुणः । मात्रे । धरुणम् । उपसृजन् । मातरं । धयन् ।
 अस्मा सु । रायः । पोष । दीधरत । स्वाहा ॥ ५१ ॥

अथ सत्रोत्थान मंत्राः
 अथाधिदैवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं उनको कहते हैं सव दी
 क्षितो को अध्वर्यु के स्पर्श करने पर गार्हपत्य अग्नि में घृत को होमता है उ
 सको मंत्र १ शाला द्वार्य नाम अग्नि में दूसरी आहुति को होमता है उसका
 मंत्र २

ॐ इहरति रित्यस्य (देवाऋषयः० प्राजापत्या रहती छं० पशुर्दे०)
 ॐ उपसृजन्नित्यस्य (मा० तथा० भुरिगार्घ्यिणिक छं० अग्निर्दे०)
 पदार्थः हे गौ औतुम्हारा १ रमण २ यहा यज मानो में हो ३ यहा ही ४ रमण
 करो ५ यहा यज मानो में ही ६ सन्तोष हो ७ यज मानो का सन्तोष भी ८ य
 हा ही हो ९ ओष्ठ होम हो १० अग्नि ११ पृथिवी के १२ धारण कर्त्ता को १३ समी
 प प्राप्त करता १४ पृथिवी अर्थात् उस में उत्पन्न हवि को १५ भक्षण करता १६
 हमारे मध्य १७ धन पशु पुत्र सुवर्ण आदि की १८ पुष्टि को १९ धारण करो २० ओ
 ष्ट होम हो ॥ ५१ ॥

अथाध्यात्मम् - हे इन्द्रियो तुम्हारा १ रमण २ इस योग यज्ञ में हो ३
 इस योग यज्ञ में ४ रमण करो ५ इस योग यज्ञ में ६ सन्तोष हो ७ मानस सूर्य
 का सन्तोष भी ८ इसी योग यज्ञ में हो ९ गुरु के उपदेश से १० ब्रह्माग्नि ११ भृकु
 टिक बल के अर्थ १२ देह धारक आत्म प्रतिविम्ब को १३ समीप प्राप्त करे

तातथा १४ भृकुटि कमल स्थ आत्म प्रति विंव को १५ पान करता १६ ह म आत्मा
रूप योगियों में १७ योग धन की १८ पुष्टि को १९ धारण करो २० महा वाक् के उ
पदेश से ॥ ५१ ॥

सूत्रस्य ऋद्धि रस्य गन्मज्योतिरमृताप्रभूम।

दिवम्पृथिव्याश्चक्ष्मा रुहामाविदामदेवात्स्व

ज्योतिः ॥ ५३ ॥

सप्तस्य। ऋद्धिः। असि। ज्योतिः। अगन्म। अमृताः। अभूम।
 एधिभ्याः। दिवम्। अध्यारुहाम। देवान्। ज्योतिः। स्वै। अ-
 विदाम ॥ ५३ ॥

सर्वदीक्षित उत्तर हविर्धनि की अपर कूवरी को आलंबन कर सामं मंत्रों
को गाते हैं उसका मंत्र है (देवा नृषयः भुरिगार्पी बृहन्नीळं सोमो दे०) १।

पदार्थः— हे सोम वा हे आत्म प्रति विंव तुम १ द्रव्य यज्ञ वा योग यज्ञ की
२ समृद्धि ३ हौ हम् आत्मा रूप यजमान ४ सूर्य वा ब्रह्म ज्योति को ५ प्राप्त द्व
ए ६ मुक्त ७ द्वेण जिस कारण ८ पृथिवी से ९ ब्रह्म लोक को १० चंदे ११ ब्रह्मा
विष्णु महेश नाम देवताओं तथा १२ ज्योति स्वरूप १३ महानारायण को
१४ जाना ॥ ५२ ॥

युवन्तमिन्द्रा पर्वता पुरो युधा यो नः एतन्या
दपतन्तमिद्रतं वज्रेण तन्तमिद्रतम। दूरे च
तायच्छंत्सद्गहनं यदि न क्षतं अस्माकं ॥ ७ ॥
न्यरिभूरविश्वतो दस्मादधीष्ट विश्वतः। भूर्भु
विः स्वः सुप्रजाः प्रजामि। स्याम सुवीरा वीरैः सु
पोषा पोषैः ॥ ५३ ॥

पुरो युधा। इन्द्रा पर्वता। युवां तमा तमा तमे। इत। अपहतां त
 मा तमा। इत। वज्रेणा हतमा यः। नः। एतुन्यात। शूर। यत।
 दोग्धन। चूताय। छन्तसेत। इनुस्मेत। दमा। शुस्माकुम्।
 विश्वते। विश्वतः। शत्रून्। परिदर्षीषु। भूर्भुवः स्वः। प्रजाभिः
 सुप्रजाः। वीरैः। सुवीराः। पोषैः। सुपोषाः। स्याम। ५३॥

इस कुंडिका में तीन मंत्र हैं उनको कहते हैं। सब यजमान दक्षिण हविर्धा
 नाक्ष के अग्र मार्ग से पूर्व मुख निकलते हैं उसके मंत्र १२ वृद्ध कामना वाले
 यजमानों में वाग विसर्जित होता है उसका मंत्र ३॥ ५३॥ ५३॥
 ओं युवमित्यस्य (परुषे प० ३०० आर्घ्यनुष्टुप् छं० इन्द्रा पर्वतौ देवते) १॥
 ओं दूरे चेत्यस्य (१॥ ५३॥ ५३॥ विराडा र्षी बृहती छं० इन्द्रो देवता) २॥
 ओं भूर्भुवित्यस्य (तथा ० विराट् प्राजापत्या पत्निश्छं० विराट् पुरुषो दे०) ३॥
 पदार्थः १ वेश्नुओं के आगे युद्ध करने वाले २ परा सहित महानाराय
 ण ३ तुम दोनो ४ उस ५ चौर रूप ६ भ्राति को ७ ही ८ विनाश करो ९ इस १०
 चौर काम को ११ ही १२ ज्ञान वज्र से १३ विनाश करो १४ जो कि १५ हम से
 १६ युद्ध करे १७ हे विदेव रूप परमेश्वर १८ जव १९ दूर वर्तमान २० अत्यंत
 त गंभीर मन २१ २२ अज्ञान को पकड़ना चाहें नव २३ पकड़ते दंत नर २४
 विदारण शील ज्ञान वज्र २५ हमारे २६ सब और स्थित २७ सब २८ शत्रु का
 नाशिको २९ विदीपी करो ३० हे विराट् पुरुष हम ३१ आपो से ३२ ओष्ठ प्रा
 ण वाले ३३ और पुत्र अथवा शमदम आदिके द्वारा ३४ ओष्ठ वीर वाले ३५
 और भोग मोक्ष सम्बंधी पृष्टियों के द्वारा ३६ ओष्ठ पृष्टि वाले ३७ होवे ॥ ५३॥
 सत्रो त्यान समाप्त दृष्टानि अथ प्रायश्चित्तानि ॥ ५४॥ ५४॥
 परमेष्ठ्यभिधीतु प्रजापति वीचिव्याहता यामन्धो
 अर्च्यतः सविता सन्या विश्व कर्मा दीप्ता याम्भूषा

सोमं कुर्यात्पाम् ॥ ५४ ॥
 अमिधीतुः । परमेष्ठी । वाचि । व्याहतायां । प्रजापतिः । अक्षतः । अ
 न्धः । सन्या । सविता । दीक्षायां । विश्वं कर्मा । सोमं कुर्यात्पाम् । पूषे ५४
 अथाधिदैवम् । इस कंडिका में हमें उन को कहते हैं मिट्टी का घ
 र्म पात्र टूट जाय तो उसको स्पर्श कर परमेष्ठिने स्वाहा इस मंत्र से लेकर स
 लिलाय स्वाहा इस मंत्र तक चतुर्दश आहुति को हो मै धर्म दुहाना म गोम
 रजाय तो उसके स्थान पर उत्तर मुख वा पूर्व मुख स्थित पत्नी शाला के पू
 र्व भाग में पुच्छ से दक्षिण ओर परमेष्ठिने स्वाहा इत्यादि १४ आहुति को हो
 म कर दूसरी गौ को दो है अथवा स्थाली स्थ वा सुकस्थ प्रपदाज्य के भ्रंश
 होने में कोई आचार्य पूर्वोक्त आहुति देते हैं उनके मंत्र-
 ओं परमेष्ठी । विश्वं कर्मा ।
 पूषेति मंत्राणां ।
 ओं प्रजापतिरित्यस्य ।
 ओं अन्ध इत्यस्य सवितेत्यस्य ।
 पदार्थः । मंत्र से सकलित सोम पर मेष्ठी होता है यदि विघ्न हो तो पर
 मेष्ठिने स्वाहा इस मंत्र से आहुति देवे वह पाप से रहित होता है और यज्ञ फल
 को प्राप्त करता है । क्योंकि जितने मंत्रोक्त देवता है वे सब सोम के शरीर हैं । सो
 म से यज्ञ करूंगा ऐसा वचन उच्चारण करने पर प्रजापति होता है यदि वि
 घ्न हो तो प्रजापतये स्वाहा इस मंत्र से आहुति देवे वह पाप से रहित होता
 है और यज्ञ फल को प्राप्त करता है । सन्मुख प्राप्त सोम अन्ध नाम हो
 ता है इस लिये प्रायश्चित्त में अन्ध से स्वाहा इस मंत्र से आहुति देवे वह
 पाप को नाश करता और यज्ञ फल को प्राप्त करता है । संभक्त होने पर
 सोम सविता होता है वहां विघ्न होने पर सवित्रे स्वाहा इस मंत्र से आहु

तिदेवैवह सविता होकर पाप को नाश करना और यज्ञ फल को प्राप्त करता है १० दीक्षा होने पर सोम ११ विश्व कर्मी होता है वहां कुछ विघ्न होय तो विश्व कर्मणो स्वाहा इस मंत्र से आहुति देवै १२ सोम की मौल्य रूप गौ के लाने पर सोम १३ पूषा होता है जो वहां कोई विघ्न हो तो पूषो स्वाहा इस मंत्र से आहुति देवै ॥ ५४ ॥

अथाध्यात्मम् — आत्म प्रति विंव की स्तुति करते हैं १ वेद द्वारा ब्रह्मंश रूप निश्चय किया हुआ आत्म प्रति विंव २ परमेशी होता है ३ चक्षु ब्रह्म है श्रोत्र ब्रह्म है इत्यादि वचनों के ४ उच्चारण करने पर ५ प्रजापति होता है ६ व्यष्टि समष्टि देह को सन्मुख होकर प्राप्त हुआ ७ विराट रूप होता है ८ अपनी किरणों के दान में ९ सूर्य होता है संक्षेप कह कर विस्मर पूर्वक कहते हैं १० योग यज्ञ की दीक्षा में ११ विश्व कर्मी होता है १२ महा वाक के उपदेश में १३ पूषा होता है ॥ ५५ ॥

इन्द्रश्च मरुतश्च क्रयायो पोत्थितो सुरः पण्य
मानो मित्रः कीतो विष्णुः शिपि विष्ट ऊरा वास
नो विष्णुर्नरन्धिषः प्रोह्य माणाः ५५
क्रयाया उपोत्थितः इन्द्रः । नृचः । मरुतः । चूचः । पण्यमानः
असुरः । कीतः । मित्रः । ऊरोः । आसुन्नः । शिपि विष्टः । वि
ष्णुः । प्रोह्य माणाः । नरन्धिषः । विष्णुः ॥ ५५ ॥

अथाधिदेवम् — इस कंडिका में प्रायश्चित होम के ५ मंत्र हैं
ॐ इन्द्र इत्यस्य (वसिष्ठ ऋषि आसुर्यनुष्टुप् छंदः लिङ्गोक्त देवः) १
ॐ असुर इत्यस्य (तथा ११ देवी जगती छंदः १० लिङ्गोक्त देवः) २
ॐ मित्र इत्यस्य (तथा १२ देवी बृहती छंदः १० लिङ्गोक्त देवः) ३
ॐ विष्णु इत्यस्य (तथा १३ प्राज्ञपी निष्टुप् छंदः १० लिङ्गोक्त देवः) ४

ओं विष्णु रित्यस्य (वसिष्ठ ऋ० याजुषी पंक्तिं ४० लिङ्गोक्त देवता) ५
 पदार्थः १ द्रव्यदेकरूपपना करने के लिये २ समीप स्थापित सोम ३
 इन्द्र ४ और ५ मरुत् ६ होता है यदि वहां कुछ विम हो तो इन्द्राय स्वाहा
 मरुत् ७ स्वाहा इन मंत्रों से होम करै वह इन्द्र और मरुत् होता है ७ मो
 ल लेने के समय सोम ८ असुर नाम होता है जो वहां कुछ विम हो तो असु
 राय स्वाहा इस मंत्र से होम करै वह असुर ही होता है ८ मोल लिया हुआ सो
 म १० मित्र होता है यदि वहां कोई विम हो तो मित्राय स्वाहा इस मंत्र से होम करै
 वह मित्र ही होता है १० यजमान क्री गोद में १२ स्थिति सोम १३ प्राणियों वा यन्त्रों
 में प्रविष्ट १४ विष्णु होता है यदि वहां कुछ विम हो तो विष्णावेशिपिविष्टाय स्वा
 हा इस मंत्र से होम करै १५ शकट पर रक्वा हुआ सोम १६ जगत संहर्ता वा जगत पा
 लक १७ विष्णु होता है यदि वहां कुछ विम हो तो विष्णावेनरन्धिषाय स्वाहा इस मंत्र से
 अथाध्यात्मम् — १ अपनी आत्मा के दान से अपना करने के लिये
 २ समीप स्थापित समष्टि प्रति विंव ३ इन्द्र ४ और ५ मरुत् ६ होता है ७
 कीय मान समष्टि प्रति विंव ८ प्राण दाता होता है ८ मोल लिया हुआ
 समष्टि प्रति विंव १० सब का मित्र होता है सब का आत्मा रूप होने से ११
 आत्मा के उत्संग में १२ स्थित समष्टि प्रति विंव १३ प्राणियों में प्रविष्ट
 १४ विष्णु होता है १५ देह से धारित समष्टि प्रति विंव १६ माया उपाधि
 कानाशक १७ विष्णु होता है ॥ ५५ ॥
 सोम आगतो वरुण आसन्ध्या मासन्नो ग्नि
 राग्नी ह्यु इन्द्रो हविर्धने यैर्वो पाव ह्रियमाणाः ५६
 आगताः सोमः आसन्ध्याम् उपविष्टः वरुणः प्राग्नीध्रे
 अग्निः हविर्धने इन्द्रः उपोव ह्रियमाणाः अर्यैर्वा ५६
 अथाधिदैवम् — इस कड़िका में प्रायश्चित्त होम के ५ मंत्र हैं उन

होम

को कहते हैं कि प्राणी अन्न की प्राप्ति के लिये अन्न को खोजते हैं।
 ओं सोमं त्वस्या (विशिष्टः ३८०) देवी पंक्तिः ३८० लिङ्गोक्त दे०) १।
 ओ वरुण त्वस्या (विशिष्टः ३८०) याजुषी वृहती छं० ३८० तथा ३८०) ३।
 ओ अग्निरित्यस्य (विशिष्टः ३८०) देवी पंक्तिः ३८० तथा ३८०) ३।
 ओ इन्द्र इत्यस्य (विशिष्टः ३८०) देवी त्रिष्टुप् छं० ३८० तथा ३८०) ४।
 ओ अथर्वेत्यस्य (विशिष्टः ३८०) याजुषी वृहती छं० ३८० तथा ३८०) ५।

पदार्थः— १ शकट से आया हुआ २ सोम नाम होता है यदि वहां कुछ विभ्र हो तो सोमाय स्वाहा इस मंत्र से होम करे ३ मंचिका में ४ उपविष्ट सोम ५ वरुण नाम होता है यदि वहां कुछ विभ्र हो तो वरुणाय स्वाहा इस मंत्र से होम करे ६ आग्नीध्र में वर्तमान सोम ७ अग्नि नाम होता है जो वहां कुछ विभ्र हो तो अग्नये स्वाहा इस मंत्र से होम करे ८ हविर्धान में वर्तमान सोम ९ इन्द्र नाम होता है जो वहां कुछ विभ्र हो तो इन्द्राय स्वाहा इस मंत्र से होम करे १० मंत्र पूर्वक कंडन के लिये लिया हुआ सोम ११ अथर्वी नाम होता है जो वहां कुछ विभ्र हो तो अथर्वणे स्वाहा इस मंत्र से होम करे ॥ ५६ ॥

अथाध्यात्मम्— १ देह से मन में प्राप्त आत्म प्रतिबिम्ब २ अमृत होता है ३ ब्रह्म पुरुष हृदय में ४ उपविष्ट आत्म प्रतिबिम्ब ५ आत्मा को ईश के अपिण करने वाला होता है ६ भृकुटि के अन्त रिक्ष में ७ रुद्र होता है ८ गगन मंडल में ९ काम वा माया को हटाने वाला विष्णु होता है फिर कहते हैं १० विषयो से आकर्षित आत्म प्रतिबिम्ब ११ प्राण रूप होता है ॥ ५६ ॥

विश्वे देवा अथ मुपुन्युमो विष्णुं गभीत पाशा

प्रायमानो यमः सूर्यमनाविष्णुः संभ्रियमा

णा वायुः पूयमानः शुकः पूतः शुकः क्षीरश्री

र्मन्थी सक्तु श्रीः ५७

अथ मुषु न्युसः । विश्वे देवाः । आप्यायमानः । आप्रीतपाः । वि
ष्णुः । सूयमानः । यमः । सुम्भियमाणाः । विष्णुः । पूयमानः ।
वायुः । पूतः । मुक्तः । क्षीरं श्रीः । मुक्तः । सक्तु श्रीः । मन्थी । ५७

अथाधिदैवम् — इस कंडिका में प्रायश्चित होम के मंत्र हैं उन
को कहते हैं

ओं विश्वे देवा इत्यस्य (वसिष्ठ ऋ० याजुषी बृहती ० लि० दे०) १

ओं विष्णुरित्यस्य (तथा ० आसुरी पंक्ति ० तथा) २

ओं यम इत्यस्य (तथा ० देवी त्रिष्टुप् छं ० तथा) ३

ओं विष्णुरित्यस्य (तथा ० देवी जगती ० तथा) ४

ओं वायुरित्यस्य (तथा ० देवी त्रिष्टुप् छं ० तथा) ५

ओं मुक्त इत्यस्य (तथा ० देवी बृहती ० तथा) ६

ओं समाष्ट मंत्रयोः (तथा ० देवी पंक्ति ० तथा) ७

पदार्थः १ सोम खंडों में २ कंडन करके आरोपण किया हुआ सोम

३ विश्वे देवा होता है जो वहां कुछ विघ्न होतों विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा

इस मंत्र से होम करै ४ वर्धमान सोम ५ अपने भक्तों का रक्षक ६ विष्णु

होता है जो वहां कुछ विघ्न होतों विष्णावे आप्रीतपाय स्वाहा इस मंत्र से

होम करै ७ अभिषूयमान सोम ८ यम होता है जो वहां कुछ विघ्न होतों

यमाय स्वाहा इस मंत्र से होम करै ९ पुष्यमान सोम १० विष्णु होता है

जो वहां कुछ विघ्न होतों विष्णावे स्वाहा इस मंत्र से होम करै ११ पूयमा

न सोम १२ वायु होता है जो वहां कुछ विघ्न होतों वायवे स्वाहा इस म

ंत्र से होम करै १३ पूत सोम १४ मुक्तनाम होता है जो वहां कोई वि

घ्न होतों मुक्ताय स्वाहा इस मंत्र से होम करै १५ दुग्ध से मिला हुआ

आसोम १६ भुक्तनाम होता है जो वहां कुछ विघ्न होतौ भुक्ताय स्वाहा इस मंत्र से होम करै ॥ १७ सक्तुओं से मिला हुआ सोम १८ मन्थी होता है जो वहां कुछ विघ्न होतौ मन्थने स्वाहा इस मंत्र से होम करै ॥ ५७ ॥

अथाध्यात्मम् — १ आत्म प्रति विंव के खंड इन्द्रियों में २ विषयों से शोधन करके आरोपण किया हुआ आत्म प्रति विंव ३ विश्वे देवा होता है ४ ब्रह्म के साथ एकत्व से वृद्धि पाने वाला आत्म प्रति विंव ५ भक्तों का रक्षक ६ विष्णु होता है ७ अभिषूयमान आत्म प्रति विंव ८ उपाधियों का नाशक होता है ९ पुण्यमान आत्म प्रति विंव १० विष्णु होता है फिर कहते हैं ११ आण उदान रूप पवित्रा से पवित्र आत्म प्रति विंव १२ प्राण होता है १३ पवित्र आत्म प्रति विंव १४ सूर्य होता है १५ इन्द्रियों से मिश्रित आत्म प्रति विंव १६ सूर्य होता है १७ इन्द्रियों के देवताओं से मिश्रित आत्म प्रति विंव १८ चंद्रमा होता है ॥ ५७ ॥

विश्वे देवा अम से पूनीतो सुर्हो मा यो द्यतो

रुद्रो ह्य मानो वातो भ्या वृत्तो नृ चक्षाः । प्र

तिरव्यातो भक्षो भक्ष्यमाणः पितरो नारा शथ

साः सन्नः ॥ ५८ ॥

चमसेषु । उन्नीतः । विश्वे देवाः । होमाय । उद्यतः । असेः ।

ह्यमानः । रुद्रः । अभ्या वृत्तः । वातः । प्रति रव्यातः । नृ चक्षा

भक्ष्यमाणः । भक्षो । सन्नः । नारा शसाः । पितरः ॥ ५८ ॥

अथाधिदैवम् — इस संकटिकामें प्रायश्चित्त होम के ७ मंत्र हैं

ॐ विश्वे देवा इत्यस्य (वसिष्ठ ऋ० याजुषी प्र० लिङ्गोक्त देवता) १

ॐ असुर इत्यस्य (तथा ० याजुष्युषिकः ० तथा ० २३ ० १६

ॐ रुद्र इत्यस्य (तथा ० याजुषी गायत्री ० तथा ० २३ ० १६

प्राण होता है १५ इन्द्रिय गोलकों में धारण किया हुआ आत्म प्रति विंव १६
योग यज्ञ के योग्य १७ मनो वृत्ति रूप होता है ॥ ५८ ॥

सिन्धु रवभृथा यो दधतः समुद्रो भ्यवह्रियमा
णाः सलिलः प्रसृतो ययो रोज सास्कमिता र
जा ॥ सि वीर्ये भि वीरतमा शविष्ठा । यापत्ये
ते अप्रतीता सहोभिर्विष्णु अगन्वरुणा पूर्व हू
तो ॥ ५९ ॥

अवभृथाय । उद्यतः । सिन्धुः । अभ्यवह्रियमाणः । समुद्रः । प्र-
सृतः । सलिलः । ययोः । योजसा । रजासि । स्कमिताः । योः । वीर्ये
भिः । वीरतमा । शविष्ठा । सहोभिः । अप्रतीता । पत्येतैः । पूर्व हू-
तो । विष्णुवरुणा । अगने ॥ ५९ ॥

अथाधिदैवम् - इस कहिका में ४ मंत्र हैं प्रायश्चित होम के मंत्र १
२ ३ गिरे हुए रसरूप सोम को जल से सींचता है उसका मंत्र ४

ओं सिन्धुः + समुद्र इति मंत्रयोः (वसिष्ठः याजुषी बृहती छं लिङ्ग दे०) १२
ओं सलिल इत्यस्य () तथा ० याजुषी गायत्री छं तथा ३
ओं ययोरित्यस्य () तथा ० निरुदापी विष्टुप छं विष्णुवरुणो ४

पदार्थः - अवभृथ के लिये २ उद्यत सोम ३ सिन्धु नाम होता है जो वहां
कुछ विम होतौ सिन्धु वे स्वाहा इस मंत्र से होम करे ४ सन्मुख लाया हु-
आ सोम ५ समुद्र होता है जो वहां कुछ विम होतौ समुद्राय स्वाहा इस
मंत्र से होम करे वह समुद्र ही होता है ६ जल में डूबा हुआ सोम ७ जल
ही होता है जो वहां कुछ विम होतौ सलिलाय स्वाहा इस मंत्र से होम करे
वह सलिल ही होता है पाप को नाश करता यज्ञ को प्राप्त करता है ८ जिन
नर नागायण के धवल से ९ सब लोक १० स्तम्भित है ११ और जो १२ अपने व

लोंसे १४ महावीर १५ महावली १६ वलों से १७ अपना प्रतिभटन रखने वाले
नर नारायण १८ जगत् का ऐश्वर्य करते हैं १९ पहिले आन्धान के योग्य २०
वेनर नारायण प्रतिस्कन्ध हवि को २१ प्राप्त हुआ ॥ ५९ ॥

अथाध्यात्मम् - १ आत्मरूप नदी में स्नान के लिये २ उद्यत आत्म
प्रतिविम्ब ३ सिन्धु होता है ४ आत्मसमुद्र के सन्मुख प्राप्त किया हुआ आत्म
प्रतिविम्ब ५ समुद्र होता है ६ ब्रह्माशु रूप जल में निमग्न आत्म प्रतिविम्ब ७ ज्यो
ती इस रूप होता है नर नारायण के धृतेज से १० लोक ११ स्तम्भित हैं १२ जो
१३ वलों से १४ महावीर १५ महावली १६ तथा वलों से १७ अप्रतिभटन नरा
यण १८ जगत् के ऐश्वर्य को करते हैं उन १९ प्रथम आन्धान योग्य २० नर
नारायण में २१ जीवरूप हवि प्राप्त हुआ ॥ ५९ ॥

देवान् दिवमग्न्यन्तस्ततो माद्रविणमष्ट
मनुष्यान् नृत्तरिक्षमग्न्यन्तस्ततो माद्रवि
णमष्टपितृन् पृथिवीमग्न्यन्तस्ततो मा
द्रविणमष्टयदुर्ज्वलोकमग्न्यन्तस्ततो मे
भद्रम् भूत ॥ ६० ॥

यज्ञो दिवो देवान् अग्नो ततो द्रविणो मा अष्ट यज्ञो
नृत्तरिक्षं मनुष्यान् अग्नो ततो द्रविणो मा अष्ट यज्ञो
पृथिवीं पितॄन् अग्नो ततो द्रविणो मा अष्ट यज्ञो
यमे कामो च लोकम् अग्नो ततो मा भद्रम् अभूत ॥ ६० ॥

अथाधिदैवम् - स्तन्न सोम का अभिमर्शन करता है उस काम १
जो देवानित्यस्य (वसिष्ठ ऋ० अत्यष्टि छं० यज्ञो देवता) १

पदार्थः - १ यज्ञ २ स्वर्गलोक में ३ ब्रह्मा विष्णु महेशनाम देवताओं को ४
प्राप्त हुआ ५ उस स्वर्गलोक स्थ यज्ञ से ६ यज्ञफलभूत विशिष्ट भोगे साधन रूप

धन ७ मुक्त को ८ प्राप्त हो ९ यज्ञ १० अन्नरिक्त में वृष्टिरूप से ११ मनुष्यों को १२ प्राप्त हुआ १३ उस अन्नरिक्त स्थ यज्ञ से १४ यज्ञ फल रूप धन १५ मुक्त को १६ प्राप्त हो १७ यज्ञ १८ पृथिवी पर १९ पितरों को २० पितृहविरूप से प्राप्त हुआ २१ उस यज्ञ से २२ यज्ञ फल रूप धन २३ मुक्त को २४ प्राप्त हो २५ यज्ञ २६ २७ २८ जिस किसी २९ लोक में ३० आहुति रूप से इन्द्र आदि देवताओं को प्राप्त हुआ ३१ उस यज्ञ से ३२ मेरा ३३ कल्याण ३४ हो ॥ ६० ॥

अथ आत्मात्मम् — उत्थान अवस्था में आत्मा प्रार्थना करता है १ आत्म प्रतिविवर्भृकुटि वा गगन मंडल में ब्रह्मा विष्णु महेश अथवा ब्रह्म परा महा नारायण को ४ प्राप्त हुआ ५ उस भृकुटि कमल अथवा गगन मंडल से ६ योगेश्वर रूप धन ७ मुक्त को ८ प्राप्त हो ९ आत्म प्रतिविव १० हार्दन्तरिक्त में ११ प्राणों को १२ प्राप्त हुआ १३ उस हार्दन्तरिक्त से १४ योग लक्ष्मी १५ मुक्त को १६ प्राप्त हो १७ आत्म प्रतिविव १८ मानस कमल में १९ मनोवृत्ति को २० प्राप्त हुआ २१ उस मानस कमल से २२ योग लक्ष्मी २३ मुक्त को २४ प्राप्त हो २५ आत्म प्रतिविवने २६ २७ २८ जिस किसी २९ इन्द्रिय गोलक रूप लोक को ३० प्राप्त किया ३१ उस इन्द्रिय गोलक से ३२ मेरी ३३ मोक्ष ३४ होवै ॥ ६१ ॥

अथ चतुस्त्रिंशत् शतान्त वीये वितन्निरेयु इमं यज्ञं
स्वधया ददन्ते । तेषां जिह्वन् ॥ ६२ ॥
मि स्वाहा घर्मो अप्येतु देवान् ॥ ६३ ॥
 ये चतुस्त्रिंशत् । तन्तवः । इमं यज्ञं ॥ वितन्निरे । यो स्वध
 या । ददन्ते । तेषां । जिह्वन् ॥ एतत् । उ । सन्दधामि । स्वाहा
 घर्मो । देवान् । अप्येतु ॥ ६४ ॥
अथाधिदैवम् — महावीर के भेद में घृत का होम करता है उस कामने

ओंचतुस्त्रिंशदित्यस्य (वसिष्ठऋ० ब्राह्मयुष्णिक छं० घर्मो दे०) १

पदार्थः - मंत्र कहता है १ जो २ चौंतीस ३ यज्ञ का विस्तार देने वाले प्रजापति आदि देवता ४ इस ५ यज्ञ को ६ विस्तार देते हैं ७ और जो इस यज्ञ को ८ अन्न से धारण करते हैं ९ उन देवताओं के १० छिन्न ११ इस १२ महा वीर १३ को सन्धान करता हूँ १४ अष्ट होम हो १५ महा वीर संहित होता १६ देवताओं को १७ प्राप्त हो ॥ ६१ ॥

अथाध्यात्मम् - १ जो २ चौंतीस ३ योग यज्ञ का विस्तार करने वाले दश प्राण चतुर्दश इन्द्रिय अष्टाङ्ग योग जीव ईश्वर ४ इस ५ योग यज्ञ को ६ विस्तार देते हैं ७ और जो ८ अपनी धारण शक्ति से ९ योग यज्ञ को धारण करते हैं १० उन प्राण आदिका ११ देहा भिमान से पृथक् दृश्य मान १२ १३ जो मानस सूर्य है उस को १४ ब्रह्म में धारण करता हूँ १५ ब्रह्माग्नि में अष्ट होम हो १६ मानस सूर्य १७ ब्रह्म परामहानारायण को १८ प्राप्त करो ॥ ६१ ॥

यज्ञस्य दोहो विततः पुरुत्रासो अष्टधा दि

वमन्वाततान। सयज्ञधुस्व महिमे प्रजायां

रायस्पोषं विश्वमायुरशीय स्वाहा ॥ ६२ ॥

यज्ञस्य। दोहः। सः। पुरुत्रा। विततः। अष्टधा। दिवम।

न्वाततान। यज्ञ। सः। मे। प्रजायां। महि। धुस्व। रायः। पोषं।

विश्वं। आयुः। अशीयं। स्वाहा ॥ ६२ ॥

अथाधिदैवम् - सोम याग के अंग में विभ्र होने पर चौंतीस आहुतियों के मध्य यथा काल एक ३ आहुति को होम कर यज्ञ मान को कहलाता है उस का मंत्र

ओं यज्ञस्येत्यस्य (वसिष्ठऋ० स्वराडापी त्रिष्टुप् छं० यज्ञो दे०) १

पदार्थः १ यज्ञ का जो २ आहुति परिणाम है ३ वह ४ वदत प्रकार से ५

फैलता ६ दिशा भेद से अष्टधा होना ७ स्वर्ग लोक को ८ व्याप्त करना भया ९ हे यज्ञ १० वह तुम ११ मेरी १२ संतान में १३ महिमा वा पूर्वोक्त आहुति परिणाम को १४ दीजिये मैं भी आप की कृपा से १५ धन की १६ पुष्टि १७ और पूर्ण १८ आयु को १९ प्राप्त करूँ २० अष्ट होम हो ॥ ६२ ॥

अथाध्यात्मम् - १ आत्म प्रति विव कार जो आत्मारूप रस है ३, ४, ५ बड़त प्रकार से विस्तृत उस आत्म प्रति विव ने ६ अष्टाग योग द्वारा ७ गगन मंडल को ८ व्याप्त किया उत्थान अवस्था में आत्म प्रति विव कहता है ९ हे वाक १० वह तुम ११ मेरे १२ प्राण में १३ योग महिमा को १४ धारण करो मैं आप की कृपा से १५ योग धन की १६ पुष्टि १७ और आरब्ध समाप्ति करने वाली पूर्ण १८ आयु को १९ प्राप्त करूँ २० उस तक के लिये अष्ट होम हो ॥ ६२ ॥

आपवस्व हिरण्यवदश्ववत्सोमवीरवत।

वाजुङ्गो मन्तु माभर स्वाहा ॥ ६३ ॥

सोम। हिरण्यवत। अश्ववत। वीरवत। आपवस्व। गोमन्तु। वाजम्। आभर। स्वाहा ॥ ६३ ॥

अथाधिदैवम् - १ सोम और यूप के काका रोहण में उदाता होम करता है उसका मंत्र १

ओ आपवस्वेत्यस्य (कश्यप ऋ० स्वराडापी गायत्री० सोमो दे०) १

पदार्थः - १ हे सोम तुम २ सुवर्ण युक्त ३ अश्व युक्त ४ वीर्य युक्त की समान ५ आओ ६ धन युक्त ७ अन्न को ८ दो ९ अष्ट होम हो ॥ ६३ ॥

अथाध्यात्मम् - मंत्र कहता है १ हे आत्म प्रति विव २ ज्योति युक्त ३ वीर्य युक्त ४ और प्राण युक्त तुम ५ गगन मंडल से आओ ६ इन्द्रिय बान ७ प्राण वाजात रागिनी को सुष्ट करो गुरु के उपदेश से ॥ ६३ ॥

इति श्री भृगु वंशावतंस श्री नाथूराम सनुज्वाला प्रसाद शर्मा कृते शुक्ल

यजुर्वेदीय ब्रह्म भाष्ये ग्रह ग्रहान्निमित्तां तत्स्थायाम्प्रति विव होमादि कथ
नं नामाहमो ध्यायः ॥ ८ ॥

चौथी अध्याय को आरंभ कर आठवी अध्याय तक अग्नि होम के मंत्र और उ
सके प्रासंगिक मंत्र कहते अवनवम अध्याय में चौथी सवी कड़िका तक वा
जपेय यज्ञ के मंत्र कहते हैं ॥ ८ ॥

हरिः ॐ देव सवितः प्रसुव यज्ञस्य सुव यज्ञस्य

निम्भगाय । दिव्यो गन्धर्वः केत पूः केतन्नः

पुनानु वाचस्पतिर्वचन्नः स्वदतु स्वाहा ॥ १ ॥

देव । सवितः । यज्ञम् । प्रसुव । यज्ञपति । भुगाय । प्रसुव । दिव्य
केत पूः । गन्धर्वः । नः । केतम् । पुनानु । वाचस्पतिः । नः । वाज
म् । स्वदतु । स्वाहा ॥ १ ॥

अथाधिदैवम् — वाजपेय के अग्न भूतदीक्षाणीय प्रायणीय आदिय
जतियों में एक बार लिये हुए घृत को होमता है उसका मंत्र

ॐ देव सवित इत्यस्य (वह सतीन्द्राग्ने । स्वराडाग्नी विष्टुपृष्ठ । सवितादेव)

पदार्थः — १ हे दीप्तिमान् २ सुव के अग्नेरक अग्नेरामी परमेस्वर ३ वाजपेय

यज्ञ को ४ अघ्न करो ५ यजमान को ६ अघ्न रूप आँखों के लिये ७ प्र

रित करो आपका देह रूप स्वर्ग में प्रादुर्भूत ८ अघ्न का प्रविष्ट करने वाला ९

किरणों का धारण करने वाला सूर्य मंडल १० हमारे ११ अघ्न को १२ पवित्र

करो १३ प्रजापति १४ हमारे १५ अघ्न को १६ स्वादिष्ट करो १७ अघ्न होमो

अथाध्यात्मम् — १ हे ज्योति स्वरूप २ मेहानारायण ३ विषय होम

याग को ४ अघ्न करो ५ आत्मा रूप यजमान को ६ योगे स्वर्ग के लिये ७ प्र

रित करो ८ स्वर्ग में प्रादुर्भूत ९ विराट रूप अघ्न का पवित्र करने वाला १० कि

रणों का धारक विराट का आत्मा सूर्य ११ हमारे १२ विषय रूप अघ्न को १३

पवित्र करो १४ समष्टि प्राण १५ हमारे १६ विषय रूप अन्न को १७ स्वादिष्ट क
 रो १८ वैदिक मंत्र द्वारा ॥२॥

ध्रुवसदन्त्वानृषदम्भनः सदमुपयामगृहीतो
 सीन्द्रायत्वाजुष्टदृह्लाम्येषते योनिरिन्द्रा
 यत्वाजुष्टतममा अमुषदन्त्वा घृतसदं व्योम
 सदमुपयामगृहीतो सीन्द्रायत्वाजुष्टदृह्लाम्ये
 षते योनिरिन्द्रायत्वाजुष्टतममा एधिविसदन्त्वा
 न्तरिक्षसदं न्दिविसदं देवसदं नाकसदं मुपया
 मगृहीतो सीन्द्रायत्वाजुष्टदृह्लाम्येषते योनिरि

न्द्रायत्वाजुष्टतममम् २
 उपयामगृहीतः। अ० १। ध्रुवसदम्। नृषदम्। मनः सदम्। त्वा
 इन्द्राय। जुष्टम्। त्वा। गृह्णामि। एष। नो। योनिः। इन्द्राय। जुष्टम्
 मम्। त्वा। उपयामगृहीतः। अ० १। अमुषदम्। घृतसदम्।
 व्योमसदम्। त्वा। इन्द्राय। जुष्टम्। त्वा। गृह्णामि। एष। नो। यो
 निः। इन्द्राय। जुष्टम्। त्वा। उपयामगृहीतः। अ० १। एधिवि
 सदम्। अन्तरिक्षसदम्। दिविसदम्। देवसदम्। नाकसदम्।
 त्वा। इन्द्राय। जुष्टम्। त्वा। गृह्णामि। एष। नो। योनिः। इन्द्रा
 य। जुष्टम्। त्वा॥ २॥

अथाधिदैवम् प्राक्सवनमें जाग्रयणा के पीछे तीन अग्नि ग्राहों और षोड
 शि को ले कर पाच ग्राहों में तीन को ग्रहण करता है उसके मंत्र

ॐ ध्रुवसदमित्यस्य (वृहस्पति ऋषि याजुषी जगती इन्द्रो देव) १

ॐ उपयामेत्यस्य (तथा सांख्यमुष्पुषम् तथा) २, ५, ८

ॐ एषत इत्यस्य (तथा आसुर्यनुष्पुषम् तथा) ३, ४, ६, ७

ओं एषिवि सव मित्यस्य (बृहस्पतिर्ऋ० निच दापी गायत्री० इन्द्रा दे०) ७

पदार्थः - हे अन्न तुम १ ग्रह पात्र से गृहीत २ हो ३ यह एषिवी मेरी है इ
सममन्त्र में स्थित ४ मानुष अहंकार में स्थित ५ मन में स्थित ६ तुम्ह को ७
तथा विष्णु के अर्थ ८ प्रिय ९ तुम्ह को १० ग्रहण करता हूँ ११ यह खर प्रदेश
१२ तेरा १३ स्थान है १४ विष्णु के अर्थ १५ प्रियतम १६ तुम्ह को सादन क
रता हूँ (अथ द्वितीय ग्रह) हे पेय १७ तुम्ह उपयाम पात्र से गृहीत १८ हो १९
जल में स्थित २० घृत आदि में स्थित २१ आकाश में दृष्टि के मध्य स्थित
२२ तुम्ह को २३ तथा परमेश्वर के लिये २४ प्रिय २५ तुम्ह को २६ ग्रहण कर
ता हूँ २७ यह २८ तेरा २९ स्थान है ३० परमेश्वर के लिये ३१ प्रियतम ३२ तु
म्ह को सादन करता हूँ (अथ तृतीय ग्रह) हे अन्न पान तुम ३३ उपयाम पा
त्र से गृहीत ३४ हो ३५ भूमि में स्थित ३६ अन्नरिक्त में स्थित ३७ स्वर्ग में स्थित
३८ देवताओं में स्थित ३९ ब्रह्म लोक में स्थित ४० तुम्ह को ४१ तथा ईश्वर
के लिये ४२ प्रिय ४३ तुम्ह को ४४ ग्रहण करता हूँ ४५ यह ४६ तेरा ४७ स्था
न है ४८ ईश्वर के लिये ४९ प्रियतम ५० तुम्ह को सादन करता हूँ ॥२॥

अथाध्यात्मम् - हे विषय तुम १ इन्द्रियों के निरोध से गृहीत २
हो ३ आत्म प्रति चित्त में स्थित ४ प्राणों में स्थित ५ मन में स्थित ६ तुम्ह को तथा
७ भूतात्मा के लिये ८ प्रिय ९ तुम्ह को १० ग्रहण करता हूँ ११ यह अपरा प्र
कृति १२ तेरा १३ स्थान है १४ भूतात्मा के लिये १५ प्रियतम १६ तुम्ह को सा
दन करता हूँ (अथ द्वितीय) हे विषय तुम १७ इन्द्रियों के निरोध से गृही
त १८ हो १९ कर्म रूप देहों में स्थित २० इन्द्रियों के अन्नरिक्त में स्थित २१
मानस आदि कमलों के अन्नरिक्त में स्थित २२ तुम्ह को तथा २३ जीवात्मा
के लिये २४ प्रिय २५ तुम्ह को २६ ग्रहण करता हूँ २७ यह २८ तेरा २९
स्थान है ३० जीवात्मा के लिये ३१ प्रियतम ३२ तुम्ह को सादन करता हूँ

(अथ तृतीयः) हे विषये तम। इन्द्रियों के निरोध से गृहीत ३४ हौ ३५ धातु आ
दि स्वरूप से भूमि में स्थित ३६ अन्न फल आदि रूप से अन्न रिस में स्थि
त ३७ कर्म फल रूप से स्वर्ग में स्थित ३८ दिव्य भोग रूप से देवताओं में स्थि
त ३९ योगैश्वर्य रूप से ब्रह्म लोक में स्थित ४० तुम्ह को तथा ४१ यजमान के
लिये ४२ प्रिय ४३ तुम्ह को ४४ ग्रहण करता हूँ ४५ यह परा शक्ति ४६ तेरा
४७ स्थान है ४८ यजमान के लिये ४९ प्रियतम ५० तुम्ह को सादन करता हूँ

अपां रसमुद्वयसं सूर्ये सन्तं समाहितं
तम। अपां रसस्य योरसस्तं वा गृह्णाम्यु
त्तममुपयाम गृहीतो सीन्द्रा यत्वा जुष्टं हृत्मा
स्येषते योनि र्द्विन्द्रा यत्वा जुष्टं तमम् ॥ ३ ॥
सूर्यो समाहितसः सन्तं उद्वयसं अपां रसं गृ
ह्णामि। अपां रसस्यायः रसः तमः उत्तमम्। वा गृह्णामि। उप
याम गृहीतः। असि। इन्द्राय। जुष्टं तमम्। त्वा। गृह्णामि। एषे। तो
योनिः। इन्द्राय। जुष्टं तमम्। त्वा ॥ ३ ॥

अथाधिदैवम् (अथैवतर्थः)
जो अपा मित्यस्य (ब्रह्म सति र्जः मिष्ट दार्प्यं तृष्टुषं रसो देवता) १
पदार्थः २ सूर्य में ३ स्थापित ४ विद्यमान ५ अन्नो सादक ६ जलों के
रस अर्थात् पेय को ग्रहण करता हूँ ७ जल रस का ८ जो ९ रस अर्थात् अ
न्न है हे देवताओं १० उस ११ सर्वोत्कृष्ट को १२ तुम्हारे लिये १३ ग्रहण कर
ता हूँ शेष पूर्व मंत्र के समान है ॥ ३ ॥
अथाध्यात्मम् निरादेर देहाभिमाना आत्मा के विषय निवृत्त होते
हैं रस निवृत्त नहीं होता इसका रस भी ब्रह्म को देख कर निवृत्त होता है इस
भगवत् वाक्य के सार भूत मंत्र को कहते हैं १ तानस सूर्य मे स्थापित ३ विद्य

ओंसमित्यस्य + वीत्यस्य (बृहस्पति ऋ० विराडासुर्यनुष्टुप् छ० ग्रहो दे०) ४।५।

ओउपयाम + एषतइनका विनि योग पूर्व की समान है ४।५।

पदार्थः १ हे ग्रहो २ अन्न रस का आवाहन करने वाले अथवा अन्न रस के आवाहन के कारण तुम ३ मेधावी यजमान के लिये ४ ओष्ठ बुद्धि को ५ प्राप्त कराने वाले हो ६ उन ७ यजमान के प्रिय ८ आपसे सम्बन्ध रखने वाले ९ अन्न १० और रस को ११ में १२ भले प्रकार ग्रहण करता हूं हे सोम सुरा ग्रह तुम दोनों १३ युक्त १४ हो १५ मुझ को १६ कल्याण से १७ संयुक्त करो तथा तुम दोनों १८ पृथक् १९ हो २० मुझ को २१ पाप से २२ पृथक् करो ॥ ४॥

अथाध्यात्मम् - १ हे प्राण आदि ग्रहो वज्र रसावाहन के कारण २ और योगी के लिये ३ अपरोक्ष आत्म के प्रसोक्त कराने वाले हो ४ उन ५ आत्म प्रतिविम्ब के प्रिय ६ आपसे सम्बन्ध रखने वाले ७ १० अन्न रस अर्थात् दोनों प्रकार के विषय को ११ आत्मा रूप यजमान में १२ भले प्रकार ग्रहण करता हूं हे प्रकृति पुंरुप तुम दोनों १३ संयुक्त १४ हो १५ मुझ को १६ मोक्ष से १७ संयुक्त करो तथा तुम दोनों १८ पृथक् पृथक् १९ हो २० मुझ को २१ पाप रूप संसार से २२ पृथक् करो ॥ ४॥

इन्द्रस्य वज्रोसिवाजसास्त्वयायं वाजं ॥ १ ॥
वाजस्य नुप्रसवे मातरम् महीमदिति न्नाम वचं
साकरामहे । यस्यामिदं विश्वम् भुवनमावि वे
शं तस्यां नो देवः सविता धर्मसा विषतः ॥ ५ ॥
वाजसा ॥ इन्द्रस्य ॥ वज्रो ॥ असि ॥ प्रया ॥ त्वया ॥ वाजं ॥ १ ॥
वाजस्य ॥ प्रसवे ॥ नू ॥ मातरम् ॥ अदितिम् ॥ महीम् ॥ नोम् ॥ वचं
सा ॥ करामहे ॥ यस्याम् ॥ इदं ॥ विश्वम् ॥ भुवनम् ॥ आवि वेशं ॥

देवः^{३३}। सविता^{३४}। तस्योम्^{३५}। नै^{३६}। धर्मै^{३७}। साविषेत्^{३८}॥ ५॥

अथाधिदैवम् - अध्वर्यु रथ को उसके रथ बाहन शकट से उतार
ता है उसका मंत्र १ उतारे हुए रथ को धुर पर पकड़ कर चात्वाल से दाहि
ए मार्ग द्वारा लाकर वेदी के मध्य स्थापन करता है उसका मंत्र २
ओं इन्द्र स्येत्यस्य (बृहस्पतिर्ऋ० आसुरी गायत्री छं० रथो दे०) १
ओं वाजस्येत्यस्य (० तथा ० विराडिति जगती छं० एधिवि सविता रौ०)

पदार्थः - हे रथ १ अन्न के दाता तम २ यजमान के ३ रथ ४ हो ५ यह
यजमान ६ तेरे द्वारा ७ वहुत अन्न वाला हो वै ८ अन्न की ९ उत्पत्ति के
निमित्त ११ ही १२ जगन्नि मंत्री १३ अदीना १४ एधिवी को १५ प्रत्यक्ष में
१६ वेद वाक्य द्वारा १७ अनुकूल करते हैं १८ जिस भूमि में १९ यह २० स
व २१ प्राणी मात्र २२ आविष्ट हैं २३ २४ सविता देवता २५ उस एधिवी में
ही ३६ हमारे २७ अवस्थान को २८ प्रेरणा करो ॥ ५॥

अथाध्यात्मम् - हे योग रथ १ विराट रूप अन्न के दाता तम २ यो
गी के ३ रथ ४ हो ५ यह योगी ६ तेरे द्वारा ७ विराट रूप अन्न को ८ प्राप्त करे
८ विराट रूप अन्न की ९ उत्पत्ति के निमित्त ११ ही १२ योगिजन्नी १३ अ
खंडिता १४ योगि भूमि को १५ प्रत्यक्ष में १६ वेद वाक्य द्वारा १७ हम अनु
कूल करते हैं १८ जिस योग भूमि में १९ यह २० सव २१ ब्रह्मांड २२ प्रविष्ट
हुआ २३ नाना प्रकार के अवतारों से कीडन शील २४ महानारायण २५
उस योग भूमि में २६ हमारे २७ अवस्थान को २८ प्रेरणा करो ॥ ५॥

अपस्वन्तर मृतं मृत्सु भेषजं मृपा मुत प्रशस्तिष्व
पृवा भवत वाजिनः। देवी रापो यौव ऊर्मिः प्रनूर्तिः
ककुन्मन्वाजसास्तेनायं वाजध्वं सेतु
अप्सु। अन्तः। असृतम्। उता। अप्सु। भेषजम्। अश्वाः। अपाम्।

ओं वातो वेत्यस्य (बृहस्पति ऋ० भुरिगार्ष्य षिा कृच्छं० अश्वो देवता) १

पदार्थः १ समष्टि प्राण २ और ३ समष्टि मन ४ और ५, ६ ब्रह्मांशु के धारण करने वाले सत्ताईस गन्धर्व अर्थात् प्रधान महत् अहंकार, दश तत्त्व चतुर्विंश द्वियजो हैं ७ उन्होंने ८ पहिले ९ घोड़े को १० रथ में युक्त किया ११ उन समष्टि प्राण आदि ने १२ इस घोड़े में १३ वेग को १४ स्थापन किया ॥ ७॥

अथाध्यात्मम् - १ समष्टि प्राण २ और ३ समष्टि मन ४ और ५, ६ ज्ञान निवृत्ति तथा नाशयण के धारण करने वाले भगवद्गीता में कथित सत्ताई गुण अर्थात् अभय, चित्त शुद्धि, ज्ञान योग की व्यवस्थिति, दान, दम, यज्ञ, स्वाध्याय, तप, आर्जव, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति, अपेक्ष, प्राणियों पर दया, अलोलुप्त्वा, मृदुता, लज्जा, अचपलता, तेज, समाधृति, शौच, अदोह, अभिमान, त्याग जो देवी संपत्ति भी सत्ताई की, दाता हैं ७ उन्होंने ८ पहिले अर्थात् साधन अवस्था में ९ प्राण को १० योग स्थ में युक्त किया ११ उन गुण आदि ने ही १२ इस प्राण में १३ वेग को १४ स्थापन किया ॥ ७॥

वातरं ह्यहं भव वाजिन्युज्यमान इन्द्रस्यैवादाक्षिण्यं दक्षिणं श्रियैधि युज्जन्तु त्वा मरुतो विश्ववेदसां पत्सु जवम आदधानु ॥ ८ ॥ वाजिनः युज्यमानः वातरं ह्यहं भव इन्द्रस्यैवादाक्षिण्यं दक्षिणं श्रियां पृथिवी विश्ववेदसा मरुतो त्वा युज्जन्तु त्वष्टा तौ पत्सु जवम आदधानु ॥ ८ ॥

अथाधिदैवम् - वाम और के घोड़े को जोड़ता है उसका मंत्र १ ओं वातरं हेत्यस्य (बृहस्पति ऋ० भुरिगार्ष्य षिष्ट पृच्छं० अश्वो दे०) १ पदार्थः १ हे वेगवान घोड़े २ जुड़े हुए नमः ३ वायु की समान वेग वाले

हो जाओ ५ और यजमान के दहाहिने घोड़े की ७ समान ८ शोभा से युक्त ९ हो जाओ १० सर्वज्ञ ११ मरुत देवता १२ तुम्ह को १३ रथ में युक्त करो १४ त्व
ष्टा देवता १५ तेरे १६ पादों पैरों में १७ वेग को १८ स्थापन करो ॥ ८ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे वेग वान दूसरे प्राण २ योग रथ में जोड़े हुए
तुम ३ समष्टि वायु की समान वेग वाले ४ हो जाओ ५ आत्मा रूप यजमा
न के ६ दक्षिण प्राण की ७ समान ८ योग लक्ष्मी से युक्त ९ हो जाओ १०
सर्वज्ञ ११ समष्टि प्राण १२ तुम्हें १३ योग रथ में जोड़ो १४ ईश्वर १५ तेरे १६
पैरों में १७ वेग को १८ स्थापन करो ॥ ८ ॥

जवो यस्तै वाजिन्नि हितो गुहायः प्र्येने परी
तो अचरच्च वाते । तेन नो वाजिन्वल् वान्वले
न वाजिन्नि भव समनेच पारयिष्णु । वाजिनो
वाजिजितो वाजिं थ सरिष्यन्तो वहस्पतेर्भागम
वजिघ्नत ॥ ८ ॥

वाजिनः । यः । ते । जवः । गुहा निहितः । यः । प्र्येने । परीतः । च । वाते ।
अचरेत् । वाजिनः । तेन । वलेन । वलवानः । न । वाजिन् । च । सम
ने । पारयिष्णुः । वाजिजितः । वाजिं थ । सरिष्यन्तः । वाजिनः । वह
स्पतेः । भागः । अवजिघ्नत ॥ ८ ॥

अथाधिदेवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं उनको कहते हैं दक्षि
ण ध्रुव में तीसरे घोड़े को जोड़ता है उसका मंत्र १ बाह स्पत्य चरु घोड़ों
को सुंघाता है उसका मंत्र २

ओं जव इत्यस्य (वहस्पति ऋ० आषी जगती छ० अर्चो दे०) १
ओं वाजिन इत्यस्य (तथा ० आषी गायत्री छ०) तथा ० २

पदार्थः - हे तीसरे घोड़े २ जो ३ तेरा ४ वेग ५ हृदय प्रदेश में स्थापित

है ६ और जो वेग ७ तुमने अपने आत्म प्रति विव मे प धारण किया ६ और १०
प्राण में ११ व्यास हुआ १२ हे वेग वान घोड़े १३ उस १४ बल से १५ बल वाम
होते तुम १६ हमारे १७ अन्न को जीतने वाले १८ और १९ संग्राम में २० पार क
रने वाले हूजियै ११ अन्न को जीतने वाले २२ अन्न की ओर २३ चलते २४ हे
घोड़ो तुम २५ वह स्फुटि के २६ भाग चरु को २७ सुंघौ ॥ ६ ॥

अथाध्यात्मम् - १ हे तीसरे प्राण २ जो ३ तेरा ४ वेग ५ हृदय प्रदे
श में स्थापित है ६ और जो वेग तुमने ७ आत्म प्रति विव मे प धारण किया
६ और १० तेरे अंश प्राण समूह में ११ व्यास हुआ १२ हे वेग वान प्राण
१३ उस १४ बल से १५ बल वान होते तुम १६ हम योगियों के १७ विराट्
रूप अन्न के जेता १८ और १९ काम आदि के संग्राम में २० पार करने वाले
हूजियै २१ विराट् रूप अन्न को जीतने वाले २२ विराट् रूप अन्न की ओर
२३ चलने वाले २४ हे प्राणो तुम २५ ब्रह्मांड के स्वामी महानारायण के
२६ अंश आत्मा को २७ आघ्राण करो ॥ ६ ॥

देवस्याहं सवितुः सवे सत्यं सवसो बृहस्प
ते रुत्तमन्नाकं रुहेयम् । देवस्याहं स
वितुः सवे सत्यं सवस इन्द्रस्योत्तमन्नाकं रु
हेयम् । देवस्याहं सवितुः सवे सत्यं स
वसो बृहस्पते रुत्तमन्नाकं रुहेयम् । देवस्या
हं सवितुः सवे सत्यं सवस इन्द्रस्योत्तमन्ना
कं रुहेयम् । देवस्याहं सवितुः सवे सत्यं सवस
इन्द्रस्योत्तमन्नाकं रुहेयम् । सत्यं सवसः सवितुः देवस्य सवे अहम् । बृहस्पते उत्तमन्ना
कं रुहेयम् । सत्यं सवसः सवितुः देवस्य सवे अहम् ।
इन्द्रस्योत्तमन्नाकं रुहेयम् । सत्यं सवसः सवितुः देवस्य

वृहस्पते वाजं ज्ञय वृहस्पते ये वाचं वदते वृहस्पतिं
वाजं ज्ञापयत । इन्द्र वाजं ज्ञयेन्द्राय वाचं वदते

इन्द्र वाजं ज्ञापयत ॥ ११ ॥

वृहस्पतये वाचं वदते । वृहस्पते वाजम् । जये । वृहस्पतिम् ।
वाजम् । ज्ञापयत । इन्द्राय वाचं वदते । इन्द्रे वाजम् । जये । इ
न्द्रे वाजम् । ज्ञापयत ॥ ११ ॥

अथाधिदैवम् - वेदी के समीप ऊँचे स्थाणु पर आरोपित मन्त्र हृद
न्दुभियों के मध्य एक को मन्त्र से वजाता है अन्य को चुपके से उनके मन्त्र
ओं वृहस्पत इत्यस्य (वृहस्पति ऋ० प्राजापत्या त्रिष्टुप् छं० वृहस्पति दे०) ए
वं इन्द्र इत्यस्य (इन्द्र तथा ० प्राजापत्या वृहती छं० इन्द्रो दे०) ए

पदार्थः विप्र यज्ञसम्बन्धी मन्त्र हेतुन्दुभियो तुमा १ महानारायण से
२ यह वचन ३ कहो कि ४ हे महानारायण तुम भी अन्न को छीनो तथा हेतु
न्दुभियो ७ महानारायण से अन्न की ईजय कराओ ८ सात्र यज्ञ में तुन्दु
भी व्रजाने का मन्त्र हेतुन्दुभियो तुमा ९ विष्णु के अर्थ १० यह वचन ११ क
हो १२ हे विष्णु १३ अन्न को १४ छीनो तथा हेतुन्दुभियो १५ विष्णु से १६
अन्न की १७ ईजय कराओ ॥ ११ ॥

अथाध्यात्मम् - हे समस्वर सहित दश अनाहत शब्दों तुम १ महा
नारायण के अर्थ २ वचन ३ कहो ४ हे महानारायण तुम ५ विराट् रूप अ
न्न को छीनो तथा हे समस्वर सहित अनाहत शब्दों ७ महानारायण से
८ विराट् रूप अन्न की ईजय कराओ हे समस्वर सहित अनाहत शब्दों ९
विष्णु के अर्थ १० वचन ११ कहो १२ हे विष्णु १३ उक्त अन्न को १४ छीनो तथा
हे समस्वर सहित अनाहत शब्दों १५ विष्णु से १६ अन्न की १७ ईजय कराओ १८

एषावः सा सत्या संवाग्भूय या वृहस्पतिं वाजं

मजीजपताजीजपतवृहस्पतिं वाजं वनस्पतयो
विमुच्यध्वम्। एषावः सा सत्यासंवाग्भूद्यये
न्दुं वाजं मजीजपताजीजपतेन्दुं वाजं वनस्प

तयो विमुच्यध्वम् १२

के। एषा। सा। वाक्। सत्या। समभूता। यया। वृहस्पतिम्। वा
जम्। अजीजपत। वृहस्पतिम्। वाजम्। अजीजपत। वनस्पत
यः। विमुच्यध्वम्। वः। एषा। सा। वाक्। सत्या। समभूता। यया
इन्द्र। वाजम्। अजीजपत। इन्द्र। वाजम्। अजीजपत। वन
स्पतयः। विमुच्यध्वम् ॥ १२ ॥

सप्त दश दुन्दुभियों के मध्य मंत्र से वजाई हुई दुन्दुभी को मंत्र से ही उ
तारता है अन्य को चुपके से उसके मंत्र १२ वाणी १३ सत्य १४ देह
रूप १५ अन्न की १६ जय कराई १७ महेन्द्रादित्य १८ वायु १९ विष्णु २० देव

तथा २१ मन्त्र २२ वाणी २३ सत्य २४ देह रूप २५ अन्न की २६ जय कराई २७ महेन्द्रादित्य २८ वायु २९ विष्णु ३० देव

पदार्थः - हे दुन्दुभियो वाहे अनाहत शब्दो १ तुम्हारी २ यह ३ वह
४ वाणी ५ सत्य ६ हुई ७ जिस वाणी के द्वारा ८ महानारायण से ९ अन्न
की जय कराई १० महानारायण से ११ वह ह्लाड रूप अन्न की १२ जय कराई
१३ हे वनस्पति की विकार दुन्दुभियो अथवा प्राण निवृत्ति गगना मृत और
मन के स्वामी अनाहत शब्दो तुम १४ कृत हो ते मुक्त हू जिये क्षात्र्य
वर्त का मंत्र हे दुन्दुभियो वाहे अनाहत शब्दो १५ तुम्हारी १६ यह १७ वह १८
वाणी १९ सत्य २० हुई २१ जिस वाणी के द्वारा २२ विष्णु से २३ अन्न की २४ ज
य कराई २५ विष्णु से २६ देह रूप अन्न की २७ जय कराई २८ हे दुन्दुभियो
अथवा प्राण निवृत्ति गगना मृत और मन के स्वामी अनाहत शब्दो तुम २९ मु
क्त हू जिये ॥ १२ ॥

देवस्याहं सवितुः सवे सत्य प्रसव सो बृहस्पते
 वाजिजितो वाजिज्जेषम। वाजिनो वाजिजितो ह
 नस्कम्भुवन्तो योजुनामिमानः काष्टाङ्गच्छत १३
 सत्य प्रसवसः सवितुः देवस्या सवे अहं वाजिजितो बृहस्प
 ते वाजम्। जेषम्। वाजिनः। वाजिजितः। अध्वेनः। स्कम्भुवन्तः
 योजना। मिमानाः। काष्टाम्। गच्छत ॥ १३॥

अथाधिदेवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं यजमान मंत्र युक्त रथ पर
 चढ़ता है उसका मंत्र १ वाचन का मंत्र २० ब्रह्मांड का मंत्र ३०
 ओं देवस्येत्यस्य (बृहस्पति ऋषिः आर्षी बृहती छंदः लिङ्गोक्त देवः) १
 ओ वाजितस्यस्य (तथा ० साम्नी जगती ० अश्वो देवः) २

पदार्थः - १ सत्य आन्ता वाले २ सवितो ३ देवता ४ की आन्ता में वर्तमा
 न ५ में ६ अन्न के जेता ७ महानारायण के ८ ब्रह्मांड रूप अन्न को ९ जीतू १०
 हे घोड़े ११ अन्न के जेता १२ मार्गो को १३ रूधते १४ योजनों को १५ अति शी
 प्रता से चलते तुम १६ मार्गान्त सीमा को १७ प्राप्त करो ॥ १३॥

अथाध्यात्मम् - सत्य आन्ता वाले २, ३ गुरु की ४ आन्ता में वर्तमा
 न ५ में योगी ६ विराट रूप अन्न के जेता ७ ब्रह्मांडों के स्वामी महानारायण
 के ८ विराट रूप अन्न को ९ जीतू १० हे वेगवान प्राणो ११ ब्रह्मांड के जेता
 १२ कमल मार्गो को १३ रूधते १४ योजनों को १५ चलते तुम १६ योग की
 अंत सीमा महानारायण को १७ प्राप्त करो ॥ १३॥

एषस्य वाजीक्षिपणान्तरणयति ग्रीवा
 योन्वद्धोऽपि कुक्ष्यासनि। कतुन्दधि
 का अनुसं सनिष्यदत्पथा मङ्गा थस्य
 न्वायनीफणात्साहा ॥ १४

एषः। वाजी। यः। ग्रीवायाम्। कक्षे। असेनि। अपि। वद्धः। सा। द
 धिकाः। कर्तुम्। अनु। संसृजिष्यदतः। पृथोऽथ। अङ्गुलीऽथ। सि।
 अन्वापनीफणात्। क्षिपणिम्। तुरणयति। स्वाहा॥ १४॥

अथाधिदैवम् - दो अन्वासे घृत को हो मता है और दो डोटे हुए घो
 डों को अनु मंत्रणा करता है उसका प्रथम मंत्र॥

अं एषस्येत्यस्य (दधिकावाक् ० आर्षी जगती छं ० अश्वो दे०) १०

पदार्थः - १ यद् २ घोडा ३ प्राण रूप ४ ग्रीवा में ५ कक्ष में ६ मुख में ७ भी
 सन्नाह आदि से बंधा है ८ वह ९ मार्ग वरोधक पर्वत पाषाण आदि को अ
 तिक्रमण करने वाला १० सादि संकल्पानुसार ११ चलता १२ मार्ग के
 १५ नीचे उल्टे स्थानों को १६ अति शीघ्र प्राप्त करता १७ १८ कोड़े की प्रेरणा से
 शीघ्र दौड़ता है १९ अष्ट होम हो ॥ १४॥

अथाध्यात्मम् - १ यद् २ वेगवान् ३ प्राण ४ ग्रीवा ५ पार्श्व ६ मुख में ७
 भी ८ प्राण यामि से निरुद्ध हुआ ९ वह १० धारण करने वाले इन्द्रिय गोल
 कों को अतिक्रमण करने वाला प्राण ११ १२ आत्मा अभिप्राय के अनुसार १३
 चलता १४ योग मार्ग के १५ कमलों को १६ अति शीघ्र प्राप्त करता १७ १८
 योग विधि रूप चावुक की प्रेरणा से शीघ्र दौड़ता है १९ गुरु के उपदेश से ॥ १४॥

उतस्मास्य द्रवतस्तुणयतः पूर्णन्न वेत्तुवाति
 प्रगद्धिनिः। श्येनस्येव धर्जतोऽप्रदुःसमरिदधि

कावाः सहो जीति पितृः स्वाहा १५
 अस्य। दधिकावाः। द्रवते। तुरणयतः। प्रगद्धिनिः। श्येनस्य
 द्रव। धर्जतः। उर्जा। सह। तरिवतः। उतस्म। अङ्गुली। परि।
 अनुवोति। ने। वे। पणिम्। स्वाहा॥ १५॥

अथाधिदैवम् - दूसरा मंत्र

ओं उतेत्यस्य (दधिकावा ऋ० आषीजगती छं० अश्वो दे०) १

पदार्थः - १ इस २ घोड़े के ३ चलने ४ शीघ्रता करते ५ सीमा को प्राप्त करना चाहते ६ अथवा पक्षी की ७ समान ८ वेग से चलने ९ वेग के १० साथ ११ मार्ग को तरते १२ भी १३ अंगार चिन्ह १४ वस्त्र चमड़ादि सब देह में वर्तमान होता १५ इस प्रकार दीखता जाता है १६ जैसे १७ पक्षी का १८ पक्ष १९ झेप होम हो १६

अथाध्यात्मम् - १ इस २ कमलों का अतिक्रमण करने वाले प्राण के ३ चलने ४ शीघ्रता करते ५ अंत सीमा पाने की इच्छा करते ६ घोड़े की ७ समान ८ वेग से चलने ९ वेग के १० साथ ११ सुषुम्ना मार्ग को तरते १२ १३ मूल चक्र पर स्थित गणेश जी नाभि के अधः चक्र पर स्थित ब्रह्मा जी नाभि चक्र पर स्थित विष्णु जी हृदय चक्र पर स्थित शिव जी कंठ चक्र पर स्थित देव समूह भृकुटि चक्र पर स्थित ज्योति स्वरूप इन सब का स्वरूप १४ सर्वेष्वोर से १५ योगीजन को दृष्टि गोचर होता है १६ जैसे १७ पक्षी का १८ अंग भूत पक्ष १९ श्रुति के अनुसार ॥ १५ ॥

शन्नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवता तामित द्रवः स्वकीः । जम्भयन्तो हि वृकुं रक्षां सिसनेभ्यस्मद्युयवन्मीवा ॥ १५ ॥
देवता ता हवेषु । मित द्रवः । स्वकीः । अहिः । वृकर्म । रक्षांसि । जम्भयन्तः । वाजिनः । नः । शो भवन्तु । अस्मेतः । सनेमिः । अमीवाः । युयवन् ॥ १६ ॥

अथाधिदैवम् - तीन ऋचा से घृत का होम वा घोड़े का अभिमंत्रण करता है उसका पहिला मंत्र

ओं शन्न इत्यस्य (वशिष्ठ ऋ० भुरिगाषी पंक्ति छं० अश्वो दे०) १

पदार्थः - १ यज्ञ में २ आह्वानों के होने पर ३ परिमित चलने वाले ४ अंग्रे प्रकाश वाले ५ सर्प ६ भेड़िया ७ राक्षसों को नष्ट करने वाले ८ घोड़े ९

हमारे ११ सुखदाता १२ होओ १३ हमारी १४ पुरानी १५ व्याधियों को १६ दृष्ट करौ ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम् - १ योग यज्ञ में २ आवाहनों के होने पर ३ आत्मा के अभिप्रायानुसार चलने वाले ४ विराटरूप श्रेष्ठ अन्न वाले ५ प्रापक काम ७ को ध्याति अमुर गणों को ८ नाश करने वाले ९ वेगवान प्राण १० हम योगियों के लिये ११ कल्याण रूप १२ होओ १३ हमारी १४ पुरातन १५ जन्म मरण सुख दुख आदि व्याधियों को १६ दृष्ट करौ ॥ १६ ॥

तेनोऽर्बन्तो हवन् श्रुतो हवन् विश्वेऽष्ट एवन्तु
वाजिनो मितद्रवः सहस्रसामेधसातासनि
ष्यवो महो ये धनं धंसमिथेषु जभिरे ॥ १७ ॥
ते। विश्वे। मितद्रवः। हवन् श्रुतः। सहस्रसामेधसाता। सनिष्य
वः। वाजिनः। अर्बन्तः। नः। हवन्। अष्ट एवन्तु। यैः। समिथेषु।
महः। धनं धं। जभिरे ॥ १७ ॥

अथाधिदैवम् - दूसरा मंत्र
ओं तेन इत्यस्य (नामानेतिष्ठ ऋ० आधी जगती छं० अष्टोदे०) १
पदार्थः - १ वे २ सब ३ आवाहन को सुन्ने वाले ४ यज्ञमान के चिन्तानुकूल परिमित चलने वाले ५ बृहत् मनुष्यों की दृष्टि में समर्थ बड़ी अन्न राशि के देने वाले ६ यज्ञ शाला के ७ पूरक ८ वेगवान ९ घोड़े १० हमारे ११ आवाहन को १२ सुनो १३ जिन घोड़ों ने १४ संग्रामों में १५ बड़े पूज्य १६ धन को १७ आहरण किया ॥ १७ ॥

अथाध्यात्मम् - १ वे २ सब ३ आवाहन के सुन्ने वाले ४ आत्मा के अनुकूल परिमित चलने वाले ५ महा नारायण के दाता धमन हृदय भृकुटि गगन मंडल रूप यज्ञ शाला के ७ पूरक ८ वेगवान ९ प्राण १० हमारे

गियों के ११ आह्वान को १२ सुनों १३ जिन प्राणों ने १४ काम आदि के संगामों में
१५ बड़ी १६ योग लक्ष्मी को १७ आहरण किया ॥ १७ ॥

वाजे वाजे वत वाजिनो नो धनेषु विप्राश्मृताः ऋतज्ञाः
अस्य मध्वः पिवत मादयध्वं तृप्ताः देवयानैः पथिभिः याताः
वाजिनः विप्राः अमृताः ऋतज्ञाः वाजे वाजे धनेषु न अवता
अस्या मध्वः पिवत मादयध्वं तृप्ताः देवयानैः पथिभिः याताः

अथाधिदैवम् तीसरा मन्त्र
ओं वाज इत्यस्य (वसिष्ठ ऋ० निच दाषी विष्टुषं अश्वो दे०) १

पदार्थः - १ हे घोड़ा २ मेघावी ३ अमरणा धर्म वाले ४ सत्य वा यज्ञ के
दाता तुम ५, ६ सव अन्नों के ७ और धनों के उपस्थित होने पर ८ हम को ९ र
क्षा करो १० इस ११ धावन से पहले और पीछे धूँधे हुए नैवार चरु लक्षण
मधुर हवि का १२ प्राण करो १३ और तृप्त होओ १४ तृप्त होते १५ देवयान १६
मार्गों से १७ जाओ ॥ १८ ॥

अथाध्यात्मम् १ हे प्राणो २ वेद के ज्ञाता ३ जीवन मुक्त ४ ब्रह्म के ज्ञाने
वाले तुम ५, ६ व्यष्टि समष्टि देह रूप अन्न ७ और अष्ट सिद्धि आदि धनों के उप
स्थित होने पर ८ हम योगियों को ९ रक्षा करो तथा १० इस ११ मधु ब्राह्म
णोक्त ज्ञान का १२ प्राण करो १३ और तृप्त होओ १४ तृप्त होते १५ विद्वान्
नों के चलने योग्य १६ सुषुप्ता मार्गों से १७ जाओ ॥ १८ ॥

आमा वाजस्य प्रसवो जगम्या दे मेघावा पृथिवी विश्व
रूपे । आमा गन्ता म्पितरा मातरा चामा सोमो अमृत
त्वेन गम्यात । वाजिनो वाजजितो वाज ध्वंसस्त वा ध्वं
सो बृहस्पतेर्भागमुवाजिघ्रत निमृजानाः १८
वाजस्य प्रसवः । मा । आज गम्यात । इमे । विश्व रूपो घावा पृथि

द्यौः१५ आ१६ पितरामातरा१७ मा१८ आगन्ताम्१९ च२० सोम२१ अमृतत्वेन२२
मा२३ आगम्यात्२४ वाजिनः२५ वाजजितः२६ वाज२७ सस्तवा२८ सः२९ नि
मृजानः३० वृहस्पते३१ भागम्३२ अवजिघ्रत३३ ॥ १६ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में दो मंत्र हैं उनको कहते हैं यजमान रथ से उतर कर चात्वाल उत्करके मध्यस्थित नैवारचरु को स्पर्श करता है उस का मंत्र १ मंत्र से युक्त घोड़ों को नैवारचरु सुंघाता है उस का मंत्र २
ओं आमा वाजस्येत्यस्य (वसिष्ठ ऋ० निचुदाषी त्रिष्टुप्० प्रजापतिर्दे०) १
ओं वाजिन इत्यस्य (६ तथा० प्राजापत्या त्रिष्टुप्० अश्वो दे०) २
पदार्थः १ अन्न की २ उत्पत्ति ३ मुक्त को ४ प्राप्त हो ५ ये ६ विश्व रूप ७ पृ
थिवी स्वर्ग ८ प्राप्त हो ९ माता पिता रूप वे दोनों १० मेरे समीप ११ आओ
१२ और १३ सोम १४ अमृत भाव से १५ मुक्त को १६ प्राप्त होवे १७ हे घोड़ी १८
अन्न के जेता १९ अन्न की और २० चलने वाले २१ उस अन्न के शोधने वाले तु
म २२ वृहस्पति सम्बंधी २३ भाग को २४ आघ्राण करौ ॥ १६ ॥

अथाध्यात्मम् - उत्थान में प्रार्थना करता है १ भूतात्मा की २ उत्पत्ति ३
मुक्त को ४ प्राप्त होवे ५ ये ६ विश्व रूप ७ हृदय और मन ८ प्राप्त होवे ९ मन और
बुद्धि की वनियां १० मुक्त को ११ प्राप्त होवे १२ और १३ आत्म प्रति विव १४
जीवन मुक्ति सहित १५ मुक्त आत्मा को १६ प्राप्त होवे १७ हे प्राणो १८ समा
धि में ब्रह्मांड के जेता १९ उत्थान अवस्था में ब्रह्मांड की और २० चलने वा
ले २१ देह शोधन करने वाले आप २२ ब्रह्मांडों के स्वामी महानारायण के
२३ अंश आत्मा को २४ आघ्राण करौ ॥ १६ ॥

आपये स्वाहा स्वापये स्वाहा पिजाय स्वाहा कर्तवे
स्वाहा वसवे स्वाहा हर्षतये स्वाहा ह्ये मुग्धाय स्वाहा
मुग्धाय वै न थं शिनाय स्वाहा विनु थं शिनं ज्ञान्त्या

यनाय स्वाहान्त्याय भौवनाय स्वाहा भुवनस्य पतये
 स्वाहाधिपतये स्वाहा २०
 आपये स्वाहा। आपये स्वाहा। अपिजाय स्वाहा। कृतवे
 स्वाहा। वसवे स्वाहा। अहंपतये स्वाहा। मुग्धाय स्वाहा।
 स्वाहा। मुग्धाय। वैनं शिनाय स्वाहा। विनं शिने।
 न्त्या यनाय स्वाहा। अन्त्याय भौवनाय स्वाहा। भुवन
 स्य। पतये स्वाहा। अधिपतये स्वाहा ॥ २० ॥

द्वादश सुवाहुति को होमता है वा केवल मंत्र को पढ़ता है उसके मंत्र
 ओं १, २, ४, ५ मंत्राणां (वशिष्ठ ऋ० देवी पंक्ति ऋ० प्रजापतिर्दे०) ३-१२
 ओं अपिजा येत्यस्य (१ तथा ० याजुषी गायत्री तथा) ३-१२
 ओं ६, ७, १२ मंत्राणां (१ तथा ० याजुष्युषिण कं छं तथा)
 ओं मुग्धा येत्यस्य (१ तथा ० याजुषी पंक्ति ऋ० तथा) ५
 ओं विनं शिन इत्यस्य (१ तथा ० याजुषी विष्टु पं छं तथा) ६
 ओं १०, ११ मंत्रयोः (१ तथा ० याजुषी वृहती छं तथा) ७

पदार्थः— १ धन आदि के प्रापक अग्नि स्वरूप प्रजापति के लिये २ अष्ट
 होम हो ३ अग्ने अपने आत्मा को प्राप्त करने वाले ज्ञान स्वरूप प्रजापति के लिये
 ४ अष्ट होम हो ५ वरुण रूप प्रजापति के लिये ६ अष्ट होम हो ७ संकल्पा
 त्मकं समष्टि मनचंद्रमा रूप प्रजापति के लिये ८ अष्ट होम हो ९ विराट्
 रूप प्रजापति के लिये १० अष्ट होम हो ११ विराट् के आत्मा अथवा विरा
 ट् वस्तु रूप सूर्य के लिये १२ अष्ट होम हो १३ मोहक १४ प्रधान रूप प्रजा
 पति के लिये १५ अष्ट होम हो १६ मोहक १७ विनाश शील महतरूप
 के लिये १८ अष्ट होम हो १९ विनाश शील २० अहंकार रूप के लिये २१
 अष्ट होम हो २२ प्रधान से उत्पन्न २३ ब्रह्मांड में प्रादुर्भूत आत्म प्रतिविंब

रूप प्रजापति के लिये २४ ओष्ठ होम हो २५ ब्रह्मांड के २६ स्वामी नर के लिये २७
ओष्ठ होम हो २८ ब्रह्मांडों के अधिपति नारायण के लिये २९ ओष्ठ होम हो ३०

अथाध्यात्मम् - १ शास्त्र ज्ञान प्राप्त करने वाले वाक् इन्द्रिय के लि
ये २ महा वाक् जिस का अर्थ यह है कि वाक् ब्रह्म है ३ आत्मा की प्राप्ति कर
ने वाले ज्ञान के लिये ४ महा वाक् जिस का अर्थ यह है कि मनुष्य देवता-
प्राणी और ये लोक सब आत्मा हैं ५ जिह्वा के लिये ६ महा वाक् जिस का यह
अर्थ है अपने भोजन के सिवाय यज्ञों में अन्न दान करना चाहिये क्योंकि केवल
अपने मुखों में ही होमना जो प्रतिमान है वही पराभाव का कारण है ७ संकल्पा
त्मक मन के लिये ८ महा वाक् जिस का यह अर्थ है कि निश्चय मन ब्रह्म है ९
भूतात्मा के लिये १० महा वाक् जिस का यह अर्थ है कि जो सब प्राणियों में
स्थित होता सब का अंतर्गामी है जिस को प्राणी नहीं जानते सब प्राणी जिस
के शरीर हैं वही तेरा आत्मा अंतर्गामी अविनाशी है ११ चक्षु के लिये १२ म
हा वाक् जिस का यह अर्थ है कि निश्चय चक्षु ब्रह्म है १३ मोहक १४ अज्ञा
न के लिये १५ महा वाक् जिस का यह अर्थ है जो पुरुष आत्म लोक को न
देख कर इस लोक से जाता है वह अज्ञानी उस को नहीं भोगता है आत्म
लोक को ही उपासना करो जो उस की उपासना करता है उस का कर्म क्ष-
य नहीं होता इस आत्मा से जो चाहता है वह सब सिद्ध होता है १६ मोहक
१७ विनाश शील संसार के लिये १८ महा वाक् जिस का अर्थ यह है जो स
ब लोकों में स्थित होता सब लोकों का अंतर्गामी और शासन करता है जो
सर्व लोक जिस के शरीर हैं और सब लोक जिस को नहीं जानते वह तेरा
आत्मा अंतर्गामी और अविनाशी है १९ विनाश शील २० अज्ञान से उ-
त्पन्न काम के लिये २१ महा वाक् जिस का यह अर्थ है कि जो कामना इ-
सके हृदय में स्थित हैं वे सब ज्वलन्ती हो जाती हैं तब वह मरण धर्म वाला

अमृत होता है और इसी जन्म में ब्रह्म को प्राप्त करता है २२ अज्ञान रूप २३ दे
ह में प्रादुर्भूत आत्म प्रति विष के लिये २४ महा वाक् जिस का यह अर्थ है
कि महा वाक् रूप सरस्वती और नरनाशयण देवता यजमान के शिर आ-
त्म प्रति विष को ब्रह्म मेलय करते हैं २५ देह के २६ स्वामी जीवात्मा के लिये
२७ महा वाक् २८ ईश्वर के लिये २९ महा वाक् जिस का यह अर्थ है कि जो
दूसरे देवता की उपासना करता है और समझता है कि मैं अन्य हूं और देव-
ता अन्य है वह अज्ञानी है और देवताओं का पशु है क्योंकि दैन अवस्था
में संसार का भय होता है ॥ २० ॥

आयु यज्ञेन कल्पताम्याणो यज्ञेन कल्पताञ्च
सूर्य यज्ञेन कल्पता ध्रुव यज्ञेन कल्पतामृष्टं
यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् । प्रजा पतेः

प्रजा अभूमः स्वर्देवा अगन्मा मृता अभूम २१
आयुः यज्ञेन कल्पताम् । प्राणाः यज्ञेन कल्पताम् । चक्षुः
यज्ञेन कल्पता ध्रुव यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन
कल्पताम् । प्रजा पतेः । प्रजा अभूम । देवाः स्वः अगन्म । अ-
मृता अभूम ॥ २१ ॥

अथा धिदैवम् — इस कंडिका में मंत्र हैं उनको कहते हैं, छै मंत्रों
से होम करता है वा उनको पढ़ता है वे मंत्र १ से ६ तक । पत्नी और यजमान न
सेनी से ऊपर चढ़ते हैं उसका मंत्र । गेहूँ की पिही से निमित्त चपाल को यजमा-
न स्पर्श करता है उसका मंत्र । शिर को यूपाग्र से ऊँचा करता है उसका मंत्र -

ओं षट् मंत्राणां (वशिष्ठ ऋ० प्राजापत्यागायत्री ० प्रजापतिर्दे०) १-६
ओं प्रजापत इत्यस्य (तथा ० याजुषी वृहती ० यजमानो दे०) ७
ओं स्व रित्यस्य (तथा ० देवी त्रिष्टुप् ० तथा) ८

जो अमृत इत्यस्य (वशिष्ट कर० याजुषी गायत्री छं० तथा०) ६

पदार्थः - १ अत्म शून्य पूर्णायुः २ यज्ञ द्वारा ३ निर्मित हो ४ प्राणा याम-
आदिके साधन में समर्थ प्राण ५ यज्ञ द्वारा ६ निर्मित हो ७ भगवत मूर्ति और स-
द्युदर्शन में समर्थ चक्षुः ८ यज्ञ द्वारा ९ निर्मित हो १० भगवत कथा के अवाण-
में समर्थ ओज ११ यज्ञ द्वारा १२ निर्मित हो १३ भक्त यज्ञ और द्रव्य यज्ञ १४ वि-
ष्णु के अनुग्रह से १५ निर्मित हो १६ हम ब्रह्म वाम महानारायण के १७ भक्त
१८ होवे १९ हे ब्रह्मा विष्णु महेश देवता ओहम २० स्वर्ग को २१ जावे २२ मुक्त
२३ होवे ॥ २१ ॥

अथाध्यात्मम् - प्रारब्ध समाप्त कफिर प्रार्थना करता है १ आयुः
विष्णु से ३ निर्मित हो ४ समर्पित प्राण ५ विष्णु से ६ निर्मित हो ७ समर्पित-
चक्षुः ८ विष्णु से ९ निर्मित हो १० ओज ११ विष्णु से १२ निर्मित हो १३ स-
मर्पित आत्मा १४ विष्णु से १५ निर्मित हो १६ हम महानारायण के १७ अ-
नन्य भक्त १८ हो १९ हे ब्रह्म परा महानारायणो हम २० परम धाम को २१
जावे २२ मुक्त २३ होवे ॥ २१ ॥

अस्मे वो अस्ति न्द्रियमस्मे नृणां मुत कतु रस्मे कर्त्तु
सि सन्तु वः । नमो मात्रे पृथिव्यै नमो मात्रे पृथिव्या इय
न्ते राड्यन्ता सिय मेनो ध्रुवो सि धरुणाः । कृष्यै त्वा क्षे
माय त्वा रय्यै त्वा पोषाय त्वा २२
वः । इन्द्रियम् । अस्मे । अस्तु । नृणां । अस्मे । उता । वः । कतुः । व-
र्त्तु । सि । अस्मे । सन्तु । मात्रे । पृथिव्यै । नमः । मात्रे । पृथिव्यै ।
नमः । तो । इय । राट । यन्ता । असि । यमनः । ध्रुवः । धरुणाः । अ-
सि । कृष्यै । त्वा । क्षेमाय । त्वा । रय्यै । त्वा । पोषाय । त्वा ॥ २२ ॥
अथाधिदैवम् - इस कड़िका में ४ मंत्र हैं उनको कहते हैं यूपारूढ

यजमान दिशाओं को देखता है उसका मंत्र १ यूपारूढ़ यजमान भूमि को देखता है उसका मंत्र २ उत्तरवेदी के ऊपर ओं दुस्वरी आसंती पर वस्त्र चर्म को विछाता है उसका मंत्र ३ आसंती पर यजमान को विठाता है उसका मंत्र ४

ओं अस्मेव इत्यस्य (वसिष्ठ ऋ० निचृदाषी गायत्री० दिशो दे०) १

ओं नमो माव इत्यस्य (तथा० साम्युषि क छ० पृथिवी दे०) २

ओं इयंत इत्यस्य (तथा० दैवी वृहती० आसंती दे०) ३

ओं यंता सीत्यस्य (तथा० निचृदाषी वृहती० यजमानो दे०) ४

पदार्थः— हे दिशाओ १ तुम्हारा २ वीर्य ३ हम में ४ स्थापित हो ५ तुम्हारा धन ६ हम में स्थापित हो ७ और ८ तुम्हारा ९ कर्म १० और तेज ११ हम में १२ स्थापित हो १३ माता रूप १४ पृथिवी के लिये १५ नमस्कार १६ फिर माता रूप १७ पृथिवी के लिये १८ नमस्कार हे आसंती १९ तेरा २० यह २१ राज्य है हे यजमान तुम २२ सब के नियंता २३ हौ २४ स्वयं संयम करने वाले २५ स्थिर २६ और धारण करने वाले २७ हौ २८ कृषि सिद्धि के लिये २९ तुम्हें विठलाता हूँ ३० लब्ध की रक्षा के लिये ३१ तुम्हें विठलाता हूँ ३२ धन के लिये ३३ तुम्हें विठलाता है ३४ पुष्टि के लिये ३५ तुम्हें विठलाता हूँ ॥ २२ ॥

अथाध्यात्मम्— हे इन्द्रियाल यो १ तुम्हारा २ वीर्य ३ मेरे मध्य ४ होय ५ तुम्हारी सम्पत्ति ६ मेरे पास हो ७ और ८ तुम्हारा ९ कर्म १० और तेज ११ मुझ में १२ हो १३ १४ हृदय रूप पृथिवी के लिये १५ नमस्कार १६ १७ मन रूप पृथिवी के लिये १८ नमस्कार हे हृदय वा मन १९ यह देह रूप ब्रह्मपुरी २० तेरा २१ राज्य है हे आत्म प्रति विंव तुम २२ इन्द्रियों के नियंता २३ हौ २४ तथा संयमन कर्त्ता २५ अचल २६ और देह के धारण करने वाले २७ हौ २८ भक्तियोग सम्बन्धी कर्म सिद्धि के लिये २९ तुम्हें विठलाता हूँ ३० लब्ध मोक्ष की रक्षा के लिये ३१ तुम्हें विठलाता हूँ ३२ योगेश्वर्य के लिये ३३ तुम्हें वि

ठलाता हं ३४ शम दम आदि पुष्टि केलिये ३५ तु मे विठलाता हं ॥ २२ ॥

वाजस्ये मम्रसवः सुषुवे ग्रे सोम थं राजान मोषधीष्व
प्सु। ता अस्मभ्यस्मधु मती भवन्तु वय थं राष्ट्रे जागृ-
यामु पुरोहिताः स्वाहा ॥ २३ ॥

वाजस्य १। मम्रसवः २। अग्रे ३। ओषधीषु ४। अप्सु ५। दमम् ६। राजानम् ७।
सोम थं ८। सुषुवे ९। ताः १०। अस्मभ्यम् ११। मधु मती १२। भवन्तु १३। पुरोहि-
ताः १४। वय थं १५। राष्ट्रे १६। जागृयाम १७। स्वाहा ॥ २३ ॥

अथाधिदैवम् - औदुम्बर पात्र में मिलाये हुआ दुग्धचावल आदि
धान्य को सप्त मंत्र द्वारा स्ववा से आहवनीय अग्नि में होमता है उन मंत्रों में
पहिला मंत्र १

ओ वाजस्येत्यस्य (वसिष्ठ ऋ० सुरां डार्षी त्रिष्टुप् छं० प्रजा पतिर्दे०) १

पदार्थः - १ अन्न के २ उत्पन्न करने वाले प्रजा पति ने ३ सृष्टि की आदि में
४ ओषधी ५ और जलों में ६ इस ७ दीप्तिमान ८ बली रूप सोम को षष्ठ्यन्न
किया १० वे ओषधि और जल ११ हमारे लिये १२ रसवान और मधुरता से
युक्त १३ होओ १४ हे पुरोहितो १५ हम १६ अपने देश में १७ अप्रमत्त होवें
१८ ओष्ठ होम हो ॥ २३ ॥

अथाध्यात्मम् - १ व्यष्टि समष्टि देह रूप अन्न के २ सृष्टा महाना
रायण ने ३ सृष्टि की आदि में ४ इन्द्रियों ५ और इन्द्रियों के अंत रिक्त में ६
इस ७ आत्म प्रति विंव को षष्ठ्यन्न किया १० वे इन्द्रियां और इन्द्रियां
तरिक्त ११ तुम आत्मा रूप योगियों के लिये १२ ब्रह्म ज्ञान सम्पन्न १३ हो
ओ १४ हे गुरुओ १५ हम योगीजन १६ ब्रह्म पुर शरीर में १७ अप्रमत्त हो
१८ गुरु के उपदेश से ॥ २३ ॥

वाजस्ये माम्रसवः शिञ्जयेदिविमिमानुविष्वा

भुवनानि स्रष्टा । अदित्सन्तन्दापयति प्रज्ञानस
 नो रयिं सर्वं वीरं नियच्छतु स्वाहा ॥२४॥
 वाजस्य । प्रसवे । इमां । दिवमा । इमां । विश्वा । भुवनानि । शि
 श्रिये । सा । स्रष्टा । अदित्सन्तन्दापयति । प्रज्ञानस । दापयति । ने ।
 सर्वं वीरमा । रयिं । नियच्छतु । स्वाहा ॥२४॥

अथाधिदैवम् - दूसरा मंत्र

ओं वाजस्येत्यस्य (वसिष्ठ ऋ० आषीजगती छं० प्रजापतिर्दे०) १

पदार्थः - १२ अन्न के उत्पन्न करने वाले प्रजापति ने ३ इस पृथिवी ४
 स्वर्ग ५ इन ६ सव ७ प्राणियों को ८ अपने आत्मा से व्याप्त किया ९ वह १० स
 व भुवनों का राजा ११ सर्व स्वीकार से हवि देना चाहते मुझ को १२ जानता
 १३ उत्थान अवस्था में फिर हविर्दान कराता है १४ वह हमारे लिये १५ पुत्र
 भृत्य आदि से युक्त १६ धन को १७ दान करो १८ उसके लिये श्रेष्ठ होम हो १९

अथाध्यात्मम् - १ ब्रह्मांड रूप अन्न के २ उत्पन्न कर्ता महानारायण ने
 ३ इस मानस भूमि ४ भृकुटि ५ इन ६ सव ७ कमलों को ८ आत्मा रूप से व्याप्त
 किया ९ वह १० ब्रह्मांडों का स्वामी ११ पहले ही सधस्व दान से हवि देना
 चाहते मुझ को १२ जानता उत्थान अवस्थान में दान शक्ति के देने से १३
 फिर हविर्दान कराता है वह महानारायण १४ हमारे लिये १५ प्राण सहित
 १६ जीवन मुक्ति लक्ष्मी को १७ प्रदान करो १८ तत्त्व मसि इस महा वाक् के
 उपदेश से २४॥

वाजस्यनु प्रसव आव भूवे माच विश्वा भुवनानि सर्व
 ते । सनेमि राजा परि याति विद्वान्प्रजाम्पृष्टि वर्द्धय मा
 नो अस्मे स्वाहा २५
 न । वाजस्य । प्रसवे । इमां । विश्वा । भुवनानि । सर्वतः । आवभूव

च। स॒नु॒मि॑। वि॒द्वान्। राजा॑। अ॒स्मै। प्र॒जा॑। पु॒ष्टि॑। वर्ध॒य॑ मानः।
परि॒या॒ति। स्वा॒हा॑॥ २५॥ तीसरा मंत्र-

ओं वाजस्येत्यस्य (वसिष्ठ ऋ० सुराडार्षी त्रिष्टुप् छं० प्रजापति दे०) १

पदार्थः - १ आश्चर्य कि २ अन्न वा ब्रह्मांड के ३ उत्पन्न कर्त्ता महाना
रायण ने ४ इन ५ सब ६ भुवनों को ७ सब ओर से ८ उत्पन्न किया ९ और-
१० पुरातन ११ विद्वान् १२ जीवेश रूप १३ मुझ आत्म प्रति विंव में १४ पुत्र
आदि संतति वा प्राण को १५ तथा धन पुष्टि वा योगैश्चर्य पुष्टि को १६ व-
दाता दृष्ट्वा १७ उन भुवनों को सब ओर से व्याप्त करता है १८ वैदिक प्रमा-
ण से अथवा उसके लिये ऋष्ट होम हो ॥ २५ ॥

सोम॑ थं राजा॑नु म॒वसे॑ग्नि॒मुन्वा॑र॒भा स॒हे। आ॒दि
त्या॒न्वि॒ष्णु॑ थं सूर्य॑म॒ब्रह्मा॑ण॒श्च॒वृह॑स्पतिं स्वा॒हा॒ २६
राजा॑नुम॒। सोम॑ थं अ॒ग्निम्। आ॒दि॒त्यान्। सूर्य॑म्। वि॒ष्णु॑ थं।
ब्रह्मा॑णम्। च। वृह॑स्पतिम्। अ॒वसे॑। अ॒न्वा॒र॒भा स॒हे। स्वा॒हा॒ २६
आ॒या॒धि॒दैव॑म्- चौथा मंत्र-

ओं सोममित्यस्य (तापस ऋ० आर्ष्यनुष्टुप् छं० सोमादयो दे०) १

पदार्थः - १ राजा सोम २ अग्नि ३ द्वादशादित्य ४ सूर्य ५ विष्णु ७ ब्रह्मा
८ और ९ वृहस्पति को १० रक्षा वा तर्पण के लिये ११ आवाहन करते हैं १२
उनके लिये ऋष्ट होम हो ॥ २६ ॥

अथाध्यात्मम् - समाधि में देव भाव प्राप्त करने वाले आत्म प्रति-
विंव आदि को आवाहन करता है १ दीप्ति मान २ प्रति विंव ३ जाठर अग्नि ४
इन्द्रिया ५ जीवात्मा ६ ईश ७ मन ८ और ९ प्राण को १० संसार से रक्षा करने के
लिये ११ हम आवाहन करते हैं १२ गुरु के उपदेश से ॥ २६ ॥

अ॒र्य्य॑ म॒णाम्। वृह॑स्पति॒मिन्द्र॑त्त॒नाय॑ चोदय। वाचं॑

विष्णुं सरस्वतीं सुवितारं च वाजिनं स्वाहा २७
वाजिनम् । अर्यमाणां । बृहस्पतिम् । इन्द्रम् । वाचं । सरस्वतीं । विष्णुं । च । सवितारम् । दानाय । चोदय । स्वाहा २७
अथाधिदैवम् - पांचवां मंत्र

ओं अर्यमाणां मित्यस्य (तापसऋ० स्वराडार्घ्यं नुष्टुप्० अर्यमाद्यादेः) १

पदार्थः - हे महानारायण तूम् १ इन्द्र अन्नवान् २ अर्यमा ३ बृहस्पति ४ देवराज इन्द्र ५ वागाधिष्ठात्री ६ सरस्वती ७ विष्णु ८ और सूर्य को ९ धनप्रदान के लिये ११ प्रेरणा करो १२ उन्के लिये श्रेष्ठ होम हो ॥ २७ ॥

अथाध्यात्मम् - हे महानारायण तूम् १ देह रूप अन्न वाले २ मन ३ प्राण ४ जीवात्मा रूप यजमान ५, ६ सरस्वती रूप वाणी ७ ईश ८ और ९ प्रतिविम्ब को १० अपनी शक्तिदान के लिये ११ प्रेरणा करो १२ अपने उपदेश से ॥ २७ ॥

अग्ने अच्छावदेह नः प्रतिनः सुमना भव । प्रनो यच्छ सहस्रजित्वं हि धुन दा असि स्वाहा ॥ २८ ॥
अग्ने । देहा । नः । अच्छ । आवदा । नः । प्रति । सुमनाः । भुवा । सहस्रजित् । त्वं हि । धनदा । असि । नः । प्रयच्छ । स्वाहा ॥ २८ ॥

अथाधिदैवम् - छठा मंत्र

ओं अग्न इत्यस्य (तापसऋ० भुरिगार्घ्यं नुष्टुप्० अग्निर्देः) १

पदार्थः - हे अग्ने २ इस यज्ञ में ३ हमारे हित को ४ सन्मुख आकर ५ कहो ६, ७ हमारे ऊपर ८ करुणा दे चित्त ९ हो १० हे वृद्ध धन के जेता ११, १२ तूम् ही १३ धन के दाता १४ हो १५ हमारे लिये १६ धन दीजिये १७ उस तूम् के लिये श्रेष्ठ होम हो ॥ २८ ॥

अथाध्यात्मम् - हे ब्रह्माग्नि २ इस विषय होम यज्ञ में ३ हमारे ४ सन्मुख आकर ५ तत्त्व मसि महा वाक् को कहो ६, ७ हमारे ऊपर ८

करुणाद्रिचिन्तो १० हेअखंड ब्रह्मांडों केजेता ११ १२ तुमही १३ योग ल-
क्ष्मी के दाता १४ हौ १५ हम योगियों के लिये १७ योग धन दीजिये १७ म-
हावाक् के उपदेश से ॥ २८ ॥

प्रनो यच्छ त्वय्य मा प्र पूषा प्र बृहस्पतिः । प्र वा
ग्देवी ददातु नः स्वाहा ॥ २९ ॥
१ अर्यमा २ नः । ३ प्रयच्छतु । ४ पूषा । ५ प्र । ६ बृहस्पतिः । ७ प्रादेवी । ८ वाक्
नः । ९ प्रददातु । स्वाहा ॥ २९ ॥

अथाधिदैवम् - सातवां मंत्र-
ओं प्र न इत्यस्य (तापस ऋ० भुरिगार्षी गायत्री छं० वागादयो दे०) १
पदार्थः - १ अर्यमा देवता २ हमारे लिये ३ अभीष्ट दान करो ४ पूषा देव-
ता ५ अभीष्ट दान करो ६ बृहस्पति ७ अभीष्ट दान करो ८ दीप्यमान ९ वाक्
१० हमारे लिये ११ अभीष्ट दान करो १२ उनके लिये ओष्ठ होम हो ॥ २९ ॥

अथाध्यात्मम् - १ मन २ हम योगियों के लिये ३ इन्द्रिय जय प्राप्त-
कराओ ४ प्रति विंश ५ इन्द्रिय जय प्राप्त कराओ ६ प्राणा ७ इन्द्रिय जय
प्राप्त कराओ ८ देव सम्बन्धिनी ९ महावाक् १० हमारे लिये ११ मोक्ष दान
करो १२ गुरु के उपदेश से ॥ २९ ॥

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवे श्विनोर्वाहभ्याम्पूषा
हस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै वाचो यन्तु र्यन्त्रिये दधा-
मि बृहस्पतेष्टा साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ ३०
सवितुः । देवस्ये । प्रसवे । त्वा । श्विनोः । वाहभ्याम् । पूषाः
हस्ताभ्याम् । बृहस्पतेः । साम्राज्येन । अभिषिञ्चामि ।
त्वा । सरस्वत्यै । वाचः । यन्तुः । यन्त्रिये । दधामि । असौ ॥ ३० ॥
अथाधिदैवम् - इत शेष द्रव्यसेयजमान को सींचता है उसका मंत्र

ओंदेवस्येत्यस्य (तापसऋ० आर्षीजगती छं० सम्राट् दे०) १

पदार्थः— हे यजमान १ सविता २ देवता की ३ आज्ञा में वर्त्तमान में ४ तुमको ५ अश्विनी कुमार के ६ वाङ्मय भाव को प्राप्त अपनी भुजाओं ७ और पूषा देवता के ८ हस्त भाव को प्राप्त अपने हाथों से ९ वह स्पति सम्बन्धी १० साम्राज्य द्वारा ११ अभिषिक्त करता हूँ १२ तुम को १३ भक्ति ज्ञान दाता कचन के लाभार्थ १४, १५ ध्यान के १६ ऐश्वर्यार्थ १७ आसन स्थ करता हूँ हे देवताओं १८ यह सम्राट् है इस को रक्षा करौ ॥ ३० ॥

अथाध्यात्मम्— गुरु कहता है, हे योगिन् १२ ईश्वर की ३ आज्ञा में वर्त्तमान में ४ तुमको ५ हृदय मन की ६ भुजाओं ७ और मानस सूर्य के ८ हाथों से ९ प्राण के १० साम्राज्य में ही ११ अभिषिक्त करता हूँ १२ तुमको १३ महा वाक् के लाभार्थ १४, १५ समाधि के १६ ऐश्वर्य में १७ स्थापन करता हूँ हे ब्रह्म परा महानारायणो १८ यह वह सम्राट् है उसको रक्षा करो ॥ ३१ ॥

अग्निरेकाक्षरेण प्राणमुदजयन्नुज्जैषमश्विनौ
द्व्यक्षरेण द्विपदो मनुष्यानुदजयन्तानुज्जैषं वि
ष्णुस्त्र्यक्षरेण त्रीन् लोकानुदजयन्तानुज्जैषं सो
मश्चतुरक्षरेण चतुष्पदः पशूनुदजयन्तानुज्जैषम ३१
अग्निः। एकाक्षरेण। प्राणम्। उदजयन्तम्। उज्जैषम्।
अश्विनौ। द्व्यक्षरेण। द्विपदः। मनुष्यान्। उदजयन्तान्।
तान्। उज्जैषम्। विष्णुः। त्र्यक्षरेण। त्रीन् लोकान्। उदज-
यन्तान्। तान्। उज्जैषम्। सोमः। चतुरक्षरेण। चतुष्पदः। पशून्।
उदजयन्तान्। तान्। उज्जैषम् ॥ ३१ ॥

उज्जित नाम १७ मंत्रों से होम करता है वा उन को पढ़ता है उन में चार मंत्र
ओं अग्नि+विष्णु रिति मंत्रयोः (तापसऋ० निच दाषीगायत्री वा साम्नीरुहती छं०
सिं० दे० १३)

ओंअश्विनो + सोमेति मंत्रयोः (तापसऋ० साम्नीविष्टप० लि० दे०) २, ४

पदार्थः - ईश्वर का कर्तृत्व मुख्य और अपना गोण है उस को कहते हैं
 १ ब्रह्माग्नि ने २ परा शक्ति द्वारा ३ प्राण को ४ जय किया; परा का अंश भूत
 में भी ५ उसी जीते हुए प्राण को ६ जीतूं अर्थात् वश में करूं ७ पृथिवी और
 स्वर्ग ने ८ वर्षा और अन्न रूप दो अक्षर से ९ द्विपाद १० मनुष्यों को ११ जी-
 ता में भी १२ उन मनुष्यों को देवता के दिये हुए अन्न पान द्वारा १३ भले प्र-
 कार जीतूं १४ विष्णु ने १५ नर पशु जल चर अवतार रूप तीन अक्षर से
 १६ तीन १७ लोकों को १८ जीता में भी १९ उन जीते हुए लोकों को २०
 जीतूं २१ अन्न रूप चन्द्र माने २२ चतुर्विध अन्न के द्वारा २३ चतुष्पद २४
 पशुओं को २५ जीता में भी घास आदि के दान से २६ उन जीते हुए पशु-
 ओं को २७ जीतूं ॥ ३१ ॥

पूषा पञ्चाक्षरेण पञ्च दिश उदजयता उज्जै
 षथं सविता षडक्षरेण षट् तूनुदजयतानुज्जै
 षम्भुरुतः सप्ताक्षरेण सप्त ग्राम्या न्यभूनुद
 जयथं स्तानुज्जै षमृहस्पतिरष्टाक्षरेण गाय
 त्रीमुदजयता मुज्जै षम् ३२

पूषा। पञ्चाक्षरेण। पञ्च दिशः। उदजयत। ताः। दिशः।
 उज्जै षथं। सविता। षडक्षरेण। षट्। तूनुदजयत।
 तानु। उज्जै षम्। मरुतः। सप्ताक्षरेण। सप्त। ग्राम्यान्। न्यभूनुद
 जयत। तान्। उज्जै षम्। मृहस्पतिः। अष्टाक्षरेण। गाय-
 त्रीम्। उदजयत। ताम्। उज्जै षम् ॥ ३२ ॥

इस कंडिका में उज्जिति नाम ४ मंत्र हैं-

ओं पूषा + सवितेति मंत्रयोः (तापसऋ० निचत्साम्नीपक्ति ऋ० लि० दे०) १, ३

ओं मरुत इत्यस्य (तापस ऋ० साम्नी विष्टु पृच्छं० लिङ्गोक्त दे०) ३

ओं वहस्पति रित्यस्य (तथा० साम्नी पंक्ति ऋ० तथा०) ४

पदार्थः— १ सूर्यने २ प्रकाश ताप, आकर्षण, वर्षा अन्न परिपाक नाम कर्म के द्वारा ३, ४ पूर्व आदि चार दिशा और अवांतर दिशा को ४ भले प्रकार जीता सूर्य का अंश में भी ५ उन ६ दिशाओं को ७ यथा शक्ति दान से जीतूँ ८ सूर्य ने ९ छै प्रकार के प्रकाश से १० छै ११ ऋतुओं को १२ जीता मैं भी १३ उन ऋतुओं को १४ शीत ताप वर्षा के सहने से जीतूँ १५ वायु ने १६ प्रवह आदि सात रूप से १७, १८ भू आदि सात लोक में उत्पन्न १९ प्राणियों को २० जीता मैं भी प्राणायाम में षट्चक्र वेध द्वारा सहस्रदल कमल के प्राप्त होने पर २१ उन प्राणियों को २२ जीतूँ २३ वहस्पति ने २४ सम व्याहृति सहित प्रणव द्वारा २५ गायत्री को २६ जीता २७ उस गायत्री को जप द्वारा २८ भले प्रकार जीतूँ २९॥

मित्रेन वाक्षरेण विवृतं स्तोमं मुदजयन्ता मुज्जेषं
वरुणे दशाक्षरेण विराजं मुदजयन्ता मुज्जेषं मिन्द्र ए
कादशाक्षरेण विष्टुभं मुदजयन्ता मुज्जेषं विश्वे देवा
द्वादशाक्षरेण जगतीं मुदजयन्ता मुज्जेषं ॥ ३३ ॥
मित्रेन वाक्षरेण विवृतं स्तोमं मुदजयन्ता मुज्जेषं
वरुणे दशाक्षरेण विराजं मुदजयन्ता मुज्जेषं मिन्द्र एका
दशाक्षरेण विष्टुभं मुदजयन्ता मुज्जेषं विश्वे देवा
द्वादशाक्षरेण जगतीं मुदजयन्ता मुज्जेषं ॥ ३३ ॥
इस कड़िका में उज्जित नाम ४ मंत्र हैं ॥

ओं मित्र इत्यस्य (तापस ऋ० माजा प्रत्या वहती छं० लिङ्गोक्त दे०) १

ओं वरुण इत्यस्य (तथा० निवृत्ता साम्नी वहती छं० तथा०) २

ओं इन्द्र इत्यस्य (तथा० साम्नी पंक्ति ऋ० तथा०) ३

ओं विश्वे देवा इत्यस्य (तापसऋ० शार्ङ्गुषाक्छं० लिङ्गोक्तदे०) ४

पदार्थः - १ सूर्यने २ नवधा भक्ति के दान से ३ त्रिगुणमय ४ स्तोत्र को ५ जीता सूर्याशमैभी ६ उस त्रिगुणमय स्तोत्र को ७ जीतूँ ८ वरुणने ९ दश अनाहत काज्ञान देने से १० माया वि कार ब्रह्मांड को ११ जीता १२ उस ब्रह्मांड को १३ योग शक्ति से जीतूँ १४ मध्यान्ह सवन के देवता इन्द्रने १५ दश इन्द्रिय और मन के आत्मत्व संपादन से १६ मध्यान्ह सवन के छन्दो भिमानी देवता को १७ जीता १८ मैभी उस देवता को १९ जीतूँ २० तीसरे सवन के देवता विश्वे देवाओं ने २१ इन्द्रिय मन बुद्धि के आत्मत्व संपादन से २२ तीसरे सवन के छन्दो भिमानी देवता को २३ जीता २४ मैभी उस देवता को २५ जीतूँ ॥ ३३ ॥

वसवस्त्रयो दशाक्षरेण त्रयो दश थं स्तोममुदजय थं
स्तमुज्जेष थं रुद्राश्चतुर्दशाक्षरेण चतुर्दशं स्तोममुद
जय थं स्तमुज्जेष आदित्याः पञ्च दशाक्षरेण पञ्च द
श थं स्तोममुदजय थं स्तमुज्जेष मदितिः षोडशाक्षरे
ण षोडश थं स्तोमुदजय तमुज्जेष म्रजापतिः सप्त दशा
क्षरेण सप्त दश स्तोममुदजय तमुज्जेषम् ॥ ३४ ॥

वसवः। त्रयो दशाक्षरेण। त्रयो दश थं। स्तोमम्। उदजयन्। तमे।
उज्जेषम्। रुद्राः। चतुर्दशाक्षरेण। चतुर्दश थं। स्तोमम्। उदजय
न्। तमे। उज्जेषम्। आदित्याः। पञ्च दशाक्षरेण। पञ्च दश थं।
स्तोमम्। उदजयन्। तमे। उज्जेषम्। मदितिः। षोडशाक्षरेण। षोड
श थं। स्तोमम्। उदजयन्। तमे। उज्जेषम्। म्रजापतिः। सप्त दशा
क्षरेण। सप्त दश थं। स्तोमम्। उदजयन्। तमे। उज्जेषम् ॥ ३४ ॥

इस कंडिका में उज्जित नाम ५ मंत्र हैं ॥

ओं वसवः + आदित्या इति मंत्रयोः (तापसऋ० शार्ङ्गनुष्टुप्छं० लिङ्गोक्तदे०) १३

ओंरुद्रा इत्यस्य (तापस ऋ० भुरिगाम्नीविष्टुप छं० लिङ्गोक्त दे०) २

ओंअदितिरित्यस्य (तथा ० साम्नीविष्टुप छं० तथा) ३

ओंप्रजापतिरित्यस्य (तथा ० भुरिगाधीगायत्री छं० तथा) ५

पदार्थः—हे प्रातः सवन के देवता वसुधों ने २ दश इन्द्रिय मन बुद्धि और आत्म प्रति विंव के आत्मत्व संपादन से ३ प्रधान महत् अहंकार स्थूल सूक्ष्म तत्व के ४ समूह को ५ जीता ६ उस प्रधान आदि के समूह को ७ भले प्रकार जीतू ८ माध्यन्दिन सवन के देवता रुद्रों ने ८ चतुर्दश इन्द्रियों के आत्मत्व सम्पादन से १० ११ चतुर्दश भुवन के समूह को १२ जीता १३ उस चतुर्दश भुवन के समूह को १४ भले प्रकार जीतू १५ तीसरे सवन के देवता आदित्यों ने १६ चतुर्दश इन्द्रिय और आत्म प्रति विंव के आत्मत्व संपादन से १७, १८ चतुर्दश भुवनों के ऊपर स्थित वैकुण्ठ को १९ जीता २० उस वैकुण्ठ को २१ भले प्रकार जीतू २२ पराशक्ति ने २३ चतुर्दश इन्द्रिय जीव ईश्वर के ब्रह्मत्व संपादन से २४, २५ षोडश कलावतार विष्णु को २६ जीता २७ उस विष्णु को २८ भले प्रकार जीतू २९ ब्रह्म वा महानारायण ने ३० चतुर्दश इन्द्रिय जीव ईश्वर के ब्रह्मत्व संपादन से ३१, ३२ सप्तदशा वायव वाले लिङ्ग शरीर को ३३ जीता ३४ उस लिंग देह को ३५ भले प्रकार जीतू अर्थात् कैवल्य मोक्ष को प्राप्त करूँ जैसा श्रुति में लिखा है जो वाजपेय यज्ञ करता है वह यह सब होता है वह इस सब को जीतता है प्रजापति को ही जीतता है क्योंकि यह ब्रह्मांड प्रजापति ही है ॥ ३४ ॥ इति वाजपेय मंत्राः समाप्ताः

अथ राज सूय मंत्राः

एष ते नि ऋते भागस्तज्जुषस्व स्वाहाग्निनेत्रेभ्यो देवेभ्यः
पुरः सद्यः स्वाहायुमनेत्रेभ्यो देवेभ्यो दक्षिणा सद्यः स्वा
हा विश्वदेवनेत्रेभ्यो देवेभ्यः पश्चात् सद्यः स्वाहामित्रा
वरुणनेत्रेभ्यो वामरुनेत्रेभ्यो वा देवेभ्य उत्तरा सद्यः स्वा

हासोमनेत्रेभ्यो देवेभ्य उपरिसद्भ्यो दुवस्वद्भ्यः स्वाहा ३५
 निर्वर्तते। एषा ते। भागः। तम। जुषस्व। स्वाहा। अग्निनेत्रेभ्यः। पुरः स
 द्भ्यः। देवेभ्यः। स्वाहा। यमनेत्रेभ्यः। दक्षिणा सद्भ्यः। देवेभ्यः। स्वाहा
 विश्वे देवनेत्रेभ्यः। पश्चात्सद्भ्यः। देवेभ्यः। स्वाहा। वा। उत्तरो सद्भ्यः
 मित्रावरुणेनेत्रेभ्यः। वा। मरुत्नेत्रेभ्यः। देवेभ्यः। स्वाहा। सोमने
 त्रेभ्यः। दुवस्वद्भ्यः। उपरिसद्भ्यः। देवेभ्यः। स्वाहा॥ ३५॥

अथाधितैवम् - इस कंडिका में ६ मंत्र हैं उन को कहते हैं फाल्गुण कृ-
 ष्णा दशमी के दिन अनुमती देवी के लिये अष्टा कपाल पुरोडाश होता है उस
 के लिये गृहीत हवि के पेषण समय हव्य के नीचे रक्वी ङई शम्या के पिछले
 भाग में जो तडुल पिष्ट रूप हवि गिर उस को खुवा में रख कर दक्षिणाग्नि से उ-
 त्मुख को लेकर दक्षिण दिश में जाकर स्वयं स्फुटित भू भाग बाऊपर में उत्मुख काग्नि
 को स्थापन कर के उस हवि को होमता है उसका मंत्र १ पंचवा तीयनाम आह
 वनीय को पूर्व आदि दिशा और मध्य में स्थापन कर खुवा से पांचों अग्नि में हो
 म करता है उसके मंत्र २ से ६ तक

ओं एषत अग्निनेत्रेभ्य इति मं० (वरुणा ऋ० सामान्युषिकं० पृथिवी दे०) १

ओं यमनेत्रेभ्य इत्यस्य (तथा ० आसुरी गायत्री छं० देवा दे०) २

ओं विश्व देवनेत्रेभ्य इत्यस्य (तथा ० सामान्य नष्टपं छं० तथा) ३

ओं मित्रावरुणनेत्रेभ्यः (तथा ० भुरिगार्गी गायत्री छं० तथा) ४

ओं सोमनेत्रेभ्यः (तथा ० भुरिक साम्नी बृहती छं० तथा) ५

पदार्थः - १ हे पृथिवी २ यह पिष्ट रूप ३ तेरा ४ भाग है ५ उसको ६ सेवन
 कर ७ अष्ट होम हो ८ अग्नि है नेता जिन का ९ जो पूर्व दिशा में रहते हैं १० उ-
 न देवताओं के लिये ११ अष्ट होम हो १२ जिन का नेता यम है १३ और जो दक्षि-
 ण दिशा में रहते हैं १४ उन देवताओं के लिये १५ अष्ट होम हो १६ जिन का

नेता सूर्य है १७ और जो पश्चिम दिशा में रहते हैं १८ उन देवताओं के लिये १९
 ओष्ठ होम हो २० अथवा २१ जो उत्तर दिशा में रहते हैं २२ और जिन का नेता मि
 त्रा वरुण है २३ वा २४ जिन का नेता मरुत है २५ उन देवताओं के लिये २६
 ओष्ठ होम हो २७ जिन का नेता सोम है २८ और जो अन्नवान २९ और ऊपर स्थि
 त हैं ३० उन देवताओं के लिये ३१ ओष्ठ होम हो ॥ ३५ ॥

अथाध्यात्मम् - राजः ऋषि के इन्द्रिय संस्कार को कहते हैं हे पा
 प पुरुष २ यद्वा काम ३ तेरा ४ भाग है ५ उसको ६ सेवन कर ७ महा वाक् द्वारा
 ८ आत्मा जिन का नेता है ९ और जो पूर्व और स्थित हैं १० उन इन्द्रियों के लि
 ये ११ महा वाक् १२ मन जिन का नेता है १३ और जो दक्षिण दिशा में स्थित हैं १४
 उन मनो वृत्तियों के लिये १५ महा वाक् १६ विश्व प्रकाशक सूर्य जिन का नेता
 है १७ और जो पश्चिम और स्थित हैं १८ उसनेत्र वृत्तियों के लिये १९ महा वा
 क् २० वा २१ जो उत्तर में स्थित हैं २२ और जिन के नेता प्राण उदान हैं २३ अथ
 वा २४ जिन का नेता समष्टि प्राण है २५ उन प्राण वृत्तियों के लिये २६ महा वा
 क् २७ जिन का नेता वाक् है २८ और जो भक्ति ज्ञान ब्रह्मा विष्णु महेश श्री
 र महानारायण से सम्पन्न २९ और ऊपर स्थित हैं ३० उन वाग वृत्तियों के लि
 ये ३१ महा वाक् ॥ ३५ ॥

ये देवाः अग्निनेत्राः पुरः सदस्तेभ्यः स्वाहा ये देवाय
 मनेत्रा दक्षिणा सदस्तेभ्यः स्वाहा ये देवाः विश्वदे
 वनेत्राः पश्चात् सदस्तेभ्यः स्वाहा ये देवा मित्रा वरु
 णनेत्रा वामरुन्नेत्रा वोत्तरा सदस्तेभ्यः स्वाहा ये
 देवाः सोमनेत्रा उपरि सदो दुर्वस्त्वन्तस्तेभ्यः स्वाहा ३६
 ये देवाः अग्निनेत्राः पुरः सदस्तेभ्यः स्वाहा ये देवाः यम
 नेत्रा दक्षिणा सदस्तेभ्यः स्वाहा ये देवाः विश्वदेवनेत्राः

^{१६}पश्चात्सदः। ^{१७}तेभ्यः। ^{१८}स्वाहा। ^{१९}यो देवाः। ^{२०}मित्रावरुणनेत्राः। ^{२१}वा। ^{२२}मरु
^{२३}नेत्राः। ^{२४}वा। ^{२५}उत्तरासदः। ^{२६}तेभ्यः। ^{२७}स्वाहा। ^{२८}यो देवाः। ^{२९}सोमनेत्राः। ^{३०}दु
^{३१}वस्वन्तः। ^{३२}उपरि सदः। ^{३३}तेभ्यः। ^{३४}स्वाहा ॥ ३६ ॥

पांच प्रकार से विभक्त आहवनीय अग्नि को एक करके ५ मंत्रों से होम क
 रता है ॥

जे ये देवा इत्यस्य (वरुण ऋ० आसुरी गायत्री प्राजापत्यानुष्टुप्भुरिग्प्राजापत्या
 अनुष्टुप् आर्च्यनुष्टुप् प्राजापत्या वृहतीळं देवादे) १५

पदार्थः - हवि वा इन्द्रियों को होमता है १ जो २ देवता अग्नि को नेता रखने
 वाले ४ और पूर्व दिशा में स्थित हैं ५ उन के लिये ६ हवि वा इन्द्रिय समूह का
 ओष्ठ होम हो ७ जो ८ देवता अथम को नेता रखने वाले ९ दक्षिण दिशा में स्थि
 त हैं १० उन के अर्थ ११ हवि वा मनो वृत्ति समूह का होम हो १२ जो १३ सूर्य किर
 ण रूप देवता १४ सूर्य को स्वामी रखने वाले १५ पश्चिम दिशा में स्थित हैं उन
 के अर्थ १६ हवि अथवानेत्र वृत्ति समूह का होम हो १७ जो १८ देवता १९ मि
 त्रावरुण को नायक रखने वाले २० अथवा २१ मरुत देवता को स्वामी रखने
 वाले २२ और २५ उत्तर दिशा में स्थित हैं २६ उन के लिये २७ हवि अथवा
 प्राण वृत्ति समूह का होम हो २८ जो २९ देवता ३० सोम को नायक रखने वा
 ले ३१ हवि से सस्पन्त ३२ ऊपर की दिशा में स्थित हैं ३३ उन के लिये ३४ हवि
 अथवा वाग् वृत्ति समूह का होम हो ॥ ३६ ॥

अग्ने सहस्र एतना अभि मांतीर पास्य। दुष्टरस्त

स्त्रु रातीर्वर्चं वा यज्ञं वाहसि ॥ ३७ ॥

अग्ने। एतना। सहस्र। अभि मांती। अपास्या दुष्टरः। अराती।
 तरन्। यज्ञं वाहसि। वर्चः। धेहि ॥ ३७ ॥

अथाधिदैवम् - अपा मार्ग तण्डुल होम के लिये दक्षिणाग्नि से उ

लमुक को ग्रहण करता है उसका मंत्र
 ओं अग्न इत्यस्य (देव अवा देव वात ऋ० भुरि गार्घ्यनुष्टुप छं० अग्निर्दे०) १

पदार्थः - हे अग्नि तुम २ शत्रु सेनाओं को ३ हराओ ४ द्रोह कारक स्त्रियों
 को ५ हराओ ६ अजेय तुम ७ शत्रुओं को ८ तिरस्कार वा निनाश करते ९
 यज्ञ करता यज्ञ मान के पास १० अन्न को ११ धारण करो ॥ ३७ ॥

अथाध्यात्मम् - हे ब्रह्माग्ने तुम २ काम सेना को ३ जय करो ४ द्रोह
 शील स्त्रियों को ५ निवृत्त करो ६ और अजेय तुम ७ भोगों को ८ तिरस्कार
 करते ९ आत्मा रूप यज्ञ मान में १० आत्म प्रति विंव को ११ धारण करो ॥ ३७ ॥

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवे शिवनो वृद्ध भ्याम्पूषो ह
 स्ताभ्याम् । उपा २० शो वीर्येण जुहोमि हतं रक्षः
 स्वाहा रक्ष सान्त्वा वधाया वधिष्म रक्षो वधिष्मामु

मसौ हतः ॥ ३८ ॥
 सवितुः । देवस्य । प्रसवे । अश्विनोः । वृद्धभ्याम् । पूषोः । हस्ताभ्या
 म् । त्वा । उपा २० शोः । वीर्येण । जुहोमि । रक्षः । हतं २० स्वाहा । र
 क्षसाम् । वधाया । त्वा । रक्षः । अवधिष्म । अमुम् । अवधिष्म । अ
 सौ । हतः ॥ ३८ ॥

अथाधिदैवम् - इस कंडिका में तीनों मंत्र हैं उनको कहते हैं पूर्व वा
 उत्तर जाकर ग्रहण किये हुए लमुक को स्थापन करके खुवा से अपामो
 गीत बुल को होमता है उसका मंत्र १ जिस दिशा में होम करता है उसमें खुवा
 को डालता है उसका मंत्र २ अश्वर्यु आदि पीछे को न देखते देव यज्ञ स्थान में
 आते हैं उसका मंत्र ३
 ओं देवस्येत्यस्य (देव वात ऋ० निष्ट द्राह्मी गायत्री छं० रक्षोघ्नो दे०) १
 ओं रक्षसामित्यस्य (तथा ० यानुष्युषिाका ३ छं० तथा) २

ओं अविधिष्येत्यस्य (देव वात ऋ० साम्न्युषिां क छं० रक्षोघ्नो दे०) ३

पदार्थः— हे अषपा मार्ग तंडुलो १ सविता २ देवता की ३ आज्ञा में वर्तमान मैं ४
आश्विनी कुमार की ५ वाह्य भाव को प्राप्त अपनी भुजाओं ६ और पूषा देवता के ७
हस्त भाव को प्राप्त अपने हाथों से ८ तुम्हें को ९ उपांशु नाम प्रथम ग्रह के १० सा
मर्थ्य से ११ होमता हूँ इसी कारण १२ राक्षस जाति १३ मारी गयी १४ ओष्ठ होम
हो हे सुवा १५ राक्षसों के १६ नाशार्थ १७ तुम्हें डालता हूँ १८ राक्षस जाति को
१९ हमने मारा २० अमुक नाम शत्रु २१ मारा २२ यह शत्रु २३ मारा गया ॥ ३८ ॥

अथाध्यात्मम्— हे इन्द्रिय शक्ति समूह १२ गुरु देवता की ३ आज्ञा में
वर्तमान मैं ४ हृदय मन की ५ ग्रहण शक्तियों ६ और मानस सूर्य की ७ ग्रहण
शक्तियों से ८ तुम्हें को ९ प्राण की १० सामर्थ्य से ११ होमता हूँ इसी कारण १२
काम रूप राक्षस १३ मारा १४ मंत्र द्वारा हे प्राण १५ काम आदि के १६ नाशार्थ १७
तुम्हें छोड़ता हूँ १८ काम को १९ मारा २० अमुक नाम वाले काम को २१ मारा २२
यह काम २३ मारा गया ॥ ३८ ॥

सविता त्वा सदानां सुवता मग्नि गृहपतीनां सोमो वनस्पतीनाम् ।
वहस्पतिर्वीच इन्द्रो ज्यैष्ठ्याय रुद्रः पशुभ्यो मित्रः सत्यो वरुणो धर्मपतीनाम् ॥ ३९ ॥
सविता । सवानां । त्वा । सुवताम् । अग्निः । गृहपतीनां । सोमः ।
वनस्पतीनाम् । वहस्पतिः । वीच । इन्द्रः । ज्यैष्ठ्याय । रुद्रः । पशु-
भ्यः । मित्रः । सत्यः । वरुणः । धर्मपतीनाम् ॥ ३९ ॥

अथाधिदैवम्— वारुण चरु के साथ चूल कर और यज्ञमान के समीप
जा कर स्तुच को दाहिने हाथ में लेकर यज्ञमान की दाहिनी वाह्य को पकड़-
कर दो कंडिका के मंत्र को पढ़ता है और यज्ञमान के माता पिता और उस देश
कानामें जिस का वह राजा होता है लेता है उसका मंत्र ॥ ३९ ॥

ओं सवितेत्यस्य (देववात ऋ० अतिजगती क० यजमानो दे०) १
 पदार्थः - हे यजमान १ सूर्यदेवता २ आन्ताओ के आधिपत्य में ३ तुम्ह को
 ४ प्रेरणा करो ५ अग्निदेवता ६ गृहस्थियों के आधिपत्य में ७ वदमा वनस्प
 तियों के आधिपत्य में ८ बृहस्पति १० वाणी के लिये ११ इन्द्र १२ ज्येष्ठता के लिये
 १३ रुद्रदेवता १४ पशुओं के लिये वा पशुओं के आधिपत्य में १५ और ब्रह्मा १६
 विष्णु १७ नरनामदेवता १८ धर्म श्वर धर्म शील पुरुषों के आधिपत्य में तुम्ह को
 प्रेरणा करो ॥ ३६॥

अथाध्यात्मम् - गुरु इति मन्त्रे आशीर्वाद देकर अगले मन्त्र में कहे गाहे
 आत्मा रूप यजमान १ मन २ योग यन्त्रों के आधिपत्य में ३ तुम्ह ४ प्रेरणा करो ५
 महावाक् ६ गृहस्थियों के आधिपत्य में ७ प्रतिविम्ब इन्द्रियों के आधिपत्य में
 ८ प्राणा १० सोह मन्त्र के जपार्थ ११ और योग बल १२ महत्व के लिये १३ और इ
 श्वर १४ भाणा के आधिपत्य में १५ और ब्रह्मा १६ विष्णु १७ और नरदेवता १८
 बुद्धि वृत्तियों के आधिपत्य में तुम्ह को प्रेरणा करो ॥ ३६॥

इमन्देवा असपत्नश्च सुवदुस्महतस्त्रायमहते
ज्येष्ठाय महते जान राज्या येन्द्रस्येन्द्रियार्यम्
मम मुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विश एष वीमी राजा
सोमोस्माकं ब्राह्मणानां राजा ॥ ४० ॥

देवाः। इमम्। इमम्। अमुष्य पुत्रम्। अमुष्यै। पुत्रम्। महते। स्त्रा
 वा। महते। ज्येष्ठाय। महते। जान राज्याय। इन्द्रस्य। वीर्यार्य
 अस्यै। विश। असपत्नश्च। सुवदुस्म। एषः। अमी। वी। राजा। अ
 स्माकम्। ब्राह्मणानां राजा। सोमः ॥ ४० ॥

अथाधिदैवम्

ओं इममित्यस्य (देववात ऋ० अत्यष्टि क० यजमानो दे०) १

पदार्थः-१ हे सूर्यादिदेवताओ २ इस अमुक नाम वाले ३ विद्या बुद्धि और कीर्ति से सम्पन्न तथा ४ अमुक राजा के पुत्र ५ अमुक रानी के लिये ६ पुन्नामनरक से रक्षा करने वाले यजमान को ७ वडी ८ स्रज पदवी ९ वडे १० महत्व ११ वडे १२ नराधिपत्य के लिये तथा १३ देवेन्द्र के तुल्य १४ बल के लिये तथा १५ इस १६ अमुक देश अमुक जाति वाली प्रजा पालन के लिये १७ जैसे शत्रु रहित हो तैसेही १८ प्रेरणा करो हे अमुकामुक देशो १९ यह २० संसार रोग से ग्रस्त अमुक स्रज २१ तुम्हारा २२ राजा है २३ हम २४ ब्राह्मणों का २५ राजा तो २६ सूर्य ब्रह्मा विष्णु महेश का रूप धारण करने वाला महा विष्णु है ॥ ४० ॥

अथाध्यात्मम्- १ हे वाक् आदि देवताओ २ इस ३ विद्या बुद्धि और निवृत्ति से सम्पन्न ४ अमुक गुरु के पुत्र ५ अमुक गायत्री के लिये ६ पुत्र सम्मान लाल नीय योगी को ७ वडी ८ राजर्षि पदवी ९ वडे १० महत्व ११ वडे १२ प्राणाधिपत्य के लिये तथा १३ ईश तुल्य १४ पराक्रम के लिये तथा १५ इस १६ व्यष्टि समष्टि रूप ब्रह्म पुरी के आधिपत्यार्थ १७ जैसे काम रूप शत्रु से रहित हो तैसेही १८ प्रेरणा करो हे इन्द्रिय गोल को १९ यह २० संसार रोग से ग्रस्त देह २१ तुम्हारा २२ राजा है २३ हम २४ ब्रह्म ज्ञानी योगियों का २५ राजा तो २६ महानारायण है ॥ ४० ॥

इति श्री भृगु वंशावतंस श्री नाथू राम सूनु ज्वाला प्रसाद शर्मा कृते शुक्ल यजुर्वेदीय ब्रह्म भाष्ये वाजपेयो राजसूयारंभोत्तोनवमोऽध्यायः ॥ ६॥
नवमे अध्याय में वाजपेय यज्ञ और राजसूय सम्बन्धी कितने ही कर्म कहे अव दशवे अध्याय में अभिषेक के लिये जल लाना आदि राजसूय के शेष कर्म और चरक सौत्रा मणी यज्ञ को कहते हैं ॥

हरिः ओं आपो देवा मधुमती रगृभान्नूर्ज स्वती राजः
स्वाश्रितानः । यामिर्मित्रा वरुणा वभ्य पिञ्चुन्या
भिरिन्द्र मनयन्त्यरातीः १

देवाः। मधुमेनीः। ऊर्जस्वनीः। राजस्वः। चित्तानाः। अरुपः। अगृभानाः।
 याभिः। मित्रावरुणौ। अभ्यषिञ्चन्। याभिः। अरातीः। अति। इन्द्र
 म। अनयन्॥ १॥

अथाधिदैवम् - औदुम्बर पात्र में सरस्वती नदी के जल को ग्रहण कर
 ता है उसका मंत्र॥

ओं आपो देवा इत्यस्य (वरुणा ऋ० निच दाषी विष्टु पृ० छ० आपो दे०) १

पदार्थः - १ इन्द्रादि देवताओं ने २ मधुर स्वाद से युक्त ३ विशिष्ट अन्न रस
 वाले ४ राज्याभिषेक करने वाले ५ चेतयमान ६ जलों को ७ ग्रहण किया ८ और
 रजिन जलों से ९ मित्रावरुण देवताओं ने १० अभिषेक किया ११ जिन जलों से
 १२ शत्रुओं को १३ अतिक्रमण करके १४ इन्द्र देवता को १५ तीनों लोक के
 आधिपत्य पर प्राप्त किया मैं उन जलों को ग्रहण करता हूँ॥ १॥

अथाध्यात्मम् - १ वाक् आदि देवताओं ने २ ज्ञान वान ३ विराट् रूप अ
 न्न के रस से सम्पन्न ४ राजर्षि पद देने वाले ५ ज्ञान दाता ६ महा वाक् रूप जलों
 को ७ ग्रहण किया ८ जिन महा वाक् रूप जलों से ९ प्राण उदान को १० अभिषे
 क कराया ११ और जिन जलों के द्वारा १२ काम आदि शत्रुओं को १३ अतिक्रम
 ण करके १४ यज्ञमान को १५ ब्रह्म में प्राप्त किया उन महा वाक् रूप जलों को
 ग्रहण करता हूँ॥

वृषा ऊर्मि रसि राष्ट्रदा राष्ट्रम् देहि स्वाहा वृषा
 ऊर्मि रसि राष्ट्रदा राष्ट्रम् मुष्मै देहि। वृष सेनो सि
 राष्ट्रदा राष्ट्रम् देहि स्वाहा वृष सेनो सि राष्ट्रदा राष्ट्र
 मुष्मै देहि॥ २॥

१ वृषाः। २ राष्ट्रदाः। ३ ऊर्मिः। ४ रसि। ५ राष्ट्र। ६ मे। ७ देहि। ८ स्वाहा। ९ वृषाः। १० रा
 ११ राष्ट्रदाः। १२ ऊर्मिः। १३ रसि। १४ अमुष्मै। १५ राष्ट्र। १६ देहि। १७ वृष सेनः। १८ राष्ट्रदाः।

१८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६
 असि। राष्ट्रम। मे। देहि। स्वाहा। वृष सेनः। राष्ट्रदा। असि। राष्ट्रम।
 अमुष्मै। देहि॥२॥

अथाधिदैवम्- इस कडिका में ४ मंत्र हैं उन को कहते हैं सरस्वती के जल को लेकर अगले षोडश जल ग्रहण के विषय स्वाहात पूर्व २ मंत्रों से चार बार लिये हुए घृत को होमता है और स्वाहा हीम पिछले मंत्रों से उन जलों को क्रम पूर्वक ग्रहण करता है उसके मंत्र-

ओं वृषा ऊर्मिरिति मंत्रयोः (वसु ऋ० प्राजापत्यानुष्टुप छं० लि० दे०) १-२

ओं वृष सेन इति मंत्रयोः (तथा ० आसुरी गायत्री छं० तथा ०) ३-४

पदार्थः- हे कल्लोल (लहर) तुम १ सींचने वाले जलाशय की देश दा-

ता ३ कल्लोल ४ हो ५ देश को ६ मुझे ७ दीजिये ८ ओष्ठ होम हो इस प्रकार हो

म करके ग्रहण करता है हे कल्लोल तुम १ सींचने वाले जलाशय की १० देश

दाता ११ कल्लोल १२ हो १३ अमुक यजमान के लिये १४ देश को १५ दीजिये

दूसरी ऊर्मि को ग्रहण करता है हे कल्लोल १६ सींचने में समर्थ जल राशि रूप

सेना वाली तुम १७ देश की दाता १८ हो १९ देश को २० मुझे २१ दीजिये २२

ओष्ठ होम हो ग्रहण करता है हे कल्लोल २३ सींचने में समर्थ जल राशि रूप

सेना वाले तुम २४ देश के दाता २५ हो २६ देश को २७ अमुक यजमान के लिये

२८ दीजिये २९॥२॥

अथाध्यात्मम्- हे आत्मा रूप कल्लोल तुम १ अपनी किरणों की वर्षा

करने वाले २ योग देश दाता तथा ३ माया पुरुष देह के प्रवेश से प्रादुर्भूत क

ल्लोल ४ हो ५ योग देश की ६ मुझे आत्म प्रतिविव के लिये ७ दीजिये ८ महा वा-

क द्वारा अपने अनुभव में प्राप्त करता है ९ महानारायण के योग देश की दाता

११ कल्लोल १२ हो १३ अमुक योगी रूप आत्म प्रतिविव के लिये १४ योग देश को

१५ दीजिये दूसरी ऊर्मि को ग्रहण करता है हे इन्द्रिय शक्ति रूप कल्लोल १६

इन्द्रियसमूह के प्रवेशसे प्राप्त भूत तथा महानारायण के सेना रूपक लोल-
तुम १७ योग देश के दाता १८ हो १९ योग देश को २० मुष्मे २१ दीजिये २२ महा-
वाक द्वारा अवग्रहण करता है हे महानारायण की सेना रूपक लोल तुम-
२४ योग देश की दाता २५ हो २६ योग देश को २७ अमुक आत्म प्रति विव के
लिये २८ दीजिये ॥३॥

अथैतस्थराष्टदाराष्टम्मेदत्तस्वाहायैतस्थराष्ट-
दाराष्टममुष्मेदत्तोजस्वतीस्थराष्टदाराष्टम्मेदत्त-
स्वाहोजस्वतीस्थराष्टदाराष्टममुष्मेदत्तापःपरि-
वाहिणीस्थराष्टदाराष्टम्मेदत्तस्वाहापःपरिवा-
हिणीस्थराष्टदाराष्टममुष्मेदत्तापास्पतिरसि-
राष्टदाराष्टम्मेदत्तस्वाहापास्पतिरसिराष्टदारा-
ष्टममुष्मेदत्तपाडुभासिराष्टदाराष्टम्मेदत्तस्वा-
हापाडुभासिराष्टदाराष्टममुष्मेदत्त॥३॥
अथैत। राष्टदा। स्थाम। राष्ट। दत्त। स्वाहा। अथैत। राष्टदा। स्थाम।
राष्टम। अमुष्मे। दत्त। आजस्वती। राष्टदा। स्थाम। राष्टम। मो। दत्त।
स्वाहा। आजस्वती। राष्टदा। स्थाम। राष्टम। अमुष्मे। दत्त। आपः।
परिवाहिणी। राष्टदा। स्थाम। राष्टम। मो। दत्त। स्वाहा। आपः। परि-
वाहिणी। राष्टदा। स्थाम। राष्टम। अमुष्मे। दत्त। आपाम। पति। रा-
ष्टदा। असि। राष्टम। मो। दत्त। स्वाहा। आपाम। पति। राष्टदा।
असि। राष्टम। अमुष्मे। दत्त। आपाम। गभे। राष्टदा। असि। राष्ट-
म। मो। दत्त। स्वाहा। आपाम। गभे। राष्टदा। असि। राष्टम। अ-
मुष्मे। दत्त॥३॥

अथाधिदैवम्- इस कडिका में १० मंत्र हैं उनको कहते हैं नदी

आदिके प्रवाह में स्थित जलों को ग्रहण करता है उसके मंत्र १,२ वहतीन-
दियों के जो जल प्रति लोम चलते हैं उनको ग्रहण करता है उसके मंत्र ३,४
वहते जलों के मध्य से जो जल दूसरे मार्ग से जाकर फिर उसी प्रवाह में प्रवेश
होते हैं उनको ग्रहण करता है उसके मंत्र ५,६ समुद्र के जल को ग्रहण कर-
ता है उसके मंत्र ७,८ आवर्त्त जनित जलों को ग्रहण करता है उसके मंत्र ९,१०
ओं अर्थे त इति मंत्रयोः (वरुण ऋ० साम्न्युष्णिक् छं० लिङ्गोक्त दे०) १,२
ओं श्रेज स्वती + अपा गर्भ (तथा • आसुरी गायत्री छं० तथा) ३,४, ९
इति मंत्राणां

ओं आप इति मंत्रयोः (तथा • साम्नी वृहती छं० तथा) ५, ६

ओं आपा पतिरिति मंत्रयोः (तथा • साम्न्यनुष्टुप् छं० तथा) ७, ८

पदार्थः— हे नदी आदिके प्रवाह में स्थित जलो तुम १ यज्ञ प्रयोजन के लि-
ये प्राप्त होने वाले २ और देश के दाता ३ हो ४ मुझे ५ देश ६ दीजिये अष्ट-
होम हो, अब ग्रहण करता है हे पूर्वोक्त जलो तुम ७ यज्ञ के अर्थ प्राप्त होने वाले
८ देश के दाता ९ हो १० देश को ११ अमुक यज्ञ मान के लिये १२ दीजिये
हे प्रति लोम गमन शील जलो तुम १३ वल से युक्त १४ और देश के दाता
१५ हो १६ देश को १७ मुझे १८ दीजिये १९ अष्ट होम हो अब ग्रहण कर-
ता है हे पूर्वोक्त जलो तुम २० वल से युक्त २१ और देश के दाता २२ हो २३
देश को २४ अमुक यज्ञ मान के लिये २५ दीजिये २६ वहते जलों के मध्य
से दूसरे मार्ग द्वारा प्रथक होकर फिर भी उसी जल में प्रवेश होने वाले हे
जलो तुम २७ सब और वहन शील २८ और देश के दाता २९ हो ३० देश को
३१ मुझे ३२ दीजिये ३३ अष्ट होम हो, ग्रहण करता है ३४ हे पूर्वोक्त
जलो तुम ३५ सब और वहन शील ३६ और देश के दाता ३७ हो ३८

देश को ४० अमुक यजमान के लिये ४१ दीजिये हे समुद्र तुम ४२ जलों के ४३ स्वामी ४४ और देश के दाता ४५ हौ ४६ देश को ४७ मुझे ४८ दीजिये ४९ ओष्ठ होम हो अवग्रहण करता है हे समुद्र तुम ५० जलों के ५१ स्वामी ५२ देश के दाता ५३ हौ ५४ देश को ५५ अमुक यजमान के लिये ५६ दीजिये हे जल भ्रम तुम ५७ जलों के ५८ मध्यवर्ती ५९ देश के दाता ६० हौ ६१ देश को ६२ मुझे ६३ दीजिये ६४ ओष्ठ होम हो अवग्रहण करता है हे जल भ्रम तुम ६५ जलों के ६६ मध्यवर्ती ६७ और देश के दाता ६८ हौ ६९ देश को ७० अमुक यजमान के लिये ७१ दीजिये ॥३॥

अथाध्यात्मम्— हे आत्मा भू रूप जलो तुम १ समाधि के लिये इन्द्रिय गोल को से हृदय वामन में गमन करने वाले २ और ब्रह्म देश के दाता ३ हौ ४ मुझे ५ ब्रह्म देश ६ दीजिये ७ महा वाक् द्वारा ग्रहण करता है हे आत्मा भू रूप जलो तुम ८ पूर्वोक्त गुण वाले ९ हौ १० ब्रह्म देश को ११ अमुक यजमान के लिये १२ दीजिये हे प्रति लोम गमन शील इन्द्रिय शक्तियो तुम १३ योग बल से युक्त १४ ब्रह्म देश की दाता १५ हौ १६ ब्रह्म देश को १७ मुझे १८ दीजिये १९ महा वाक् द्वारा ग्रहण करता है हे पूर्वोक्त इन्द्रिय शक्तियो तुम २० पूर्वोक्त गुण वाली २१ हौ २२ ब्रह्म देश को २३ अमुक यजमान

२४ श्रुति का वचन है जिस प्रकार यह जल दूसरी और जा कर फिर उसी में आ मिलते हैं इसी प्रकार दूसरे राजा का देश इस राजा के देश में मिलता है और वह उस को वश में करता है इसी लिये इस क्षत्री में भूमा को धारण करता अभिषेक करता है ॥

२५ श्रुति का वचन है यह समुद्र जलों का स्वामी है इसी प्रकार इस क्षत्री को देशों में स्वामी करता है ॥

+ यह जल गर्भ को धारण करते हैं इसी प्रकार इस क्षत्री को देशों का गर्भ अर्थात् मध्यवर्ती स्वामी करता है ॥

न केलिये २६ दीजिये २७ हे आत्मा भू रूप जलो तुम २८ चक्षु आदि गोल को
 से सव और चलने वाले २९ और ब्रह्म देश के दाता ३० हो ३१ ब्रह्म देश को ३२
 मुझे ३३ दीजिये ३४ महा वाक द्वारा ग्रहण करता है ३५ हे आत्मा भू रूप जलो
 ३६ ३७ तुम पूर्वेक्त गुण वाले ३८ हो ३९ ब्रह्म देश को ४० अमुक यज मान के
 लिये ४१ दीजिये हे मन रूप समुद्र तुम ४२ आत्मा भू रूप इन्द्रियो के ४३
 स्वामी ४४ ब्रह्म देश के दाता ४५ हो ४६ ब्रह्म देश को ४७ मुझे ४८ दीजिये
 महा वाक सेवन द्वारा ग्रहण करता है हे मन तुम ५० ५१ पूर्वेक्त गुण वा
 ले ५३ हो ५४ ब्रह्म देश को ५५ आत्म प्रतिविव के लिये ५६ दीजिये हे मन की
 वृत्ति तुम ५७ आत्मा भू रूप इन्द्रियो की ५८ स्वामी ५९ ब्रह्म देश की दाता ६०
 हो ६१ ब्रह्म देश को ६२ मुझे ६३ दीजिये ६४ महा वाक सेवन द्वारा ग्रहण
 करता है हे मन की वृत्ति तुम ६५ ६६ ६७ पूर्वेक्त गुण वाली ६८ हो ६९ ब्र
 ह्म देश को ७० अमुक यज मान के लिये ७१ दीजिये ॥ ३॥

सूर्यत्वचसस्थ राष्टदा राष्टम्मे दत्त स्वाहा सूर्यत्वच
 सस्थ राष्टदा राष्टममुष्मे दत्त सूर्य वज्रसस्थ राष्टदा
 राष्टम्मे दत्त स्वाहा सूर्य वज्रसस्थ राष्टदा राष्टममुष्मे
 दत्त मान्दास्थ राष्टदा राष्टम्मे दत्त स्वाहा मान्दास्थ
 राष्टदा राष्टममुष्मे दत्त वज्रसितस्थ राष्टदा राष्टम्मे
 दत्त स्वाहा वज्रसितस्थ राष्टदा राष्टममुष्मे दत्त वा
 शास्थ राष्टदा राष्टम्मे दत्त स्वाहा वाशास्थ राष्टदा
 राष्टममुष्मे दत्त शविष्ठास्थ राष्टदा राष्टम्मे दत्त स्वा
 हा शविष्ठास्थ राष्टदा राष्टममुष्मे दत्त शकरीस्थ
 राष्टदा राष्टम्मे दत्त स्वाहा शकरीस्थ राष्टदा राष्टम
 मुष्मे दत्त जन भृतस्थ राष्टदा राष्टम्मे दत्त स्वाहा जन

नभृतस्य राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त विश्वभृतस्य राष्ट्र
दा राष्ट्रम्मे दत्त स्वाहा विश्वभृतस्य राष्ट्रदा राष्ट्रम
मुष्मै दत्तापः स्वराजस्य राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त। म
धुमती र्मधुमतीभिः पृच्यन्ता म्महि सत्रं द्वित्रिया
य वन्वाना अनाद्यष्टाः सीदत सहोजसो माहि सत्र

इः क्षत्रियायुदधतीः ४
सूर्यत्वचसः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। मे। दत्त। स्वाहा। सूर्यत्वचसः।
राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। अमुष्मै। दत्त। सूर्यत्वचसः। राष्ट्रदाः। स्थ। रा
ष्ट्रम। मे। दत्त। स्वाहा। सूर्यत्वचसः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। अमुष्मै
दत्त। मान्दाः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। मे। दत्त। स्वाहा। मान्दाः।
राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। अमुष्मै। दत्त। व्रजक्षितः। राष्ट्रदाः। स्थ।
राष्ट्रम। मे। दत्त। स्वाहा। व्रजक्षितः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। अमु
ष्मै। दत्त। वाशाः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। मे। दत्त। स्वाहा। वा
शाः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। अमुष्मै। दत्त। शविष्ठाः। राष्ट्रदाः।
स्थ। राष्ट्रम। मे। दत्त। स्वाहा। शविष्ठाः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम।
अमुष्मै। दत्त। शकरीः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। मे। दत्त। स्वाहा।
शकरीः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। अमुष्मै। दत्त। जनभृतः। रा
ष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। मे। दत्त। स्वाहा। जनभृतः। राष्ट्रदाः। स्थ।
राष्ट्रम। अमुष्मै। दत्त। विश्वभृतः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। मे।
दत्त। स्वाहा। विश्वभृतः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। अमुष्मै। दत्त।
अपः। स्वराजः। राष्ट्रदाः। स्थ। राष्ट्रम। अमुष्मै। दत्त। मधुमतीः।
क्षत्रियायुः। महि। सत्रं। वन्वानाः। मधुमतीभिः। पृच्यन्ताः।
म। अनाद्यष्टाः। सहोजसः। महि। सत्रं। क्षत्रियायुदधतीः।

१३८

सीदत ॥ ४॥

अथाधिदैवम् — इस कंडिका में २१ मंत्र हैं उन को कहते हैं वह तेज-
 लों के मध्य जो स्थिर और सदा घाम में वर्तमान हैं उन को ग्रहण करता है उ-
 सके मंत्र १, २ धूप निकलते हुए जो जल वरसे और पहले उन को ग्रहण
 कर लिया उन को धूप के उत्तर और से ग्रहण करता है उसके मंत्र ३, ४ तड़ाग
 के जल को ग्रहण करता है उसके मंत्र ५, ६ रूप जल को ग्रहण करता है उसके
 मंत्र ७, ८ ओस के जल को जो तृणों की नौक पर स्थित थे और जिन को वस्त्र
 द्वारा ग्रहण किया उन को धूप के उत्तर से ग्रहण करता है उसके मंत्र ९, १० म-
 धु जल को ग्रहण करता है उसके मंत्र ११, १२ व्यातीगों के गर्भ वेष्टन का जल जो पहले ले
 कर रक्वा उस को धूप के उत्तर से ग्रहण करता है उसके मंत्र १३, १४ दुग्ध को ग्रहण करता है उसके मंत्र
 १५, १६ घृत को ग्रहण करता है उसके मंत्र १७, १८ सूर्य किरणों से तप्त म-
 रीचिनाम जल को जो पहिले अञ्जली से लिये थे उन को पूर्व गृहीत जलों में
 मिलाता है उसका मंत्र १९ जिन पूर्वोक्त जलों को एक करने के लिये उदु-
 म्बर का पत्र के पात्र में डालता है उसका मंत्र २० मैत्रावरुण धिष्णा के आ-
 गेरवता है उसका मंत्र २१ **मंत्राणां** (वरुण ऋ० साम्यनुष्टुप० लि०) १, २, ३, ४
 ओं सूर्यत्वं + सूर्यव + आप इति मंत्राणां (तथा ० आसुर्यनुष्टुप० तथा) ५, ६, ७, ८
 ओं मान्दा + वाशा इति मंत्राणां (तथा ० आसुर्यनुष्टुप० तथा) ९, १०, ११, १२
 ओं व्रज० + जन० + विश्व इति मंत्राणां (तथा ० आसुरी गायत्री० तथा) १३, १४, १५, १६
 ओं शवि० + शक्र० इति मंत्राणां (तथा ० आसुर्यणिक् तथा) १७, १८, १९, २०
 ओं मधुमती रित्यस्य (तथा ० निचुदा र्यनुष्टुप० तथा) २१, २२, २३, २४
 ओं अनाधृष्टा इत्यस्य (तथा ० साम्नी निष्टुप० तथा) २५, २६, २७, २८
प्रदार्थः — हे जलो तुम सदा धूप में रहने से सूर्य की समान लत्ता रखने वा-
 ले और देश के दाता हो ४ देश को ५ मुझे ६ दीजिये ७ अष्ट होम हो ग्रहण

करता है हे जलो तुम ८० पूर्वेक्ष गुण वाले १० हो ११ देश को १२ अमुक यज-
मान के लिये १३ दीजिये हे जलो तुम १४ सूर्यवत् तेजस्वी १५ और देश के दा-
ता १६ हो १७ देश को १८ मुझे १९ दीजिये २० अष्ट होम हो अवग्रहण करता
है हे जलो तुम २१ २२ पूर्वेक्ष गुण वाले २३ हो २४ देश को २५ अमुक यजमा-
न के लिये २६ दीजिये हे जलो तुम २७ प्राणियों को आनंद देने वाले २८ और
देश के दाता २९ हो ३० देश को ३१ मुझे ३२ दीजिये ३३ अष्ट होम हो अवग्रह-
ण करता है तुम ३४ ३५ पूर्वेक्ष गुण वाले ३६ हो ३७ ३८ देश को ३९ हो
हे जलो तुम ४० कूप में रहने वाले ४१ और देश के दाता ४२ हो ४३ देश
को ४४ मुझे ४५ दीजिये ४६ अष्ट होम हो अवग्रहण करता है ४७ हे कूप निवा-
सी जलो तुम ४८ देश दाता ४९ हो ५० ५१ देश को ५२ हे जलो तुम ५३ अन्न की उ-
त्पत्ति के लिये ईप्सित ५४ और देश के दाता ५५ हो ५६ ५७ ५८ ५९ देश को अव-
ग्रहण करता है हे जलो तुम ६० अन्न की उत्पत्ति के लिये ईप्सित ६१ और देश दाता
६२ हो ६३ ६४ ६५ देश को हे मधुरूप जलो तुम ६६ वल देने वाले ६७ और देश
के दाता ६८ हो ६९ ७० ७१ ७२ देश को अवग्रहण करता है ७३ हे वलवान जलो तुम ७४
देश के दाता ७५ हो ७६ ७७ ७८ देश को अमुक हे गो गर्भ वेष्टन के जलो तुम
७९ गो सम्बन्धी ८० और देश के दाता ८१ हो ८२ ८३ ८४ ८५ देश को अवग्रहण क-
रता है ८६ हे गो गर्भ वेष्टन के जलो तुम गो सम्बन्धी ८७ और देश के दाता ८८
हो ८९ ९० ९१ देश को हे दुग्ध रूप जलो तुम ९२ मनुष्यों के पोषक ९३ और दे-
ह श्रुति का प्रमाण इस क्षत्री को तेज से अभिषेक करता है और उसके शरीर-
की त्वचा को तेज युक्त करता है ९४ अक्षर ९५ अक्षर ९६ अक्षर ९७ अक्षर ९८ अक्षर ९९ अक्षर
१० श्रुति का वचन अन्न सम्बन्धी जल से अभिषेक कर इस क्षत्री में अन्न को
धाराण करता है ॥ १०१ अक्षर १०२ अक्षर १०३ अक्षर १०४ अक्षर १०५ अक्षर १०६ अक्षर १०७ अक्षर १०८ अक्षर १०९ अक्षर ११० अक्षर
१११ अक्षर ११२ अक्षर ११३ अक्षर ११४ अक्षर ११५ अक्षर ११६ अक्षर ११७ अक्षर ११८ अक्षर ११९ अक्षर १२० अक्षर

When coarsure marine biological specimens

3. The fibrils are 80% of the total diameter. They contain RNA and are

(mRNA) and at least one type of the cytoplasmic

शके दान्ता ८४ हौ ८५, ८६, ८७, ८८ देश को अवग्रहण करता है हे दुग्धरूप
 पजलो तुम ८८ जन पोषक १०० और देश दाता १०१ हौ १०२, १०३, १०४ देश को
 हे घनरूप जलो तुम १०५ सर्वजगत्पालक १०६ देश के दाता १०७ हौ १०८, १०९
 ११०, १११ देश को अवग्रहण करता है हे घनरूप जलो तुम ११२ विश्वपा-
 लक ११३ और देश दाता ११४ हौ ११५, ११६, ११७ देश को, ११८ हे सूर्य किरण-
 रूप जलो तुम ११९ स्वाधीन राज्य वाले १२० और देश के दाता १२१ हौ १२२ दे-
 श को १२३ अमुक्तयजमान के लिये १२४ दीजिये १२५ मधुरस वाले १२६ और
 क्षत्रीयजमान के लिये १२७ बड़ा १२८ बल १२९ देने वाले जल १३० मधुर स्वाद-
 युक्त जलों के साथ १३१ मिल जाओ हे जलो तुम १३२ राक्षसों से अनिरस्त
 १३३ बल युक्त तथा १३४ बड़े १३५ बल को १३६ राजा में १३७ स्थापन करने वा-
 ले आप १३८ रहो ॥ ४॥

अथाध्यात्मम् - १ मानस सूर्य की त्वगिन्द्रियरूप हे भूतात्मरूप-
 किरणो तुम २ ब्रह्म देश की दाता ३ हौ ४ मुक्त ५ ब्रह्म देश ६ दीजिये ७ महावाक
 के प्रभाव से अवग्रहण करता है, ८ हे भूतात्मा की किरणो तुम ९ ब्रह्म देश
 की दाता १० हौ ११ ब्रह्म देश को १२ अमुक्त आत्म प्रतिविम्ब के लिये १३ दीजि-
 ये १४ हे मानस सूर्य की किरणो तुम १५-२० ब्रह्म देश की दाता हौ अवग्रहण
 करता है २१ हे मानस सूर्य की किरणो तुम २२-२६ ब्रह्म देश की दाता हौ
 ब्रह्म देश को २७ हे ब्रह्मानन्द के दाता आनन्द मय कोष की किरणो तुम २८-
 ३३ ब्रह्म देश की दाता हौ ३४ हे ब्रह्मानन्द दाता आनन्द कोष की किरणो-
 तुम ३५-३९ ब्रह्म देश की दाता हौ ब्रह्म देश को ४० हे गगन मेघस्थ आ-
 त्मांशु रूप जलो तुम ४१-४६ ब्रह्म देश के दाता हौ अवग्रहण करता है ४७
 हे गगन मेघस्थ आत्मांशु रूप जलो तुम ४८-५२ ब्रह्म देश के दाता हौ ब्र-
 ह्म देश को ५३ हे माया मूल दूर करने के लिये ईप्सित आत्मांशु रूप जलो

तुम ५४-५६ ब्रह्म देश के दाता हौं अब ग्रहण करता है ६० हे माया मल दूर
 करने के लिये आत्मांशु रूप जलो तुम ६१-६५ ब्रह्म देश के दाता हौं ब्रह्म दे
 श को ६६ हे योग बल दाता ज्ञानांशु रूप जलो तुम ६७, ७२ ब्रह्म देश के दाता
 हौं मुझे अब ग्रहण करता है ७३ हे योग बल दाता ज्ञानांशु रूप जलो तुम ७४
 ब्रह्म देश के दाता ७५-७८ हौं ब्रह्म देश को अमुक ७९ इन्द्रियों की शक्ति रूप
 गर्भ से उमन्न और यजमान के उद्धार में समर्थ है आत्मांशु रूप जलो तुम ८०
 ८५ ब्रह्म देश के दाता हौं मुझे अब ग्रहण करता है ८६ हे पूर्वाक्त आत्मांशु
 रूप जलो तुम ८७-९१ ब्रह्म देश के दाता हौं ब्रह्म देश को अमुक ९२ हे यजमा
 न के पोषक प्राणांशु रूप जलो तुम ९३-९८ ब्रह्म देश के दाता हौं मुझे अब ग्र
 हण करता है ९९ हे प्राणांशु रूप ^{जलो} तुम १००-१०४ ब्रह्म देश के दाता हौं ब्रह्म
 देश को अमुक १०५ हे विश्व पोषक समष्टि वायु के अंशु रूप जलो तुम १०६
 ब्रह्म देश के दाता १०७ हौं १०८ मुझे १०९ ब्रह्म देश ११० दीजिये १११ महा वा
 क द्वारा अब ग्रहण करता है ११२ हे पूर्वाक्त जलो तुम ११३-११७ ब्रह्म देश के
 दाता हौं ब्रह्म देश को अमुक ११८ हे ब्रह्मांशु रूप जलो तुम ११९ स्वयं प्रकाश
 १२० ब्रह्म देश के दाता १२१ हौं १२२ ब्रह्म देश को १२३ अमुक आत्म प्रतिविंब के
 लिये १२४ दीजिये भेदाभाव करता है १२५ मधु ब्राह्मणोक्त ज्ञान वाले १२६ और
 यजमान के लिये १२७ वड़े १२८ योग बल को १२९ देने वाले हे इन्द्रियादि श
 क्ति रूप जलो तुम १३० ब्रह्मांशु रूप जलो से १३१ संयोग को पाओ १३२ राक्ष
 सों से अतिरिक्त १३३ बल युक्त तथा १३४ वड़े १३५ योग बल को १३६ रा
 ज कदशिमे १३७ स्थापन करने वाले हे ब्रह्मांशु रूप जलो तुम १३८ अपने आ
 श्रय में रहने वाले आत्म समुद्र का संस्कार किया जैसा स्मृति कहती है आत्मा
 नदी समयमजल से पूर्ण है सत्य से बहने वाली है उसका तट शील और लह
 र दया है उसमें अभिषेक करो क्योंकि अंतरात्मा जल से शुद्ध ही होता है ॥ ४ ॥

सोमस्युत्विषिरसितवेवमेत्विषिभूयात्। अग्नये
 स्वाहा सोमाय स्वाहा सवित्रे स्वाहा सरस्वत्यै स्वा
 हा पूषणे स्वाहा बृहस्पतये स्वाहेन्द्राय स्वाहा घो
 षाय स्वाहा श्लोकाय स्वाहा ॥ १२ ॥ शाय स्वाहा भगा
 य स्वाहा र्यमो स्वाहा ॥ १५ ॥

सोमस्य। उत्विषि। असि। तव। त्विषि। मी। एव। भूयात्। अग्नये।
 स्वाहा। सोमाय। स्वाहा। सवित्रे। स्वाहा। सरस्वत्यै। स्वाहा। पू
 षो। स्वाहा। बृहस्पतये। स्वाहा। इन्द्राय। स्वाहा। घोषाय।
 स्वाहा। श्लोकाय। स्वाहा। अथ शाय। स्वाहा। भगाय। स्वाहा।
 अर्यमो। स्वाहा ॥ १५ ॥

अथाधिदेवम्—इस कंडिका में १२ मंत्र हैं उन को कहते हैं, मै
 चा वरुण धिष्णा के आगे रक्वे ड्रु ए पलाश पात्र आदि चारों पात्र के आगे व्याघ्र च
 र्म को बिछाता है उसका मंत्र १ पार्थनाम १२ मंत्रों के मध्य अग्नये इत्यादि
 छैः मंत्रों से अभिषेक के आदि में हो मंत्रा है और इन्द्राय इत्यादि ६ मंत्रों से
 अभिषेक के अंत में हो मंत्र करता है उसके मंत्र २ से १३ तक ॥

ॐ सोमस्युत्विष्य (वरुण ऋ० आसुरी गायत्री छ० चर्म दे०) १२

ॐ २, ४, ८, १०, १४ (तृतीया • देवी पत्ति ऋ० लिङ्गोक्त) १३

ॐ सरस्वत्यै इत्यस्य (तृतीया • देवी त्रिष्टुप् छ० तथा) १४

ॐ पूषा इत्यस्य (तृतीया • देवी वृहती छ० तथा) १५

ॐ बृहस्पतये इत्यस्य (तृतीया • देवी जगती छ० तथा) १६

पदार्थ—हे चर्म तुम १ सोम की २ दीप्ति ३ हो ४ तेरी ५ दीप्ति ६ मेरी ७ ही

होवे ८ अग्नि के अर्थ ९ आइति दी १० सोम के अर्थ ११ आइति दी १२ स

विता के लिये १३ आइति दी १४ सरस्वती के लिये १५ आइति दी १६ पू

^{१४}दात्रम्। ^{१५}असि। ^{१६}वाचः। ^{१७}वन्धुः। ^{१८}तपोजाः। ^{१९}असि। ^{२०}स्वाहा। ^{२१}राजस्वः। ६
 इसकांडिका में तीन मंत्र हैं। पवित्रा वना कर उन दोनों में सुवर्णी को बांधता
 है १ सुवर्णी सहित दर्म पवित्रा से मैत्रा वरुणा धिषा के आगे रक्वे द्रष्टव्यो
 दुम्बरपात्रस्थ अभिषेक सम्बन्धी जलो को पवित्र करता है उसके मंत्र २
 ओं पवित्रे स्थ इत्यस्य (वरुणा ऋ० देवी जगती छ० पवित्रे दे०) १

ओं सवितुरित्यस्य (तथा ० प्राजापत्यापंक्ति० आपो दे०) २

ओं अनिभृष्टमित्यस्य (तथा ० भुरिग्राजापत्यापं० तथा) ३

पदार्थः— हे कुश पवित्र तुम दोनों १ यज्ञ सम्बन्धी २ पवित्र करने वाले
 हो। हे जलो ४ सब के प्रेरक परमेश्वर की ५ आज्ञा मैं वर्त्तमान मैं ६ वायु रूप
 ७ पवित्र ८ और सूर्य की ९ किरणों से १० तुम को ११ पवित्र करता हूं हे जल
 समूह तुम १२ राक्षसों से अति रस्कत १३ और सोम के १४ दाता १५ हो १६
 वाणी के १७ वन्धु १८ अग्नि से उत्पन्न १९ हो २० स्वाहा कार से पवित्र होते
 २१ राज्याभिषेक के कर्त्ता हो ॥ ६ ॥

अथाध्यात्मम्— हे प्राण उदान तुम दोनों १ योग यज्ञ सम्बन्धी २ पवि
 त्र ३ हो हे इन्द्रिय आदि शक्ति रूप जलो ४ गुरु की ५ आज्ञा मैं वर्त्तमान मैं
 समष्टि प्राण रूप ७ पवित्र ८ और साकार ब्रह्म की ९ किरणों से १० तुम को
 ११ पवित्र करता हूं हे आत्मांशु रूप जल तुम १२ काम आदि से अति रस्क
 त १३, १४ और आत्म प्रति विवाभिषव के कारण १५ हो १६ महा वाक् के
 १७ वन्धु १८ आत्माग्नि से उत्पन्न १९ हो २० महा वाक् द्वारा २१ साम्राज्या
 भिषेक के कर्त्ता हो ॥ ६ ॥

सधमादौद्युम्निनी राप एता अना धृष्टा अपस्यो व
सोनाः। पुस्त्या सुचके वरुणाः सधस्य मपाथ शि

भुमादुर्तमा स्वन्ताः ॥ ७ ॥

शुक्लालय

के
या

